

श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला

॥ श्री रत्नप्रभ सूरेश्वर सद्गुरुभ्यो नमः ॥

अथ श्री

शीघ्रबोध जाग

१०-११-१६-२०-२१-२२

भाषातरकृती

श्रीमदुपकेण गच्छीय मुनिश्री

ज्ञानसुन्दरजी (गयवरचन्दजी)

—→॥०॥←—

प्रकाशक

श्रीरत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला ओफीस--(फलोधी)

के मेनेजर शाहा जोरावरमल बैद.

प्रथमावृत्ति १०००

वीर स्वत २४४९

मूल्य

इस पुस्तक छपानेमें जिन महानुभावोंने साहाय-
ता दी है उन्नोंका यह सस्था सहर्ष उपकार मा-
नती है और धन्यवाद देती है ।

१००) शा हीराचन्दजी फूलचन्दजी कोवर—मु० फलोरी
१००) मुताजी गीशुलालजी चन्दन मलजी—मु० पीसागण
८४१) स. १२७२ के मुपनों कि आवादानी का

शेष खरचा श्री रत्नप्रभाकर ज्ञान पुष्पमाला ऑफीस फ-
लोरीसे दीया गया है.

भावनगर—श्री मानद प्रिन्टींग प्रेसमा शाह गुलामचद लल्लुभाइम
छाप्यु

श्रीमदुपदेशगन्धीय—

मुनिराजश्री ज्ञानसुन्दरजी महाराज ।



—[मुद्रक दीक्षा १९६३]—

—[जैन धर्म टीका म० १९७०]

—[७३३]—

प्रस्तावना.

प्यारे पाठकगण !

चरम तीर्थंकर भगवान् धीर प्रभुके मुखार्थिदसे फरमाइ हुइ स्याद्वादरूपी भवतारक अमृत देशना जिस्में देवदेवी मनुष्य आर्य अनायें पशु पक्षी आदि तीर्थच यह सब अपनि अपनि भाषामें ममजके प्रतिबोध पाकर अपना आत्मकल्याण करते थे ।

उस धीतराग वाणिको गणधर भगवानोंने अर्ध भागधि भाषासे ब्राह्मणमें सकलित करी थी जीसपर जीस जीस समयमें जीस जीस भाषाकि आवश्यकता थी उस उस भाषा (प्राकृत संस्कृत) में टीका निर्युक्ति भाष्य चूर्णि आदिकि रचना कर भव्य नीचापर महान् उपकार कीया था ।

इस समय साधारण मनुष्योंका यह भाषा भी कठीन होने लग गई है क्योंकि इस समय जनताका लक्ष हिन्दी भाषाकि तर्फ बढ़ रहा है वास्ते जैनसिद्धान्तोंकि भी हिन्दी भाषा अवश्य होनी चाहिये

इस उद्देशकि पुरतीके लिये इस संस्थाद्वारा शीघ्रबोध भाग १ से १६ तक प्रकाशित हो चुके हैं जिस्में श्री भगवती पद्म चणा जैसे महान् सूत्रोंकि भाषा कर थोकड़े रूपमें छपा दीया है जो कि ज्ञानाम्बासीयोंका बड़ेही सुगमतासे कण्ठस्थ कर समज में सुभीता हो गया है ।

इस वखत यह १२ गारह सूत्रोंका भाषान्तर आपके कर क-मलोमे रखा जाता है आशा है कि आप इसको आधोपान्त पढ़के लाभ उठावेंगे ।

इस लघु प्रस्तावनाको समाप्त करते हुये हम हमारे सुसज्ज-नोंसे यह प्रार्थना करते हैं कि आगमोंका भाषान्तर करनेमें तथा सुफ शुद्ध करनेमें अगर दृष्टिदोष रह गया हो तो आप लोग सुधारके पढ़ें और हमें सूचना करे ताकि द्वितीयावृत्ति में सुधारा करा दीया जायेंगे—अस्तु कल्याणमस्तु

‘ प्रकाशक ’

विषयानुक्रमणिका



(१) शीघ्रबोध भाग १७ वां



[१] श्री उपासक दशग मूत्रका भाषान्तर

(१) अध्ययन पहला आनन्द आवक ।

१ वाणिजा ग्राम नगर	१
२ आनन्द गाथापतिवा वणन	२
३ भगवान धीरप्रभुका आगमन	४
४ आनन्द देशना सुनके व्रतग्रहन	६
५ सधाविशथा तथा पुणाउगणीस विशवाद्या	७
६ पाचसो हलधेकी जमीन	९
७ अभिग्रह ग्रहन । अथधिज्ञानोत्पत्त	१२
८ गौतम स्वामिसे प्रभ	१५
९ स्वर्ग गमन महाविद्वहमें मोक्ष	१६

(२) अध्ययन दुसरा कामदेव आवक

१ कामदेव आवक व्रतग्रहन	१७
२ वैषताका तीन उपसग	१७
३ भगवानने कामदेवकी तारीफ करी	२१
४ स्वर्ग गमन विदेहक्षेत्रमे मोक्ष	२२

(३) अध्ययन तीसरा चुलनिपिता आवक

१ धनारसी नगरी चुलनिपिता वर्णन	२२
-------------------------------	----

२ देवताका उपसर्ग

३ स्वर्ग गमन विदेह क्षेत्रमें मोक्ष

(४) अध्ययन चौथा सूरदेव श्रावक

(५) अध्ययन पाचवा चतुश्शतक श्रावक

(६) अध्ययन छटा कुडकोलीक श्रावक

१ कपीलपुर नगर कुडकोलीक श्रावक

२ देवताके साथ चर्चा

३ स्वर्ग गमन । विदेह क्षेत्र में मोक्ष

(७) अध्ययन सातवा शकडाल पुत्र श्रावक

१ पोलासपुर में गोशालाकी श्रावक शकडाल

२ देवताके सचनोसे गोशालाका आगमन जाना

३ भगवान धीरप्रभुका आगमन

४ मट्टीके घरतन तथा अग्रभीताका दृष्टान्त

५ शकडाल श्रावकप्रति ग्रहन

६ भगवानका विहार, गोशालाका आगमन

७ शकडाल और गोशालाकी चर्चा

८ देवताका उपसर्ग

९ स्वर्गगमन और मोक्ष

(८) अध्ययन आठवा महाशतक श्रावक

१ राजप्रह नगर महाशतक श्रावक

२ रेवतीभार्याका निमित्त कहना

३ गौतमस्वामिको महाशतकके धर्मा भेदना

४ स्वर्गगमन और मोक्ष

(९) अध्ययन नोवा नन्दनिपिता श्रावक	४३
(१०) अध्ययन दशवा शालनिपिता श्रावक	४३
(क) दश श्रावकोंका यत्र	४४

[२] श्री अन्तगदन्शागमून " "

(१) वर्ग पहला अध्ययन पहला

१ झारामति नगरी घणन	४४
२ रेवतगिरि पर्वत नन्दनोद्यान	४५
३ श्रीकृष्ण राजा आदि	४६
४ गौतम कुमरका जन्म	४९
५ गौतम कुमरको आठ अन्तेयर	५०
६ श्री नेमिनाथ प्रभुका आगमन	५१
७ गौतम कुमर देशना सुग दीक्षा ग्रहन	५३
८ गौतम मुनिकि तपस्या	५६
९ गौतममुनिका निर्वाण	
१० समुप्रवृमरादि नौ भाइयोंका मोक्ष	५७

(२) वर्ग दुसरा अक्षोभकुमरादि आठ अन्तगद केवलीयोंका आठ अध्ययन

५८

(३) वर्ग तीसरा अध्ययन तेरहा

१ महलपुर नागशेठ मुलशा अनययश का जन्म	५८
२ कलाम्यास ३२ अन्तेयर	५८
३ श्री नेमिनाथ पास दीक्षा	५९
४ छहों भाइ अन्तगद केवली	६०

५ सारणकुमार अन्तगढ़ केवली	६०
६ देवकी राणीके यहा तीन सिंघाड़े छ मुनिओंका आगमन	६०
७ दो मुनियों और छे भाइयोंकि कथा	६१
८ देवकीराणीका भगवानसे प्रभ	६३
९ श्रीकृष्ण माताको घन्दन करना	६४
१० कृष्णका अष्टम तप और गजसुकुमालका जन्म	६४
११ कृष्ण भगवानको घन्दन निमत्त जाना	६५
१२ गजसुकुमालके लिये शोभा ग्रहणीका ग्रहन	६६
१३ गजसुकुमालका भगवानके पास दीक्षा लेना	६७
१४ सोमल धादणका मुनिके शीर अभि धरना	६८
१५ गजसुकुमाल मुनिका मोक्ष होना	६९
१६ सोमल धादणका मृत्यु	६९
१७ सुमुहावि पाच मुनियोंको केवलज्ञान	७०

(४) वर्ग चौथा अध्ययन दस

१ जालीकुमरावि दश भाइओ नेमिनाथ प्रभुके पास दीक्षा ग्रहन कर अन्तगढ़ केवली हुये	७१
--	----

(५) वर्ग पाचवा दस अध्ययन

१ द्वारामति चिनाशका प्रभ	७१
२ कृष्ण धासुदेवकि गतिका निर्णय	७२
३ कृष्ण भविष्यमें अमाम नामा तीर्थकर होगा	७३
४ दीक्षा लेनेवालोंको साहिताकि घोषणा	७३
५ पद्मावती आदि दश महासतीयोंका दीक्षा ग्रहन	७४

(६) वर्ग छठा अध्ययन सोल

१ मकाइ गाथापतिका	
------------------	--

२ कीकम गाथापतिका	७६
३ अर्जुनमाली बन्धुमतीभार्या मोगर पाणियक्ष	७६
४ छे गोटीले पुरुष बन्धुमतीसे अत्याचार	७७
५ मालीधे शरीरमे यक्ष प्रवेश	७८
६ प्रतिदिन सात जीवोंकि घात	७८
७ सुदर्शन शोठकि मज्जबुती	८१
८ अर्जुनमाली दीक्षा अन्तगद केवली	८२
९ कासयादि गाथापतियोंका ११ अभ्ययन	८२
१० पैमस्त मुनिका अधिकार	८३
११ अलखराजा अन्तगद केवली	८६

(७) वर्ग सातवा श्रेणिकराजाकि नन्दादि तेरहा राणीयो
भगवान वीरप्रभुके पाम दीक्षा ले मोक्ष गइ ८७

(८) वग जाठवा श्रेणिकराजाकि काली आदि दस राणीयो

१ कालीराणी दीक्षा ले रत्नावली तप कीया	८८
२ सुकालीराणी दीक्षा ले वनकावली तप कीया	८९
३ महाकालीराणी दीक्षा ले लघु सिंहगति तप कीया	९०
४ कृष्णाराणी दीक्षा ले महामिह तप कीया	९०
५ सुकृष्णाराणी दीक्षा ले सतसतमियाभिक्ष प्रतिमा	९०
६ महाकृष्णाराणी दीक्षा ले लघुसर्धतोभद्र तप	९१
७ वीरकृष्णाराणी दीक्षा ले महामर्धतोभद्र तप	९२
८ रामकृष्णाराणी दीक्षा ले भद्रोत्तर तप कीया	९२
९ पितृसेन कृष्णा , मुक्तावली तप कीया	९२
१० महासेनकृष्णा , अविल वर्धमान तप कीया	९३

[३] श्री अनुत्तरोपनिषद्सूत्र वर्ग ३

- (१) वर्ग पहला अध्ययन दश—जालीकुमरगादि दश कुमार
भगवान वीरप्रभु पास दीक्षा ९४
- (२) वर्ग दुसरा अध्ययन तेरहा—श्रेणिकराजाके दीर्घश्रेणादि
तेरहा कुमार, भगवान पासे दीक्षा ९६
- (३) वर्ग तीसरा अध्ययन दश
- | | |
|---|-----|
| १ कार्कदीनगरी धन्नाकुमार धत्तीस अन्तेवर | ९७ |
| २ वीरप्रभुकी देशना सुन धन्ना दीक्षा ली | ९७ |
| ३ धन्नामुनिकि तपस्या और गोचरी | १०१ |
| ४ धन्नामुनिके शरीरका वर्णन | १०२ |
| ५ राजग्रह पधारना श्रेणिकराजाका प्रश्न | १०५ |
| ६ धन्ना मुनिका अमसन-स्वर्गवास | १०७ |

[२] शीघ्रगोत्र भाग १८ या.

(१) श्री निरयातिका सूत्र

- | | |
|--|-----|
| १ चम्पानगरी—भगवानका आगमन | १०८ |
| २ कालीराणीका प्रश्नोत्तर | १०९ |
| ३ कालीकुमारके लीये गौतमस्यामीका प्रश्न | ११२ |
| ४ खेलनाराणी सगर्भवन्तीको दोहला | ११३ |
| ५ अभयकुमारकी बुद्धि दोहलापूर्ण | ११४ |
| ६ कोणककुमारका जन्म | ११६ |
| ७ कोणकके साथ काली आदि दश कुंभर | ११८ |
| ८ श्रेणिकराजाकी यन्धन | ११९ |
| ९ श्रेणिक काल कोणक राजगादी | ११९ |

१०	सींचाणक गंधहस्तीकी उत्पत्ति	११०
११	अठारा सरीया दिव्यहारकी उत्पत्ति	१२१
१२	बहलकुमारका वैशालानगरी जाना	१२२
१३	हुतको वैशालानगरी भेजना	१२७
१४	चेटक और कोणककी संग्राम तैयारी	१२८
१५	पहला दिन कालीकुमारका मृत्यु	१२९
१६	दश दिनोंमें दशों भाइयोंका मृत्यु	१३१
१७	कोणक अष्टमतप कर दो इन्द्राको युलाना	१३२
१८	दो दिनोंका संग्राममें १८०००००० का मृत्यु	१३३
१९	चेटकराजाका पराजय	१३४
२०	हारहाथीका नाश बहलकुमारकी दीक्षा	१३४
२१	कुलबालुका साधु वैशाखा भग	१३५
२२	चेटकराजाका मृत्यु	१३६
२३	कोणकराजाका मृत्यु	१३७
२४	सुकाली आदि नौ भाइयोंका अधिकार	१३७

(२) श्री वप्पवडिसिया सूत्र

१	पद्मकुमारका अधिकार	१३८
२	पद्मकुमार दीक्षा ग्रहण करना	१३९
३	स्वयंघास जाना विदेहमें मोक्ष	१३९
४	नौ कुमरोंका अधिकार	१४०

(३) श्री पुष्किया सूत्र

१	राजगृहनगरमें भगवानका आगमन	१४१
२	चन्द्र इन्द्र सपरिवार वन्दन	१४१
३	भक्तिपूजक ३२ प्रकारका नाटिक	१४२
४	चन्द्रका पूजमय	१४३
५	सूयका अधिकार अध्या० २	१४४

अभ्ययन तीजा.

६ शुक्र महाग्रहका नाटक पूर्वमय पृच्छा	१४५
७ सोमल ब्राह्मणका प्रश्न	१४६
८ आयक व्रत ग्रहन	१४७
९ अद्वासे पतित मिश्रयात्यका ग्रहन	१४९
१० तापसीका नाम	१५०
११ सोमल तापसी दीक्षा	१५१
१२ देवतासे प्रतिरोध देवपणे	१५४

अभ्ययन चौथा

१३ बहुवृत्तीया देवीका नाटक	१५५
१४ पूज्यभक्तकी पुच्छा और उत्तर	१५६
१५ यातीकर्म स्वीकार देवी होना.	१५७
१६ सामा ब्राह्मणीका भय मोक्षगमन	१६१
१७ पाचमा अध्ययन पूर्णभक्त देवका	१६३
१८ मणिभद्रादि देवीका ५ अध्ययन	१६४

(४) श्री पुष्पचरित्या सूत्र

१ श्रीदेवीका आगमन नाटक	१६५
२ पूर्णभक्त भूता नामकी लडकी	१६५
३ भूताकी दीक्षा शरीर शुश्रूषा	१६६
४ विराधीकपणे देवी, विदेहमे मोक्ष	१६९
५ हरी आदि नौ देवीयों	१६९

(५) श्री विन्दिदशा सूत्र

१ बलदेव राजाका निपेदकुमर	१७१
२ निपेदकुमर आवक व्रत ग्रहन	१७२

३ निपेद्रकुमरका पूर्वभाव	१७२
४ निपेद्रकुमर दीक्षा ग्रहण	१७२
५ पाचये देवलोक विद्वहमे मोक्ष	१७४

[१६] श्री गीघ्रसोप भाग १६ या

(१) श्री गृह्यसूत्र

१ छेद सूत्रोंकि प्रस्तावना	१
----------------------------	---

(१) पहला उपा

२ फलप्रदान विधि	७
३ मासकरूप तथा चतुर्मासकरूप	८
४ साधु साध्वी ठेरने योग्य स्थान	९
५ मात्राका भाजन रखने योग्य	१३
६ कपाय उपशान्त विधि	१६
७ वस्त्रादि वाचना विधि	१७
८ रात्रीमें अशनादि तथा वस्त्रादि० ग्रहण निषेध	१८
९ रात्रीमें टटी पैसाय परठणका जानेकि विधि	२०
१० साधु साध्वीयोंका विहार क्षेत्र	२०

() उपा दुजा

११ साधु साध्वीयाँको ठरनेका स्थान	२१
१२ पाच प्रकारक वस्त्र तथा रजोहरण	२६

(३) ताजा उपा

१३ साधु साध्वीयोंक मकानपर जाना निषेध	२७
१४ चर्म बिगरे उपकरण	२८
१५ दीक्षा लेनेवालाका उपकरण	२८

१६ गृहस्थोंके घर जाके बैठना निषेध	२९
१७ शय्या सेस्तारव विधि	३०
१८ मकानकी आज्ञा लेनेकी विधि	३२
१९ जाने आनेका क्षेत्र परिमाण	३३

(४) चौथा उद्देश

२१ मूल० अणुठप्पा पारखीया प्रायाश्चित्त	३३
२२ दीक्षाके अयोग्य योग	३४
२३ सूत्रोंकी वाचना देना या न देना	३५
२४ शिक्षा देने योग्य तथा अयोग्य	३५
२५ अशनादि ग्रहण विधि	३६
२६ अन्य गच्छमं ज्ञाना न ज्ञाना	३७
२७ मुनि कालधर्म प्राप्त होनेके बाद	४०
२८ कपाय-प्रायाश्चित्त लेना	४१
२९ नदी उत्तरणेकी विधि	४२
३० मफात्मे ठेरने योग्य	४२

(५) पाचवा उद्देश

३१ देव देवीका रूपसे ग्रहण करे	४३
३२ सूर्योदय तथा अस्त होते आहार ग्रहण	४४
३३ साध्वीयोंको न करने योग्य कार्य	४६
३४ अशनादि आहार विधि	४९

(६) उद्देश छठा

३५ नदी धोलने लायक छे प्रकारकी भाषा	५०
३६ साधुओंके छे प्रकारके पस्तारा	५१
३७ पाषाणमे काटादि भागे तो अन्योन्य काट लके	५१
३८ छे प्रकारका पलीमथु	५३

[२०] श्री शीघ्रयोग भाग २० वा.

(१) श्री दशाश्रुतस्कन्ध छेद सूत्र

१ बीस असमाधिस्थान	५५
२ एकबीस सबलास्थान	५७
३ तेतीस आशातनाके स्थान	५९
४ आचार्य महाराजकि आठ मंषदाय	६२
५ चित्त समाधिके दश स्थान	७१
६ भाषककि इग्याराप्रतिमा	८७
७ मुनियोंकि दारदाप्रतिमा	८८
८ भगवान् घोर प्रभुके पाच कल्याणक	९७
९ मोहनिय कर्मध-धके तीस स्थान	९८
१० नौ निधान (नियाणा) अधिकार	१०४

[२१] श्री शीघ्रयोग भाग २१ वा

(१) श्री व्यवहार छेद सूत्र

१ प्रायश्चित्त विधि	१३०
२ प्रायश्चित्तक साधुका विहार	१३८
३ गच्छ त्याग पक्क विहारी	१३८
४ स्वगच्छसे परगच्छमे जाना	१३९
५ गच्छ छोडके प्रत भंग करे जीस्का	१४०
६ आलोचना बीसके पास करना	१४१
७ दो साधुकोसे एकके तथा दोनोंक दोष लगेतो	१४२
८ बहुत साधुकोसे कोइ भी दोष सेवेतो	१४३
९ प्रायश्चित्त बहुत साधु ग्लानहो तो	१४४
१० प्राय० बालको फोरसे दीक्षा केसे देना	१४६

११ एक साधु दूसरे साधुपर आक्षेप (कटक)	१४७
१२ मुनि कामपीडित हो संसारमें जावे	१४७
१३ निरापेक्षी साधुको स्वल्पकालमें भी पछि	१४८
१४ परिहार तब वाला मुनि	१४९
१५ गण (गच्छ) धारणकरनेवाले मुनि	१५०
१६ तीन वर्षोंके दीक्षित अग्न्याग्नीको उपाध्यायपणा	१५१
१७ आठ वर्षोंके दीक्षित , आचार्यपद	१५१
१८ एकदिनके दीक्षितको आचार्यपद	१५२
१९ गच्छयामी तरुण साधु	१५३
२० वेश में अत्याचार करने वालेको	१५३
२१ कामपिडित गच्छ त्याग अत्याचारकरे	१५३
२२ बहुभुतिकारणात् मायामृपात्राद धोले तों	१५५
२३ आचार्य तथा माधुर्वीको विहार तथा रहना	१५६
२४ साधुओंको पछि देना तथा छोड़ाना	१५७
२५ लघुदीक्षा षड्विंश देनेका काल	१६०
२६ ज्ञानाभ्यासके निमित्त पर गच्छमें जाना	१६१
२७ मुनि विहारमें आचार्यकी आज्ञा	१६२
२८ लघु गुरु होके रहना	१६३
२९ साध्वीयोंको विहार करनेका	१६४
३० साध्वीयोंके पछिदेना तथा छोड़ाना	१६५
३१ साधु साध्वीयों पदाहुया ज्ञान विस्मृत हो जावे	१६६
३२ स्वयीरोंको ज्ञानाभ्यासे	१६७
३३ साधु साध्वीयोंकी आलोचना	१६८
३४ साधु साध्वीयोंको सर्प काट जावे तो	१६८
३५ मुनि ससारी न्यातीलोंके बहामोचरी जावे तो	१६९
३६ ज्ञात या अज्ञात मुनियोंके रहने योग्य	१७१
३७ अन्यगच्छमें आई हुई साध्वी	१७३

३८ साधु साध्वीयोंका समोगका तोड़ देना	१७४
३९ साधु साध्वीयोंके वास्ते दीक्षा देना	१७४
४० ग्रामादिफमें साधु २ कालकर आवे तो	१७६
४१ ठेरे हुये मकानके पहले आशा लेना	१७७
४२ स्थवीरोंके अधिक उपकरण	१७९
४३ अपना उपकरण कहा भी भूना हो ता	१८१
४४ पात्र याचना तथा दुसरेको देना	१८२
४५ उणोदरी तप करनेकी विधि	१८२
४६ शय्यातर सयधी अशानादि आहार	१८३
४७ साधुनाके प्रतिमा यद्दान अधिकार	१८५
४८ पात्र प्रकारका व्यवहार	१८९
४९ चौभगीयों	१९१
५० तीन प्रकारके स्थवीर तथा शिष्यभूमि	१९५
५१ छाटे लड्डयेको दीक्षा नही देना	१९६
५२ कोतने वर्षोंके दीक्षा और कोनसे मूत्रपद्वाना	१९७
५३ दश प्रकारके पैयावचसे मोक्ष	१९८

[२२] श्री गीघमोघ भाग २२ रा

(१) श्री लघु निशिधसूत्र (छे)

१ निशिधसूत्र	१९९
२ उद्देशो पहलो शोल ६० का प्रायश्चित्त	२०१
३ , दुसरो " , ,	२०८
४ , तीओ " ८२	२१५
५ , चौथो " १६८	२२१
६ " पाचवो " ७८	२२७
७ " छठो " , ,	२३३

૮	સાતવા	”	”	”	૨૩૪
૯	આઠવા	”	૧૯	”	૨૩૪
૧૦	નોંવા	”	૨૬	”	૨૩૮
”	દસવા	”	૪૮	”	૨૪૩
૨	દ્વગ્યારવા	”	૧૯૭	”	૨૫૦
૩	ચારદવા	”	૪૮	”	૨૫૭
૪	તેરદવા	”	૭૬	”	૨૬૪
૧૫	ચૌદવા	”	૫૦	”	૨૭૧
૧૬	પંદરવા	”	૧૭૨	”	૨૭૬
૧૭	સોલવા	”	૫૧	”	૨૮૦
૧૮	સતરવા	”	૨૬૮	”	૨૮૫
૧૯	અઠારવા	”	૯૩	”	૨૯૧
૨૦	ઉઘીસવા	”	૩૯	”	૨૯૮
૨૧	વીસવા	”	૬૫	”	૩૦૪
૨૨	આઠોચનાકિ વિવિધ વિષય				૩૧૪



सहर्ष निवेदन



श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला ऑफीस फलोधीसे आज स्वल्प समय में ७० पुष्पोंद्वारा १४०००० पुस्तके प्रकाशित हो चुकि है जिस्में जैन सिद्धान्तोंका तत्त्वज्ञान सविस्त सुगमतासे समजाया गया है वह साधारण मनुष्य भी सुख पूर्वक लाभ उठा सकते है पाठक वर्ग एकदफे भगवाके अवश्य लाभ लेंगे

पुस्तक मीलनेका ठीकाना

मेनेजर—

श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला

बु*—फलोधी—(मारवाड)



पद्म यागिराज—

मुनि श्री रत्नविजयजी महाराज

—[जन्म १९३०]—



—[स्वर्गधाम १९७७]—

—[जन्म वर्ष १९३०]—

॥ ॐ नमः ॥

॥ स्वर्गस्थ पूज्यपाद परमयोगी सतामान्य प्रभाते
स्मरणीय मुनि श्री श्री श्री १००८ श्री
श्रीमान् रत्नविजयजी महाराज साहगके
कर कमलोमे सादर समर्पण पत्रिका ॥



पूज्यवर ! आपने भारत भूमिपर अवतार ले, असार ससारको जलाजली दे, गत्यमलम् (दश वर्षकी अल्पावस्थामें) जन्मोद्धारक दीक्षा ले, जैनागमोका अध्ययन कर, सत्यसुगंधीको प्राप्त कर, अशुभ असत्य ढ़ेंढक वासनाकी दुर्गंधसे घृणित हो अठावीस वर्षकी अवस्था-में समुचीत मार्गदर्शी श्रीमान् विजयधर्मसूरी-धरजीके चरणमरोजमें ध्रमरकी तरह लिपट गए ऐसी आपकी सत्यप्रियता ? इसी सत्यप्रियताके आधीन हो मैं इन आगमरूपी पुष्पोन्मो आपके आगे रखता हूँ क्यों कि आपके जैमा मत्यनिष्ठ और अनेकागमावलोककी इस पाम रकों कहीं मिलेगा ?

परमपुनीत पूज्य ! आपने गिरनार और आवृ जैमे गिरि-बरोकी गुफाओमें निर्माकतासे निवाश कर, अनेक तीर्थ स्थानोंकी पुनीत भूमीओमें रमण कर, योगाम्यासकी जैनोंमेंमे गई हुई कीर्त्तिको अद्वाहन कर पुन स्थापीत कर गए इसलिए आपके मूक्षमदर्शिताके

गुणोंमें मुग्ध हो ये पुष्प आपने आगे रखनेकी उत्कट इच्छा इस दासको हुई है

मेरे हृदयमंदिरके देव ! आपने अति प्राचीन श्रीरत्नप्रभामूरीधर स्थापीत उपकेश पट्टनस्थ (ओशीयामें) महावीर प्रभुके मंदिरके जीर्णोद्धारमें अपूर्व सहाय कर जैनशालाश्रम स्थापीत कर जैननागमोक्त सग्रहीत ज्ञानभंडार कर मरूभूमिमें अलम्यलाभ कायम कर जैनजातिकी सेवा कर अपूर्व नाम कर गए इन कारणोंमें लात्नायीत हो ये आगम पुष्प आपको मन्मुग्ध रग्नू तो मेरी कोई अधीकृता नहीं है

भव्योद्धारक ! इस दासपर आपकी असीम कृपा हुई है इससे यह दास आपका कभी उपकार नहीं भूल सकना मुझे आपने निध्यानालमेंमे छूड़ाया है, सन्मार्ग बताया है, दूढ़कोके व्यामोहमेंे दृष्टि हटा कर मानवान दिया है, साध्याचारमें स्थिर किया है यह सब आपका ही प्रताप है इस अहसानको मानकर इनचारे सूत्रोंका हिन्दी अनुवादरूपी पुष्पोको आपकी अनुपस्थितिमें समर्पण करता हूँ इसे सूक्ष्म ज्ञानद्वारा स्वीकार करीएगा नहीं हार्दिक प्रार्थना है किमधिकम्

आपथीके चरणकमलोंका दास
मुनि ज्ञानसुन्दर



पूज्यपाद श्रीमान् मुनिश्री ज्ञानसुन्दरजी महाराजकेकरकमलोमें

अभिनन्दनपत्रम्.



शान्त्यादि गुणगणाल्लभ्यते पूज्यपाद प्रातःस्मरणीय मुनि श्री श्री १००८ श्री श्री ज्ञानसुन्दरजी महाराजसाहिब । आपश्री बड़े ही उपकारी और ज्ञानदान प्रदान करनेमें बड़े ही उदारवृत्तिको धारण कर आपश्रीकी प्रशमनीय व्याख्यान शैली द्वारा भव्यजीवोद्धार कल्याण करते हुवे हमारा सद्भाग्य और हमारी चिरकालकी अभिलाषा पूर्ण करनेके लिये आपश्रीका शुभागमन इस फलोधी नगरमें हुवा, जिसके वजरिये फलोधी नगरकी जैन समाजको बड़ा भारी लाभ हुवा है बहुतसे लोग आपश्रीकी प्रभावशाली देशनामृतका पानसे सद्बोधको प्राप्त कर पठन—पाठन, शास्त्रश्रवण, पूजा, प्रभावना, सामायिक, प्रतिक्रमण, पौषधादि, त्याग, वैराग्य और अपूर्व ज्ञान—ध्यान करते हुवे आपश्रीके मुरारिविदसे श्रीमद् आचारागादि १७ आगम और १४ प्रकरण श्रवण कर अपना आत्माको पवित्र बनाया यह आपश्रीके पधारनेका ही फल है

हे करूणासिन्धु ! आपश्रीने इस फलोधी नगरपर ही नहीं केन्तु अपने पूर्ण परिश्रम द्वारा जैन सिद्धान्तोंके तत्त्वज्ञानमय ७५००० पुस्तकें प्रकाशित करवाके अखिल भारतवासी जैन समाज पर बड़ा भारी उपकार किया है यह आपश्रीका परम उपकारस्वी चेन्नै मठोंके लिये हमारे अन्तःकरणमें स्मरणीय है ।

हे स्वामिन् ! फलोधीमें गत वर्षमें जैसलमेरका सघ निकला, उन्में भी आप सरीखे अतिशयधारी मुनिमहाराजोंके पधारनेसे जैन शासनकी अवर्णनीय उन्नति हुई, जो कि फलोधी उसनेके बाद यह सुअवसर हम लोगोंको अपूर्व ही मिला था ।

हे दयाल ! आपश्रीकी रूपासे यहांके श्रावकवर्ग भगवानकी भक्ति के लिये समवसरणकी रचना, अष्टाहमहोत्सव, नित्य नवी २ पूजा भणराक वरघोडा और स्वामिवासल्यादि शुभ कार्योंमें अपनी चल श्रमीना सदुपयोगसे धर्मजागृति कर शासनोन्नति का लाभ लिया है यह सब आपश्रीक निराजनेका ही प्रभाव है ।

आपश्रीक बिराजनेसे नानद्रव्य, देवद्रव्य, जिर्णोद्धारके चन्दे आदि अनेक शुभ कार्योंका लाभ हम लोगोंको मिला है ।

अधिक हृषका विषय यह है कि यहांपर कितनेक धर्मद्वेषी नास्तिक शिरोमणि धर्मकार्योंमें विघ्न करनेवालोंको भी आपश्रीके मरिये अच्छा प्रतिबोध (नशियत) हुआ है, जाना है कि अब वह लोग धर्मविघ्न न करेंगे ।

अन्तमें यह फलोधी श्रीसघ आपश्रीका अन्तःकरणसे परमो-

पकार मानते हुवे भक्तिपूर्वक यह अभिनन्दनपत्र आपश्रीके करकम-
लोंमें अर्पण करते हैं, आशा है कि आप इसे स्वीकार कर हम लोगोंको
वृत्तार्थ बनावेंगे ।

ता० क०—जैसे आपश्रीके शरीरके कारणसे आप यहापर तीन
चातुर्मास कर हम लोगोंपर उपकार किया है अब तक भी आपके
नेत्रोंका कारण है, वहातक यहा पर ही विराजके हम लोगोपर उपकार
करे उमेद है कि हमारी विनति स्वीकार कर आपके कारण है वहा-
तक आपश्री अवश्य यहा पर ही विराजेंगे । श्रीरन्तु खल्याणमस्तु ।

संघत् १९७९ का
कार्तिक शुक्ल चतुर्वशी
जनरल मभासे }

आपश्रीके चरणोपासक
फलोरी श्री स०.





श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला पुष्प न० ५३

श्री रत्नप्रभसुरीश्वर सत्गुरुभ्योनम

अथर्था

शीघ्रबोध या थोकडाप्रबन्ध

भाग १७ वा



संपादक

श्रीमदुपदेश गच्छीय मुनिश्री

ज्ञानमुन्दरजी (गगनरचन्दजी)



द्वयगणाय

श्रीमघ फलोधीमुपनोंकीआमदनीमे



प्रकाशक

शाह मेधराजजी मुणोंत मु० फलोधी



प्रथम भाग १०००

वीर म्वा ११८

विग्रम म १७०

भावनगर—श्री ' सान् प्रीर्त्तग प्रेम मां
शा. गुलामचंद लल्लुभाईए अण्डु

॥ ॐ ॥

॥ श्री गन्तप्रमदरीश्वर सद्गुरुभ्यो नमः ॥

शीघ्रबोध या थोकदा प्रबन्ध.

—ॐ(ॐ)३—

भाग १७ वा

—ॐ३—

देवोऽनेक भगजिताऽजित महा पाप प्रदीपानलो ।

देवः मिद्विषध पिणाल हृदयालकार हागंपमः ॥

देवोऽष्टादशदोष मिधुरघटा निर्भद पचाननो ।

भयाना विदधातु मादित कल, श्री पीतगो जिन ॥१॥

—ॐ३—

श्री उपान्तक दशांग सूत्र अध्ययन १

—ॐ३—

(आनंद श्रावकाधिकार)

आपे आगे अन्तिम समयको बात है कि इस भारनभूमार्थी
अपनी उची २ प्यजा पतायाओं और मुन्दर प्रमाष्टे मनोहर
दिगम्बर गगनमङ्गल चुम्बन करता हुआ अनेक प्रकारध धन
पाय और मन्त्र्यादि पण्डितसमेत सब सेना याणीय ग्राम नामक

एक नगर था। उस नगरके बाहिरी भागमें अनेक जातिके वृक्ष पुष्प और लताआम्र अति शोभनीय दुतीपलास नामका उद्यान (उगीचा) था। और वहां अनेक शत्रुओंका अपनी भुजाओंके बलसे पराजित करके प्रजाका न्याय यत्न पावन करता हुआ जय शत्रु नामका राजा उस नगरमें राज्य करता था। और वहां आनंद नामका एक गाथापति रहता था। जिसका मिशानदा नामकी भार्या थी वह बड़ा ही धनाढ्य और नीती पूर्ण प्रवृत्ति करने व्यापारोपाजित द्रव्य और धन धान्य करके युक्त था। जिसके घर चार करोड़ सोनैया धरतीमें गटे हुए थे। चार करोड़ सोनैयाका गहना आदि ग्रह सामग्री थी। आठ चार कगड सोनैये घाण्डिय व्यापारमें लगे हुए थे। और दस हजार गायोंका एक घर्ग होता है जेने चार धन याने २०००० गायोंकी। इनके नियाय अनेक प्रकारकी सामग्री करके समृद्ध और राजा, शंठ सेनापती आदि का बड़ा माननीय और प्रशस्तनीय राज और रहस्यकी बातोंमें सब मगदका देनेवाला, व्यापारीयमें अप्रसन्न था। हमेशा भानव चित्तमें अपनी प्राणप्रिया सुशीला मिशानदाके साथ अचित भोग-विलास व जेष्ठय सुगोंको भागवता हुआ रहता था। उस नगरके बाहिरी भागमें एक काटाक नामका सन्नीवेश (मोहला) था। वहापर आनन्द गाथापतीय मज्जन मन्थी लोक रहते थे। अभी बटे ही धनाढ्य थे।

एक समय भगवान् ईश्वर्य पूजनीय बीर प्रभु अपने शिष्यसंग-परिवार सहित पृथ्वी मण्डलको पवित्र करत हुए, वाणीय ग्राम नगरके दुतीपलास नामक उद्यानमें पधारे।

यह स्थिर नगरमें हात ही जहा दा, तीन चार या बहुतसे मन्त पक्वित हात है। जेस स्थानपर बहुतसे लाल आपसम म-

रूप यातालाप कर रहे हैं कि अहो ! देवानुप्रिय ! यथा स्थान भ
 गिहत भगवन्तोरे नाम मात्र श्रवण करनेसे ही महापद्म होता है
 यही श्रमण भगवान् महावीर प्रभुसा पधारना आज दुतीपलास
 नामक उद्यानमें हुआ है ता स्मरे लिये कहनाही क्या है । यत्ना
 भगवन्तका धन्दन-नमस्कार करके श्री भुवने देशना श्रवण कर
 प्रशान्ति करके उस्तुत रहा निणय कर । ऐसा विचार करके सब
 लोक अपने ० घर जाकर स्नान कर श्रद्धाभूषण जा वह मूल्यके ध
 य धारण कीये । आगे शिरपर छत्र धरने हुये कितनेक राजा अश्व
 रथादिपर आर कितनेक पैदल जानका तैयार हो रहेथ । इतनेमें
 जयशत्रु गजानो धनपाल्पने गरर दीर्घ आप जिनके दशनवी
 अभिगता करतेये व परमेश्वर जीप्रभु उद्यानमें पधारे हैं । यह
 सुनके गजाने उस धनपाल्पको मनोपित कर यहूत श्रय
 इनाम दिया और मयम चार प्रकारकी सेना नेयां कर
 यस्तसे मनुष्यां परितारने जाणक राजाकी माफीक नगर-
 धृगारके रहे ही हर्ष-उत्साह और जाडम्बरसे साथ भगवानको
 धन्दन करनेकी गया । समामरणमें प्रवेश करते ही प्रथम पांच
 प्रकारके अभिगम-विनय करते हुए भगवानके पास पहुच गये ।
 राजा और नगरनिवासी गेर भगवानको प्रदक्षिणा दे धन्दन-
 नमस्कार कर अपने ० योग्य स्थान पर बैठ गये ।

आनन्द गाथापति भी इस बातकी श्रवण करन ही स्नान-
 मज्जन कर शरीर पर अच्छे ० यहूमृत्य श्रद्धाभूषण धारण कर
 शिरपर छत्र धरने हुये और यहूतसे मनुष्यवृन्द के परिधामने
 भगवानका धन्दन करका आये । धन्दन-नमस्कार कर योग्य
 स्थान पर बैठ गया ।

भगवानने भी उस विशाल पण्डाका धमदेशना देना प्रारम्भ

किया। जिसमें मुख्य जीव और कर्मोंका स्वरूप बतलाया कि हे भयान्माओ! यह जीव निम्नल शानादि गुणयुक्त अमृत है और मर चिदानन्दमय है परन्तु अज्ञानमें पर धन्तुआका अपनी कर्मानी है। इन्हीमें उत्पन्न हुआ राग-द्वेषर हन्तुम कर्मोंका अनादि काज्म चय-उपचय करता हुआ इस अपार मसारक अन्दर परि धमण कर रहा है। वास्तव अपनी निजमत्ताका परिचयानव जन्म जग, मृत्यु आदि अनन्त दुःखाका हन्तु यह अनित्य अमार स माग्व धन्तमे छूटना चाहिये। इत्यादि दशना देव अन्तमें फरमाया कि मोक्षप्राप्तिके मुख्य कारण दोय है (१) मातु धम-मयथा निवृत्ति। (२) आधव धमजा द्गामे निवृत्ति रम दोनों धमम यथाशक्ति आराधना करनेमें समार का पार हा र स्वर मनाका राज मीन सज्जता है।

यह अमृतमय दशना देवता विनाधर और गज्जादि धधण कर सहग गले कि हे करणासि तु! आपने यह भयतारक दे-शना देव जगनके जीवापर अमृत्य उपकार किया है। इत्यादि स्मृति कर अपन २ स्थान पर गमन करन हुए।

आनन्द गाथापति द्गामा सुनव सहग भगवानका धन्त-नमस्कार कर बोले कि हे भगवान! मैं आपकी सुधारम दशना धरण कर आपवे बचनाकी अन्तर आत्माने धडा हुए हैं। और मर वा प्रतीति हानम धम करनेका रुचि उपन्न हुए हैं परन्तु हे दी माङ्गारक धय है जगतमें गजा महाराजा। शेटमनापति आदि का जो कि राजपाट, धन धान्य पुत्र, कलत्रका त्याग कर आप क समीप दीक्षा ग्रहण करते हैं परन्तु मैं ऐसा समथ नहीं हू। हे प्रभो! मैं आपसे गृहस्थ धम अर्थात् आधवक पारह व्रत ग्रहण करूंगा। भगवानने फरमाया कि “जहा सुख” हे आनन्द! “जैमा

नृमकी सुख हा वैसा करो परन्तु जा धमकाय करना हा उसमें समय मात्र भी प्रमाद मत करो । ऐसी आज्ञा होने पर आनन्द श्रावक भगवानके समीप श्रावक व्रतकी धारण करना प्रारम्भ किया ।

(१) प्रथम स्थूल प्राणातिपात अथान् हलता चञ्चला प्रथम जीवाकी मार्गनका याग जायज्जीयतय, दाय करन रखय कीर्मी

१ आनन्दन प्रथम व्रतम तस चाशका शून्यका प्रत्याप्यायन दाय दण्डांतराल यागम किया है, तैम रि हलमें सामासिक पापधर्मों काय करण जीव मान यागम पया स्थान करत * विषय इतना है रि सामासिक पापधर्म गरि मावय शराशम * और आनन्दन तस चाशका मार्गनका न्याग काया था ।

बहुतम प्रथम श्रावक मरा तिमवा दया करण म * उन्नीम श्रावक चावा री तस तिमवा न्या ना श्रावकम पत्र न नगी मर और वस चावाम भा निर्विकार पार विसरा श्रवणशर तस ताकुतास सवा पत्र १८॥ तिमवा शर करता मरा तिमवा न्या धारकर जाता * । य एर तपशम मय * रि चिन्तन म मातरा तावदा व्रत न * तिमवा १४ गवगक मरागवार मु * है ।

जा श्रावक तस चाशका मार्गनका कामा न * उन्नीर १० दया तिमवा दया तस चाशका शर्मा * शर मराज जावकि मिय छग व्रतकी मराग करत * तो मयादक पदार्थ श्रवणान काजगुता अथान् मयादक मित्वाथ री म गचलाइक श्रावक जीवता मार्गनका भा भावक श्यागी है शान्त पाल तिमवा न्या पत्र मरती है । शर मयागता भूमिकाम बहुतम मय * तिममें मातरा व्रतम उपभाग परिभाषकी मयादा करनम दय स्थानक मित्वाथ मर श्रावक जीवकी दया पत्र जानम श्रवण तिमवा दया जाता है तब दय्यादिना मयाद मरी गी उन्नीमें भी निर्देशक प्रथा स्थार करनम सवा जीवता न्या पत्र जाना है पत्र १०- ११-१२ मार्क १८॥ चावता न्या नागदुर्गा जयकम पत्र मरता है ।

पौच्छी उटरी सगुनी अनापगधा । अंगार दात है रर रमा
जननियमायगेमे ।

(२) दूसर स्थूल मृपागद-तीघ राग द्वय मक्केपोपघ्न रर-
नैराग मृपागद तथा गजदद या गेकमदे पेमा मृपागद बीट-
मैका न्याग जायझीय तक् डोय करण और तीन यागमे पूर्यत ।

(३) तीसरे स्थूल अदस्तादान-पगदय दहन करना अथ
अणादिका न्याग जायचीयतक् डोयकरण और तीन योगमे ।

(४) चाबे मृग मैगुन-म्यदाग मनाप जिमम जानठने
अपनी परणी हुई मियागन्दा माया रगरे डोप मैगुनका न्याग
कियाया ।

(५) पाचम मृग पग्मिहका परिमाण करना । (१)
सुयण, स्पेरे परिमाणम गारह घाट जिममे चार कोड
धरतीमे, च्यागकोड चापागमे, चार कोड घरमे आश्रुण उ-
खाठि रर जिमीम । इन्तार मियाय मरे त्याग किया । (२)
चतुस्पदर परिमाणमे च्याग रगे रथान चागमहजार गौ(गाया)
के मियाय सथ त्याग किया (३) भूमिकारे परिमाणमे पा-
चमो मृग जमीन रगी डोपभूमिका परिमाण किया । (४)

१ जा गेवे रर व्यापगम गारहि गना है रर गव अनापनी मर्यागम मरने
जानाई ।

२ च्याग मारर (वर्ग) का उद्दि ही वर इमा मज्जागमे है ।

३ च्याग परिमाण एक वाय नीर राम गार परिमाणका एक निम्न गौर
मो निमाका एक है रर पागमे रर जमीन मनाप ररक १ ० घाट गना है ।
वय उरररगी मर्यागमा इमा अमाधिम गारहि रर गाम्ने म्य ररना ररपर रर
मरी क्या है । सिन्नु नतिगार उद वरका अरम क्या है । रर रररररका मिय
(वकिना) मे ०० रर ररररर रर गमा मा लिखा है । रर पागमा रर मनी गममी

शकट-गाडाके परिमाणमें पाचसो गाटा जहाजा पर माल पहुँचा नके लिये तथा देशांतरमें माल लानके लिये और पाचसो गाडा अपने गृहकायके लिये खुला रखके शेष शकट-गाडाभरका त्याग कर दिया (५) बहाण पाणीर अन्दर चरनेवाले जहाजके परिमाणमें चार घंटे जहाज दिशाउगोमें मात्र भजनेका और चार छोटे जहाज खुले रखके शेष उहाणका त्याग किया । छद्मा व्रत पाचउत्तर अन्तगत है ।

(७) मातवा उपभाग परिभाग व्रतका निम्न लिखित परिमाण करत हुए ।

(१) अगपूछनका स्मार्तमें गन्ध कर्पीत यन्त्र रखा है ।

(२) दातणमें एक अमृति-जेनीमधका दातण ।

(३) फात्रम एक श्रीर भावनाका फल (केशधानिका)

(४) कमरत करने पर 'मार्तिस' करनेके लिये सौपाक और हजार पाक तत्र रखाथा । सौ ओषधिमें एकको उमका सौपाक और हजार ओषधिमें एकको उमको हजार पाक कहत है तथा सौ सोनैयाका एक टकाभर मेवा कीमतवाला तत्र रखा था ।

(५) उद्यतना एक मुगध पद्माथ कुशादिका रखा है ।

(६) स्नान मज्जन-जाट घंटे पाणी प्रतिदिन रखा है ।

(७) उर्ध्वार्की ज्ञातिमें एक क्षेमयुगल कपासका यन्त्र रखा है ।

चात्र = लग्न तिमात्र वास्तुही बना गयाथा वा जहाज च्यात्र वर वराण च्यात्र मात्र उहाण सिंग तिमात्र उन्तर गया प्रश्न स्वाभाविक उत्पन्न जाता है । जानन्का व्ययत्तर (शपार) में कुशा उहा है और पाचम व्रतम च्यात्र जाट रव्य व्यापारक लिये रखा था । वास्तव उभय ज्ञाता है कि पाचम हल्सी चमीन रबीरा चमीन छगनका भी सम्बन्ध होमया है । तत्त्व कल्पना सम्य ।

- (८) धिलेपन-अंगर हुकुम चन्दनका तिलपन रखा था।
 (९) पुष्पकी जातिमें शुद्ध पद्म और मातुतिर पुष्पाकी माला।
 (१०) आभरण-कानाने रुड्ड और नामाकित मुद्रिका रंगी थी।
 (११) धूप-अंगर तगरादि सुगन्ध धूप रखा था।
 (१२) पेज-घृतमें तनीया हुआ चाय पुथा।
 (१३) भोजन-घृत पुरी और खाड गज्जा रखा था।
 (१४) आदन-कर्म जातिर जाली चावल रखा था।
 (१५) मय-दालमें मूंग, उट्टकी दाल रंगी थी।
 (१६) घृतमें शरद्वृत्तुका घृत अथवा मयने निकाला हुआ।
 (१७) शाक शाकमें यथुजाकी भाजीका तथा महुकी घन-
 म्पनिका शाक रखा था।
 (१८) मयूर फलमें एक थली फल पात्रमें फल रखा था।
 (१९) जमण, जिमणत्रिधि द्रव्य त्रिनेप रखा था।
 (२०) पाणीकी जातिमें गन्ध आकाशका पाणी टाकादिका
 (२१) मुखवासमें गन्धकी लगन कपूर जायतरी जायफळ
 यह पाच धन्तु तालमें रंगी थी। सर्व जायन्धमें पर २१ योगेके
 द्रव्य रखे थे।

(८) आठवां व्रतमें अनर्थदण्डका त्याग किया था यथा-स्वार्थ
 बिना भ्रातृभ्रातृ करनेका त्याग। प्रमादमें व्रत हो, घृत तैल,
 दूध वही पाणी, आदिका भाजन खुला रखनेना, औरभी प्रमादा
 चरणका त्याग। हिंसाकारी शस्त्र पक्षत्र करनेका त्याग। पापकारी
 उपदेश देनेका त्याग यह त्याग प्रकारमें अनर्थदण्ड में अनर्थ करनेका
 त्याग।

यह आठ व्रतका परिमाण करनेपर भगवान महावीर

स्यामि गले कि हे आनन्द जा सम्यक्त्व महित व्रत स्तन हे उ
मया पेस्तन व्रतां अतिचार जा कि व्रतां भग हानेम मद्द
गार हे उसका समझने दूर करना चाहिये । यहापर सम्यक्त्व
७ और पारह व्रतां १० कमादान १० मन्त्रेनानां ७ गण ८०
अतिचार शास्त्रकारान् प्रतलाये हे । किन्तु यह अतिचार प्रथम
जैन नियमानाम् लिख गये हैं वास्ते यहापर नहीं लिखा है ।
जिम्हा दखना हो यह “ जैन नियमानां सं देखे ।

आनन्द गाथापति भगवान् श्रीप्रभुने सम्यक्त्व मूर्त बाण्ड
व्रत धारण करव भगवान्को बन्दन-नमस्कार करवे बोला कि हे
भगवान् ! अर आज मैं सब धर्मका समझ गया हूँ । वास्ते आज्ञा
मुझे नहीं कर जा कि अन्यतीर्थी भ्रमण शाक्यादि तथा अन्यती
र्थीयानि व्रत हरि, हन्धरादि और अन्यतीर्थीयानि अग्निहोत्री
प्रतिमा अपने द्वापर्यम अपन करज रर देख तरीक मान रखी
हे इन्ही तीर्थांको बन्दन-नमस्कार करना तथा भ्रमणशाक्यादिका
पहिने बलाना, प्यचार या धार्या उन्हांने बातालाप करना और
पहिलेकी माफिक गुरु समजत धर्मशुद्धि आसनादि चतुर्विधाहा
रका दाना या दूमराने दिगाना यह सब मुझ नहीं कल्पत हैं । परंतु
इतना विशय है कि मैं सखाग्म त्रैता हू वास्ते अगर (१) राजाके
कहनेसे (२) गणसमूह ग्यातके कहनसे (३) यलथतर कहनेसे
(४) दयताओंके कहनसे (-) मातापितादिक कहनेसे (६)
मुखपुथक आज्ञादिका नहीं चरती हा । अथात् पेसी हालतमें
किमी आज्ञादिका निमित्त उर काय करना भी पड़े यह न
प्रकारक आगार है ।

अर आनन्द थावक कहता है कि मुझे कल्प साधु-निग्रन्थ
का फामुक्, निर्जात, निर्दाग अशन पान आदिम आदिम वस्त्रपात्र

केवल रजाहरण पीठ फलमग्राया सम्वागक औपध भैपज्ज देता हुआ विचरना । यमा अभिग्रह धारण कर भगवानकी वन्दन कर प्रश्नादि पूछने अपने स्थानको गमन करता हुआ । आनन्द श्रावक अपने परपर जायके अपनी भायाँ मिथानन्दाको कहता हुआ । ॐ देवानुप्रिय ! मैं आज भगवान श्रीग्रभुकी अमृत दशना श्रयण कर सम्यक्त्व मूल धारण व्रत धारण किया है धाम्त तुम भी भगवा नको वन्दन कर धारण व्रत धारण करा । मिथानन्दा अपने पतिक वचन सहज स्वीकार कर स्नान-मन्त्रन कर शरीरको धन्नाभूषणोंसे अलंकृत कर अपनी दामीया आदि परिहार सदित भगवानके निकट आइ । वन्दन कर श्रावकके ६२ व्रतोंको धारण कर अपने स्थानपर आर अपने पतिकी आज्ञाका सुग्रत करती हुए ।

भगवान्को वन्दन कर गौतमस्वामिने प्रश्न किया कि हे भगवन ! यह आनन्द श्रावक आपसे पाम दीक्षा लेगा ? भगवान्ने उत्तर दिया कि हे गौतम ! आनन्द दीक्षा न लेगा, किन्तु उद्युतमें वर्ष श्रावक व्रत पाठके अन्तमें अनशन कर प्रथम देवलोकमें अरुणनामका विमानमें उत्पन्न होगा । गौतमस्वामि यह सुनके वन्दना कर आत्मरमणनाम रमण करने लगे ।

भगवान् एक समय थाणीयाग्राम नगरसे उद्यानमें गिराज कर अन्य देशमें गिराज करने हुए विरचने लगे ।

आनन्द श्रावक जीव अजीव पुण्य, पाप, आश्रय, मयर, निर्जंग, यध, मोक्ष आर क्रिया अधिकृणादिका जानकार हुआ जिमकी श्रद्धाको देखादिक भी क्षोभित न कर सक । याघन निजात्मामें रमण करत हुए विचरन लगा ।

आनन्द श्रावक उच्च वाटीर व्रत ग्रन्थाख्यानादि पालन करते हुए साधिक औदह धर्म गुण कीये उसने याद एक

समय रात्रीस धमजागना करून ह्या यहा माममान ह्या
 वि म घाणीयाग्राम नगरम राजा उपराजा शठ मनापति
 आदिने मानने याग्य हु परन्तु भगवानक पास खीशा तेनेका
 असमथ हु, घास्त कर सर्यादय होत हो विस्तरण प्रकारका आस
 नादि तैयार करवाथ यात जातिका बाग्ये उन्हीका भजन करवाथे
 ज्येष्ठ पुत्रका उदुम्बर आधारभूत स्थापन कर मउत काहाक मन्त्रि-
 यशमे अपन महानपर जात भगवानम प्राप्त किये हुने धममे मेरा
 आत्मा कयाण करना हुआ विचर। ममा विचार कर पर्यादय
 ज्ञानपर घर ही पीया, अपन ज्येष्ठ पुत्रका घरका कागभार सुप्रत
 कर आप साहाक मन्त्रियशमे जा पह्या। अय आनन्द आवक
 उन्ही पौपधशास्त्राका प्रमार्जन कर उच्चार पासयण भूमिका प्रमा
 र्जन कर भगवान श्रीरप्रभुसे जा आमीक ज्ञान प्राप्त कीया ग
 उन्मर अठर रमणता करने लगा।

आनन्द आरक यहापर आवकरा ११ प्रतिमा (अभिग्रह
 विशप) का धारण करक प्रवृत्ति करन लगा। इन्हीका विस्तार
 शीघ्रबाध भाग ४ म द्वायायन माद पांचवष तक तपधर्या
 करक शरीरका कृश बना दीया अर्थात् शरीरका उत्थान बल
 कमधीय और पुरुषार्थ तिलकूल कमजाग हो गया, तब आनन्द
 आवकरने विचारि कि अय अन्तिम अनशन 'मलेखता' करना
 ठीक है। यम, आनन्दन आलाचना करके-आशन करके अठारा
 पापस्थान और स्याग आहाकका पचखान कर आत्मध्यानमे
 रमणता करता हुआ। शुभाभ्यसमाय-अन्ते परिणाम प्रशस्त
 ऐश्या हानिमे आनन्दका अधिज्ञान उपग्र हुआ मा पूर पश्चिम
 और मणि दिशा लयणसमुद्रम पाचमा पाचमा योजन क्षेत्र और
 उत्तरम चुरहेमघात धर्यत तक ठगने लग गया। उन्मर मौधर्मदे-

चलीक आर अथा रत्नप्रभा नरकके लोटुच पान्थडाक चांगसा
हजार वर्षोंकी स्थितिवाले नरकावासका देखने गग गया ।

उस समय भगवान् वीरप्रभु दुतिपलामाघानम पधारे । उन्हां
के समीप रहनेवाले गौतमस्यामि जिन्हांका शरीर गौर रण,
प्रथम सहनेन मस्थान, मात हाथ ठेहमान, न्याय ज्ञान चौदण्णपुर्ष
पाग्यामि, छठतपसी मपञ्जया रहनेवाले एक समय छठतपसे
पारणे भगवान् की आज्ञा लेके याणीयाग्राम नगरमें समुदाणी
भिक्षा कर जालाक मग्नियेशरे पाम हावे पीठा भगवान्क पास
आ रहें थे । इतनेमें गौतमने सुना कि भगवान् वीरप्रभुका शिष्य
आनन्द धायक अनशन किया है यह बात सुन गौतमस्यामि
आनन्दके पास गये । आनन्दने भी गौतमस्यामिको आते हुये दे-
खके हर्षसे सायधन्दन-नमस्कार किया और बोला कि हे भगवान्
' मेरी शक्ति नहीं है वास्ते आप अपना चरणकमल नजीक ब-
सालातारे मैं आपके चरणकमलोंका स्पर्श कर मेरा आत्माका पवित्र
कर । तब गौतमस्यामिने अपना चरणकमल आनन्दकी तर्प कीया
आनन्दने अपने मस्तकमें गौतमस्यामिने चरण स्पर्श कर अपना
जन्म पवित्र किया । आनन्दने प्रश्न किया कि हे भगवान् गृहावा
ममें रहा हुआ गृहस्थोंको अधिज्ञान होता है ? गौतमस्यामिने
उत्तर दिया कि हे आनन्द गृहस्थोंकोभी अधिज्ञान होता है ।
आनन्द बोला कि हे भगवान् मुझे अधिज्ञान हुआ है जिसका अ-
रिथे मैं पूर्व पश्चिम आर दक्षिण इन्ही तीनों दिशा उधणनमृद्धमें
पाचमो पाचमो योजन तथा उत्तर दिशामें चूल हेमयन्त पर्यन्त नद
उध्व मोधमकल्प, अधो रत्नप्रभा नरकका लालुच पान्थडा देखला
हु । यह सुनके गौतम स्यामि बोलेकि हे आनन्द ! गृहस्थका इतना
विस्तारवाला अधिज्ञान नहीं होता है वास्ते हे आनन्द ! मत्त था-

तका आलोचना कर प्रायश्चित्त लेना चाहिये । आनन्दन कहा कि न भगवान् ! क्या यथा वस्तु देख उतना कहनेवालेका प्रायश्चित्त आता है अर्थात् क्या मर्य यात्रनयागकाभी प्रायश्चित्त आता है । गौतम याग कि न आनन्दसत्य यात्रनयागका प्रायश्चित्त नहीं आता है । आनन्दन कहा कि मर्य यात्रनयागको प्रायश्चित्त नहीं आता हा ता ह भगवान् ! आपही इस म्यानका आगचन कर प्रायश्चित्त ला । इतना सुन गौतमस्वामिका शका हुए । तब सीधाही भगवान् पाम जाने सर वार्ता कही । भगवानने परमाया कि हे गौतम तुमही इस यानका आलोचना करा । गौतमस्वामि आलोचना करके आनन्द श्रायकके पाम आये और अमत्क्षामणा करके अपन म्यानपर गमन करते हुए ।

आनन्द श्रायकन मात्र चौदह वर्ष श्रायक व्रत पात्रा, साठ पात्र वर्ष प्रतिमात्रा पात्रन किया अ तमें एक मासका अनशन कर समाधि सयुक्त यात्रकर सौधम नामका देख गक्रमें अरुणके मानम क्यार पन्थोपमने स्थितिवाला देख हुआ । उही देखताका भव आयुष्य स्थितिका पुण कर उताने महाविदेह भैत्रमें अष्टे उत्तम जाति-कुलके अन्दर जन्म धारण कर दृढपात्रेकी माफीक श्रेयली धर्मका स्वीकार कर अनेक प्रकारय तपस्यमसे कर्म भय कर वैद्यज्ञान प्राप्त कर मोक्षम जायेगा । इसी माफीक श्रायक पगवाभी अपने आत्म कल्याण करना । नम

इति आनन्द श्रायकाधिकार मन्त्रिस्त सार समाप्तम् ।



(२) अध्ययन दुसरा कामदेव श्रावकाधिकार ।



वसुपानगरी पुणेभट्ट उद्यान जयशत्रुगजा, कामदेव गाथा-
पति जोसके भद्राभार्या, अटाग घोड सौनयाका द्रव्य-जिस्मे
उ घोड धरतीमें, उ घोडका व्यापार, उ घोडकी घरघिमी और
उ बगै अयात् माठ हजार गौ (गाथा) यावन आनन्दकी माफीक
थी-भगवान धीरप्रभुका पधारगा हुआ, राजा और नगरमें लोर
वन्दनका गन कामदेवभी गया । भगवानने देशना ली । कामदेवन
आनन्दकी माफीक स्वच्छा मर्यादा रखके सम्यक्त्व मूल धारण
धन धारण किया । यावत् अपने ज्येष्ठपुत्रका गृहस्थभाग सुप्रसन्नकर
आप पीपथशालामें अपनी आत्म रमणनाम रमण करने लगे ।

एक समय अर्ध रात्रिके समयमें कामदेवके पास एक सि
ध्याष्टि देवता उपस्थित हुआ, वह देवता एक पीशाचका रूप
जो कि महान भयकर-देवनेसे ही वायरोसे कहेजा कपने लग
जाता है, एसा गैर रूप प्रमियठन्धिसे धारण कर जहापर काम
देव अपनी पीपथशालामें प्रतिमा (अभिग्रह) धारण कर बैठे थे,
वहापर आया और बड़े ही क्रोधसे कुपित हो नैत्रांको लाल
राखे और निलाडपर तीनशर करके बोलता हुआ कि भो काम
देव ! मरणकी प्रार्थना करनेवाले, पुन्यहीन कालीचतुर्दशीके दिन
जन्मा हुआ, लक्ष्मी और अच्छे गुरुहित तु धर्म पुन्य स्वयं और
मातृका कामी हो रहा है । इन्होंकी तुने पीपासा रग रही है । इस
बातकी ही तु आराधना रग रहा है परन्तु देव ! आज तरेको
नेग धर्म जो शील व्रत पञ्चग्याण पीपथ और तुमारा प्रतिशान्ति

चलना-क्षोभ पामना-भंग करना तरेको नहीं कल्पता है । किन्तु मैं आज तरा धर्मम तुज शोभ कगनेको-भंग कगनेकी आया हू । अगर तू तेरी प्रतिज्ञाको न छोड़ेगा तो देख यह मरा हाथमें नि लापल नामका तीक्ष्ण धारायुक्त खड्ग है इन्हींमें अभी तेरा खड खड करदुगा जीममें तू आर्त्तध्यान, रौद्रध्यान करता हुआ अभी मृत्युको प्राप्त हो जायगा ।

कामदेव धायक पिशाचरूप देवका कटक और दारुण शस्त्र भक्षण कर आत्माक एक प्रदेश मात्रमें भय नहीं, ग्राम नहीं, उद्देश नहीं, शोभ नहीं चलिता नहीं, मन्नातपना नहीं जाता हुआ मौन कर अपनी प्रतिज्ञा पालन करता ही रहा ।

पिशाचरूप देवन कामदेव धायकका अक्षाभीत धम यान करता हुआ देखक और भी गुम्स्तार साथ दो तीनपार गही घबरा सुनाया । परन्तु कामदेव लगार साथ भी शोभित न लाकर अपने आम यानमें ही रमणता करता रहा ।

मायी मिथ्यादृष्टि पिशाचरूप देवन कामदेव धायकपर अत्यन्त माध करता हुआ उही तीक्ष्ण धारावाली तलवार (खड्ग) से कामदेव धायकका खड खड कर दिया उस समय कामदेव धायकको घोर वेदना-अत्यन्त वेदना अन्य मनुष्यासे महान करना भा मुश्कील है एसी वेदना हुई थी । परन्तु जिन्होंने चैतन्य और जडका स्वरूप जाना है कि मग चैतन्य तो मदा आनन्दमय है इन्हीका तो किन्ही प्रकारको तकलीफ है नहीं और तकलीफ है इन्ही शरीरका वह शरीर मग नहीं है । यसा ध्यान करनेसे जो अति वेदना हो ता भी आर्त्तध्यानादि दुष्ट परिणाम नहीं हाते हैं । योतगायक शासनका यही ना महत्त्व है ।

विशाखरूप देवन कामदेवको धमपत्रमें नहीं बना हुआ देखके आप पीपधशालामें निकलकर विशाखरूपको छोड़के एक महान हस्तीका रूप बनाया। यह भी बड़ा भारी भयकर गीठ आग जिनमें दन्ताशुल यह ही तीक्ष्ण थे। यावत् देव हस्तीरूप धारण कर पीपधशालामें आये रहनेकी माफीक वागता हुआ कि भा कामदेव ! अगर तू मेरा धर्मको न छोड़ेगा तो मैं अभी तेरेका इस मूढ़ द्वारा एकद आकाशमें फेंक दूंगा और पीपु गीठते हुये तुमको यह मरा तीक्ष्ण दन्ताशुल है इसपर तेरेको पां दूंगा और धगतीपर खुद गगदुंगा तावे तू आत्मध्यान गीठल्या करता हुआ मृत्यु धर्मको प्राप्त होगा। येना दो तीन दूरे दहा, परन्तु काम-देव धायक तो पूर्वयत् अटल-निघल आत्मध्यानमें ही रमण करता रहा भायना मर्च पूर्वयत् ही समझना।

हस्तीरूप देवन कामदेवको अगम देखके बहानी प्राध करना हुआ कामदेवका अपनी मूढ़में एकद आकाशमें उछाट दीया और पीछे गीठते हुयेका दन्ताशुलमें जैसे श्रीशुल्म पी दित है इसी माफीक एकदरे धगतीपर गगदके खुब तपरीक ही परन्तु कामदेवने एक प्रदेशका भी धर्ममें चरित करनेको देख समर्थ नहीं हुआ। कामदेवने अपने यान्ने हुय कर्म समझके उन्ही उच्चल पेदाको सम्यक् प्रकारमें महन करी।

देवने कामदेवका अटल-निघल देखके पीपधशालामें नि-
 चर हस्तीके रूपका छोड़ वैक्रिय लब्धिते एक प्रचण्ड आशीर्विष
 सपका रूप बनाके पीपधशालामें आया। देखनेमें उडाही भयकर
 था, यह बोलने लगा कि हे कामदेव ! अगर तू मेरा धर्म नहीं
 छोड़ेगा तो मैं अभी इस विष सहित दाढामें तुजे मार डालुंगा
 इत्यादि दुषचन बोला परन्तु कामदेव चिन्तु शोभ न पाता

हुवा अटल-निमल रहा। दुष्ट देवने कामदेवको बहुत उपसंग किया परन्तु धर्मवीर कामदेवको एक प्रदक्ष मात्रमें भी श्लाभित करनेको आखीर असमर्थ हुआ। देवताने उपयोग लगाय देगा तो अपनी सब दुष्ट वृत्ति निष्फल हुई। तब देवताने मण्डपा रूप छोड़ कर एक अच्छा मनाहर सुन्दरगङ्गाकार यन्त्रामुपण भदित देव रूप धारण किया और आकाशक अन्दर स्थित गङ्गा गङ्गाता हुआ कि हे कामदेव ! तु धन्य हैं पूर्ण भयमें अच्छे पुण्य किया है। हे कामदेव ! तु कृताय है। यह मनुष्य जन्मको आपने अच्छी तरहने सफल किया है। यह धर्म तुमको मीठा ही प्रमाण है। आपकी धर्मके अन्दर दृढता बहुत अच्छी है। यह धर्म पाया ही आपका सार्वक है। हे कामदेव ! एक समय सौधम द्वायक की सौधमा मभावे अन्दर शम्भु-प्रने अपने देवताकार वृद्धमें बैठा हुआ आपकी ताराफ और धर्मके अन्दर दृढताकी प्रशंसा करीयी परन्तु मैं मृदमति उस घातको टीक नहीं ममजके यहापर आवे आपकी परिक्षाके निमित्त आपकी मैंने बहुत उपसंगे किया है परन्तु हे महानुभाव ! आप निर्भय प्रयत्नसे विचित्र भी भोभा समान नही हुवे। याम्ने मैंने प्रत्यक्ष आपकी धर्म दृढताको देखी है। हे आत्मवीर अब आप मेरा अपराधकी क्षमा कर, गस्ती धारधार भमा याचना करता हुआ देव गान्ता कि अब ऐसा शाय मैं कभी नहीं करेगा इत्यादि कहता हुआ कामदेवको नमस्कार कर स्वर्गको गमन करता हुआ।

‘‘पश्चात् कामदेव श्रायक निरुपसंग जातक अपन अभि प्रद (प्रतिष्ठा) को पागता हुआ।

जिस गङ्गीक अन्दर कामदेव श्रायकका उपसंग हुआ था

उसीके प्रभातकालमें सूर्यादिके धरत कामदेवको समाचार आया कि भगवान् वीरप्रभु पूर्णभद्र उद्यानमें पधारें हैं। कामदेवने विचार कि आज भगवान्को वन्दन-नमस्कार कर देशना ध्वज करके ही पौषध पाँगे। ऐसा विचार करते ही अच्छे सुन्दर वस्त्राभूषण धारण कर भगवान्का उन्दन करनेको गया। राजादि और भी परिपक्वा आइ थी। उन्होंनेको भगवान्ने जगतारक देशना दी। देशना देनेके बादमें भगवान् वीरप्रभु कामदेव श्रावक प्रति बोले कि हे कामदेव! आज रात्रीके समय देवताने पिशाच, दम्नि और सर्प इन तीन रूपों बनाकर तेरेको उपसर्ग किया था ?

कामदेवने कहा कि हाँ, भगवान् यह बात सत्य है। मेरेको तीनों प्रकारसे देवने उपसर्ग किया था।

भगवान् वीरप्रभु उहुतसे अमण-निर्ग्रह-साधु तथा माध्वी-श्रीका आमन्त्रण करने कहने लगे कि हे आर्य ! यह कामदेवने गृहस्थावासमें रह कर घोर उपसर्ग सम्यक् प्रकारसे महन किये हैं। तो तुम लोगों तो दीक्षाग्रत धारण कीये हैं और द्वादशागीके ज्ञाता हो चाहते तुम लोगोंका देव, मनुष्य और तिर्यन्क उपसर्गोंको अथर्व सम्यक् प्रकारसे सहा करना चाहिये। यह अमृतमय धवन ध्वज कर माधु माध्वीयानि विनय सहित भगवान्ने वचनको स्वीकार किया।

कामदेव भगवान्का प्रश्नादि पूछ, वन्दन-नमस्कार कर अपने स्वान्न प्रति गमन करता हुआ और भगवान् भी वहासे विहार कर अन्य नेशमें विहार करते हुये।

कामदेव श्रावकने १८॥ सठे चौदह वर्ष गृहस्थावासमें श्रावक धर्मका पालन किया और २॥ माडेपाच वर्ष प्रतिमा वहन करी।

अन्तमें एक मामका अनशन कर आलोचना कर समाधिमें काल कर मौधमदेवठाकम अरुण नामका विमानमें न्यार पल्यापम स्थितियाला देख हुआ। वहासे आयुष्य पूर्ण कर महाविदेह क्षेत्रमें माभ जावगा ॥ इतिशमू ॥ २ ॥

—•f(⊙)३—

(३) अध्ययन तीसरा चुलनिपिताधिकार

बनारसी नगरी काएक उद्यान, जयशत्रु राजा राज करता था। उस नगरीमे एक चुलनिपिता नामका गाथापति बडाही धनाढ्य था। उसको शोभा नामकी भार्या थी। चौबीस प्रौढ मोनै याका द्रव्य था। जिनमें आठ प्रौढ धरतीमें, आठ प्रौढ व्यापारमें और आठ प्रौढका घर धीप्रिमें था। आठ आठ वर्ग अर्थात् पन्नी हजार गौ (भार्या) थी। आनन्दक माफीक नगरीमे बडा माननीय था।

भगवान धीम्प्रभु पधारं। राजा और चुलनिपिता धन्दन करनेको गये। भगवानने धमदेशा दी। आनन्दकी माफीक चुलनिपिताने भा स्वइच्छा पग्माण गवके आवकर व्रत धारण कर भगवानका आवक बन गया।

एक समय पौषधशालामें ब्रह्मचर्य सहित पौषध कर आत्म रमणता कर रहा था। अर्द्ध रात्रीके समय एक देवता हाथमें निलोत्पल नामकी तलवार ले के चुलनिपित आवक के पास आया और कामदेवकी माफीक चुलनिपिताको भी धर्म छोडने की अनेक धमकीया दी। परन्तु चुल० धर्ममे भोभायमान नहीं

हुया। तब देवताने कहा कि अगर तू धर्म नहीं छोड़ेगा तो मैं आज तेरे ज्येष्ठ पुत्रको तेरे आगे मारके खड्ग कर रक्त, मेद, और मांस तेरे शरीरपर लेपन करदूंगा, और उसका शेषमांसका तुला रनाके नैलकी कड़ाहमें तेरे सामने पकाऊंगा। उसको देखके तू आर्नध्यान कर मृत्यु धर्मका प्राप्त होगा। तब भी चुलनिपिता क्षोभायमान न हुआ। देवताने एसाही अन्याचार कर देखाया। पुत्रका तीनतीन खड्ग कीया। तथापि चुलनिपिताने अपने आत्मध्यानमें रमणता करता हुआ उस उपसर्गकी सम्यक् प्रकारसे सहन किया। क्योंकि देवताने धर्म छोड़ानेका साहस किया था। पुत्रादि अनन्तियार मीला है यह भी कारण सग्रन्थ है। धर्म है तो निजवस्तु है। चुलनिपिताका अक्षोभ देख देवताने पहले की भाषीक कोपित होके दूसरे पुत्रको भी लाये खड्ग २ किया, तो भी चुलनिपिता अक्षोभ होके उपसर्गका सम्यक् प्रकारसे सहन किया। तीसरी दूधे कनिष्ठ (छोटा) पुत्रको लाये उसका भी खड्ग २ किया। तो भी चुलनिपिता अभोभ हो रहा।

देवने कहाकि हे चुलनिपिता ! अगर तू धर्म नहीं छोड़ेगा तो अब मैं तेरी माता जो भद्रा तेरे देवगुरु समान है उसको मैं तेरे आगे लाके पुत्राकी तरह अग्नी मारना। यह सुनके चुलनिपिताने सोचा कि यह कौड अनार्य पुरुष ज्ञात होता है कि जिन्होंने मेरे तीन पुत्राका मार्ग डाला। अब जो मेरे देवगुरु समान और धर्ममें सहायता देनेवाली भद्रा माता है उसको मारनेका साहस करता है तो मुझे उचित है कि इस अनार्य पुरुषको मैं पकड़ दूँ। ऐसा विचार कर पकड़नेको तैयार हुआ। इतनेमें देवता आकाशमें गमन करता हुआ। और चुलनिपिताके हाथमें एक स्थभ आगया और कोराहल हुआ। इस हेतु भद्रा

माता पापधशालामे आए बोली कि हे पुत्र ! क्या है ? चुलनि-
पिताने सय यात यहो । तब माता बोली कि हे पुत्र ! तेरे पुत्राका
किमीने भी नहीं माग है किन्तु काह देवता तुमे श्रांभ करनेकी
आयाथा उनन तुझे उपमग किया है ! ता ते पुत्र ! अथ तु जा
रात्रीमें बोलाहर कीया है उससे अपना नियम-व्रत पापधया
भंग हुया है चास्त इसकी आलाचना कर अपने व्रतका शुद्ध
करना । चुलनिपिताने अपनी माताका पथनको स्वीकार कीया ।

चुलनिपिताने माढाचौदह वष गृहस्थायात्मनं रहये धायक
व्रत पाला, मादेपाथ वष इग्यारे प्रतिभा यहन करी, अन्तमें एक
मासका अनसन कर समाधि सहित वाङ्कर सौधर्म देवलोकमें
अरुणप्रभ नामका देवधिमानमे स्थार पल्योपमकी स्थितियाग
देव हुया है । यहासे आयुष्य पूणकर महाविदेह क्षेत्रमें मनुष्य
हो दीक्षा ले वचलज्ञान प्राप्त हो मोक्ष जायेगा ॥ इतिशम ॥ ३ ॥



(४) चौथा अध्ययन सूरदेवाधिकार

यतारम्भी नगरी काष्टक उद्यान जयशत्रु राजा था । उस नम
रीमें सूरदेव नामका गायपति था । उनको धन्ना नामकी भाया
थी । कामदेवके माफीक अठाग झाड प्रव्य आर माट हजार
गाया थी । किसीने भी पराजय नहीं हो सक्ता था ।

भगवान् वीरप्रभु पधारे । राजा प्रजा और सूरदेव वन्दनको
गया । भगवानने धर्मदेशना दी । सूरदेवने आनन्दके माफीक
स्वइच्छा मयादा कर सम्यक्त्व मूर्त वारह व्रत धारण किया ।

एक रोज सुरादेव पौषधशालामें पौषध कर अपना आत्मध्यान कर रहा था ।

अर्ध रात्रीके समय एक देवता आया । जैने चुलनिपिताया उपसर्ग किया था इसी माफीक मृगदेवको भी किया । परन्तु इन्हींके एरेक पुत्रका पाच पाच गड किया था और चौदीयाक कदने लगा कि अगर नु तेरा धर्म नहीं छोड़ेगा तो मैं आज तेरे शरीरमें जमतममगादि साँह गड़े गोग है यह उत्पन्न कर दूंगा । यह सुनते सुरादेव चुलनिपिताकी माफीक पकड़नेको प्रयत्न किया । इतनेमें देवने आकाशगमन किया । हाथमें स्थभ आया । फोलाहाल सुनते यन्ना भाषाने कहा है स्वामिन ! आपकें तीना पुत्र धरम मुन हैं परन्तु कोई देवने आपका उपसर्ग किया है यापत् आप इस स्थानकी जागेचना करना इस बातकी मृग-देवने स्वीकार करी ।

सुरादेव आवकने सादेबौद्ध धर्म ग्रहस्यावामम रह कर भाष्य व्रत पाला, साडेपाच धर्म तक इग्यारे प्रतिमा बहन करी । अन्तमें आगेचना कर एक मामका अनशन कर समाधिपूयक काल कर साधर्मदेयलांकमें अरुणकन्त नामका रैमानमे म्याक पर्योपमकी स्थितिगग देवता हया । याने महाविदेहक्षेत्रमे मोक्ष जायेगा ॥ इतिशम ॥ ४ ॥



(५) पाचवा अध्ययन चुलगतकाधिकार.

आलभीया नगरी, मगधनोधान, जयशत्रु राजा था । उस नगरीमें चुलगतक नामका गाथापति रसता था । उसको राजकुल

नामकी भाया थी और अठाग्ह काँडका द्रव्य, साट हजार गायी यायत् घडाही धनान्ध था ।

भगवान घोरप्रभु पधारे । राजा, प्रजा और चुलशतक वन्दनको गये । भगवानने अमृतमय देशना दी । चुलशतक आनन्द का माफीक स्पर्शच्छा भयादा कर सम्यक्त्व मूत्र चारह व्रत धारण कीया ।

चुलनिषिणाकी माफीक इन्धो भी द्यताने उपमग कीया । परन्तु पक्के पुत्रके सात सात खड किया । चौथी श्रवत देवता कहने लगा कि अगर तु धर्म नहीं छोटेगा तो मैं तेरा अठारा थोड मोनैयाका द्रव्य इसी आलभोया नगरीक दो तीन यायत् बहुतसे रास्तेमें फँकदगा कि जिह्वाके जरिये तु आर्तभयान करता हुआ मृत्यु पायेगा ।

यह सुनक चुलशतकन पूववत् पकडनेका प्रयत्न काया इतनेमें देव आकाश गमन करता हुआ । कीठाहल सुनके थहला भायाने कहा कि आपके तीनों पुत्र घरमे सुने हैं यह कौन देने आपको उपमग किया है । वास्ते इस बातकी आशेचना लेना । चुलशतकने स्वीकार किया ।

चुलशतकन साढे चौदह वय गृहधामम आधकपणा पाछा, माने पाच वर्ष इग्याग प्रतिमा बहन कीया, अन्तम आलोचना कर एक माम अममन कर नमाधिमे काल कर सौधम देवलोकके अरूणश्रेष्ठ वैमानमें न्याग पत्योपमकी स्थितिमे देवपणे उत्पन्न हुआ । यहासे आयुग्य पूर्णकर महाविदहमें मोत्र जावेगा । इतिशम ॥ - ॥



(६) छद्म अन्वयन कुडकोलिकाधिकार

कपीलपुरनगर सत्स्र आग्न उत्थान त्रयशत्रुगजा, उर्मोनग
रीमें कुडकोलिक नामका गाथापति उडाही धनान्ध वसता था।
उमको पत्नी नामकी भार्याथी कामदेवकी माफीक अठाग मोड
मोनिया और साठ हजार गायी थी।

भगवान श्रीगुरु पचारे, गजाप्रजा और कुडकोलिक बन्दा
करनेका गया। भगवानने धमदेशना दी। कुडकोलिकने स्व
इच्छा मर्यादाकर सम्यक्त्व मूल गुरु व्रत धारण किया।

एक समय मध्याह्नकान्की उल्लत कुडकोलिक आजक
अशाक घाडीमें गयाथा, सामायिक करनेक इगदासे नामाकित
मुद्रिकादि उतावक पृथ्वी शीतपटपर रखे भगवानक फरमाये
इय धर्म चितवन कर रहा था।

उस समय एक देवता आया। वह पृथ्वी शीतपटपर रखा
हुइ नामाकित मुद्रिकादि उठाक देवता आकाशमें स्थित रहा
हुवा कुडकोलीका धायक प्रति ऐसा बालना हुना।

भा कुडकोलिया! सुन्दर है मखरी पुत्र गोशालका धर्म
कयापि जिन्हयि अन्दर उत्स्थान (उठना) कर्म (गमन करना)
बल (शरीरादिका) धीर्य (जीवप्रभाव) पुरुषाकार (पुरुषा
वाभिमान) इन्होका आवश्यकता नहीं है। मय भाय नित्य है
अथात् गाशालाक मनमें भवितव्यताको ही प्रधान माना है वाम्ने
उत्स्थानादि क्रिया कर करनेकी आवश्यकता नहीं है। और भग
वान महावीर स्वामिका धर्म अच्छा नहीं है क्योंकि जिसके
अन्दर उत्स्थान कर्म, बल धीर्य और पुरुषाकार धनगये हैं

अथात् सय कायकी सिद्धि पुरुषार्थमें ही मानी है थास्त ठीक नहीं है ।

यह सुनकर कुडकालिक धायक बाला कि हे देव ! तब कहता है कि गोशालाका धर्म अच्छा है और वीरप्रभुका धर्म खराब है । अगर उत्स्थानादि बिना कायकी सिद्धि हाती है तो मैं तुमको पुछता हूँ कि यह प्रत्यक्ष तुमका देवता मन्त्रधी ऋद्धि मीली है यह उत्स्थानादि पुरुषार्थमें मीली है या बिना पुरुषार्थमें मीली है ? यह प्रत्यक्ष तेरा उपभोगमें आइ है । देवने उत्तर दिया कि मेरेका यह ऋद्धि मीली है यह अनुस्थान थायन् अपुरुषार्थमें मीली है । यावत् उपभागमें आइ है । आवक कुडकालिक बोला कि हे देव ! अगर अनुस्थान थायन् अपुरुषार्थमें ही जा देवऋद्धि मीलती है तो जिन जीवाका उत्स्थानादि नहीं है (एवेन्द्रियादि) उन्हाका देवऋद्धि क्यों नहीं मीलती है । इस थास्ते हे देव ! तेरा कहना है कि गोशालाका धर्म अच्छा और महावीर प्रभुका धर्म खराब यह सब मिथ्या है अर्थात् झुठा है ।

यह सुनकर देव बापस उत्तर देनेमें अममथ हुआ और अपनी मायतामें भी शका कक्षादि हुई । शीघ्रतामें यह नामांकित मुद्रि पादि बापस पृथ्वीशीलापटपर ग्यक् जिन दिशामें आया था उन्ही दिशामें गमन करता हुआ ।

भगवान् श्रीरप्रभु पृथ्वी महलको पवित्र करत हुए कपोलपुर नगरके सहस्राम्राधानमें पधारें । कामदेवकी माफीक कुडकालिक धायक बदनकी गया । भगवानने धर्मकथा परमाइ । तत्पश्चात् भगवानने कुडकालिक धायकको कहा कि हे अव्य ! कल मध्याह्नमें एक देवता तुमारे पास आया था यावत् हे धमणोपासक ! तुमने ठीक उत्तर देके उस देवका पराजय किया । कामदेवकी माफीक

भगवानने कुटकोलिक ध्यायकरी तारीफ करी। गार्हमें बहुतसे माधु माध्योर्याका आमन्त्रण करके भगवानन कहा कि हे आर्यों। यह गृहस्थने गृहग्राममें रहने हुये भी हेतु द्रष्टव्य प्रभ्रादि करके अन्य तीर्थ अर्थात् मिथ्यायादीर्योंका परगन्ध किया है। तब तुम गम ता हादशागरे पाटी हो यान्त तुमका तो विशेष मिथ्या यादीर्योंका परगन्ध करना चाहिये। इन्ही दिनशिक्षाको मर्थ माधुआनि स्वीकार करी। पीडे कुटकोलिक ध्यायक भगवानसे प्रभ्रादि पुष्ट और यन्दन-नमस्कार कर अपने स्थान प्रति गमन करता हुआ। और भगवान भी अन्य जनपद-देशमें विहार करते हुये।

कुटकोलिक ध्यायकने मादेचोदह वर्ष गृहग्राममें ध्यायक व्रत पाटन किया और सादेपाच वर्ष प्रतिमा यहन रगी। मयाधिशार कामदेयकी माफीक कहना अन्तम आलोचना कर एक मामरा मतशा ममाधि सहित कालधर्म प्राप्त हुआ। वह मोधर्मदेयगोक्क अम्णव्यज नामरा पैमानमें व्याग पल्योपम स्थितिगता देव हुआ। घटास आयुष्य पूण कर महाविदेह क्षेत्रमें आनन्दकी माफीक मनुष्यमयमें दीक्षा कर केरगज्ञान प्राप्त कर मोक्ष जायेगा।

—→(६८)←—

(७) सातवां अध्ययन शकडालपुत्राधिकार.

गोगमपुनगग मत्स्य योयान जयशुगजा, उम नन्दे
 चन्दर शकडालपुत्र नामका भूमराग या उमको अग्रमिन्त्र
 नामकी भार्यायी नीन काड मोनया द्रव्य या। जियमें रद ह्ये
 भरतीमें, एक कोड व्यापारमें एक कोड वर विद्वाने या श्री

एक बग अथात् दशहजार गायोथी । तथा शकडालपुत्रके पाग सपर बाहीर पाचमो कुभकारकी दुषानेथी । उसमें बहुतसा नाकर-मजुर थे कि जिनमें कितनेकका ता दिन प्रथे नाकरी दि जानि थी कितनेकको ग्राम प्रति-थण प्रति मोकरी दी जाती थी वह बहुतसे मोकरी मे कीतनेक मट्टीके घड़े, अधघड़, भारी, कल जरा, आदि अनक प्रकारके घग्गन घनातेथे, कितनेक नाकर पोलासपुग्ग राजमागमें पैठथे वह घडादि मट्टीर घरतन प्रति दिन देवा करतेथे, इमीपर शकडालकुभकारकी आजीविषा चलतीथी ।

शकडालकुभकार आजीविषा मतिथा अधान् गोशालाका उपामक था । वह गोशालेका मतके अयकी ठीक तौरपर ग्रहण कियाथा यात्रन् उसकी दादहाद की मीजी गोशालाके धर्ममें प्रेमानुरागता हो ग्हीथी इतना दि नहीं यन्के जा अर्थ तथा पर मार्य जानताथा ता एक गोशालाका मतका ही ग्रामताथा, शेष सर्व धर्मपालाका अनर्थ ही समझता था, गोशालेका धर्ममें अपना आत्माको भावता हुवा मुखपथक विवरताथा ।

एरदिन मध्याह्नक समय शकडालकुभकार अशोक बाहीमें जाक गोशालेका मत था उनी माफाक धर्म प्रवर्तिमें घत रहा था । उन समय एक देवता शकडालके पास आया, वह देव आकाशमें रहा हुवा जिन्हाके पाषाणिं चुपर गमक ग्हीथी । वह देव शक डालकुभकार प्रति बोल्ता हुवा कि ह शकडाल ' महामहान जिसको उत्पन्न हुवा है केवलज्ञान केवल दशन तथा भूत नयिष्य घतमानको जानने वाले, जिन=अग्निहत=केवली मयह, प्रैगोक्य पजित देव मनुष्य असुरादिकी अर्गेन घन्दन पजन करने योग्य, उपासना-सेवा-भक्ति करने योग्य, या

चत् मोक्षके क्रामी, कल यहापर पधारेंगे । हे शकडाल ! उसका तुम घन्दना करना यावत् सेवा-भक्ति करके पाट, पाटला, मकान सस्तारक आदिका आमन्त्रण रना । ऐसा दो तीनवार कहके यह देयता जिम दिशासे आयाथा उस दिशामे चला गया ।

दुसरे ही दिन भगवान् धीरप्रभु अपने शिष्य मडल-परिया रसे युक्त पृथ्वी मडल पवित्र रते पोलामपुर नगरके गहार मह आगोशामे पधारे । राजा, प्रजा भगवानको घन्दन करनेको गये । यह बात शकडालको मालुम हुइ तत्र शकडाल गोशालाका भक्त होने पर भी स्नान कर सुन्दर वस्त्राभूषण सज बहुतसे मनुष्योंको साथ ले के पोलामपुर नगरके मध्य बजारसे चलता हुवा भगवानके समीप आये । घन्दन नमस्कार कर योग्य स्थानपर बैठा । भगवानने उस विस्तारवाली पण्डितको धर्मदेशना सुनाइ जब देशना समाप्त हुई तब भगवान । शकडालपुत्र दुभकार गोशालाके उपासकसे कहने हुत्र कि हे शकडाल कल अशोकवाडीमें तरे पास एक देयता आयाथा, उमने तुमका कहाथा कि क' महामहन्त आयेगा यावन् उन्हींको पाचसो दुकाना ओर शय्या सवागका आमन्त्रण करना । क्या यह बात सत्य है ? हा, भगवान यह बात सत्य है मुझे ऐसाही ब्रह्माथा ।

हे शकडाल ! देयताने गोशालाकी अपेक्षा नही कहाथा । इस पर शकडालने विचार लिया कि जो अग्रिहत=केंचली=मर्घज्ञ=हैं तो भगवान धीरप्रभु ही हैं । धास्ते मुझे उचित है कि मेरी पाचसो दुकानों ओर पाट पाटला शय्या मन्थारा भगवानसे आमन्त्रण कर । शकडालने अपनी दुकाना आदिकी आमन्त्रण करी ओर भगवानने भविष्यका लाभ जानके स्वीकार कर पोलामपुरके गहार पाचसो दुकानों ओर शय्या मन्थाराका पडिहाग "लेके पीछा देना" ग्रहन करग ।

एक समय शकडाल अपने भक्तानक अन्दरसे बहुतसे मट्टीके धरतनोको याहार धूपमे रख रखाया, उन्ही समय भगवान शक डालसे पुच्छा कि हे शकडाल ! यह मट्टीके धरतन तुमने कैसे बनाया है ? । शकडालने उत्तर दिया कि हे भगवान पहिले हम लोग मट्टी लायेथे फीर इन्हाके साथ पाणा गंगादिके मीलाके चक्रपर चडाके यह धरतन बनाये है ।

हे शकडाल ! यह मट्टीके धरतन तैयार हुवा है यह उत्था-
नादि पुरुपाथे करनेसे हुये है कि यिन पुरुपाथसे ।

हे भगवान ! यह सब नित्यभाव है भवीतव्यता है इसमें
उत्थानादि पुरुपाथकी क्या जरूरत है ।

हे शकडाल ! अगर कोन पुरुष इस तरे मट्टीका धरतनको
कीसी प्रकारसे फोडे तोडे इधर उधर फेंक दे चौरीकर हसन करे
तथा तुमारी अग्रमिता भावासे अत्याचार अघात भोगविलास
करता हो ता तम उन्ही पुरुषको पकटेगा नही ढड करेगा नही
यावत् जीवस भारेगा नही तत्र तुमाग अनुस्थान यावत् अपुरुपा-
थे और सब भाष नित्यपणा कहता ठीक होगा, (ऐसा धरताय
दुनियाम दीसता नहीं है । यह एक बीस्मकी अनीति अत्याचार
है और जहापर अनीति अत्याचार हो वहापर धम ऐसे हो
सक्ता है) अगर तुम कहागा कि मैं उन्ही नुकसान कता पुरु-
षको मारगा फड़ुगा यावत् प्राणस घात करगा तो तम क
हना अनुस्थान यावन अपुरुपाथार सब भाव नित्य है यह
मिथ्या होगा । तता सुनतेही शकडाल का ज्ञान हो गया कि
भगवान परमान है यह सब है क्या कि पुरुपाथ यिना कीसी
भी कार्यकी सिद्धि नही होती है । शकडालने कहा कि हे भगवान
मेरी इच्छा है कि मैं आपके मुखादिदमे विस्तारपूर्वक धर्म

श्रवण कर तब भगवानने शकडालकी विस्तारने धर्म सुनाया । यह शकडालपुत्र गोगालेका भक्त, भगवान वीरप्रभुकी मधुर भाषासे स्याद्वाद रहस्ययुक्त आत्मतत्त्व ज्ञानमय देशना श्रवण कर बड़े ही हर्षको प्राप्त हुआ, बोला कि हे भगवान ! धन्य है जा गजेश्वरगदि आपके पाम दीक्षा ग्रहण करते हैं मैं जना समर्थ नहीं हु परन्तु मैं आपकी समीप श्रावक धर्म ग्रहण करना चाहता हु । भगवानन परमाया कि जैसे सुख हो यन्त्रा करो परन्तु धर्म कायमें बिठस्य करना उचित नहीं है । तब शकडाल पुत्र तुभक्ताग्ने भगवानके पाम आनन्दकी माफीक सम्यक्त्व मूल धारह व्रतका धारण कीया परन्तु स्पर्शकृता परिमाण किया जिस्मे द्रव्य तीन मोड मोनैया तथा अग्रमिता भार्या और दुकानादि माकरी रखी थी । शेष अधिकार आनन्दकी माफीक समझना । भगवानकी वन्दन नमस्कार कर पोलामपुरन प्रसिद्ध मय्य उजार ही के अपने घरके आया और अपनी भार्या अग्र मित्ताका कहा कि मैंने आज भगवान वीरप्रभुके पाम यागह व्रत ग्रहण कीया है तुम भी जाओ भगवानने वन्दन नमस्कार कर यागह व्रत धारण करो । यह सुनक अग्रमिता भी उड़े ही धाम-धूम आहस्वरने भगवानका वन्दन नमस्कार कर अपने घरके आये अपने पतिकी आज्ञा सुप्रत करती हुई । अथ दम्पति भगवानके भक्त हो भगवानके धर्मका पालन करते रहे आनन्दमें रहने लग । भगवान भी वहाँसे विहार कर अन्य देशमें गमन किया ।

शकडाल तुभकार और अग्रमिता भार्या यह दोनों जीपार्जी

य आदि पदार्थों अच्छ ज्ञाता हो गये थे । और धायकप्रतका अ
च्छी तरहसे पालत हुए भगवानकी आज्ञाका पालन कर रहे थे ।

यह थाता गोशागने सुनि कि शकडाल० घोरप्रभुका भग
वन गया है तब यहास चलकर पोलालपुरया आया । उसका धि
चार था कि शकडालका समझाव पीछा अपन मतमें ले लेता ।
गाशालान अपने भंडापरण रखव मिधा ही शकडाल पुत्र
भावकय पास आया । किन्तु शकडाल धायकने गाशागका
आदर-मत्कार नहीं दिया, इतना ही नहीं किन्तु मतमें अच्छा
नी नहीं समझा और गुनया भी नहीं तब गाशागान बिचार
कि इन्हीं दुकानों सिवाय काह उताराकी जग भी नहीं है इस
थ लिये अर भगवान महावीर स्थामिका गुण कित्त करने थ
धिना अपनेका उतारनेको स्थान मीगना मुशकी है । एसा धि
चार कर गोशाला, शकडाल धायक प्रति याग-क्या शकडाल
पुत्र ! यहापर महा महान आय थ ?

शकडाल बोला कि कौनमा महा महान ?

गाशालान कहा कि भगवान घोरप्रभु महा महान ।

शकडाल बोला कि कौन कारणसे महामहान ?

गाशाला याग कि भगवान महावीर प्रभु उत्पन्न कचल्लान
कचल्ल दशतय धरनेवाले त्रैलोक्य पूजनीय थावन माभमें पधारन
गाले हैं (जिनका उपदश है कि महणा महणों) वास्ते भगवान
घोरप्रभु महामहान है ।

गाशाला बोला कि हे शकडाल ! यहा पर महागाप आये थ ?

शकडालने कहा कि कौन महागाप ?

गाशालाने कहा कि भगवान घोरप्रभु महागाप ?

शकडालने कहा किम कारण महागोप है ?

गोशालाने कहा कि समार रूपी महान् अटवी है जिम्में बहुतसे जीय, विनाशकी प्राप्त दाते हुए छिन्न भिन्नादि गरा- दशा जो पहुचते हुये श्री धर्मरूपी दंड हाथमें ले के मिथा मिद्वपुर प्रादण्ये अन्दर ले जा रहे हैं वास्ते महागोप योगप्रभु है ।

गोशालाने कहा कि हे शकडाल ! यहा महामार्गवाह आयें थ ?
शकडालने कहा कि कौन महामार्गवाह ?

गोशालाने कहा कि भगवान् योगप्रभु महामार्गवाह है ।
शकडालने कहा कि कौन कारणसे ?

गोशालाने कहा कि समाररूपी महा अटवीमें बहुतसे जीय नामते हुये-यायन् विदुषत हुये श्री धर्मपथ उतलाते हुये निवृत्तिपुरमें पहुचा देत है । वास्ते भगवान् योगप्रभु महामार्गवाह है ।

गोशाला योग कि है शकडाल ! यहा पर महाधर्मकथक आयें थ ?

शकडालने कहा कि कौन महाधर्म कथा कहनेवाले ।

गोशालाने कहा कि भगवान् योगप्रभु ।

शकडालने कहा कि किम कारणसे ।

गोशालाने कहा कि समारय अन्दर बहुतसे प्राणी नाश पावते यायन् उ-मार्ग जा रहे हैं उन्ही श्री सम्मार्ग लगानेके लिये महाधर्म कथा नेहके धनुर्गति रूपी ससारमें पाग रन्नेवाले भगवान् योगप्रभु महाधर्म कथाने कहनेवाले हैं ।

गोशालाने कहा कि हे शकडाल ! यहा पर महा निजामत आयें थ ?

शकडाल ने कहा कि कौन महा निजामक ?

गाशालान कहा भगवान् धीरप्रभु महा निजामक * ।

शकडाल ने कहा किम कारणम् ।

गाशालान कहा कि मनार समुद्रम यदुत्सा जाय दुयत्त हुय का भगवान् धीरप्रभु धर्मरूपी भाषमें बेटाक नियतिपुरीक सम्मुख कर देते ह वास्ते भगवान् धीरप्रभु महा निजामक है ।

शकडाल पाग कि ह गोशाला ! इम धम्वत तु मर भगवा नका गुणकीर्त्तन कर रहा है यथा गुण करनेस तु नितिश है विज्ञानवत् है तो क्या हमारे भगवान् धीरप्रभु साथ विषाद (शास्त्राथ) कर सकेगा ?

गाशालान कहा कि मैं भगवान् धीरप्रभु साथ विषाद करनका समर्थ नहीं ह ।

शकडाल बोला कि किम कारणसे असमर्थ है ।

गोशाला पाग कि हे शकडाल ! जैन काइ युषक मनुष्य यत्थान् यावत् विज्ञानवत् कडावीशक्यमें निपुण मज्जुत स्थिर शरीरवाला होता है यह मनुष्य पल्लव, सूयग, रुकड, तीतर, भट वर गद्दाग, पाग्वा, काग, जटकागादि पशुपक्ष हाथ, पग पाख, पुच्छ, शृंग, चर्म, रोम आदि जो जो अवयव पकड़त है वह मज्जुत ही पकड़ते हैं । इसी माफीक भगवान् धीरप्रभु मेरे प्रभु * तु यगग्णादि जा जा पकड़त है उहीमें पीर मुझ गालनेका अवकाश नहीं रहते है । अथात् उन्हाके आग में कौनसी चीज ह । धाम्ते = शकडाल ! मैं तुमारे धर्माचार्य भगवान् धीरप्रभुने साथ विषाद करनका असमर्थ ह ।

यह सुनक शकडालपुत्र आनर बोला कि ह गोशाला ! तु

आज माफ हृदयसे मेरे भगवानका यथायुक्त गुण करता है। रामन में तुझे उतरनेका पाचमां दुकाणे और पाटपाटला शय्या मथा राखी आशा देता हूँ किन्तु धमरूप समझवे नहीं देता हूँ। रामने जायो घुमकारकी दुकाणां आदि भोगथा (काममलो)। यम। गोशालो उन्ही दुकाणां आदिको उपभागमें लेता हुआ और भी शकडाल ग्रन्थे हेतु युक्ति आदिसे उद्धृत समझाया। परन्तु जिन्होंने भ्राम्यमान्ता तावज्ञान कर पहेचान लिया है। उन्हीका मनुष्यता क्या परन्तु देवता भी समथ नहीं है कि एक प्रवेश मात्रमें क्षोभ कर सत। गोशालकी मथ उद्युक्तियांको शकडाष्ट धायक न्यायपूर्वक युक्तियां द्वारा नष्ट कर दी। बादमें गोशाला पहाने विहार कर अन्य क्षत्रोंमें खला गया।

शकडालपुत्र धायक उद्धृत काल तक धायक मत पा गते हुये। एक दिन पौषधशालामें पौषध किया था उन्ही समय आधी रात्रिमें एक दय आया और घृत्नी पिताकी माफीक तीन पुत्रका ग्रन्थेकका नी ना खड किया और चांथीधार अग्रमिता भाया जा धमरायोंमें सहायता देती थी उन्हीका भारणेका देवन दो तीन दफे कहा तत्र शकडा गने अनार्य समझवे पकडनेका उठा थायत अग्रमिता भाया काग हल सुन मत्र पूर्वयत माडाथोदा यथ गृहस्थायाममें धायक मत माडापाथ यथ प्रतिभा अन्तिम आगेचनापूर्वक एक मानका अनशन कर समाधिमहित काल कर भीधमें देखलोकाये आरुण भूत वैमानमें प्याग पन्यापमजी स्थितिवाला देवता हुआ। पहाने आयुष्य पूण कर महाविदेह क्षेत्रमें उत्तम जानी-बुद्धमें उन्पन्न त्र कीर दीना लंके उद्वगज्ञान प्राप्त कर मान जायेगा ॥ इतिशाम् ॥

(८) आठवा अध्ययन महाशतकाधिकार ।

राजगृह नगर, गुल्शीला उद्यान, श्रेणिक राजा, उन्ही नगर में महाशतक गाथापति पडा ही धनान्य था जिन्होंने रेवती आदि तेरा भायाया थी । चौथीम ब्राह्मण ब्रह्म था, जिन्होंने आठ ब्राह्मण धरतामें, आठ ब्राह्मण पैपागमें, आठ ब्राह्मण वरचिवगमें और आठ गादुल अर्थात् अमी हजार गाया थी । और महाशतकने रेवती भायाय बापक परम आठ ब्राह्मण मोनैया और अमी हजार गाया दानमें आइ थी तथा शेष बारह भायायाय बापके घरमें एकैक ब्राह्मण मोनैया और दस दस हजार गाया दानमें आइ थी । महाशतक नगरमें एक प्रतिष्ठित माननिय गाथापति था ।

भगवान् श्रीरामभुक्ता पधान्ना राजगृह नगरमें गुणशीला उद्यानमें हुआ । श्रेणिक राजा तथा प्रजा भगवानका वन्दन करनेका गय । महाशतक भी वन्दन निमित्त गया । भगवानन देशना दी । महाशतकने आनन्दकी माफीक सम्यक्तर मूत्र बारह ब्रह्मोवागण कीया, परन्तु चौथीम ब्राह्मण ब्रह्म और तम्र भायाया तथा कास्ता पात्रम ब्रह्म देना पीछछा दुगुनादि लेना, गमा पैपाग रखा, शेष याग कर जीवादिपदार्थका जानकार हो अपनि आत्मगमनका अ दस भगवानकी आज्ञाका पालन करता हुआ विचरने लगा ।

एक समय रेवती भाया रात्रि समय कुटुम्ब जागरण करता गमा विचार किया कि इन्ही बारह शाक्याय कारणसे मैं मेरा पति महाशतकका माय पाचा इन्द्रियाय मुख भामश्रिगाम स्मृत प्रतामें नहीं कर सकु, वास्त इन्ही बारह शाक्याको अग्नित्रिप तथा शस्त्र प्रयोगमें नष्ट कर इन्होंने एक ब्राह्मण मोनैया तथा

एकेश्वर गंग गायिका मैं अपने कवजे कर मेरा भरतारके साथ मनु
ष्य सबधी कामभोग अपने स्वतन्त्रतामे भोगयती हुई गहु।

एसा विचार कर छे शोकयाका शत्रु प्रयोगमे और ७
शोकयोको विप्रयोगमे मृत्युके धामपर पहुचा दी अथान् मार
हाली। और उन्हाका बारह घोड़ी द्रव्य और बारह गोशुल्
अपने कवजे कर महाशतकके साथमे भागयिलाम करती हुई
स्वतन्त्रतामे रहने लगी। स्वतन्त्रता होनेमे रेयतीनि, गाथापतिने
माम मदिरा आदि भक्षण कराना भी प्रारम्भ कर दीया।

एक समय राजगृह नगरके अन्दर अणिक् राजाने अमागे
पहच यज्ञयाया या कि किसी भी जीवको कांइ भी मारने नहीं
पाये। यह बात सुनके रेयतीने अपने सुत मनुष्योंको बोला
कहा कि तुम जायो मेरे गायोंके गोशुल्मे प्रतिदिन दोग दोग
घोणा (घाछरू) मेरेको ला दीया करो। यह मनुष्य प्रतिदिन
दोग दोग घाछरू रेयतीका सुप्रत कर देना स्थाकार किया, रेयती
उन्हाका माम शोरा उनाके मदिराके साथ भक्षण कर रही थी।

महाशतक आवश्यकसाधिक चौदा वर्षे आवश्यक तत पालके अ
पन जेप्र पुत्रको घरभार सुप्रत कर आप पौषधशालामें जाने धर्म
साधन करने लग गया।

इदर रेयती मत्तमदिगदि आचरण करती हुई काम
विकारमे उन्मत्त बनके एक समय पौषधशालामें महाशतक धार
करे पाममें आइ और कामपिडित होके स्वइच्छा श्रृंगारके साथ
स्त्रीभाव अर्थात् कामक्रीडाके शब्दामे महाशतक आवश्यक प्रति
बोलती हुई कि भो महाशतक तु धर्म पुण्य स्वर्ग और मोक्षका
मो हो रहा है, इन्हाकि पिपामा तुमका लग रही है इसकी ही तुम
का कक्षा लग रही है जिसमे तुम मेरे साथ मनुष्य सम्यन्धी काम

बाग नहीं भागवाया था। यमा यचन सुनकर महाशक्त रविवर
 यचनको आदरसम्पन्न नहीं दीया और यमा भी नहीं और अ
 भी नहीं जानता मीर घर अपनी आत्मसम्पत्तिमें ही रमण क
 रगा। कारण यह सबे कर्मा की विरम्यता है अज्ञानय ज
 भीय क्या क्या नहीं करता है सब कृच्छ्र करता है। रेवतीने
 मीरघार कहा परन्तु महाशक्तवन रीत्यकृत भाग्य नहीं
 प्राप्त रचनी अपन स्थान पर चली गई।

महाशक्तवन भायकवि हृद्यांग प्रणिमा यदन क
 माना पाद्य धूप तब धीरे तपभया घर अपन शरीरवा सुप
 न्तुय यमा दीया अग्निम आशेषना घर अनशन घर द
 अनशनय अद्वैत शुभाख्यशायी विशुद्ध परिमाण प्रशस्य से
 होनसे महाशक्तवका अधिष्ठानात्पन्न हुआ। मा पूष प
 और दक्षिण दिशामें हजार हजार योजन और उत्तर दि
 युक्त समस्त पवन उत्थ मीधम द्युलोक अधा प्रथम रक्त
 मयका लोट्टुच नामका पाद्यहाकि रीगामी हजार वर्षोंकि मि
 तवसे क्षेत्रको द्वापर रगा।

रेवती और भी उन्मत्त हाथ महाशक्तव भायक अनशन
 या कहा घर आई और भी तब दा तीन चार अमभ्य भा
 भाग आसम्पन्न करा। रही समय महाशक्तवका माध भाया
 अधिष्ठानसे दत्तक योजाकि अर रेवती। तु आजस मान अ
 रात्रीमे अन्तर्ग रागये जगिये आर्तगोद ध्यातस अममा
 काय वरक प्रथम रत्नप्रभा तरक्य लालुच नामक पाद्यद्वेमे
 राभी हजार वर्षोंकि स्थितियाले नैरिचपन उत्पन्न हागी।
 यचन सुनकर रेवतीको थहा ही भय हुआ आन पामी उद्वेग
 हुआ विचार हुआ कि यह महाशक्तव मेर पर कृपित हुआ है

नाने मुझे कीमतुमौत मारेगा वास्ते पीछी हटती हुई अपने स्थान चली गई। वम, रेघतीकी मात गयींमैं उक्त गेम हो रे काग कर गेलुच पाखडेमें चौरामी हजार उर्पकी स्थितियाले नैगियापने नारकीमें उत्पन्न होना ही पडा।

भगवान् वीरप्रभु गजब्रह्म नगरके गुणशीलोद्यानमें पधारै गजादि वन्दनरा आये, भगवानने धर्मदेशना दी। भगवान् गौतम स्वामीको आमन्त्रण कर कहते हुये कि हे गौतम ! तुम महाशतक धाधकके पास जाओ और उन्हाका कहा कि अनशन क्रिये हुयेको मृत्यु होने पर भी परमात्माका दुःख हो एसी कठोर भाषा बोलती तुमको नहीं कहे और तुमने रेघती भार्याको कठोर शब्द बोला है वास्ते उन्हीकी आलोचना प्रतिष्मण कर प्रायश्चित ले अपनी आत्माका निर्मल बनाया। गौतमस्वामीने भगवानके वचनोंको सधिनय स्वीकार कर वहासे चलके महाशतक धाधकके पास आये। महाशतक, भगवान् गौतमस्वामीको आते हुए देख महर्षे वन्दन नमस्कार किया। गौतमस्वामीने कहा कि भगवान् वीर प्रभु मुझे आपके लीये भेजा है वास्ते आपने रेघतीका कठोर शब्द कहा है इसकी आलोचना करें। महाशतकने आलोचना कर प्रायश्चित लेके अपनी आत्माका निर्मल बनाये गौतमस्वामी को वन्दन नमस्कार करी फिर गौतमस्वामी मध्य यज्ञाग होर भगवानके पास आये। भगवान् वीर वहासे विहार कर अथ क्षेत्रमें गमन करते हुये।

महाशतक धाधक एक मासका अनशन कर अन्तिम म माधिपूर्वक वाठ कर मौधम देवगेके अम्णयतमिक धैमानमें प्यार पन्योपम स्थितियाले देवता हुया, वहासे आयुष्य पूर्ण कर महापिदेह संश्रम मोल जायेगा। इतिशम।

(६) नववा अध्ययन नन्दनीपिताधिकार ।

माधव्यी नगरी कोष्टकोद्यान जयशतु राजा । उन्ही नगरीमें नन्दनीपिता गाथापती था उन्हीने अश्वनि नामकी भार्या थी और बारह ब्राह्मण मोनइयाका द्रव्य तथा चार गोकुल अर्थात् चालीस हजार गाया थी जैसे आनन्द ।

भगवान पधारे आनन्दकी माफीक आवश्यक व्रत ग्रहण किये माधव चौदा वर्ष गृहस्थावासमें आवश्यक व्रत पालन किये माता पाच वर्ष आयक प्रतिमा ग्रहन करी अन्तिम आलोचन कर एक मामका अनशन कर समाधिपूर्वक काल कर साधर्म देवलोकक अर्णप्रय वैमानमें चार पत्योपम स्थितिमें देवता हुआ । वहासे आयुष्य पून कर महाविदेह श्रेष्ठमे मोक्ष जावेगा । इतिशम् ।

—*(६)*—

(१०) दशवा अध्ययन शालनीपिताधिकार ।

माधव्यी नगरी कोष्टकोद्यान जयशतु राजा । उन्ही नगरीमें शालनीपिता नामका गाथापति वसता था । उन्हाके फाल्गुनि नामकी भार्या थी । बारह ब्राह्मण मोनइयाका द्रव्य और चालीस हजार गाया थी ।

भगवान पधारे आनन्दकी माफीक आवश्यक व्रत ग्रहण किये । माता चौदा वर्ष गृहस्थावासमें आवश्यक व्रत, माता पाच वर्ष आयक प्रतिमा ग्रहन करी अन्तिम आलोचन कर एक मामका अनशन कर समाधिपूर्वक काल कर साधर्म देवलोकमे अर्णविल वैमानमें चार पत्योपमकी स्थितिमें देवतापणे उत्पन्न हुये वहा

मे आयुष्य पुर्ण कर महाविदेह क्षेत्रमें मोक्ष जायेगा नथथा और
दयाया श्रावकको उपमर्ग नही हुवा था । इतिशम् ।

॥ इति दण श्रावकाका सत्तिप्ताविकार समाप्त ॥

ग्राम	श्रावक	भायानाम	स्थिति	गौरव (गाथा)	सैमान नाम	ग्रामग
वाणायाग्राम	आनन्द	सेवानन्द	१ ५३	१००००	अक्षय	
उम्पापुरी	कामदेव	भगि	१८	१००	अक्षयभ	दरभुन
बनारसा	कुन्दापिता	सामा	१ ,	८०० ०	अक्षयप्रभा	
बनारसी	सुराज	रामा	१८	०००	अक्षयवन्द	
आलमिया	कुरुशतक	कट्टा	१८	००	अक्षयधे	
कपिलपुर	कुन्दापिता	कृमा	१८ ,	१००००	अक्षयवन्द	नर्मदा
पारागपुर	गङ्गाधर	अग्रमिना		१ ० ०	अक्षयवन्द	नर्मदा
राजग	मन्नापिता	रद-यादि	१	८०० ०	अक्षयवन्द	नर्मदा
गार्वा	नन्दनापिता	अन्ना	१ ,	१००००	अक्षयवन्द	०
मावन्दी	गार्वापिता	फारगुनी	१	८० ००	अक्षयवन्द	

आचार्य मन्त्रे श्रीगुरुभु है गृहवासमे श्रावक व्रत साढाचीदे
वर्ष प्रतिमा साढापाच वर्ष पय मन्त्रे श्रीम वर्य श्रावक व्रत पालन
कर पनेक मासका अनसन समाधिमें काटकर प्रथम सौधर्म देख
येकमे न्यार पल्योपमस्थिति महा विदेहक्षेत्रम मोक्ष जायेगा ।
इतिशम्

इति उपामगदशाण सार सत्तप्त समाप्तम्

श्री अन्तगडदशागसूत्रका संहिता सार

(१) पहला वर्ग जिसका दश अध्ययन है ।

प्रथम अध्ययन—उत्तुथ आरेख अतिम यादवकुम्भगार
 बालग्राह्यानी याधीममा तीधकर श्री नमिताय प्रभुके समयकी
 यात है कि इस जम्बुद्विपकी भाग्यभूमिमें अत्रवार सामान्य या
 रह याजन लम्बी नव योजन बाह्यी सुयणर काट गनीर वंगरे
 गदमद मन्दिर तारण द्वाजात्र पात्र तथा उंच उंच प्रामाद माना
 गगनसही याता न कर रहेहा और बढ बढे शीखरवाले देवालय
 पर विजय विजयति पतावाथापर अथलाकन किये हुय मिहा
 द्विके चिह्न जिन्हाके डगर माने जाकाश न जाने उ धे दिशामें
 गमनकरतये पीछे अति यगसे जारही हो तथा रुपद चतुष्पद
 आर धन्न धान्य मणि मानक मोता पर्यात्र आदिते समद
 आर भी अनेक उपमा लयुक्त णसी डारामती (डारका) नामकी
 नगरीथी । यह नगरी धनपति-कुधेर द्यताकि कणाकौशलयसे
 रची गइथी शास्त्रकार ग्यारयान करते हैं कि यह नगरी ग्रन्थभ
 दयलाक सद्दश मार्गा अलकापुरी हो निवास कीया हा जमममु
 हक मनका प्रसन नयोकानृतम करनधात्री बडीही सुन्दराफार स्थ
 रूपमें अपनी कीर्ति सुरलाक तक पहुचादीथी । नगरीके लोक थ
 डही ग्यायशील स्थमपत्नी सदागसेही सतोष रखतेथे यह गव
 परद्रव्य लेनेमें पशु थ परस्त्री दयनेम अथे थ, परादिदा सुनन
 का घेर थे, परापवाद बोलनेका मुग थ, उही नगरीय अन्दर
 दडका नाम फन मन्दिरा थ शिखर पर ही देखा जाते थे और

बन्धका नाम औरताकि रेणी पर ही पाये जाने थे। यह नगरी क 'त्रोक' मंदिरों लिये प्रसिद्धि चित्तमें कामअर्थधर्म मोक्ष 'न्हो' श्याम कायमें पुरुषार्थ करते हुए आनन्दपूर्वक नगरीकी शोभामें मुग्ध करते थे।

हारकानगरी क बाहार पूरे और उत्तर दिशाके मध्य भाग इस्लामनोतमे निम्नरु द्रुव गुफायां मेखराधा कन्दर्ग निग्ररणा और अनेक श्रृंगारतायामे सुभाभनिक रेस्तगिरि नामका पर्वत था।

हारकानगरी और रेस्तगिरि पर्वत के बिचमें अनेक कुँव बापी सर ब्रह्म और चम्पा, चमेरी, कतकि मोगरा, गुलाब, ज्ञाड, जुड, हीना अनार, दाडिम द्राव, खजुर नारंगी, नाग पुनागादि वृक्ष तथा शामरता अजोकरता चम्पकरता और भी गुच्छा गुल्म रेह्लि तृण आदि लक्ष्मीमें अपनी छटाकी दीमाने हुआ भागी पुरुषा का विलाम और योगिपुरपाका ज्ञान ध्यान करने योग्य भानो मरुके दूसरा घनकि माफीक 'नन्दन' घन नामका उद्यान था यह छर्दा मनुने फर-फरने लिये उडा ही उडा-डा ताग था।

उसी नन्दनवनोद्यानमें बहुतसे देवता देवीया विनाधर और मनुष्यगोक अपनी अगतीका अगत कर रतिय साथ रम नता करन थे।

उसी उद्यानक एक प्रदेशमें अच्छ सुंदर विशाल अनेक स्था नापर तोरण रभासी मनोहर पुतगोयोंमें मेहिस मुरप्पीय यशका यक्षायतन था। यह मुरप्पीय यक्ष भी चौरकालका पुगणा था बहुतसे लोकोंके धन्दन पुजन करने योग्य था अगर भक्तिपूर्वक जो उम्मीका स्मरण करतेथे उम्हकि मनोकामना पूर्ण कर अन्ही

प्रतिष्ठाको प्राप्त कर अपना नाम 'द्वयमन्त्रे' एसा विश्व थापकर दीया था ।

उन्नी यन्त्रायतनक नजीकमें सुन्दर मूल स्वग्ध कन्द दाय्या प्रतिशाखा पत्र पुष्प फलसे ममा हुआ धमकी दुर करनवाला शी तल छाया सहित आशाक नामका वृक्ष था । जीमके आश्रयमें तु पद चतुर्पद पशु पंखी अनि आनन्द करत थ ।

उन्नी अशोक वृक्षके नीचे मेघकी घटाके माफीक श्याम धण सुन्दराकर अनक चित्रविचित्र नाना प्रकारके रपासे अलङ्कृत मिहामनक आकार पृथ्वीशीला नामका पट था । इन्ही सबका धणत उद्यवाई सुत्रसे दखना ।

द्वारका नगरीके अन्दर न्यायशील मूरधार धीर पण परा प्रमी स्वभुजायोंने तीन पट्टकी गज्यलम्बीकी अपने आधिन कर लीथी । मुरनर त्रिधाधर्मास पुजित जिन्हाका उज्ज्वल चश तीन गकमें गजना कर रहा था । उत्तरमें वैताल्पगिरि और पूर्ये पश्चिम दक्षिणमें लवण समुद्र तक जिन्हाका गजतत्र चल रहा है एसा श्रीकृष्ण नामका वासुदेव राजा राज कर रहा था । जिस धमगज्यमे बड़े बट मत्स्यधारी महान पुरुष निवास कर रहे थ । जैसे कि समुद्रविजयादि दश दमारण राजा, बलदेव आदि पच महावीर, प्रद्योतन आदि भाटा तीन ढोड केमरीय कुमार साम्य आदि माठ हजार दुदात गजकुमार ।

मदासेनादि छपत्रहजार उलघन्त घर्मे, धीरसेनादि एकथीस हजार धीरपुरुष उम्गरसेनादि सालाहजार मुगटयन्ध राजा हा

१ भमुविजय अताम म्निमान, गागर, हेमवन्त अचर, धर पुण अभिचद मुनेव २२ दी भादयोंना नामगयोंने २२ दारणक नामन गलगया है ।

जरीमे रेहते थे। रुखमणी आदि सोलाहजार अन्तर्वर तथा अनेक सेना आदि अनेक हजारों गणकाया और भी बहुतसे राजेश्वर युगराजा तालवर माहरी कीटरी शंठ इन्धशेट सेनापति मत्थ यहा आदि नगरीके अन्दर आनन्दमें निवास करते थे।

उसी झारखानगरीके अन्दर अम्धकाधृणि राजा अनेक गुणसि शोभित तथा उन्होंके धारणी नामकी पट्टराणी मयाग सुन्दराकार अपने पतिसे अनुक्त पावेन्द्रियोंका सुख भोगवती थी।

एक समय कि रात है कि धारणी राणी अपने सुनें याग्य सजामें सुती थी आधी रात्री अखनमें न ता पूर्ण जगृत है न पूर्ण निद्रामें है इसी अवस्थामें राणीने एक सुपंत मॉन्थोंके हागके माफीक सुपेन। सिंह आकाशसे उत्तरता हुआ और अपने मुहमें प्रवेश होता हुआ स्वप्नमे देखा। ऐसा स्वप्न देखते ही राणी अपनी सेजासे उठये जहा पर अपने पति कि सेजा थी वहापर आई। राजाने भी राणीका बडा ही सत्कार कर भद्रामन पर बैठनेकि आज्ञा दि। राणी भद्रामन पर बेठी और समाधि के साथ बोली के हे नाथ! आज मुझे सिंहका स्वप्न हुआ है इसका क्या फल होगा। इस बातको ध्यानपूर्वक ध्यान कर बोला कि हे प्रिया! यह महान् स्वप्न अति फल दाता होगा। इस स्थानमें पाये जात है कि तुमारे नय मान् परिपूर्ण होनेसे एक शूरवीर पुत्ररत्नकी प्राप्ति होगी। राणीन राजाके मुगसे यह सुनके दोनों करकमल शिरपर चढ़ाये प्रांगी तथास्तु" राजाकी रजा होनेने राणी अपने स्थानपर चली गई और विचार करने लगी कि यह मुझे उत्तम स्वप्न मिला है अगर

१ पति और पत्नी की सच्चा अलग अलग थी तभी हा आपस आपसमें स्नेह-भाव। हमों वृद्धि जाती था नहीं ना " अनि परिचयादज्ञा "

अब निद्रा लेनेमें काहूँ गिराय स्थान हागा ता मेरा सुन्दर स्थान
का फल चला जावेगा वास्तु अय मुझ निद्रा नहीं लेनी चाहिये ।
किन्तु देवगुरुका स्मरण हो करना चाहिये । ऐसा ही किया ।

अधर अन्धकशृण्णि राजा उर्यादय हाने ही अनुचरामे कच
रीकी अन्ता भगारकी सजायन करचार अत्र महानिमित्तक
जामनेयारले सुपनपाठकाहा बुग्याये उहाका आदर नय्यार
पूजा करे जा धारणी राणीका निहका स्थान आया था उन्हाका
फल पुच्छा । स्थानपाठकाने ध्यानपुष्पक स्थानका धयण कर
अपने शास्त्राका अयगाहन कर एक दुमरेक साथ विचार कर
राजामे निरदन करने लग कि हे धर्मपिप ! हमारे स्थानशास्त्रमें
तीस स्थान महान् फल और येवालीम स्थान सामान्य फल
दाता है यह सब बहुततर स्थान है जिसमें तीर्थकर चमयस्तिकी
मातायां तीम महान् स्थानसे चौदा स्थान देखे । असुदेयकी माता
मात स्थान देखे । बलदेयकी माता स्थार और मडलीक राजाकी
माता एक स्थान देखे । हे नाथ ! जो धारणी राणी तीम महान्
स्थानक अदग्ने एक महान् स्थान देगा है तो यह हमारे शा
स्त्रकी बात नि शक है कि धारणी राणीक गभदिन पुन होनेमें
महान् शम्पीर धीर अमिल पृथ्वी भाक्ता आपके दुलमें तीलक
पुत्र सामान्य पुत्रस्तनकी प्राप्ति होगी । यह बात राणी धारणी
भी पीनातक अन्तरमें बैठी हुई सुन रही थी । राजा स्थानपाठ
काही रात सुन अति हर्षित हो स्थानपाठकाको प्रहृतसा द्रव्य
दाया तथा भोजन कराके पुष्पाकी माला चिमेरा देके रजाना
किया । प्रादमे राजाने राणीमे मत्र बात कही, राणी सदाय बात
की स्वीकार कर अपने स्थानमें गमन करती हुई ।

राणी धारणी अपने गभका पालन सुखपुष्पक कर रही है ।

तीन मामके बाद राणीको अच्छे अच्छे दोहले उत्पन्न हुये जिसको राजाने आनन्दमे पुर्ण किये । नव मास माटेसात रात्रि पुण होनेमे अच्छे ग्रह नक्षत्र याग आदिमें राणीसे पुत्रका जन्म हुया है । राजाको खबर होनेमे केदीयाको छोड दीया है माप तोल बढ़ा दीया या और नगरमें बड़ा ही महोत्सव कीया था ।

पहले दिन सुतीका कार्य किया, तीसरे दिन चन्द्रसूर्यका दर्शन, छठे दिन रात्रिजागरण, इग्यारमे दिन असूचिकर्म दूर किया, बारहमे दिन विन्तर्गण प्रकारके अज्ञान पान खादिम स्वादिम निपजाये अपने कुटुम्ब-न्याति आदिकों आमन्त्रण कर भाजनादि करवाये उम राजपुत्रका नाम "गौतमकुमार" दीया । पचधायोंसे वृद्धि पामतो यालमिडा करते हुये अथ आठ वर्षका राजकुमार हो गया । तब विद्याभ्यासके लिये कन्याचार्यके यहा भेजा और कलाचार्यको गृह्तना द्रव्य दिया । कन्याचार्य भी राजकुमारको आठ वर्ष तक अभ्यास कराने जो पुरुषाकी ७० कला होती है उन्होमें प्रथिन उनारे राजाको सुप्रत कर दिया । राजाने कुमारका अभ्यास आर प्राप्त हुई १६ वर्षकी युवका बन्धा देव विचार किया कि अब कुमारका विवाह करना चाहिये, अब राजाने पस्तर आठ सुन्दर प्रासाद कुमराणीयाके लिये और आठोंके विचमे एक मनोहर महल कुमारके लिये बनवाये आठ बड़े राजाओंकी कन्याओंको कि जेउरन, लायण्यता, शानुर्यता, धर्म, प्रय तथा ६४ कलामें प्रविण, साक्षात सुरसुन्दरी शाने माफीय जिन्होंका रूप है एसी आठ राजकन्याओंके साथ गौतमकुमारका विवाह कर दिया । आठ कन्याओंके पिताने दात (दायजो) कितनी दियो जिम्का विवरण शास्त्रकारनि बड़ा ही विन्तारसे किया है (देखो भगवतीसूत्र महावलाधिपार) एफमो

घाणु (१९२) बोलाको दायचो जिन्हाकी घोडा सोनैयाकी किमत है एसी राजलीलामें दम्पति देवतायोकी माफीक कामभोग भोग घने लग । ताक यह भी मालूम नहीं पडता था कि घण, मास तीथी और धार घोनसा है ।

एक समयकी बात है कि जिन्हाका धमचक्र आकाशमें चल रहा है । भाभडल अज्ञान अन्धकारको हटाके ज्ञानोद्योत कर रहा है । धर्मध्वज नभमें लहर कर रही है सूर्यकमल आगे चल रहे हैं । इन्द्र और फरोडा देवता जिन्हाके चरणकमलकी सेवा कर रह है ऐसे धावीममा तीर्थकर नेमिनाथ भगवान अठारे सहस्र मुनि और चालीश सहस्र ना-धीयाके परिवारसे भूमड नकी पवित्र करते हुये द्वाक्यानगरीके नन्दनयनोद्यानको पवित्र करते हुये ।

घनपाटकने यह स्वर श्री कृष्णनरेश्वरको दी कि हे भूनाथ ! जिन्हाके दर्शनाकी आप अभिलाषा करते थे यह तीर्थ-कर आज नन्दनयनमें पधार गये है यह सुनके त्रीखडभोला कृष्ण घासुदेवने साढेगारह लक्ष द्रव्य तुशीका दिया और आप मिहासनसे उठके घडापर ही भगवानको नमोऽर्पण करके कहा कि हे भगवान ! आप सर्वज्ञ हो मेरी यम्दना स्वीकार करायें ।

श्रीकृष्ण छोटवालकी बोलायक नगरी भगारनेका हुक्म दिया और सेनापतिका बोलाके च्यार प्रकारकी सेना तैयार करनेकी आज्ञा देके आप स्नानमज्जन करनेको मज्जनधरमें प्रवेश करते हुये ।

इधर द्वारकानगरीके दोय तीन च्यार सदा बहुत रास्ते पथप्र होत है । वहा जनममुह आपस आपसमें वार्तालाप कर रहे थ कि अहो देवानुप्रिय ! श्री अरिहत भगवानके नाम गोत्र धधण

करनेका भी महाफल है तो यहाँ नन्दनयनमें पधारे हूँ भगवानको घन्दन-नमस्कार करनेको जाना, देशना सुनना प्रश्नादि पुच्छता । इस फल (गम) का तो कहना ही क्या? घास्ते चरग, भगवानको घन्दन करनेको । यम ! इतना सुनते ही मय गीश अपने अपने स्थान जाये स्नानमग्नन कर अच्छा २ बहुमूल्य आभूषण वस्त्र धारण कर किननेत्र गज, अश्व, रथ, मेघिय, ममदाती, पिजम पागली आदि पर और चित्तनेक पैदल चलनेको तैयार हो रहे थे । इधर बटे ही आडमरके साथ श्रीरुण च्यार प्रकारकी सैन्य लेके भगवानका घन्दनका जा रहा था ।

डाक्कानगरीके मध्य उजारसे बड़े ही उत्सवसे लोग जा रहे थे, उन्ही समय इतनी तो गड़दी थी कि लोंगाका उजारमें समावेश नहीं होता था । एक दुमरेकी बोलानेमें इतना तो गुम शब्द हो रहा था कि एक दुमरेका शब्द पूर्ण तौरपर सुन भी नहीं सके थे ।

जिस समय परिपदा भगवानको घन्दन करनेको जा रही थी, उस समय “ गौतमकुमार ” अपने अन्तर्धरके साथ भोग-विलास कर रहा था । जय परिपदाकी तफ़्फ़्रिपात करते ही कचुकी (गगीकी खतर देनेवाला) पुरुषको बुलायके बोला-क्या आज द्वाक्कानगरीके बाहार किसी इन्द्रका महोत्सव है । नागका, यक्षका, भूतका, वैश्रमणका, नदी, पर्यत, तलाय, कुआ आदिका महोत्सव है ताक़ जनसमुह एक दिशामें जा रहा है ? कचुकी पुरुषने उत्तर दिया कि हे नाथ ! आज किसी प्रकारका महोत्सव नहीं है । आज यादवकुलक तीलक समान बायींशमा तीर्थकरका आगमन हुवा है, वास्ते जनसमुह उन्ही भगवानको घन्दन करनेको जा रहा है । यह सुनके गौतमकुमारकी भावना हुई के इतने

लोक जा रहे हैं तो अपने भी चर कर वहा क्या हो रहा है वह देखेंगे।

आदेश करते ही रथकारद्वारा चार अश्वधारण रथ तैयार हो गया, आप भी स्नानमग्नन कर यज्ञाभूषणसे शरीरको अलङ्कृत कर रथपर बैठने परिपदाये साथ हो गये। पण्डित पद्याभिगम धारण करते हुये भगवान्‌के समीपकरणमे जाके भगवान्‌का तीन प्रदक्षिणा देखे सय लोग अपने अपने योग्यस्थानपर बैठ गये और भगवान्‌की देशना पानकी अभिलाषा कर रहे थे।

भगवान्‌ नेमिनाथ प्रभुने भी उस आइ हुई परिपदाका धर्म-देशना द्वा प्राग्भ किया कि हे भव्य जीवा ! इस अपार सत्कारके अन्दर परिभ्रमण करते हुए जीव नरक, निगोद, पृथ्वा अप, तेज, वायु, धनस्पति और प्रसवायमे अन्त जन्म-मरण किया है और करते भी है। इस दु खामे विमुक्त करनेमें अश्व-धर समक्षितदशन है उन्हीको धारण कर आने चारित्रराजाका संघन करो ताके सत्कारसमुद्रसे जलही पार करे। हे भव्यात्मन ! इस संसारसे पार होनेके लिये दो नौका है (१) एक साधु धर्म (मघव्रत) (२) श्रावक धर्म (देशव्रत) दोनोंका सम्यक् प्रकारसे जानके जैसी अपनी शक्ति हो उस स्वीकार कर इन्मे पुरुषार्थ कर प्रतिदिन उच्च धेणीपर अपना जीवन लगा देंग ता सत्कारका अन्त होनेमें किसी प्रकारकी देर नहीं है इत्यादि विस्तारपूर्वक धर्मदेशनाके अन्तमे भगवान्‌ने परमाथा कि विषय-रूपाय, राग-द्वेष यह सत्कारवृद्धि करता है। इन्हीको प्रथम त्यागो और दान, शील, तप, भाव, भावना आदिको स्वीकार करो, सयका साराश यह है कि जीतना नियम व्रत लेते हो उन्हीको अच्छी तरहसे पालन कर आगधीपदको प्राप्त करा तांके शिष्य शिष्यमदिरमे

पहुँच जाये। कृष्णादि परिपदा अमृतमय देशना श्रवण कर
अत्यन्त हर्षमे भगवानको घन्दन-नमस्कार कर स्थान गमन
करती हुई।

गौतमकुमार भगवानकी देशना श्रवण करते ही हृदयक-
मर्ममें ममार्गकि अमरता भासमान हो गई। और विचार करने
लगा कि यह सुख मैंने मान रखा है परन्तु ये तो अनन्त दुर्गाका
एक बीज है इस विषमिधत सुखोंके लिये अमूल्य मनुष्यभयका
खो देना मुझे उचित नहीं है। यन्ना विचारके भगवानको घन्दा
नमस्कार कर बोला कि हे त्रैलोक्य पूजनीय प्रभु! आपका ध्यानकि
मुझे धन्दा प्रतित हुई और मेरे रोमरोममें रुच गये हैं मेरी हाड
हाडकी मीजी धर्मरगत रगाई गई है आप फरमाते हैं यसाही हम
ममार्गका स्वरूप है। हे दयालु! आप मेरेपर अच्छी कृपा करी हैं
मैं आपके चरणकमलमे दीक्षा लेना चाहता हूँ परन्तु मेरे माता-
पिताका पुछने मैं पीछा आता हूँ। भगवानने फरमाया कि
“जहासुखम” गौतमकुमार भगवानका घन्दन कर अपने घर पर
आया और माताजीसे कहता हुआ कि हे माताजी! मैं आज भग-
वानका दर्शन कर देशना सुनी है जिमसे ससारका स्वरूप जानने
मैं भय प्राप्त हुआ हूँ अगर आप आज्ञा देये तो मैं भगवानक पास
दीक्षा ले मेरा आत्माका कल्याण कर। माता यह ध्यान पुत्रका
सुनते ही मूर्छित हो धरतीपर गिर पड़ी दासीयोंने शीतल पाणी
और घायुका उपचार कर मचेतन करी। माता हृसीयाग होके पुत्र
प्रति कहने लगी। कि हे जाया! तु मारे एक ही पुत्र है और मेरा
जीवनही तरे आधारपर है और तु जो दीक्षा लेनेकी बात करता
है यह मेरेको श्रवण करनाही कानोंको कटक तुल्य तु गदाता है।
यम,। आज तुमने यह बात करी है परन्तु आइयासे दम पमी याने

लोक जा रहे हैं तो अपने भी चल कर यहा क्या हो रहा है यह देखेंगे।

आदेश करत ही रथकागद्गाग च्यार अश्वयाग ग्य तैयाग हा गया, आप भी स्नानमज्जन कर ध्याभूषणसे शरीरको अशुद्ध कर रथपर बैठने परिपक्वसे साथ हा गये। परिपक्व पचाभिगम धारण करते हुए भगवानक समामरणमे जाव भगवानको तीन प्रदक्षिणा देव सब लोग अपने अपने योग्यस्थानपर बैठ गये और भगवानकी देशना पानकी अभिलाषा कर रहे थ।

भगवान नेमिनाथ प्रभुने भी उस आइ हुई परिपक्वका धम-देशना दना प्रारभ किया कि हे भव्य जीवो! हम अपार समारक अन्दर परिभ्रमण करते हुये जीव सरक, निगोद, पृथ्वा अप, तड, वायु, वनस्पति और वसकायमे अनन्त जन्म-मरण किया है और करते भी है। इस दु खस्ते त्रिमुक्त करनेमें अश्व-श्वर समक्षितदशन है उन्हीको धारण कर आग चारिप्रराजाका सेवन करो ताके नसारसमुद्रसे जलदी पार करे। हे भयानमन! इस संसारसे पार होनेक लिये द्वा नौका है (१) एक साधु धम (सर्वव्रत) (२) श्राव्य धम (देशव्रत) दोनोंका सम्यक् प्रकारसे जानव जैसी अपनी शक्ति हा उसे स्वीकार कर हमने पुरुषार्थ कर प्रतिदिन उच्च श्रेणीपर अपना जीवन लगा देंगे तो नमारका अन्त होनेमें किसी प्रकारकी देर नहीं है इत्यादि विस्तारपूषक धमदेशनाक अन्तमे भगवानने परमाया कि विषय-कपाय, राग-द्वेष यह ससारघृद्धि करता है। इन्हांको प्रथम त्यागो और दान, शील, तप, भाव, भावना आदिको स्वीकार करो, सधका सागश यह है कि जीतना नियम व्रत लेते हो उन्हांको अच्छी तरहसे पालन कर आराधीपदका प्राप्त करग ताके शिष्य शिष्यमंदिरमे

पहुँच जाय। कृष्णादि परिपदा अमृतमय देशना श्रवण कर अत्यन्त हृदये भगवानको घन्दन-नमस्कार कर स्थस्थान गमन करती हुई।

गौतमकुमार भगवानकी देशना श्रवण करने ही हृदयका मर्ममें समारकि अमारता भाममान हो गई। और विचार करने लगा कि यह सुख मैंने मान रखा है परन्तु ये तो अनन्त दुर्वाका एक बीज है इस विषमिश्रित सुखोंने लिये अमूल्य मनुष्यभयको खो देना मुझे उचित नहीं है। ऐसा विचारके भगवानको घन्दन नमस्कार कर बोला कि हे त्रैलोक्य पूजनीय प्रभु! आपका घवनकि मुझे श्रद्धा प्रतिन हुई और मेरे गोमरोममें रुच गये हैं मेरी हाड-हाडकी मीजी धर्मरगसु रगाई गई है आप परमात्मा हैं पमाही इस समारका स्वरूप हैं। हे दयालु! आप मेरेपर अच्छी कृपा करी हैं मैं आपके चरणफलमे दीक्षा लेना चाहता हूँ परन्तु मेरे माता पिताको पुछने मैं पीछा आता हूँ। भगवानने फरमाया कि "जहासुखम्" गौतमकुमार भगवानका घन्दन कर अपने घर पर आया और माताजीसे कहता हुआ कि हे माताजी! मैं आज भगवानका दर्शन कर देशना सुनी है जिससे समारका स्वरूप जानने में भय प्राप्त हुआ हूँ अगर आप आज्ञा देते तो मैं भगवानके पान दीक्षा ले मेरा आत्माका कल्याण कर। माता यह घवन पुत्रजा सुनते ही मुछित हो धरतीपर गौर पड़ी दासीयानि शीतल पाणी और वायुका उपचार कर सचेतन करी। माना हुमीयार होके पुत्र प्रति कहने लगी। कि हे जाया! तु मारे एक ही पुत्र है और मेरा जीवनही तेरे आधारपर है और तु जा दीक्षा देनेकी बात करता है यह मेरेको श्रवण करनाही कानाकी कटक तुल्य हूँ सदाता है। चम, आज तुमने यह बात करी है परन्तु आइदासे हम एमी याने

सुनना मनसे भि नहीं चाहती है। जहाँतक तुमारे मातापिता जीव यहाँतक मस्तारका सुख भोगयो। जब तुमारे मातापिता कालधम प्राप्त हो जाय बाद में तुमारे पुत्रादिकि वृद्धि होनेपर तुमारा अच्छा हो तो खुशीसे दीक्षा लेना।

माताका यह वचन सुन गौतमकुमार योग कि ह माता! पमा मातापिता पुत्रका भय तो जीव अनन्तीयाग कीया है इन्होंने कुछ भी कल्याण नहीं है और मुझे यह भी विश्वास नहीं है कि मैं पैला जाउगा कि मातापिता पहिले जायेगा अर्थात् कालका विश्राम समय मात्रका भी नहीं है वास्ते आप आज्ञा दो तो मैं भगवानक पास दीक्षा ले मेरा कल्याण कर।

माता बोली है लालजी! तुमारे पाप दादादि पूषजाय मग्न ह कीया बुधा द्रव्य है इन्हीको भागविलासके काममें ली और देया गता जैसी आठ राजकन्या तुमको पंगला है इन्हीके साथ काम-भोग भोगवा फीर यात्रा कुलवृद्धि होनेसे दीक्षा लेना।

तुमार बोला कि ह माता! मैं यह नहीं जानता हु कि यह द्रव्य आर स्त्रियां पहले जायगी कि मैं पहला जाउगा। कारण यह धन जीवन स्त्रियादि मय अस्थिर है और मैं ता धीरधाम करना चाहता हु वास्ते आज्ञा दो दीक्षा लेउगा।

माता निराश हो गई परन्तु मोहनीकर्म जगतमें अधरदम्न है माता बोली कि हे लालजी! आप मुझे तो छोड़ जावोगा परन्तु पढ़ला खुब दीर्घदृष्टीसे विचार करीये यह निग्रन्थक प्रयथन एम्मे ही है कि इन्हीका आराधन करनेवालोंको जन्मजरा मृत्यु आदिसे मुक्तकर अक्षय स्थानको प्राप्त करा देता है परन्तु याद रखो सज्जम खादाकी धारपर चलना है, बतुका कबलीया जेमा अमार है, म यणये दान्तोंसे लोहाका घीना चाखना है नदीके सामे पुर चलना

है समुद्रको भुजाने तीरना हैं हे वत्स ! साधु होनेके बाद शिर्षा लोच करना होगा । पैदल विहार करना होगा, जायजीव ज्ञान नहीं होगा घरघरसे भिक्षा मागनी पड़ेगी कपड़े न मीलनेपर 'स' तोष रखा पड़ेगा । लोगोंका दुर्बचन भी महन करना पड़ेगा आधाकर्मी उदेशी आदि दोष रहित आधार लेना होगा इत्यादि बाधोंसे परिमद तीन उपसर्ग आदिका विवरण कर माताने खुद समझाया और कहा कि अगर तुमकी धर्मकण्ठी करना हो तो घरमें रहने करला सयम पालना बड़ाही कठिन काम है ।

पुत्रने कहा हे माता ! आपका कहना सत्य है सयम पालना बड़ाही दुष्कर है परन्तु यह कीसके लिये ? हे जननी ! यह सयम कायरोंके लिये दुष्कर है जो इन्ही लोगके पुद्गलीक सुर्गाका भ भिलापी हैं । परन्तु हे माता ! मैं तेरा पुत्र हु मुझे सज्जम पालना किंचित् भी दुष्कर नहीं है कारण मैं नरक निगोदमें अनन्त दुःख सहन किया है ।

इतना वचन पुत्रका सुन माता समझ गई कि अब यह पुत्र घरमें रहनेवाला नहीं है । तब माताने दीक्षाका बड़ा भारी महोत्सव कीया जेनेके बावसापुत्र तुमारका दीक्षा महोत्सव वृष्णि-महाराजने कीया था (ज्ञातामूत्र अध्या० - २) इन्ही माफीक वृष्णि वासुदेव महोत्सव कर गौतमकुमारका श्री नेमिनाथ भगवान् पाने दीक्षा दरादी । निम्नार्ग देखो ज्ञातासे ।

श्री नेमिनाथ प्रभु गौतमकुमारको दीक्षा देके हितशिखा दी कि हे भय्य ! अब तुम दीक्षित हुये हो तो यन्नासे हलनचलन आदि क्रिया करना ज्ञान ध्यानके सिधाय पक्क समय मात्र भी प्रमाद नहीं करना ।

गौतममुनिने भगवानका वचन मप्रमाण स्वीकार कर स्वल्प

समयमें स्थिराङ्गी भक्ति कर इग्यारा अंगका ज्ञान कण्टस्थ कर लिया। बादमें श्री नेमिनाथप्रभु द्वारकानगरीसे विहार कर अन्य जनपद देशमें विहार करते हुए।

गौतम नामका मुनि चोथ छठ अठमादि तपश्चर्या करता हुआ एक दिन भगवान् नेमिनाथजी धन्दन नमस्कार कर अर्ज की कि हे भगवान्! आपकी आज्ञा हो तो मैं 'मासीक भित्तु प्रतिमा' नामका तप करूँ, भगवान् ने कहा "जहासुखम्" यह दो मासीक तीन मासीक यायत् चारदश्या एकरात्रीक भित्तुप्रतिमा नामका तप गौतममुनिने किया और भी मुनिकी भावना बढ़ जानेसे धन्दन नमस्कार कर भगवान् से अर्ज करी कि हे दयालु! आपकी आज्ञा हो तो मैं गुणरत्न स्मत्स्वर नामका तप करूँ। 'जहासुखम्' अथ गौतममुनि गुणरत्न समस्तर तप करना प्रारम्भ किया। पहले मासमें एकान्तर पारणा, दूसरे मासमें छठ छठ पारणा, तीसरे मासमें अठम अठम पारणा एवं यायत् सोलह मासमें सोलह उपवासका पारणा एवं सोला मास तपश्चर्या कर शरीरकी थिलकुल कृप अर्थात् सूखा हुआ सर्पका शरीर भा फीक दलते धलते समय शरीरकी हड्डीका अघात जैसे काण्ठे गाढाफी माफीक तथा सूरे हुये पत्ताकी माफीक शब्द हो रहा था।

एक समय गौतम मुनि रात्रीमें धर्मचिन्तन कर रहा था उसी समय विचार कि अब इस शरीरके पुद्गल थिलकुल कम-जोर हो गये हैं दलते धलते धालते समय मुझे तकलीफ हो रही है तो मृत्युके सामने बेमगीया कर मुझे तैयार हो जाना चाहिये अर्थात् अनशन करना ही उचित है। यम, सूर्यादिय होते ही

१ भित्तुकी चारद प्रतिमाका किन्तागुप्त विवरण दशगुन स्वध सूत्रमें

५६ वं पन्ना शीघ्रगोप मास बोधा।

भगवानसे अर्जुन करी कि मैं श्रीशत्रुजय तीर्थ (पर्वत) पर जाके अनशन करूँ। भगवानने कहा ' जहासुखम् ' यत्न, गौतममुनि मर्ग माधुमाध्यमीको स्वमाके धीरे धीरे शत्रुजय तीर्थ पर स्थिररुद्धे साथ जाके आलोचना कर सब रागद्वेषकी दीक्षा पालके अनशन कर दीया आत्मममाधिमें एक मासका अनशन पूर्ण कर अन्त समय फैल ज्ञान प्राप्त कर शत्रुओंका जय करनेवाले शत्रुजय तीर्थ पर अष्ट कर्मोंसे मुक्त हो शाश्वत अयायाध सुखोंके अन्दर मादि अनन्त भाग सिद्ध हो गये। इति प्रथम अध्ययन।

इसी माफीक शेष नव अध्ययन भी समझना यहा पर नाम मात्र ही लिखते हैं। समुद्रकुमार १ सागरकुमार २ गभिरकुमार ३ स्तिमितकुमार ४ अचलकुमार ५ कपिलकुमार ६ अक्षोभकुमार ७ प्रभुकुमार ८ विष्णुकुमार ९ पर यह दश ही कुमार अन्धक विष्णु राजा और धारणी राणीका पुत्र हैं। आठ आठ अन्तेयर और राज न्याग कर धीनेमिनाथ प्रभु पासे दीक्षा ग्रहण करी थी तपधर्या कर एक मासका अनशन कर श्रीशत्रुजय तीर्थ पर कर्मशत्रुओंको दृष्टाये अन्तमें फैलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष गये थे इति प्रथम वर्ग समाप्तम् ।



(२) दूसरा वर्ग जिसके आठ अध्ययन हैं।

अक्षोभकुमार १ सागरकुमार २ समुद्रकुमार ३ हेमचन्द्रकुमार ४ अचलकुमार ५ परणकुमार ६ धरुणकुमार ७ और अभिचन्द्रकुमार ८ यह आठ कुमारोंके आठ अध्ययन "गौतम" अध्ययनकी माफीक विष्णु पिता धारणी माना आठ आठ अन्तेयर न्यागने श्रीनेमि नाथ भगवान ममीये दीक्षा ग्रहण गुणरत्नादि अनेक प्रकारके तप

कर कुल सोला वर्ष दीक्षा पालन अन्तिम श्रीशत्रुजय तीथपर एक मामका अनशन कर अन्तमें वेदलक्षान प्राप्त कर मोक्षमें पधार गये इति द्वितीयवर्गके आठ अध्ययन समाप्त ।



(३) तीसरा वर्गके तेरह अध्ययन है ।

(प्रथमाध्ययन)

भूमिष भूषणरूप भद्रपुर नामका नगर था । उस नगर इशान कोणमें श्रीधन नामका उद्यान था और जयशत्रु नामका राजा राज कर रहा था वर्षेन पूषकी भाफीक समझना । उसी भद्रपुर नगरके अन्दर नाग नामका गाथापति निवास करता था वह उडाही धनाढ्य और प्रतिष्ठित था जिन्होंने गृहगृगाररूप सुलमा नामकी भार्या थी वह सुकोमल भार स्वरूपयान थी । पतिकी आज्ञा प्रतिपात्क थी । नागगाथापति और सुलमाके अगसे एक पुत्र जनमा था जिसका नाम ' अनययश ' दीया था वह पुत्र पाच धातु जैसे कि (१) दूध पीलानेवाली (२) मज्जन क रानेवाली (३) महन काजलकी टीकी उन्नाभूषण धारण करानेवा नी (४) म्रीडा बनानेवाणी (५) अक्-एक दुसरेके पास लेजानेवाली इन्ही पाचा धातु मातासे सुखपुत्रक वृद्धि जैसे गिरिकद्वरकी लताओं वृद्धिका प्राप्ति होती है ऐसे आठवष निगमन दानने बाद उसी कुमारकी कलाधायक बहा विद्याभ्यासके लीये भेजा आठ वर्ष विद्याभ्यास करते हुये ७० कलामें प्रवीण हो गये नागगाथापतिने भी कलाचार्यकी बहुत द्रव्य दौया जब कुमार १६ वर्षकी अयस्या अर्थात् युवक उय प्राप्त हुआ तब मातापिताने वस्तीम

इस सेंटोंकी ३० घर तरण जीवन लायण्य चानुर्यता युन घय मर्ग
 कुमरने मद्दश देखके एकही दिनमें ३० घर कन्याओंके माथमें
 कुमरका पाणिग्रहण (विवाह) कर दीया उन्नी उत्तीम कन्या
 ओंके पिताओं नागसेठका १५२ घालाका जसे कि यत्तीम फ्रीड
 मोनइयाका, यत्तीम फ्रीड रुपइया, यत्तीम हस्ती, उत्तीम अश्र, रय
 दाश दासीया दीपक मेज गाकल आदि बहुतमा द्रव्य दीया
 नागसेठके बहुतों पंगे लागी उन्मर्म उह मर्य द्रव्य बहुआका दे
 दीया नागसेठने उत्तीम बहुआके लीये यत्तीस प्रामाद और धीचमें
 कुमरने लीये थडा मनोहर महेल बना दीया जिन्हने अन्ध
 यत्तीम सुरसु दरीयाँ साध मनुष्य मन्त्र धी पक्षेत्रियके भोग
 सुखपुर्वक भागधने लग ।

यत्तीम प्रकारक नाटक हो गटे थ मर्दगके शिर फुट रह थे
 जिन्हने काज जानकि मालूम तक कुमरका नही पडती थी यह
 मय पूर्य किये हुये सुहृत्के फल है ।

पृथ्वी मद्दशको परित्र करते हुये राधीममा तीर्थंकर श्री ने
 मिनाथ भगवान मपरियाग-भद्रठपुर नगरके श्रीयनोद्यानमे प
 धारे । राजा न्याग प्रसारकी मैनामे तथा नगर निवासी उडे ही
 आहम्यरके साथ भगवानका वन्दन करनेको जा रहे थे । उम
 समय अनजयशकुमर देखके गौतमकुमर कि माफीक भगवानको
 वन्दन करनेको गया भगवान की वेशना सुन उत्तीस अन्तेयर
 और धनधान्य का त्यागके प्रभु पाने दीक्षा ग्रहण करके सामायि
 कादि चादे पर्य ज्ञानाभ्यास कीया । बहुत प्रकारकि तप
 भया कर मर्य धीस यर्ग कि दीक्षापालनकर अन्तमें श्री शधुजय
 तीर्थपर एक मामका अनमनकर अन्तिम केवलज्ञान प्राप्त कर
 शाम्यते सिद्धपदका धरणीया इति प्रथमाध्ययन ।

इसी माफीक अनससेन (१) अनादितसेन (२) अजितसेन (३) देवयश (४) शत्रुसेन (५) यह छैया नागसेन सुग्मा शीठाणी के पुत्र है यत्तीस यत्तीस रमाबाईका त्याग नेमिनाथ प्रभु पासे दीक्षा ले चौदा पूर्य अध्ययनकर सर्व चीस वष दीक्षा प्रप्त पाल अन्तिम सिद्धाचलपर पक्क मासका अनसनकर चरम नमय वेयलज्ञान प्राप्तकर मोक्ष गया इति छे अध्ययन ।

मानवा अध्ययन—द्वारका नगरीमें वसुदेव राजा के धारणी राणी सिंह स्वप्न सूचित—सारण नामका कुम्भका जन्म पूष्य वत् ७२ कलाग्रहिण २० राजक-यायाका पाणीग्रहण पचाम पचास बालाका दत्त भोगविलासमें मग्न था। नेमिनाथप्रभु कि देशना सुण दीक्षा ले चौदा पूषया ज्ञान । चीस वष दीक्षापालके अन्तिम श्री सिद्धाचलजी पर पक्क मासका अनसन अन्तमें वयलज्ञान प्राप्तीकर माभ गये । इति सप्तमाध्ययन समाप्त ।

आठवाध्ययन—द्वारका नगरीके नन्दननोपानमे श्री नेमिनाथ भगवान समासरते हुये । उस समय भगवान्क छे मुनि मग भार सदश-यचा वष घडेही रूपयम्न नल्लुवर (वैष्णवदेव) सदश जिस समय भगवान पासे दीक्षा ली थी उन्नी दिन अभिग्रह किया था कि यावनजीव छठ तप-पारणा करना । जय उन्ही छया मुनियाक छठवा पारणा आया तब भगवानकि आज्ञा ले दो दो माधुआक तीन मंघाड हो व द्वारका नगरीका महल वगधानसे निकल द्वारका नगरीमें समुदाणी भिक्षा करते हुये प्रथम दो माधुआका मिघाडा वसुदेव राजा कि देवकी नाम कि राणीका मकानपर आये । मुनियाका आते हुये देख के देवकी राणी अपने आसन से उठके सात आठ पग सामने गई और भक्तिपूर्वक वन्दन नमस्कार कर जहाँ भात-पा

गीका घर था यहा मुनिको ले गइ उहा पर मिह केसरिया मोदक उज्जल भायनामे दान दीया बादमें सत्कारपूर्णक विदा कर दीये । इतनेमें दुसरे सिंघाटे भि समुदाणी भिक्षा करते हुये देवकीराणीने मकान पर आ पहुचे उन्होंने भी पूर्यके माफीक उज्जल भायनामे सिंह केसरिये मोदकका दान दे विसर्जन किया । इतनेमें तीसरे सिंघाटेवाले मुनि भि समुदाणी भिक्षा करते देव कीराणीके मकानपर आ पहुचे । देवकीराणीने पूर्यकी माफीक उज्जल भायनामे सिंह केसरिये मोदकोंका दान दीया । मुनियर जाने लग । उस समय देवकीराणी नम्रतापूर्यक मुनियोंसे अज करने लगी कि हे स्वामिनाथ ! यह कृष्ण यमुदेवकी छात्रकानगरी जो बारह योजनकि लम्बी नव योजनकि चौड़ी यावत् प्रत्यक्ष देवलोक सदृश जिन्होंने अन्दर बड़े बड़े लोक निवास करते हैं परन्तु आश्चर्य यह है कि क्या भ्रमण मिग्रन्थोंको अटन करने पर भि भिक्षा नहीं मिलती हे कि वह बार बार एक ही कुल (घर) के अन्दर भिक्षाके लिये प्रवेश करते हैं ? मुनियोंने उत्तर दिया कि हे देवकीराणी ! ऐसा नहीं है कि छात्रकानगरीमें साधुओंको आहारपाणी न मिले परन्तु हे धार्मिका तु ध्यान दे रे सुन भद्र-लपुर नगरका नागशेठ और सुलभाभायाँके हम छ पुत्र थे हमारे माता-पिताने हम उन्हीं भाइयाँकी बत्तीम बत्तीस इन्ध शेटाँकि पुत्रोंका हमको परणाइवी दानके अन्दर १९२ बीलोंमे अगणित द्रव्य आया था हम लोग ससारके सुखोंमे इतने तां भस्त बन गये थे कि जो फाल जाता था उन्हींका हमलोगोंको ग्याल भी नही था । एक समय जादवकुठ श्रृंगार पाथीममा तिथकर नेमिनाथ

* मुनियान स्वप्नाम जान लिया कि हमार दाय सिंघाटे भी पहला यहाम ही आहार-पाणी ले गय हगि वास्त ही दरिगर्णान य प्रत्र कीया है ता अउ इन्हींकी शकाका पूर्ण ही ममावान बग्ना चाहीय ।

भगवान् बड़ापर पधारे थ उन्होंने कि देशना सुन हम छियों भाइ
मस्तारने सुगोंकी दु खाकि गान समग्रवे भगवान्ने पासमें दीक्षा
ले अभिग्रह कर लिया कि बायन जीव छठ छठ पागणा करना । हे
देवकी ! आज हम छवों मुनिराज छठने पारणे भगवान्कि आज्ञा
ने द्वारका नगरीवे अन्दर समुदाणी भिभा करनेकी आये थे ।
गह ! जो पल्ल दोय सिधाडे जो तुमारे बहा आगये थे वह
अलग है और हम अलग है अर्थात् हम दोय तीनवार तुमारे घर
नहीं आये है । हम एक ही बार आये है एसा कहवे मुनि ता
यहाने चलके उधानमें आ गये ।

गह में देवकीराणीकी एसे अध्यवसाय उत्पन्न हुवे कि
पालामपुर नगरमें अमता नामके अनगारने मुझे कहा था कि हे
देवकी ! तु आठ पुत्राकी जनम देगी वह पुत्र अच्छे सुन्दर स्वरू-
पवाले जेने कि नल-कुवेर देवता सहज होगे, दुसरी कोई माता
हम भरतक्षेत्रमें नहीं है । जाकि तेरे जैस स्वरूपवान पुत्रकी प्राप्ति
करे । यह मुनिका वचन आज मिथ्या (असत्य) मान्य
होता है क्या कि यह मरे स्वमुप ही ६ पुत्र देखनेमें
आते है कि जो अभी मुनि आये थे । और मेरे तो एक
श्रीकृष्ण ही है देवकीने यह भी विश्वास कीया कि मुनिकावे
वचन भी तो असत्य नहीं होत है । देवकी राणीने अपनी शक्ति
निवृत्तन करनेकी भगवान् नेमिनाथजीके पास जानेका इरादा
कीया । तब आज्ञाकारी पुरुषोंकी सुलवायके आज्ञा कगी कि चार
अश्वघाला धार्मीक रथ मरे लीये तैयार करो । आप स्नान मज्जन
कर दासीयों नोकर चाकरोंके बृद्धमें बड़ेही आहम्बरके साथ
भगवान्की वन्दन करनेकी गह विधिपूर्वक वन्दन करनेके बादमे
भगवान् परमाने हुय कि हे देवकी ! तु छे मुनियोंकी देखके

अमन्ता मुनिके घचनमें अमत्ययी शका कर मरे पास पुछनेकी आइ है। क्या यह बात सत्य है? हाँ भगवान यह बात सत्य है मे आपसे पुछनेकी ही आइ हु।

भगवान नेमिनाथ परमाते है कि हे देवकी ! तु ध्यान देके सुन। इसी भक्तक्षेत्रमें भद्रपुर नगरके अन्दर नागसेठ और सुलसा भार्या नियाम करते थे। सुलसाको बालपणमें एक निमन्त्रीयने कहा था कि तु मृत्यु बालकको जनम देवेगी उस दिनमें सुलसाने हिरणगमसी देवकी एक मूर्ति बनाके प्रतिदिन पुजा कर पुष्प चढ़ाके भक्ति करने लगी। ऐसा नियम बन लीया कि देव की पुजा भक्ति बिना किये आधारनिहार आदि कुछ भी कार्य नहीं करता। एसी भक्तिसे देवकी आराधना करी। हिरणगमसी देव सुलसाकी अति भक्तिसे सन्तुष्ट हुआ। हे देवकी ! तुमारे और सुलसाके साथही मैं गर्भ रहता था और साथही मैं पुत्रका जन्म होता था उसी समय हिरणगमसी देव सुलसाके मृत बालक नेरे पास रखके तेरा जीता हुआ बालकको सुलसाको सुप्रत कर देता था। वास्ते दरअसल यह छया पुत्र सुलसाका नहीं किन्तु तुमारा ही है। एमें भगवानके घचन सुन देवकीकी बडे ही हर्ष मतोप हुआ भगवानको वन्दन नमस्कार कर जहाँ पर छे मुनि था वहा पर आई उन्होंनेको वन्दन नमस्कार कर एक दृष्टिने देखने लगी इतनेमें अपना स्नेह स्तना तो उन्सुक हो गया कि देवकीके स्तनोमें कुछ बर्षने लगा और शरीरके रोम रोम छड़िको प्राप्त हो देह रीमाचित हो गई। देवकी मुनिआँको वन्दन नमस्कार कर भगवानके पास आवे भगवानको प्रदक्षिणापुर्वक वन्दन करके अपने रथ पर बैठके निज आवास पर आगइ।

देवकीगणी अपनी शय्याके अन्दर बेटीयी उन्ही समय

लड़की हैं ? आदमी तोले कि यह सामल आश्रयणी ठडका है
 कृष्णने कहा कि जाया इसको कुमार अन्तेवर्गमें रख दो गजसुख
 मालय साथ इसका गम कर दीया जायेगा । आताकारी पुराणों
 मोमाके प्राणकी रक्षा ले सामाकी कुमार अन्तेवर्गमें रख दी ।

कृष्णवासुदेव गजसुखमालादि भगवान समीप बन्दन नम
 स्कार कर योग्य स्थान पर बैठ गये। भगवानने धर्मदेशना दी ।
 भग्य जायें ! यह मसार अनार है जीव रागद्वेषके बीज बोके पीर
 नश्व निगोदादीषे तु स्वर्ग की फलाका आन्यादन करने हैं ' स्वर्ग
 मत्त सुखा बहुकाल दुःखा " भगमात्रके सुखोंक लीये दीर्घकालक
 दुःखोंका खरीद कर रहे हैं । जो जीव प्रायश्चित्तमें धर्मकार्य
 साधन करते हैं वह रानाये माफीक लाभ उठाते हैं आजीव युवा
 यस्थामें धर्मकार्य साधन करते हैं वह सुवर्णकी माफीक और जा
 बुद्धावस्थामें धर्म करते हैं वह रुपेकी माफीक लाभ उठाते हैं ।
 परन्तु जो उम्मेरभगमें धर्म नहीं करते हैं वह दालाद्र लेके परमथ
 जाते हैं यह परम दुःखको भोगत हैं। वास्ते ले भग्य ! यथाशक्ति
 आत्मकल्याणमें प्रयत्न करो इत्यादि देशना भरण कर यथाशक्ति
 न्याग-प्रयाग-यान कर परिपदा स्थस्थान गमन करती हुई । गज
 सुखमाल भगवानकी देशना सुन परम वैराग्यका धारण करता
 हुआ बोला कि हे भगवान् ! आपका परमाया सत्य है मैं मेरे मात
 पिताआसे पुछने आपके पास शीघ्र लेउगा ' भगवानने कहा
 " जहासुखम् " गजसुखमाल भगवानका बन्दन कर अपने घरपर
 आया मातासे आज्ञा मानी यह यात श्रीकृष्णकी मालुम हुई
 कृष्णने कहा हे लघु धान्धव ! तुम दीना मत ले राज करो । गज
 सुखमाल बोला कि यह राज, धन, मप्रदा सभी कारमी है और
 मैं अक्षय सुख चाहता हू अनुकूल प्रतिकूल उहुतसे प्रभ हूय
 परन्तु जिनको आतरीक वैराग्य हा उनको कौन मोटा सकत

। आखीरमें श्री कृष्ण तथा देवकी माताने कहा कि हे लालजी !
 अगर तुमारा ऐसाही इगदा हो तो तुम एक दिनका राज्यलभ
 स्वीकार कर हमारा मनारथका पुरण करो। गजसुकुमालने मान
 ली। बड़े ही आडम्बरमें राज्याभिषेक करके श्रीकृष्ण गोला वि
 मात आपकया इच्छते है ? आदेश दो गजसुकुमालने कहा कि
 हमीके भट्टारसे तीन ऋक्ष सोनइया नीकाट्ठे कोलक्ष्मे रजा
 ण पात्रे और एक लभ हजमका दे दीक्षायोग राजाम करवा।
 ण नरेन्द्रने महायलकी माफीक घटा भारी महोत्सव कराव
 मिनाथजीके पाम गजसुकुमालको दीक्षा दिरा दी। गजसुखमाठ
 नि र्यासमिति यावन गुप्त ऋक्षचर्ये पालन करने लगा। उमी
 रन गजसुकुमाल मुनि भगवानको यन्दन कर बोला कि ह सर्वन !
 आपकी आज्ञा हो तो मैं महाफाल नामके स्मशानमें जावे ध्यान
 कर। भगवानने कहा “जहासुख” भगवानको यन्दन कर स्मशा
 में जावे भूमिका प्रतिलेखन कर शरीरको किंचित् नमारे
 गधुकी धारदधी प्रतिमा धारण कर ध्यान करने लग गया।

इधर मोमर नामका ब्राह्मण जो गजसुकुमान्जीके सुसंग
 यह विधाहने लिये समाधिके फाट्टृण दुर्गादि लानेका नगरी
 तहार पेहला गया था सर्व सामग्री लेके पीछा आ रहाथा वह
 हाफाल स्मशानके पामसे जाता हुवा गजसुकुमाल मुनिसे
 खा (उस बखत श्याम (मजा) काल हो रहाथा) देखते ही पुर्य
 र्यका नैर स्मरणमें होने ही ओधातुर हो बोला कि भो गजसुकु
 माल ! हीणपुन्या अधारी चवदमके जन्मा हुवा आज तेरा मृत्यु
 पाया है कि मेरी पुत्री सोमाका यिनोही दुपण त्यागन कर तुं
 शेर्का मुडावे यहा ध्यान फिरता है ऐसा वचन धोत्रे दिशा-
 दोकन कर सग्न मट्टी लाके मुनिके शिरपर पाल राधी मानोष

मुसगाजी गिरपर एक नवीन पेचाही बधा रहा है। फीर स्म-
शानमें खेर नामका काष्ट जन्म रहाथा उन्हीका अगर लाके वह
अग्नि गजसुकुमालक गिरपर धर आप बहासे चला गया। गज
सुकुमालमुनिको अत्यन्त घेदना होनेपरभी सोमल चात्रणपर
लगारभी द्वेष नहीं कीया। यह मन अपने किये हुये कर्मोंकाही
फल समझके आनन्दके साथ करजाको चुका रहाया। पसा शुभा
ध्ययसाय, उज्ज्वल परिणाम, विशुद्ध ऐश्या, होनेसे न्यार घातीया
कर्मका क्षयकर बचलज्ञान प्राप्ती कर अतगढ़ बचली हो अनन्त
अव्यापार शास्त्रत सुखमि जाय विराजमान होगये अर्थात्
गजसुकुमालमुनि दीक्षा ले एकही रात्रीमें माभ पधार गय।
नजीकमें वेहनवाले देवतायानि बडाही महोत्सव कीया पचयणक
पुष्पो आदि ५ द्रव्यकि बपा करी और बह गीत-गान करने लग।

इधर सूर्यादय होतेही श्रीकृष्ण गज अमचारीकर छत्र धरा
वाते चमर उडते हुये बहुतसे मनुष्योंके परियारस भगवानकी ध-
वन करनेको जा रहाथा। रहस्तेम पर बृद्ध पुरुष बडी तकरीफत
साथ पकेक ईठ रहस्तेसे उठाके निज घरमें रखते हुयेका देखा।
कृष्णकी उन्ही पुरुषकी अनुकम्पा आइ आप हस्तीपर रहा हुआ
पक ईठ लेंके उन्ही बृद्ध पुरुषके घरमें गयी जमा देखके सत्रे
लोकानि पकेक ईठ लेंके घरमें रखनेसे वह सत्रे इटोरी रासी प
बही साथमे घरमें गयी गइ फीर श्री कृष्ण भगवानके पास जाके
बदन नमस्कार कर इधर उधर देखते गजसुकुमालमुनि देखनेमें
नही आया तत्र भगवानसे पुच्छा कि हे भगवान मेरा छोटाभाइ
गजसुकुमाल मुनि कहा है म उन्हासे बदन कर ?

भगवानने कहाकि हे कृष्ण ! गजसुकुमालने अपना कार्य
सिद्ध कर लिया। कृष्ण कहाकि ठेसे। भगवानने कहाकि गज

सुकुमाल दीक्षा ले महाकाल स्मशानमें ध्यान धरा बहा एक पुरुष उन्ही मुनिकों सहायता अर्थात् शिम्पर अग्नि रख देनेसे मोक्ष गया।

कृष्ण बोलाकि हे भगवान् उन्ही पुरुषने कैसे सहायता दी। भगवानने कहाकि हे कृष्ण ! जेमे तु मेरे प्रति घन्दनकों आ राहा था गहस्तेमें वृद्ध पुरुषको माहिता दे के सुखी कर दीया था इसी माफीक गजसुखमालकों भी सुखी कर दीया है।

हे भगवान् मना कोन पुन्यहीन कालीचौदसका जन्मा हुआ है कि मेरा लघु प्राधयमें अकाल मृत्युधर्म प्राप्त करा दीया अब मैं उन्ही पुरुषकों कैसे जान सकूँ। भगवानने कहा हे कृष्ण तु द्वाग मतीमें प्रवेश करेगा उस समय यह पुरुष तेरे सामने आते ही भयभ्रात होके धरतीपर पड़के मृत्यु पावेगा उसको तु समजना कि यह गजसुखमालमुनिका माज देनेवाला है। भगवानकों घन्दनकर कृष्ण हस्तीपर आरुह हो नगरीमें जाते समय भाइकी जिमाके मारे राजगहस्तेकों छोड़के दूसरे गहस्ते जा रहा था।

इधर मामा ब्राह्मणने विचार कि श्रीकृष्ण भगवानके पास गये हैं और भगवान तो मर्य जाणे हे मेरा नाम रतानेपर नजाने श्रीकृष्ण मुझे कीम कुमौत मारेगा तो मुझे यहासे भाग जाना डीक है यहभी राजरहस्ता छोड़के उन्ही रहस्ते आया कि जहासे श्रीकृष्ण जा रहा था। श्री कृष्णको देखते ही भयभ्रात हो धरतीपर पड़के मृत्यु धर्मके शरण हो गया श्री कृष्णने जानलियाकि यह दुष्ट मेरे भाइको अकाल मृत्युका माहाज दीया है फिर श्रीकृष्णने उन्ही मोमलके शरीरकी बहुत दुर्दशा कर अपने स्थानपर गमन करता हुआ। इति तीजा धर्मका अष्टमा गजसुखमालमुनिका अभ्ययन समाप्तम्।

नरमाध्ययन-द्वारका नगरी बन्धुदेवराजा धारणी राणीके
निह स्वप्न । सूचित सुमुह नामका कुमारका जन्म हुआ कलाप्रविण
पचास राजकन्यावांसे साथ कुमारका लग्न कर दिया दत्तदायजो
गर्भ गातमयि माफीक यायन भोगविलामाम मग्न हो रहाथा ।

श्री नेमिनाथ भगवानका आगमन । धर्म दशना ध्वज क
सुमुह कुमार सत्तर त्याग दीक्षाव्रत ग्रहण किया चौदा पूर्व ज्ञान
घान वग्न दीक्षा व्रत एक मासका अनसन श्री शत्रुजय तीर्थपर
अन्तिम वैवल्लभान प्राप्त कर मोक्ष गया । इसी माफीक दशथा
ध्ययनमें सुमुहकुमार इग्यारथा अध्ययनमें कोनीदकुमार यह तीना
भाइ बन्धुदेवराजा धारणी राणीके पुत्र दीक्षा लेके चौदाह पत्र ज्ञान
वास वर्ष दीक्षा एक मास अनसन शत्रुजय अतगठ वैचली हो
मोक्ष गये । और गारहथा दारणकुमार तेरवा अनाधीठकुमार यह
बासुदेवराजा धारणीराणीके पुत्र पचास अन्तेवर त्याग दीक्षा ले
सुमुहकि माफीक श्री मिद्राचल तीर्थपर अतगठ वैचली हो मोक्ष
गया । इति तीजा वर्गके तेरवा अध्ययन तीजा वर्ग समाप्तम ।



(४) चौथा वर्गका दश अध्ययन ।

द्वारामती नगरी पूर्ववत् ध्वज करने योग्य है । द्वारामतीमें
बन्धुदेवराजा धारणी राणी सिंह स्वप्न सूचित जाली नामका
कुमारका जन्म हुआ मोहस्तव पूर्ववत् कलाचार्यने ७२ कलाम्यास
जोधन वय ५० अन्तेवरसे लग्न दत्तदायजो पूर्ववत् ।

श्री नेमिनाथ भगवानकी देशनासु दीक्षा त्रीनी द्वादशाग
का ज्ञान सोलावर्ष दीक्षापाली शत्रुजय तीर्थपर एक मासका अन
सन अन्तिम वैवल्लभान प्राप्तकर मोक्ष गया इति । इसी माफीक

(२) मयालीकुमार (३) उषपायालीकुमार (४) पुरुषसेन (५) धारि-
सेन यह पांचो वामुदेय धारणीसुत (६) प्रजुनकुमार परन्तु कृष्ण
राजा रूक्मिणी सुत (७) सम्भुकुमार परन्तु कृष्णराजा जयुवन्ती
राणीका पुत्र (८) अनिरुद्रकुमार परन्तु प्रजुन पिता वेदरथी
माता (९) मत्स्यनेमि (१०) द्रुनेमि परन्तु समुद्रविजय राजा
नेवादेयीके पुत्र हैं । यह दशों राजकुमार पचास पचास अस्तेवर
त्याग बाघीशमा तीर्थकर पामे दीक्षा द्वादशमका ज्ञान सोले
थप दीक्षा शत्रुजय तीर्थ पर एक मासका अनशन अग्निम कैवल
ज्ञान प्राप्त कर मोक्ष गये इति चोर्थो र्गं दश अध्ययन समाप्त ।



(५) पांचमा वर्गके दश अध्ययन

द्वारिका नगरी कृष्णवामुदेय राजा राज कर रहा था यावत्
पुष्पकी माफक समझना । कृष्ण राजाके पद्मावती नामकी अग्र
महिषी राणी थी । स्वरूप सुन्दराकार यावत् भागधितान्न करती
आनन्दमें रहती थी ।

श्रीनेमिनाथ भगवानका आगमन हुआ कृष्णादि बड़े ही ठाठ
स धन्दन करनेकी गये पद्मावती राणी भी गई । भगवानने धर्म-
देशना फरमाई । परिपदा श्रेष्ठ कर यथाशक्ति त्याग धैराग कर
स्वस्थस्थाने गमन कीया, कृष्णनरेश्वर भगवानको धन्दन नमस्का-
र कर अर्जकरी कि हे भगवान सर्व धन्तु नाशवान है तो यह प्र-
त्यक्ष देयलाक सदश द्वारिका नगरीका विनाश मूल कीम कारण
से होगा !

भगवानने फरमाया है धर्मधिप द्वारिका नगरीका विनाश

मदिरा प्रसन्न द्विपायनकं काग्नौ अग्निके योगमे द्वात्रिका नष्ट
होगा ।

यह सुनके वासुदेवने बहुत पश्चाताप किया और विचार
कि धन्य है जालीमयाजी यावत् दृढ नेमिकी जो कि राज धन
अन्तेधर त्यागके दीक्षा ग्रहण करी । मैं जगतमें अधन्य अपुन्य
अभाग्य जो कि राज अन्तेधरादि कामभोगमे गृहीत हो रहा हु
तापे भगवानके प्राप्त दीक्षा लेनेमें असमर्थ हु ।

कृष्णके मनकी बातोंको ज्ञानसे जानरे भगवान वाल कि
कयुं कृष्ण तेरा दिलमें यह विचार हो रहा है कि मैं अधन्य अ
पुन्य हु यावत् आतन्ध्यान करता है क्या यह बात सत्य है ?
कृष्णने कहा हाँ भगवान सत्य है । भगवानने कहा है कृष्ण ! यह
बात न दूर न होगा कि वासुदेव दीक्षा ले । कारण सब वासुदेव
पुर्ण भय निदान करते हैं उम निदानके फल है कि दीक्षा नहीं
ले सके ।

कृष्णने प्रश्न किया कि हे भगवान ! मैं जो आरम्भ परिग्रह राज
अन्तधरमे मुच्छिन हुआ हु तो अब परमात्मे मेरी क्या गति जागी ?

भगवानने उत्तर दिया कि हे कृष्ण यह द्वात्रिका नगरी
मदिरा अग्नि और द्विपायनके योगसे विनाश होगी, उसी
समय मानपिताको निकालनेके प्रयोगसे कृष्ण और बलभद्र
द्वात्रिकासे दक्षिणकी धड़ी मन्मथ युधिष्ठिर आदि पांच पादपों
की पडु मथुरा होके वसुधी धनमें बड वृक्षके नीचे पृथ्वीशीला
पटके उपर पीत बस्त्रसे शरीरको आच्छादित कर सुवेगा, उम
समय जराकुमार तीक्ष्ण बाण घाम पावमे भारनेसे काट कर
तीसरी पालुकाप्रभा पृथ्वीमें जाय उत्पन्न होगा ।

यह बात सुन कृष्णको उडा हो गज हुआ कारण मे पसी

साहिबीकाधाणी आखीर उभी स्थानमे जाउगा । ममा आत-
ध्यान कर रहा था ।

एसा आर्तध्यान करता हुआ कृष्णको देखते भगवान घोल
कि हे कृष्ण तू आर्तध्यान मत कर तुम श्रीजी पृथ्वीमें उज्ज्वल
वेदना सहन कर अन्तर रहीत यहासे निकलये इसी जम्बुद्वीपके
भरतक्षेत्रकी आयसी उत्सर्पिणीमें पुष्ट नामका जिनपद देशम
सत्यद्वारा नगरीमें 'भारहथा अमाम नामका तीर्थकर होगा । यहा
गुह्य फाल कैथनपर्याय पाल मोक्षमें जायेगा ।

कृष्ण नरेश्वर भगवानका यह वचन श्रवण कर अत्यंत हर्ष
सतोषको प्राप्त हो सुशीका मिहनाद कर हाथरसे गर्जना
करता हुआ विचार करा कि मैं आयसी उत्सर्पिणीमें तीर्थकर
होउगा तो बीचारी नरकवेदना कोनसी गोलतीम है । महर्ष भ-
गवन्तको बन्दन नमस्कार कर अपने हस्ती पर आरुह हो यहा
मे चलके अपने स्थान पर आया मिहामन पर विराजमान हो
आज्ञाकारी पुरोषोको बुलवाये आदेश किया कि तुम जाये ।
भारिका नगरीका दोय तीन चार तथा बहुतसा रस्ता एकत्र
मीले यहा पर उद्घोषणा करा कि यह भारिका नगरी प्रत्यक्ष
देवलोक सम्बन्धी है यह मदिग अग्नि और द्विपायनके प्रयोगमे
विनाश होगा वास्त जो राजा युगगाजा शेट इभशेट सेनापति
माधवयहा आदि तथा मेरी राणीयों कुमार कुमारीयों अगर
भगवान नेमिनायजी पास दीक्षा ले उन्होंको कृष्ण महाराजकी
आज्ञा है अगर कीमीको कोई प्रकारकी सहायताकी अपेक्षा हा
तो कृष्ण महाराज करेगा पीछेले उद्गुम्बका भक्षण करना हो तो

१ वसुदेव इत्यादि ग्रन्थमें कृष्णका ३ भय तथा ४ भय भी लिखा है पारम्पर्य
यहां तो अंतरा रणत नैकिक नैवकर राजा लिखा है । मन्त्ररत्नलीप्य ।

कृष्ण महाराज करेगा दीक्षाका महोत्सव भी बड़ा आडम्बर न कृष्ण महाराज करेगा। द्वारका विनाश होगी वास्तव दीक्षा जन्दी ला।

यसी पुकार कर मेरी आज्ञा मुझ सुप्रसन्न करा। आज्ञाकारी कृष्ण महाराजका हुक्मका भविष्य निर बहार छात्रकामें उद कर आज्ञा सुप्रसन्न कर दी।

इधर पद्मावती राणी भगवानकी देशना सुन हृदय-मंतोष होके बोली कि हे भगवान! आपका चचनमें मुझे भ्रष्टा प्रतित आई श्रीकृष्णका पुच्छमें आपके पास दीक्षा उठगा। भगवानने कहा “जहामुख

पद्मावती भगवानका चन्दन कर अपन स्थानपर आई, अपने पति श्रीकृष्णको पुछा कि आपकी आज्ञा हो तो मैं भगवानकी पास दीक्षा ग्रहण कर ‘जहामुख’ कृष्णमहाराजने पद्मावती राणी का दीक्षाका उड़ा भारी महोत्सव किया। हजार पुरुषस उठाने योग्य सैधीकामें बैठके उड़ा शरघोटाक साथ भगवान् पास जाके चन्दन कर श्रीकृष्ण बालता हुआ कि हे भगवान! यह पद्मावती राणी मेरे बहुतही रूप थायत परमधलभा थी परन्तु आपकी देशना सुन दीक्षा लेना चाहती है। हे भगवान! मैं यह शिष्य गीतपी भिक्षा देता हूँ आप स्वीकार कराव।

पद्मावती राणी वस्त्राभूषण उतार शिरलोच कर भगवानके पास आये वाली ह भगवान्! इस मसारे अन्दर अलीता-प गीता लग रहा है आप मुझे दीक्षा दे मेरा कल्याण करे। तब भगवानने स्वयं पद्मावती राणीको दीक्षा दे यक्षणाजी साधिका शिष्याणी बनाक सुप्रसन्न कर दी फिर यक्षणाजीने पद्मावतीको दीक्षा-शिक्षा दी।

पद्मावती माध्व इर्याममिति यावत् गुप्त ब्रह्मचर्य पाप्मती
 यक्षणाजीके पाम पकादशाग सूत्राभ्यास किया, फीर चौथ छठ
 अष्टमादि विस्तरण प्रकारसे तपस्या कर पूर्ण वीश वर्ष दीक्षा
 प्राप्त कर मासका अनशन कर, अन्तिम वैवल्लभान प्राप्त कर,
 अपना आत्माके कायको मिट्ट कर मोक्षमे विराजमान हो गई।
 इति प्रथमा ययन समाप्त। इसी माफीक (२) गोरीगणी, (३)
 गधारीगणी (४) लक्ष्मणा, (५) मुत्तीमा, (६) जाग्रयती, (७) सत्य-
 भामा (८) स्वमणी यह आठों ऋणमहाराजकी अग्रमहिषी पट्ट-
 राणीया परमवल्लभ थी। यह नेमिनाथ भगवानर पाम दीक्षा ले
 वैवल्लभान प्राप्त कर मोक्षमे गई। (९) मूर्खी (१०) मूलदत्ता,
 यह दोय जाग्रयतीका पुत्र सायुकुमारकी राणीया थी। ऋणमहा-
 राज वीक्षामहात्मय कर परमेश्वरके पाम दीक्षा करीराह। पद्मा-
 वर्तीकी माफीक त्रैलोक्यान प्राप्त कर लिया। इति पञ्चमधर्मक
 दशाभ्ययन समाप्त। पञ्चमधर्म समाप्त।



(६) छट्टा वर्गके सोलाध्ययन

प्रथम अध्ययन—राजगृह नगरके बहार गुणशीला नामका
 उद्यान था वहापर राजा श्रेणिक श्यामपन्न अनेक राजगुणोमे
 संयुक्त था जिन्हके चलना नामकी पत्नी थी। राजतत्र चला
 नेमे बड़ा ही कुशल, शाम, दाम, भेद, दहके ज्ञाता और बुद्धि-
 निधान ऐसा अभयकुमार नामका मंत्री था। उसी नगरमे बड़ा
 ही धनालय और लोगोमे प्रतिष्ठित ऐसा भाकाह नामका गायक
 पनि नियास करता था।

उसी समय भगवान धीरप्रभु राजगृह नगरके गुणशील

चैत्यय अन्दर पधारे, राजा भेषिक, चेलणा राणी और नगरजन भगवानको धन्दन करनेका गये, यह बात माकाइ गाथापति श्रवण कर यह भी भगवानका धन्दन करनेका गये ।

भगवानने उस आइ हुई परिपदाको अमृतमय धर्मदेशना दी । श्रोतागण सुधारस पान कर यथाशक्ति म्याग-धैराग धारण कर स्वस्थान गमन किया । माकाइ गाथापति देशना सुन नसा रहा असार जान कर अपन जेष्ठपुत्रकी हुदुम्वभार सुप्रत कर भगवानके पास दीक्षा प्रदत्त करी । माकाइमुनि इयांसमिति यापत् गुप्त ब्राह्मण्यको पालन करता हुआ तथारूपके स्थितर भग यतीकी भक्ति धिनय कर पञ्चादशागका ज्ञानाभ्यास किया । बादमे बहुतमी तपध्या करते हुए महामुनि गुणरत्न सद्यस्तर तप कर अपने शरीरको अजरित बना दीया । सर्व मोलापदीक्षा पालके अतिम विपुल (व्यवहारगिरि) गिरि पर्वतके उपर एक मासका अनशन कर चक्षुज्ज्ञान प्राप्त कर शाश्वत सुखको प्राप्त हुये । इति प्रथम अध्ययन । इसी माफीक किंम नामका गाथा पति भगवान समीपे दीक्षा ले व्यवहारगिरि तीर्थपर मोक्षप्राप्ति करी । इति दुमरा अध्ययन समाप्त ।

तीसरा अध्ययन—राजगृह नगर गुणशीला उद्यान, भेषिक राजा, चेलणा राणी वणन करने योग्य जेमे पूर्व कर आये थे । उमी राजगृह नगरक अन्दर अर्जुन नामका मागी रहता था जिहाके प धुमती नामकी भार्या अच्छ स्वरूपधन्ती थी । उमा नगरके बहार अर्जुन मागीका एक पुष्पाराम नामका बगचा था यह पंच वणके पुष्पोरुपी लक्ष्मीसे अच्छे मुसोभीत था । उमी बगेचाके अति दूर भी नहीं अति नजीक भी नहीं एक मोगर पाणी यक्षका यक्षायतन था । यह अर्जुन मालीके चापदादा परदादा

आदि यशस्वरूपरा चीन्कालसे उसी मोगरपाणी यक्षकी सेवाभक्ति करते आये थे और यश भी उन्हाकी मनकामना पूर्ण करता था ।

मोगरपाणी यक्षकी प्रतिमाने सहस्रपल लोहसे बना हुआ मुद्रल धारण कर रखा था । अर्जुनमाली बालपण्यमे मोगरपाणी यक्षका परम भक्त था । उन्हाको मदैयके लिये एसा नियम था कि जत्र अपने घरसे प्रतिदिन बगचेमें जाके पाच घण्टे पुष्प चुटके एकत्र कर अपनी बन्धुमती भार्या के साथ पुष्प ले मोगरपाणी यशके देवालयमें जाके पुष्पा चढ़ाकर दीवण नमाके परिणाम कर फीर राजगृहनगरके राजमार्गमें वह पुष्पाका विमय कर अपनी आजीविका करता था ।

राजगृह नगरमें अन्दर छे गोटीले पुरुष बस्ते थे, वह अच्छे और स्वराज्य कार्यमें स्थैच्छासे धीदार करतेथे । एक समय राजगृह नगरमें महीत्सय था । धाम्ते अर्जुनमाली अपने घरसे पुष्प भरनेकी छावों ग्रहणकर पुष्प लानेकी अपनी बन्धुमती भार्याको साथ ले बगचामें गयेथे । वहापर दम्पति पुष्पोंको चुटके एकत्र कर रहेथे ।

उसी समय वह छ गोटीले पुरुष ब्रीडा करते हुये मोगरपाणी यक्षके देवालयमें आये इदर अर्जुनमाली अपनी भार्याके साथ पुष्प ले के मोगरपाणी यक्षके मन्दिरकी तर्प आ रहेथे । जत्र छे गोटीले पुरुषोंने बन्धुमती मालणका मनीहर रूप देखके विचार किया कि अपने मत्र एकत्र हो इस अर्जुनमालीको निग्रिह बन्धनसे बाध कर इस बन्धुमती भार्याके साथ मनुष्य-मयन्धी भोग (मैजुन) भोगये । एसा विचार कर छे वों गोटीले पुरुष उस मन्दिरके कियादर अन्तरमें अनवीलते हुये गुपचुप छिपकर बैठ गये ।

इदरम् अजुनमाली आर उ-मुमती माया दाना पुष्प लक्ष्
मोगरपाणी यक्षक धाममे आय । पुर्पाका नर कर (चढाके)
अजुनमा गी अपना शिर झुकाव य रक्षा प्रणाम करता था इत
नेमें तो पीच्छसे वह उ गोटीले पुरुष आके अजुनमालीको पकड़
निग्रिह (घम) उधनमे बांधकर एक तर्फ डाग दीया ओर उ-
मतीमालणके साथ वह लपट भोग भागयना । मैथुन कम नियम
करने गग गये) शर कर दीया ।

अजुनमाली उस अग्याचारकी दग्ध विचार कीयाकि मैं
बालपणेसे इस मोगरपाणी यक्ष प्रतिमाकी सया-भक्ति करता हू
और आज मेरे उपर इतनी विपत्तपड़ने परभी मरी साहिता
नही करता है तो न जाने मोगरपाणी यक्ष है या नही । मालम
होता है कि केंचड़ काष्टकी प्रतिमाही घेठा रखी है इसी माफीक
देनपर अधडा करता हुआ निगश हो रहा था ।

इदर मोगरपाणी यक्षने अजुनमालीका यह अव्ययमाय
जानक आप (यक्ष) मालीके शरीरमे आर प्रवेश किया । घम ।
मालीके शरीरमे यक्षका प्रवेश हाते ही यह उग्धन एकही माथमे
तुट पड़े ओर जो महन्न पलमे उना हुआ मुद्गल हाथमे लेके उ
गोटीले पुरुष ओर सातवी अपनी भार्या उ-होका चक्चुर कर
अकार्यका प्रत्यक्षम फट देता हुआ परलोक पहुचा दिया ।

अजुन मालीका उ पुरुष और सातवी स्त्रीपर इतना तो द्वेष
हो गया कि अपने शरीरमे यक्ष हानेसे सहस्रपलधाले मुद्गल द्वारा
प्रतिदिन उ पुरुष और एक स्त्रीको मारनेसे ही किंचित् सतोष
होता था अथात् प्रतिदिन सात जीर्वाकी घात करता था । यह
घात राजगृह नगरमे बहुतमे लोगों द्वारा सुनके राजा श्रेणिफने
नगरमे उद्घोषणा करा दी कि बाइ भी मनुष्य तृण, काष्ट, पाणी

आदिके दिने नगरके उहार न जाय कारण यह अजुन माली यथ
इष्टसे मान जीर्णोपजीर्ण प्रतिदिन घात करता है घाम्ने उहार जान-
घातके शरीरको और जीवको नुकसान होगा घाम्ने कोई भी
यहार मत जायो ।

राजगृह नगरके अन्दर सुदर्शन नामका श्रेष्ठी उमता था ।
यह बड़ा ही धनवान् और धायक, जीवाजीवका अच्छा ज्ञाता था ।
अपना आत्माशा कल्याणके रस्ते चरत रहा था ।

उसी समय भगवान् धीरप्रभु अपने शिष्यरत्नाके परिवा-
रने भूमिदलकी पथिप्र वसते हुये राजगृह नगरके गुणशीलोद्या-
नमें समयमरण किया ।

अर्जुन मालीके भयके मारे बहुत लोग अपन स्थानपर ही
भगवान्की घन्दन कर आनन्दका प्राप्त हो गये । परन्तु सुदर्शन
श्रेष्ठी यह बात सुनी कि आज भगवान् वगेचेमे पधारे है । घन्द-
नको जाननेके लिये मातापिताको पुछा तब मातापिताने उत्तर
दीया कि हे लाल्मी ! राजगृह नगरके यहार अजुन माली नर्दय
मान जीर्णोपजीर्ण मारता है । घाम्ने यहा जानेमें तेरे शरीरको नुका
होगा घाम्ने मर तंगोंकी माफीक तु भी यहा ही रह क भग-
वान्की घन्दन कर ले । यह भगवान् मर्यज्ञ है तेरी घन्दना स्वी-
कार करेंगे । सुदर्शनश्रेष्ठीने उत्तर दीया कि हे माता ! आज
पथिप्र दिन है कि धीरप्रभु यहा पधारे है ता मैं यहा रहक
घन्दन कने कर ? आपकी आज्ञा दा तो मैं तो यहा ही जायके भग-
वान्का दर्शन कर घन्दन कर । जब पुत्रका बहुत आग्रहदेखा तब
मातापिताने कहा कि जैसे तुमको सुप दोये घैमे करो ।

सुदर्शनश्रेष्ठी स्नानमञ्जन कर शुद्ध वस्त्र पहरेके पैदल ही
भगवान्का घन्दन करनेकी चला, जहा मोगरपाणी यथका मन्दिर

बृद्ध कहने लगे कि अहो! इस पापीने मेरे पिताको मारा था कोई कहते हैं कि मेरी माताको मारी थी। काह कहते हैं कि मेरे भाई चंदेन औरत पुत्र पुत्री और सगे सम्बन्धीओका मारा था इसीसे काह आक्रोष धधन तो कोई हीलना पथरासे मारना तर्जना ताड़ना आदि दे रहे थे। परन्तु अर्जुन मुनिने छगार मात्र भी उन्हां पर द्वेष नहीं किया मुनिने विचारा कि मैंने तो इन्होंके लघ-धीर्यों प्राणोंका नाश किया है तो यह तो मेरेको गालीगुला ही दे रहे हैं। इत्यादि आत्मभायनासे अपने धन्धे हुये कर्मोंको सम्यक् प्रकारसे सहन करता हुआ कर्मशयुओंका पराजय कर रहा था।

अर्जुन मुनिको आहार मीले तो पाणी न मीले, पाणी मीले तो आहार न मीले। तथापि मुनिश्री किंचित् भी दीनपणा नहीं लाता था यह आहारपाणी भगवानको दीव्याक्ष अमूर्छितपणे कायाको भाड़ा देता था, जैसे सर्प कीलके अन्दर प्रवेश करता है इसी माफीक मुनि आहार करते थे। एतेही हमेशाके लीये छठ० पारणा होता था।

एक समय भगवान राजगृह नगरसे विहार कर अग्न्यजम-पद देशमें गमन करते हुये। अर्जुनमुनि इस माफीक क्षमा स हीत घोर तपशयां करते हुये छ मास दीक्षा पाली जिसमें शरीर को पुणतया अजरित कर दीया जैसे खट्कमुनिकी माफीक।

अन्तिम आधा मास अर्थात् पन्द्रह दीनका भगवान कर कर्मोंसे विमुक्त हो अव्याघात शाश्वत सुखमें विराजमान हो गये मोक्ष पधार गये इति।

चोथा अध्ययन-राजगृह नगर गुणशीलोद्यान श्रेणीक राजा चेलना राणी। उसी नगरमें काम्बव नामका गायपति थडाही धनान्य वस्तुता था। भगवान पधारें मर्काईकी माफिक दीक्षा ले

एकादशाग शानाम्यास मोत्या वर्षकी दीक्षा एक मासका अनशन पालके धैर्य गिरि पर्यंत पर अन्तसमय केवल ले मोक्ष गये। इति ४ एव क्षेमनामा गाथापति परन्तु यह काकदी नगरीका था ॥ ५ ॥ एव घृतहर गाथापति काकदीका ॥ ६ ॥ एव कैलाम गाथापति परन्तु सधेत नगरका था और बारह वर्षकी दीक्षा ॥ ७ ॥ एव हरिचन्द्र गाथापति ॥ ८ ॥ एव वरतनामा गाथापति परन्तु यह राजगृह नगरका था ॥ ९ ॥ एव सुदर्शन गाथापति परन्तु घाणीया ग्राम नगरका था यह पांच वर्षकी दीक्षा पाल मोक्ष गया ॥ १० ॥ एव पुर्णभद्रगाथा ॥ ११ ॥ एव सुमनभद्र परन्तु सायन्धी नगरीका बहुत वर्ष दीक्षा पाली थी ॥ १२ ॥ एव सुप्रतिष्ठ गाथापति सायन्धी नगरीका सत्तावीस वर्षकी दीक्षा पाल मोक्ष गया ॥ १३ ॥ मेघ गाथापति राजगृह नगरका था यह बहुत वर्ष दीक्षा पा ७ मोक्ष गया ॥ १४ ॥ यह सब त्रिपुलगिरि-व्यथहारगिरि पर्यंतपर मोक्ष गये हैं। इति।

पन्द्रथा अध्ययन—पोलासपुर नगर श्रीवनोद्यान विजय नामका राजा राज करता था, उस राजाके धीदेवी नामकी पट्टराणी थी। उस राणीको अतिमुक्त-अमतो नामका कुमार था यह बड़ाही सुकुमाल और नाल्यावस्थासे ही बड़ा होशियार था—

भगवान् वीरप्रभु पोलासपुरके श्रीवनोद्यानमें पधारे। वीर-प्रभुका बड़ा शिष्य इन्द्रमूनि-गीतमस्यामि छठने पारणे भगवानकी आज्ञाले पोलासपुर नगरमें समुदायी भिक्षाके लिये अटन कर रहेथा।

उस समय अमतो कुमार स्नान मञ्जन कर सुन्दर पद्मा मूषण धारण कर बहुतमे लहने लहकियों कुमार कुमरियोंने साथ

क्रीड़ा करनेकी रास्तेमें आता हुआ गौतमस्वामिकी देखके अमन्तो कुमार बोलाकि हे भगवान ! आप कौनहो ओर कीम वास्ते इधर उधर फीरत हो ? गौतमस्वामिने उत्तर दीयाकि हे कुमार हम इयांसमिति यावन् ब्रह्मचर्य पालने वाले मुनि हे ओर ममु दानी भिक्षाके लिये अटन कर रहे हैं । अमन्तोकुमार बोलाकि हे भगवान हमारे यहा पधारे हम आपकी भिक्षा दीरायेंगे,, एसा कहके गौतमस्वामिकी अगुली^१ पकड़के अपने घरपर ले आये श्री देवीगणी गौतमस्वामिकी आत हुये देखके हृष सतोषके साथ अपने आसनसे उठ सात आठ पग सन्मुख गइ यन्दन नमस्कार कर भात पाणीके घरमे ले जायके चार प्रकारका आहारका सहर्ष दान दीया ।

अमन्तोकुमार गौतमस्वामिसे अज करी कि हे भगवान आप कहापर विराजते हो ? हे अमन्ता ! इस नगरके बाहार श्री धनोद्यानमे हमारे धर्माचार्य धर्मकी आदिके करनेवाले भ्रमण भगवान धीरप्रभु विराजते हैं उन्होके चरण कमलोंमें हम निवास करते हैं । अमन्तो कुमार बोलाकि हे भगवान ! मैं आपके साथ चलने आपके भगवान धीर प्रभुका चरण यन्दन कर “जहा सुख ।” तब अमन्ता कुमार भगवान गौतमस्वामिके साथ होके श्रीधनोद्यानमे आये भगवान धीरप्रभुकी यन्दन नमस्कार कर सेवा भक्ति करने लगा ।

भगवान गौतमस्वामि गयाहुवा आहार भगवानकी यताक पारणो कर तप मयमर्मे रमनता करने लगा ।

१ द्वाय श्लोक क्त है कि एष हायम गौतमके जालीया दुसरे हायकि अगुली अम तेन पकडला ता फीर सुल मुहवानो कम करा नास्त मुत्पति धयनरोंवा ? उत्तर एव हायकि कुशापर चोरी आग्यायम मुत्पनीम यन्ना करीनी दुसरे हायकी अगुली अम तान पस्तीनी जाननी नैन मुनि ठाफ तापर बाल सस्त हैं ।

मर्यज्ञ धीर प्रभु अमन्ताकुमारकों धर्म देशना सुनाइ। अ-
मन्ताकुमार बोलाकी हे करूणासिंधु आपकि देशना सुनमें मद्यारमें
भयभ्रात हुआ मैं मेरे मातापिताकों पुच्छके आपके पास दीक्षा
ले उगा “जहा सुख ’ प्रमाद मत करो। अमन्ताकुमार भगवानकों
चन्दनकर अपने मातापिताके पास आया और बोलाकि हे माता
आजमे श्रीरप्रभुकि देशना सुनके जन्ममरणके दु गोसे मुक्त होनेके
लिये दीक्षा ले उगा। ऐसीधार्म सुनके दुसरोकि मातायोका रज
हुवा करता था परन्तुयहा अमन्ताकुमार कि माताको चिस्मय
हुवा और बोली की हे बत्स! तु दीक्षा और धर्मकों क्या जानता
है? कुमारजीने उत्तर दिया कि हे माता! मैं जानता हूं उसकों
ना नहीं जानता हूं और नहीं जानना हूं उनकों जानता हूं। माता-
ने कहा कि यह क्या?

हे माता! यह मैं निश्चित जानता हूं कि जितने जीव जन्म-
ते हैं वह अक्षय मृत्युकों भी प्राप्त होते हैं परन्तु मैं यह नहीं जा-
नता हूं कि किस समयमें किम क्षेत्रमें और किम प्रकारसे मृत्यु
होगी। हे माता! मैं नहीं जानता हूं कि कोनसा जीव किस कर्मों
से नरक तीर्थच मनुष्य और देवगतिमें जाता है, परन्तु यह
बात मैं निश्चय जानता हूं कि अपने अपने किये हुये शुभाशुभ
कर्मोंसे नारकी तीर्थच मनुष्य और देवतोमें जात हैं। इस धाम्ने
हे माता! मैं जानता हूं यह नहीं जानता और नहीं जानता यह
जानता हूं। बत्स! इतनेमें माता समझ गई कि अब यह मेरा पुत्र
घरमें रहनेवाला नहीं है। तथापि मोहप्रेरित यहनसे अनुकूल-प्र-
तिक्रिया शब्दामे समझाया, परन्तु जिन्होंकों असली वस्तुका भान
हो गया हो यह इस कारणसे कभी लोभीत नहीं होता है
अमन्ताकुमार का तो शिवसुन्दरीमे इतना बड़ा प्रेम हो रहा था
कि मैं कीतना जल्दी जावे मीलूं।

माताजीने कहा कि हे पुत्र ! अगर आप दीक्षा ही लेना चाहते हो तो एक दिनका राज कर मेरे मनोरथका पूर्ण करो । अमन्तोकुमर इस बातको सुनके मौन रहा । जब माता-पिताने बड़ा ही आहम्यर कर कुमरका राजअभिषेक कर धोले कि हे लालजी आप कि क्या इच्छा है आज्ञा करा । कुमरने कहा कि तीन लक्ष सोनइया लक्ष्मीके भंडारसे निकाल दो लभ्य रजोहरण पात्रा और एकलभ हजामकी दे मेरे दीक्षा कि तैयारी करा जा । जैसे महाबलकुमरके दीक्षाका महोत्सव कीया इसी माफीक बड़े ही महोत्सव पूवक भगवानके पास अमन्ताकुमरकी भी दीक्षा दराइ । तथारूपके स्थिचरों के पास एकादशागका ज्ञान कीया ।* बहुतसे वर्ष दीक्षा पाली गुणरत्न समत्सरादि तप कर अन्तमे व्यवहार गिरिपर वैवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष गया ॥ १५ ॥

सोलहा अध्ययन-यनादसी नगरी काम यनाधान अलख नामका राजाया, उस समय भगवान धीरप्रभुका आगमन हुआ कोणककी माफीक अलखराजाभी बदन करने की गया । धम

* भगवतीसूत्र शतक ५ उ० ८ में लिखा है कि एक समय बनी वग्माद वर्षनेक बादमें स्थिचरोंक साथमें अमन्तोबालकपि स्थितिग गया था स्थिचर कुछ दूर गये य अमन्तोऋषि पीच्छ जान समय पाणीक अंदर मगरी पाल था य अपन पातका पातरी उम्भ डाल तास्ती हुइ दख वालना ह कि यह मरी नइया (नौका) तिर रही है । दुरग स्थिचरोंने दखा उमी समय स्थिचरोंकी बनी ही विचार हुआ कि दखा य बालकपि क्या अनुचित बोडा कर रहा है । व एव तपस भगवानक समिप आक पुच्छा कि हे भगवा ! आपका शिष्य अमन्ता बालकपि नितना भव कर माग जावगा । भगवानने उत्तर दिया की हे स्थिचरों अमन्ताऋषि कि हालना मन करें यावन् अमन्ता ऋषि चम शरीरी अर्थात् इसी भवमें मोक्ष जावगा । वास्तु तुम स्व मुनि बालकपिकि व्याव कर । इति ।

देशना सुन अपने जेष्ठ पुत्रका राज देवे उदाई राजाकी माफी क दीक्षा ग्रहण करी एका दशाग अध्ययन कर विचित्र प्रकारकी तपश्चर्या करते हुये बहुतसे वर्ष दीक्षा पाल अन्तमें विपुलगिरि (व्यवहारगिरि) पर केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष गये इति सोलवाध्ययन । इति छद्मार्ग समाप्त ।



(७) सातवा वर्गके तेरह अध्ययन

राजप्रद नगर गुणशीलोद्यान श्रेणिकराजा चेलनाराणी अभ यदुमारमन्त्री भगवान् धीरप्रभुका आगमन, राजा श्रेणिककायन्दनको जाना यहसर्वाधिकर पूर्वके माफीक समझना । परन्तु श्रेणिकराजा कि नन्दानामकि राणी भगवानकि धर्मदेशना श्रवण कर श्रेणिक-राजाकि आज्ञा लेके प्रभु पाने दीक्षा ग्रहणकर चन्दनबालाजीके समीप रहतीहुइ एकादशागका अध्ययन कर विचित्र प्रकारकी तपश्चर्या करती हुइ कर्मशत्रुओंका पराजयकर केवलज्ञान पावे मोक्षगइ इति । १। एव (२) नन्दमती (३) नन्दोतरा (४) नन्दमेना (५) मरुता (६) सुमरुता (७) महामरुता (८) मरुदेया (९) भद्रा (१०) सुभद्रा (११) सुजाता (१२) सुमा णसा (१३) भुतादिग्रा यह तेरहा राणी या अपने पति श्रेणिक-राजाकि आज्ञासे भगवान् धीर प्रभुके पास दीक्षा लेके सत्यने इग्यारे अगका ज्ञान पदा । बहुतसी तपस्याकर अन्तमें केवलज्ञान प्राप्तकर मोक्ष गइ है इति सातवा वर्ग समाप्त ।



(८) आठवा वर्गके दश अध्ययन है ।

चम्पानगरी पुर्णभद्र उद्यान कोणक नामका राजा राज कर रहा था। उसी चम्पानगरीमें श्रेणीक राजाकि राणी कोणक राजा-कि चुलमाता 'काली'नामकि राणी निवास करती थी

भगवान् वीरप्रभुका आगमन हुआ नन्दारानीकि माफीक कालीराणी भी देशना सुन दीक्षा ग्रहण कर इग्यारे भग्न ज्ञानाभ्यास कर खोत्थ छट्ठादि विचित्र प्रकारसे तपश्चर्याकर अपनि आत्माकी भाषती हुई बोलर रही थी ।

एक समय काली साध्विने आय चन्दन वाला साध्विको चन्दन कर अर्ज करी कि आपकी रजा हो तो मैं रत्नायली तप प्रारभ करूँ ? अहानुसम् ।

आया चन्दन बालाजीकी आज्ञा होनेसे काली साध्विने रत्नायली तप शुरु किया । प्रथम एक उपवास किया पारणके दिन "सव्यकामगुण" सर्व विगद् अर्थात् दूध दही घृत तैल मीठा इसे जैसे मिले वेसाही आहारसे पारणो कर सके । सय पारणमें यही विधि समझना । फिर दोय उपवास कर पारणो करे । फिर तीन उपवास कर पारणो कर बादमें आठ छठ (धेला) करे पारणो कर, उपवास करे, पारणो कर, छठ करे, पारणो कर अठम करे, पारणो कर ध्यारोपास पारणो कर पाचोउपवास पारणो कर छ उपवास, पारणो कर सात उपवास, पारणो कर आठ उपवास, पर्यं नव दश इग्यारा बारह तेरह चौदा पन्दर सोळा उपवास करे, पारणो कर लगता बीतीस छठ करे, पारणो कर पौर

सोला उपवास करे, पागणो कर पन्द्रा उपवास करे, ण्य चौदा तेरह बारह इग्यार दश नव आठ सात छे पांच चार तीन दोय ओर पागणो कर एक उपवास करे । वादमें आठ छठ करे पागणो कर तीन उपवास करे, पारणो कर छठ करे, और पारणो कर एक उपवास करे, यह प्रथम ओली हुई अर्थात् इम तपके हारकी पहली लड हुई इमको एक वर्ष तीन मास और बायीस दिन लगते हैं जिसमें ३८४ दिन तपस्या और ८८ पागणा होता है पारणे पाचीं विगड सदीत भी कर सकते हैं । इसी माफीक दुसरी ओली (हारकी लड) करी थी परन्तु पारणा विगड यज्ञ करते थे । इसी माफीक तीसरी ओली परन्तु पारणा हेलालेप धर्ज करते थे । ण्य चौथी ओली परन्तु पारणे आयिल करते थे । यह तपस्वी हारकी चार लडकों पाच वर्ष दोय मास अठ्ठावीस दिन हुवे जिसमें चार वर्ष तीन मास छे दिन तपस्याके और इग्यार मास बायीस दिन पारणेके पसे और तप करते हुये वाली साध्वीका शरीर सुके लुरखे भुग्ने हो गया था चलते हुये शरीरके हाड बडबड शब्दसे याजने लग गया अर्थात् शरीर बीलकुल कृप बन गया तथापि आत्मशक्ति बहुत ही प्रकाशमान थी । गुरुणीजिकी आशासे अन्तिम ण्य मासका अनशन कर केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष गई इति ।

इसी माफीक दुसरा अध्ययन सुकालीराणीका है परन्तु रत्नायली तपके स्थान कनकावली तप कीया था रत्नायली और कनकावली तपमें इतना विशेष है कि रत्नायली तपमें दोय स्थान पर आठ आठ छठ एक स्थानपर चौतीस छठ किया था वहा काकायली तपमें अठम तप कीया है वास्ते तपकाल पच वर्ष नव मास और अठारा दिन लगा है दोय वालीराणीकी माफीक कर्म क्षय कर केवलज्ञान प्राप्त हो मोक्ष गई । २ ।

इसी माफीक महाकालीगणी दीक्षा है यावत् लघु सिंहा की चाली माफीक तप करा यथा एक उपवास कर पाग्ना कीया फिर दोय उपवास कीया पारणा कर, एक उपवास पाग्ना कर तीन उपवास पारणा कर दोय उपवास, पारणीकर च्यार उपवास पारणो कर तीन उपवास, पारणो कर पाच उपवास, पारणो कर च्यार उपवास, पारणो कर छे उपवास, पारणो कर पाच उपवास, पारणो कर सप्त उपवास, पारणो कर छे उपवास, पारणो कर आठ उपवास करे, सात उपवास करे०, नव उप० आठ उप० नव उप० सात उप०, आठ उप०, छे उप० सात उप०, पाच उप०, छे उप०, च्यार उप०, पाच उप० तीन उप० च्यार उप०, दोय उप०, तीन उप०, एक उप०, दोय उप० एक उप०, एक ओलीका १८७ दिन लागे पूर्ववत् च्यार ओलीका दोय वष अठावीश दिन लागे । यावत् सिद्ध हुई ॥ ३ ॥

इसी माफीक कृष्णागणीका परन्तु उन्होंने महासिंह निकल तप जो लघुसिंह० बढते हुये नव उपवास तक कहा है इसी माफीक १६ उपवास तक समझना एक ओलीका एक वष छ मास अठारा दिन लगा था । च्यार ओली पूर्ववत्को छ वष दोय मास बारह दिन लगा था यावत् मोक्ष गई ॥ ४ ॥

इसी माफीक सुकृष्णराणी परन्तु सत्त भक्तमियां कि भिक्षु प्रतिमा तप कीया था यथा-सात दिन तक एक एक आहार कि दात' पर्येक पाणीकी दात । दूसरे सात दिन तक दो आहार दो

१ दातार त्त समय विषम घार खस्ति न हो उम दात करन है जेम मोदक दान समय एक क्षुर पत्र जावे तथा पाणा दते समय एक बुद गिर जाव तो उम भा दान कहते है । अगर एक ही समय याल्भर मोदक आर घग्भर, पाणी दतो भी एकही दान है

पाणीकी दात । तीसरे सात दिन तीन तीन आहार तीन तीन पाणीकी दात यायत् सातम सातदिन, सात सात दात आहार पाणी कर लेते हैं पच पकोणपचास दिन और एकसो छीनय दात आहार एक सो छीनय दात, पाणी की होती है । फीर यादमे अठ अठमिया भिक्षु प्रतिमा तपकरा यह प्रथम आठ दिन एकैक दात आहार एकैक दात पाणी कि पर्य यायत् आठवे आठ दिन तक आठ आठ दात आहारकी आठ आठ दात पाणीकी सर्व चौमठ दिन और दोय सो इठीयामी दात आहार दोय सो इठीयामी दात पाणीकी होती हैं । यादमें नव नवमिया कि भिक्षु प्रतिमा तप पूर्वयत इकीयासी दिन और व्यागसो पच दात नरया होती हैं । यादमे दश दशमिया भिक्षु प्रतिमा तप करा जिस्का एक सो दिन और नाढापाचसो दात सज्या होती है । यह प्रतिमा सर्व अभिग्रह तप है यादमें ही बहुतसे मास क्षमणा दि तप कर वैचल्लहान प्राप्त कर अन्तिम मोक्षमें जा विराजे इति ॥ ५ ॥

१	७	३	८	५
३	८	५	१	२
८	१	२	३	४
७	३	४	८	१
४	५	१	२	३

इसी माफीक महाकृष्णा राणी परन्तु लघु सर्वतो भद्र तप कराया गया यत्र प्रथम ओलीको तीनमास दशदिन पच व्याग ओलीका एक वर्ष एकमास दशदिन, पारणा सब रत्नावली तपकि माफीक समझना । अन्तिम मोक्ष में विराजमान हुये । ६ ।

इसी माफीक धीर कृष्णा राणी परन्तु महा सवता भद्र तप

१	२	३	४	५	६	७
४	५	६	७	१	२	३
७	१	२	३	४	५	६
३	४	५	६	७	१	२
६	७	१	२	३	४	५
२	३	४	५	६	७	१
५	६	७	१	२	३	४

कीया था। यथा यत्र एक ओलीने आठ मास पाच दिन पच च्यार ओलीने दाय पच आठ मास और बीस दिन लगा था। पारणमे भोजनविधि सवरत्नावली तपकि माफीक समजना औरभी विधिप्र प्रकारमे तपकर केवलज्ञान प्राप्त कर मा क्षमें विराजमान हुये इति । ७ ।

५	६	७	८	९
७	८	९	६	५
९	५	६	७	८
६	७	८	९	५
८	९	५	६	७

इसी माफीक रामकृष्णा राणी परन्तु भद्रोत्तर प्रतिमा तप कीयाया। यथा यत्र एक ओलीका छ मास और बीस दिन तथा च्यार ओलीका दाय पच दोय मास और विमदिन औरभी बहुत तप कर केवलज्ञान प्राप्त कर मो क्षमें विराजमान हुये इति । ८ ।

इसी माफीक पितुसेन कृष्णाराणी परन्तु मुक्तावली तप कीया यथा—एक उपवास कर पारणा कर छठ कीया पारणा कर एक

उपवास पाण्डा कर तीन उपवास पारणाकर एक उपवास च्यार
 उप० एक उप० पाच उप० एक उप० छ उप० एक उप० सात
 उप० एक उप० आठ उप० एक उप० नव उप० एक० दश०
 एक० इग्यारे० एक० बारह० एक० तेरह एक० चौदा० एक० पंद्रा०
 एक० सोळा उपवास इमी माफीक पीछा उतरता मोला उपवासने
 एक उपवास तक कीया । एक ओलीका सादाइग्यारे मास लागे
 और च्यारों ओलीकों तीन चर्ग ओर दश मास काल लगा पार
 णका भोजन जैसे इत्नायली तपकि माफीक यावन शाश्वता सु-
 खमें विराजमान हो गये इति । ९ ।

इमी माफीक महासेन वृष्णा परन्तु इन्होंने आविल वद्धि-
 मान नामका तप किया था । यथा—एक आविल कर एक उप-
 वास दो आविल कर एक उपवास, तीन आविल कर एक उप-
 वास पच च्यार आविल एक उपवास पाच आविल कर एक
 उप० छे आविल एक उप० सात आविल इसी माफीक प्रवेक
 आविलकि वृद्धि करते हुये यावत् नियाणये आविल कर एक उप-
 वास कर सो आविल कीये इस तप पुरा करनेको चौदा चर्ग तीन
 मास बिसदिन लगा था सर्वसतरा चर्गकी दीक्षा पालके अन्तिम
 एक मासका अनसन कर मोक्ष गया ॥ १० ॥

यह श्रृंगिकराजा कि दशा राणीयां धीरप्रभुके पास दीक्षा
 लि । इग्यारा अंगका ज्ञानाम्ब्यान कर, पूर यतलाइ हुए दशा प्र-
 वारकि तपश्रयां कर अन्तिम प्रवेक मासका अनसन कर कर्म
 शशुका पराजय कर अन्तगढ बंधली हो के मोक्षमें गई इति ।

॥ इति आठवावर्गके दशाध्ययन समाप्तम् ॥

इति अन्तगढ दशागसूत्र वा सक्षित मार्ग समाप्तम् ।

श्री अनुत्तरोववाद् सूत्रका संक्षिप्त सार.



(प्रथम वर्गके दश अध्ययन है)



(१) पहला अध्ययन—राजगृह नगर गुणशीलोपान श्रेणिश्र राजा खेलनाराणी इसका विस्तार अर्थ गीतमनुमारके अध्ययन से समझना ।

श्रेणिकराजा के धारणी नामकी राणीका सिंह स्थान सूचिन जाली नामक पुत्रका जन्म हुआ महोत्सवके साथ पाच धायाने पालीत आठ वर्षका होनेके बाद कलाचार्यसे बहुततर कलाभ्यास मायत् युवक अवस्था होने पर बड़े बड़े आठ राजायाकी आठ कन्याया के साथ जालीकुमारका विवाह कर दिया दत्त दायजों पूर्णवत् समझना । जालीकुमार पूर्ण सचिप्त पुण्योदय आठ अन्तेउरके साथ देवताओं कि माफीक सुखाका अनुभव कर रहा था ।

भगवान धीरप्रभुका आगमन राजादि वन्दन करने को पुत्र वत् तथा-जालीकुमार भी वन्दनका गया देशना भ्रमण कर आठ अन्तेउर और ससारका त्याग कर माता-पिताकी आज्ञा ले बड़े ही महोत्सवके साथ भगवान धीरप्रभुके पास दीक्षा ग्रहण करी, विनयभक्तिसे इग्यारा अंगका ज्ञानाभ्यास कर चोत्थ छट अठमादि तपस्या करते हुये गुणरत्न समत्सर तपकर अपनि आत्माया उज्ज्वल बनाते हुये अन्तिम भगवानकी आज्ञा ले साधु साध्वीयोसे क्षमत्क्षामणाकर स्थिर भगवानके साथे विपुलगिनि पर्यंत पर अनसन किया सब सोला वषकी दीक्षा पाली । एक माम

वे अनसनके अन्तमें काल कर उर्ध्व सौधर्मइशान यायत् अच्युत
 देवलोकके उपर नव प्रीवैक से भी उर्ध्व विजय नामका वैमान
 में उत्तम हुये । जत्र स्थिवर भगवान जालीमुनि काल प्राप्त हुआ
 जानके परि निर्वणार्थ काउस्सगकीया (जाली मुनिके अनसनके
 अनुमोदन) काउस्सगकर जालीमुनिका उख पात्र लेके भगवान
 के समिप आये यह धर पात्र भगवान के आगे रखा गौतम स्था
 मीने प्रश्न कियाकि हे भगवान ! आपका शिष्य जाली अनगर प्रकृ
 तिका भद्रोक् धिनित यायत् कालकर कहा पर उत्पन्न हुआ होगा
 भगवानने उत्तर दियाकि मेरा शिष्य जाली मुनि यायत् विजय
 वैमानके अन्दर देव पणे उत्तम हुआ है उन्हाकी स्थिति वत्तीन
 मागरोपमकि है । गौतमन्धामिने पुच्छाकि हे भगवान जालिदेव
 विजय वैमानने फीर कहा जावेगा ? भगवानने उत्तर दियाकि
 हे गौतम ! जाहीदेव वहाने कालकर महाविदेह क्षेत्रमें उत्तम
 जाति कुल के अन्दर जनम लेगा वहामी केवली परपित धर्मका
 सेवनकर दीक्षाले केवलज्ञान प्राप्तकर मोक्ष जावेगा इति प्रथमा-
 ध्ययन समाप्त ।

इसी माफीक (२) मयालीकुमार (३) उधवालीकुमार (४)
 पुरुषसेन (५) वीरसेन (६) लट्ठन्त (७) दीर्घदत्त यह सार्ता
 भेणिक राजाकि धारणी राणीके पुत्र है और (८) वट्टेन्कुमार
 (९) विहासे कुमार यह दोय भेणकराजाकि चेलना राणी के पुत्र
 है (१०) अमयकुमार भेणक राजाकि नन्दाराणीका पुत्र है यह
 दश राजकुमार भगवान वीरप्रभु पासे दीक्षा ग्रहण करी थी ।

इग्यारा अगका ज्ञानाभ्यास । पहले पांच मुनियोंने १६
 वर्ष दीक्षा पाली कमने छट्ठा, मातवा, आठवा, बारह वर्ष
 दीक्षा पाली नववा दशवा पांच वर्ष दीक्षा पाली । गति-
 पहला विजयवैमान, दुमरा विजयन्त वैमान, तीसरा जयन्त

वैमान, चौथा अमाजत वैमान, पाचवा छटा सर्वायसिद्ध वैमान । शेष चार मुनि विजय वैमानमे उत्पन्न हुये । बहासे चयके मय महाविदेह क्षेत्रमे पूर्वधत् मोक्ष जायेगा । इति प्रथम धर्मये दशाध्यायन समाप्तम् । प्रथम धर्म समाप्तम् ।



(२) दुसरें वर्गका तेरह अध्ययन है ।

प्रथम अध्ययन—राजगृह नगर धेणिकराजा धारणी राजी सिह सुपनसूचित दीधसेन कुमारका जन्म पाट्यायस्था कलाभ्यास पाणीग्रहण आठ राजकन्यायोके साथ विवाह यायत् मनुष्य संघर्षी पाचो इन्द्रियके सुख भोगयतेहुये विधर रहाया । भगवान् वीर प्रभुका आगमन हुया धर्मदेशना सुनके दीधसेन कुमार दीक्षा ग्रहण करी सोला वर्षकी दीक्षा पालके विपुलगिरि पर्वत पर एक भासका अनसन कर विजय वैमान गये बहासे एकही भय महाविदेह क्षेत्रमे उत्तम जाति कुलमे जन्म ले के फीर केवली प्ररूपित धर्म स्वीकार कर केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष जायेगा । इति प्रथमाध्ययन समाप्तम् । १ ।

इमी माफीक (२) महासेन कुमार (३) लठवत (४) गूढ दन्त (५) सुहृदन्त (६) हलकुमार (७) दुम्मकु (८) कुमसेन कु (९) महाकुमसेन (१०) सिह (११) सिहसेन (१२) महासिहसेन (१३) पुन्यसेन यह तेरह राजकुमार धेणिक राजाकि धारणी राजीके पुत्र थे भगवान् समिष दीक्षा ले १६ वर्ष दीक्षा पाळी विविध प्रकारकि तपश्चर्या कर अन्तिम विपुलगिरि पर्वतपर अनसन करके क्रम सर दोय मुनि विजयवैमान दोय मुनि विजयत वैमान, दोय मुनि जय त वैमान शेष सात मुनि स

वार्धसिद्ध वैमानमें देवपणे उत्पन्न हुए यहासे तेरहवीं देव एक भय महाविदेह क्षेत्रमें करके दीक्षा पाके केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्षमें जायेगा । इति दुमरे वर्गके तेरवाध्ययन समाप्तम् । २ ।

इति दुमग वर्ग समाप्तम् ।

—५(०)३—

(३) तीसरे वर्गके दश अध्ययन है ।

प्रथम अध्ययन—काकदी नामकी नगरी सहस्राव्रयनोद्यान जयशत्रु नामका राजा । सयका वर्णन पृथक् समझना । काकदी नगरीके अन्दर बड़ीही धनान्य भद्रा नामकी सार्धयाहिणी बसती थी यह नगरीमें अच्छी प्रतिष्ठित थी । उस भद्रा शैठानीके एक स्वरूपवान् धनो नामको पुत्र था, उसके कला आदिका वर्णन महाबलकुमारकी भाफीक यावत् उहोतेर कलामें प्रचिन युष्क भवस्याको प्राप्त हो गया था । जय भद्रा शैठानीने उस कुमारको बत्तीस इप्पशैठाकी कन्यायात्रे साथ विवाह करनेका इरादासे बत्तीस सुन्दराकार प्रामाद बनाके विचमें धनकुमारका महेल बना दिया । उस प्रामाद महेलीके अन्दर अनेक स्थभ पुतलीयो तोरणादिसे अच्छे शोभनिय बना दीया था उसी प्रासादोंका शिगरमानो गगनसे यानाही न कर रहा हो अर्थात् देवप्रासादके भाफीक अच्छा रमणीय था ।

बत्तीस इप्पशैठाकी कन्यायात्रे जो कि रूप, यौवन, लाघण्य, चातुर्यता कर ६४ कगयोमे प्रचिन कुमारके सदृश धयधाली बत्तीस कन्यायात्रा पाणीग्रहण एकही दिनमें कुमारके साथ करा दिया उन्हो बत्तीस कन्यायात्रा मातापिता अपरिमित दत्त दायजो दियो थो यावत् बत्तीस ग्माथोंके साथ धनकुमार अनुष्य

सपन्धी कामभोग भोगधर रहा था अर्थात् यत्तीस प्रकारके नाटक आदि से आनन्दमें काल निर्गमन कर रहा था । यह सब, पूर्ण सुकृतका ही फल है ।

पृथ्वीमण्डलको पवित्र करते हुये बहुत शिष्योंके परिवारसे भगवान् वीरप्रभुका पधारमा काकदी नगरीके महद्याम्रवनो पानमे हुया ।

कोणख राजाकी माफीय जयशत्रु राजा भी ख्यार प्रकारकी सैनाके साथ भगवान्को वन्दन करनेको जा रहा था, नगरलोक भी स्नानमज्जन कर अच्छे अच्छे धन्यभूषण धारण कर गज, अश्व, रथ, पिंजस, पालखी, सेचिका समदाणी आदिपर सवार हो और कितनेक पैदल भी मध्यवजार द्वारे भगवान्को वन्दन करनेको जा रहे थे ।

इधर धनोत्तुमार अपने मासादपर बैठो हुयो इस महान् परिषदाको एकदिशामें जाती हुई देखके कबुकी पुरुषसे दरियापत करनेपर ज्ञात हुआ कि भगवान् वीरप्रभुको वन्दन करनेको जनसमुह जा रहे हैं । यादमे आप भी ख्यार अब्बवाले रथपर बैठके भगवान्को वन्दन करनेको परिषदाके साथमें हो गये । जहाँ भगवान् विराजमान थे वहाँ आये सवारी छोड़के पांच अभिगम कर तीन प्रदक्षिणा दे वन्दन नमस्कार कर सब लोग अपने अपने योग्य स्थानपर बैठ गये । आये हुये जनसमुह धर्माभिलाषीयाँको भगवान्ने खुश ही विस्तार सहित धर्मदेशना सुनाई । जिस्में भगवान्ने मुरख यह फरमाया था कि—

हे भय जीवो! यह जीव अनादिकालसे मसारमें परिभ्रमन कर रहा है जिस्का मूलहेतु मिथ्यात्व, अग्रत, कपाय और योग है इन्हींसे शुभाशुभ कर्मोंका सचय होता है तब कभी राजा महाराजा

शेठ मेनापति होके पुण्यफलको भोगवता है कभी रफ चरिद्री पशुवादि होके रोग-शोकादि अनेक प्रकारके दुःख भोगवता है और अज्ञानके घस हा यह जीव इन्द्रियजनित क्षण मात्र सुखोंके लिये दीर्घकाल तक दुःख सहन करते हैं ।

इसी दुःखासे उठाने वाला सम्यक् ज्ञान दर्शन चारित्र्य है वास्ते हे भय जीवों ! इसी सर्व सुख संपन्न चारित्र्यका स्वीकार कर इन्हींका ही पालन करा ताके आत्मा नर्दयके लिये सुखी हो ।

अमृतमय देशना श्रवण कर यथाशक्ति त्याग वैरागकी धारण कर परिपक्वाने स्व स्व स्थान गमन कीया ।

धनोकुमार देशना श्रवणकर विचार किया कि अहो आज मेरा धन्य भाग्य है कि प्रमा अपूर्व व्याख्यान सुना । और जगतारक जिनेन्द्र देवोंने फरमाया कि यह नसार स्थाय्यका है पौदगलीक सुखोंके अन्ते दुःख है क्षण मात्रके सुखोंके लिये अज्ञानी जीवों घोर कालके दुःख सचय करते हैं यह सब नश्य है अब मुझे चारित्र्य धर्मका ही सरणा लेना चाहिये । धनोकुमार भगवानसे वन्दन नमस्कार कर बोला कि हे करुणासिन्धु । मुझे आपका प्रवचन पर धृष्टा प्रतीत आइ और यह वचन मुझे रुचता भी है आप फरमाते हैं ऐसे ही इस ससारका स्वरूप है मैं मेरी माताका पुच्छके आपके पास दीक्षा ग्रहण करुंगा "जहासुखम्" परन्तु हे धन्ना । धर्म कार्यमें प्रमाद नहीं करना चाहिये ।

धनोकुमार भगवान कि आज्ञाको स्वीकार कर वन्दन नमस्कार कर अपने चार अश्वके रथपर बैठके स्व स्थानपर आया निज मातासे अर्ज करी कि हे माता आज मैं भगवानकि देशना श्रवण कर ससारसे भयघात हुआ हु । वास्ते आप आज्ञा देवे मैं भगवानके पास दीक्षा ग्रहण कर । माताने कहा कि हे लालजी

तु मेरे एक ही पुत्र है तुझे सत्तीस ओरती परणाह है और यह अपरिमित द्रव्य जो तुमारे थापदाटाजाके सन्ने हुये है इसको भोग्यो बादमें तुमारे पुत्रादिकी वृद्धि होनेपर भुक्त भोगी हो जायेंगे फिर हम काल धर्मका प्राप्त हो जाये बादमें दीक्षा लेना ।

कुमरजीने कहा कि हे माता यह जीव भय भ्रमन करते हुये अनेक बार माता पिता त्रि भरतार पुत्र पितादिका सयन्ध करता आया है कोई कीसीको तारणको समथ नहीं है धन दालत राजपाट आदि भी जीवको उहुतसी दूके मीला है इन्हीने जीवका कल्याण नहीं है । वास्तु आप आना दो मैं भगवानक पास दीक्षा लुगा । माताने अनुकूल प्रतिकूल उहुत समझाया परन्तु कुमरजी एक ही बातपर कायम रहा आखिर माताने यह प्रिचारा कि यह पुत्र अय घरमें रहेनचाला नहीं है तो मेरे हाथसे दीक्षाका महोत्सव करके ही दीक्षा दिरादु । ऐसा विचार कर जैसे थायचा शेटाणी कृष्णमहाराजके पास गई थी ओर थायचा पुत्रका दीक्षामहोत्सव कृष्णमहाराजने किया था इसी माफीक भद्रा शेटाणीने भी अय शशुराजाके पास भेटणी (निजराणा) लेके गई और धनाकुमारका दीक्षामहोत्सव जयशशुराजाने किया इसी माफीक यावत् भगवान वीरभुके पास धनोदुमर दीक्षा ग्रहनकर मुनि धनगया इर्षास-मिति थायत गुप्त वल्लभय व्रतको पालन करने लग गया

जिस दिन धनाकुमारने दीक्षा लीथी उसी दिन अभिग्रह धारण कर लीयाया कि मुझे कल्पे है जायजीव तक छठ छठ तप पारणा ओर पारणेके दिन भी आविल करना । जत्र पारणेक दिन आविलका आहार सस्पृष्ट हस्तानि देनेचाला देव । यह भी बचा हुया अरस निरस आहार वह भी थमण शाक्यादि मात्तण ब्राह्मणादि अतीथ कृपण धनीमगादि भी उस आहारकी इच्छा न करे

पसा पारणे आहार लेना । इस अभिग्रहमें भगवानने भी आज्ञा देदी कि 'जदासुख' ।

धन्ना अनगारके पहला छठ तपका पारणा आया तब पहले पहोरमे स्वाध्याय करी दुसरे पहोरमे ध्यान (अर्थचिंतन) कीया तीसरे पहोरमें मुहपत्ती तथा पात्रादि प्रतिलेखन किया बादमें भगवानकी आज्ञा लेके काकदी नगरीमें समुदाणी गौधरी करनेमें प्रयत्न कर रहे थे । परन्तु धन्ना मुनि आहार वेसा लेता था कि त्रिगुल राक यणीमग पशु पक्षी भी इच्छा न करे इस कारणसे मुनिका आहार मीले तो पाणी नहीं मीले और पाणी मीले तो आहार नहीं मीले तथापि उसमें वीनपणा नहीं था व्यग्रचित्त नहीं शुभ्य चित्त नहीं धुधुपित चित्त नहीं विषयाद नहीं, नमाधि चित्त से यत्नाकी घटना करता हुआ पपणा सयुक्त निर्दापाहारकी त्रप करता हुआ यथापर्याप्ति गौधरी आ जानेपर काकदी नगरीसे नीक भगवानके समीप आये भगवानकी आज्ञादीवाके असूच्छित्त अग्रहित नर्प जेमे यील्मे शीघ्रता पूर्वक जाता है इसी माफीक स्वाद नहीं करते हुये शीघ्रता पूर्वक आहार कर तप सयममें रमणता कर रहाथा इसी माफीक हमेशा प्रति पारणे करने लगे ।

एक समय भगवान धीरप्रभु काकदी नगरीसे बिहार कर अन्य जनपद देशमें बिहार करते हुये धन्ना अनगार तपधर्या करता हुआ तथा रूपके स्थिर भगवानका विनय भक्ति कर इत्यादि अंगका ज्ञान अभ्यासभी कियाथा ।

धन्ना अनगारने प्रधान धोर तपधर्या करी जिसका शरीर इतना तो त्रप-दुर्बल बन गयाकि जिसका व्याख्यान रुद शास्त्र-कारोंने इस मुजत्र कीया है ।

(१) धन्ना अनगारका पग जेसे वृक्षकिशुकी हुई छाली तथा

काटकी पाघड़ीयाँ और जरम (पुराने जुते) कि माफीक था वहभी मास रुधीर रहित केवल हाड चर्ममे बिटा हुआही देना थ देताथा ।

(२) धन्ना अनगारक पगकि अंगुलीयाँ जसे मुम उडद चाला दि धान्यकि तरुण फलीकाँ तापमें शुक्रानेपर मीली हुई होती है इसी माफीक मास लोही रहित केवल हाडपर चम बिना हुआ अंगुलीयोका आकारसा मादुम होता था ।

(३) धन्नामुनिका ज्राध (पोंडि) जेसे काकनामकि घनस्पति तथा बायस पभिके जघ माफीक तथा कंक या ढाणीये पभि बिशे थ है उमके जघा माफीक यायत् पर्वमाफीक मास लोही रहित थी ।

(४) धन्नामुनिका जानु (गोडा) जेसे कालिपोरें-काक जंघ घनस्पतिविशेष अर्थात् माग्वी गुटली तथा एक जातिकी घनस्पतिके गाढ माफीक गोडा था यायत् मास रन्ति पुष्यत् ।

(५) धन्नामुनिके उरु (साथल) जेसे म्रियगुवृक्षकी शाखा, चोरडी वृक्षकी शाखा, भगरी वृक्षकी शाखा, तरुणको छेदके धुपमे शुक्रानेके माफीक शुष्क थी यायत् मास लोही रहित ।

(६) धन्ना अनगारके कम्मर जेसे ऊँटका पाँच, जरमका पाँच, भेसका पाँचके माफीक यायत् मस लोही रहित ।

(७) धन्नामुनिका उदर जेसे भाजन-मुकी हुई चमकी दीवडी, रोटी पकानेकी खेलडी, लकड़ेकी कठीतररी इसी माफीक यायत् मंस रत्त रहित ।

(८) धन्नामुनिकी पासलीयाँ जेसे घासका करडीया, घासकी टोपली, घासके पासे, घामका सुँडला यायत् मस रत्तरहित थे ।

(९) धन्नामुनिके प्रष्टविभाग जेसे घामकी कोठी, पाषाणक गोलाकी श्रेणि इत्यादि मस रत्त रहित ।

(१०) धन्नामुनिका हृदय (छाती) बीछानेकी घटाइ, पत्ते का पत्ता, दुपदपत्ता, सालपत्तेका पत्ता माफीक यावत् पुर्धयत् ।

(११) धन्नामुनिके पाहु जेसे समलेकी फली, पदाडकी फली, अगत्थीयाकी फली इसी माफीक यावत् मम रक्त रहित ।

(१२) धन्नामुनिका हाथ जेसे सुका छाणा, बढये पत्ते, पोलासके पत्तेके माफीक यावत् मम रक्त रहित ।

(१३) धन्नामुनिकी हस्तागुलीयो जेसे तुघर, मुग, मठ, उडदकी तरुण फली, काठके अतापसे सुकाइके माफीक पुर्धयत् ।

(१४) धन्नामुनिकी ग्रीवा (गरदन) जेसे लोटाका गला, हुडाका गला, कमंडलके गला इत्यादि मम रहित पुर्धयत् ।

(१५) धन्नामुनिके होठ जेसे सुकी जलोल, सुका श्लपम, लावकी गोली इसी माफीक यावत्—

(१६) धन्नामुनिकी जिह्वा सुका बढका पत्ता, पोलासका पत्ता, गोलरका पत्ता, सागका पत्ता यावत्—

(१७) धन्नामुनिका नाक जेसे आम्रकी कातली, अंबाडीकी गुठली, धीजोरेकी कातली, हरीछंदके सुकाइ हो इस माफीक—

(१८) धन्नामुनिकी आंखो (नेत्र) धीणाका छिद्र, धामलीके छिद्र, प्रभातका तारा इसी माफीक—

(१९) धन्नामुनिका कान मूलेकी छाल, खरबुजेकी छाल, कारेलाकी छाल इसी माफीक—

(२०) धन्नामुनिका शिर (मस्तक) जेसे तुयाका फल, कोलाका फल, सुका हुषा होता है इसी माफीक—

(२१) धन्नामुनिका सर्व शरीर सुखा, भुखा, लुखा, मास रक्त रहित था ।

इन्हीं २१ धौलामें उदर, धान, द्रोण, जिह्वा ये चार धौलमें हाड नहीं था। शेष धौलोमें रस रक्त रक्षित फैलल हाडपर चरम बिटा हुआ नशा आदिसे घण्टा हुआ शरीर मात्रवा आकार दोखाइ दे रहा था। उठते बैठते समय शरीर कड़कड़ बोल रहा था। पासली आदिकी हड्डीयां मालाके मणकोंकी माफीक अलग अलग गीनी जाती थी, छातीका रंग गद्दाकी तरंग समान तथा सुका सपेका मोटा मुताबिक शरीर हो रहा था, हस्त तों सुका थोरीके पंजे समान था चलते समय शरीर कम्पायमान हो जाता था, मस्तक डींगडींग करता था, नेत्र खन्दर बैठ गया था, शरीर निस्तेज हो रहा था, चलते समय जैसे काष्ठका गाढा, सुके पसेका गाढा तथा खोड़ीयोंके कोयलाका अवाज होता है इसी माफीक भगवानुनिश शरीरमें हड्डीयोंका शब्द होता था इलना, चलना, थोल्ना यह सब जीवशक्तिस ही होता था। पिश पाधिकार खडकजीने देखो (भगवती सूत्र श० २ उ० १)

इतना तो अवश्य था कि भगवानुनिश आत्मबलसे उन्हींका तपतेजमें शरीर धडा ही शोभायमान होनाइ दे रहा था।

भगवान् धीमप्रभु भूमंडलको पवित्र करते हुये राजगृह नगरके गुणशीलोद्यानमें पधारे। श्रेणिकराजादि भगवान्को बन्द नको गया। देशमा सुनके राजा श्रेणिकने प्रश्न किया कि हे कृणसिन्धु ! आपके इन्द्रमूर्ति आदि चौदा हजार मुनियोंके अन्दर दुष्कर करणी करनेवाला तथा महान निजरा करनेवाला मुनि कौन है ?

भगवानने उत्तर करमाया कि हे श्रेणिक ! मेरे चौदा हजार मुनियके अन्दर धन्ना नामका अनगार दुष्कर करणीका करने वाला है महानिजराका करनेवाला है।

श्रेणिकराजाने पुछा कि क्या कारण है ?

भगवानने फरमाया कि हे धराधिप ! काकद्दी नगरीमे भद्रा
शैठाणीका पुत्र वस्तीस रभायावे साथ मनुष्य मंवन्धी भोग भोग्य
रहा था । वहापर मेरा गमन हुवा था, देशना सुन मेरे पाम
कीक्षा लेके छट छट पारणा, पारणे जात्रिल यावत् धन्नामुनिका
शरीरका सपूर्ण धर्णन कर सुनाया । “इम वास्ते धन्ना०”

श्रेणिकराजा भगवानको वन्दन-नमस्कार कर धन्नामुनिके
पास आया, वन्दन-नमस्कार कर गाला कि हे महाभाग्य !
आपका धन्य है पुर्वभवमे अच्छा पुन्यापार्जन कीया था कृतार्थ
है आपका मनुष्यजन्म, नफल किया है आपने मनुष्यभय
इत्यादि स्तुति कर वन्दन कर भगवानके पास आया अर्थात्
जेना भगवानने फरमायाथा वेना ही देखनेसे बड़ी खुशी हुई
भगवानको वन्दकर अपने स्थानपर गमन करता हुवा ।

धन्नामुनि एक समय रात्रीमे धर्म चिंतयन करता हुवा पन्ना
विचार किया कि अत्र शरीरसे कुछ भी कार्य हो नहीं सक्ता है
पौद्गल भी थक रहा है ता सूर्योदय होते ही भगवानने पुच्छके वि-
पुलगिरि पर्यत् पर अनसन करना ठीक है सूर्योदय होते ही भग-
वानकि आज्ञा ले मर्ध माधु साध्वियोंसे क्षमत्क्षामणा कर न्यिरर
मुनियोंके साथ धीरे धीरे विपुलगिरि पर्यतपर जाके ब्यारो आ-
हारका त्याग कर पादुगमन अनसन कर दीया आलोचन पूर्णक
एक मासका अनसनके अन्तमे समाधिपूर्वक काल कर उर्ध्व
लीकमे सर्व देवलोकोके उपर मर्धार्य सिद्ध वैमानमें तेतीस सा-
गगापमकी स्थितिवाले देवता हो गये अन्तर महर्तमें पर्याप्त
भायको प्राप्त हो गया ।

स्थिर भगवान धन्ना मुनिको काल किया जानये परि-

निर्धानार्थ काउस्सग्न कर धन्ना मुनिका वस्त्रपात्र लेवे भगवानक पास आये वस्त्रपात्र भगवानके आग रखके जोले कि हे भगवान आपका शिष्य धन्ना नामका अनगार आठ मासकि दीक्षा एक मासका अनसन कर कहा गया होगा ?

भगवानने कहा कि मेरा शिष्य धन्ना नामका अनगार दुष्कर करनी कर नव मासकि सर्व दीक्षा पाल अन्तिम समाधी पुण्यक काल कर उर्ध्व सत्पार्थनिद्र नामका महा धैर्यमानमें देवता हुआ है । उसकी तेतीस सागरोपमकि स्थिति है ।

गौतमस्वामिने प्रश्न किया कि हे भगवान धन्ना नामका देव देवलोके चयक कहा जायेगा ?

भगवानने उत्तर दिया । महाविदेहक्षेत्रमें उत्तम जातिकुलके अन्दर जनम धारण करेगा यह कामभोगसे विरक्त होके और स्थिचरोके पाम दीक्षा लेऊ तपश्चर्यादिसे कर्माका नाश कर केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष जावेगा । इति तीसरे वर्गका प्रथम अध्ययन समाप्त ।

इसी माफीक सुनक्षत्र अनगार परन्तु बहुत वर्ष दीक्षा पाली सत्पार्थनिद्र धैर्यमानमें देव हुये महाविदेहक्षेत्रमे मोक्ष जावेगा । इति ॥ २ ॥

इसी माफीक शेष आठ परन्तु दो राजगृह, दो श्वेतविका, दो वाणीया ग्राम, नवमो हयनापुर दशमो राजग्रह नगरके (३) ऋषिदाश (४) पेलकपुत्र (५) रामपुत्रका (६) चन्द्रकुमार (७) पोटीपुत्र (८) पैटालकुमार (९) पोडिलकुमार (१०) बहलकुमारका ।

धनादि नव कुमारका महोत्सव राजाधोने ओर बहलकुमारका पिताने कीयाथा ।

धनो नयमास, येद्वल्लुमर मुनि छ मास, शेष आठ मुनिया
 बहुत काल दीक्षा पाली । शशो मुनि सर्वार्थमिद्ध धैमान तेतीस
 मागरोपमकि स्थितिमे देवता हुये बहामे धयये महाविद्वदक्षेत्रमे
 मोक्ष साधेगा इति श्री अनुत्तरोपवाड सूत्रके तीसरे वर्गके दश
 अक्षर समाप्त ।

इति श्री अनुत्तरोपवाड सूत्रका मूलपरसे सविस्तार सार ।

इति श्री शीघ्रबोध भाग १७ वा समाप्तम्



श्री रत्नप्रभाकर ज्ञान पुष्पमाला पु न ६१

श्री कक्कमरीश्वर सदगुरुभ्यो नम

अथ श्री

शीघ्रबोध भाग १८ वा

श्रीनिन्दसूरीश्वर सदगुरुभ्या नम

अथश्री

निरयावलिका सूत्र.

(सञ्चित साग)



पाचमा गणधर मौधमस्थामि अपने शिष्य जम्बुप्रते कह रहे हैं कि हे चीरजीव जम्बु ! सवज्ञ भगवान चीरप्रभु निरयावलिका सूत्रके दश अध्यायन परमाये हैं वह मैं तुझ प्रति कहता हू ।

इस जम्बुप्रिपमें भारतभूमिके अल्काररूप अगदेशमें अल कापुरी सदश चम्पा नामकि नगरी थी जिस्के बाहार इशान कोनमे पुणभद्र नामका उद्यान जिस्के अन्दर पुर्णभद्र यक्षका यक्षायतन अशोकवृक्ष और पृथ्वीशीलापट्ट इन सयका धर्जन 'उषयाद् सूत्र' मे सविस्तार किया हुआ है शास्त्रधारणें उक्त सूत्रसे देखनेकि सूचना करी है ।

उस चम्पानगरीके अन्दर कीणक नामका राजा राज कर रहा था जिसके पद्मायति नामकी पट्टराणी अति सुकुमाल और सुन्दरानी, पाचेन्द्रिय परिपूर्ण महीलायोंके गुण सयुक्त अपने पतिके साथ अनुरक्त भोग भोग्य रही थी ।

उस चम्पानगरीमें धेणकराजाका पुत्र काली राणीका अगज काली नामका कुँमर बसता था । एक समयकि बात है कि काली कुमार तीन हजार हस्ती तीन हजार अश्व तीन हजार रथ और तीन घोड़े पैदलके परिवारसे कीणकराजाके साथ रथमुशाल समाममें गया था ।

कालीकुँमारकी माता कालीराणी एक समय कुटम्ब चितामें धरतती हुई ऐसा विचार कियाकि मेरा पुत्र रथमुशाल समाममें गया है वह समाममें जय करेगा या नहीं ? जीरेगा या नहीं ? मैं मेरा कुँमरको जीता हुआ देखुंगा या नहीं ? इस बातोंका आर्त ध्यान करने लगी ।

भगवान् धीरमधु अपने शिष्य समुदायके समुहसे पृथ्वी मडल्कों पवित्र करते हुये चम्पानगरीके पुर्णभद्र उद्यानमें पधारे ।

परिपदायुन्द भगवन्का यन्दन करनेको गये इधर कालीराणीने भगवन्के आगमनकी घाती सुनके विचार किया कि भगवान् सर्वज्ञ हैं चलो अपने मनका प्रश्न पुच्छ हम बातका निणय करे कि यावत् मेरा पुत्र जीयताको मैं देखुगी या नहीं ।

कालीराणीने अपने अनुचरोंका आदेश दिया कि मैं भगवान्को यन्दन करनेके लिये जाती हूँ वास्ते धार्मिक प्रधानरथ अच्छी सजायटकर तैयार कर जल्दी लावो ।

कालीराणी आप मञ्जन घरके अन्दर प्रवेश किया स्नान मञ्जन कर अपने धारण करने योग यन्त्रामूषण बोकि यन्त्रा में

मति थे यह धारणकर बहुतसे नाकर चाकर मोजा दास दासी याँके परिवारसे बहारके उम्मान शालमें आई, वहापर अनुचरोन धार्मिक रथको अच्छी सजावट कर तैयार रखा था, कालीगणी उस रथपर आरूढ़ हा चम्पानगरीके मध्यवजारसे निष्पत्त्ये पणभप्रोधानमें आई, रथसे उतरके मपरिवार भगवानको चम्पन-नमस्कार कर सेवा-भक्ति करने लगी।

भगवान धीमप्रभुने कालीराणी आदि धातागणाको विचित्र प्रकारसे धर्मदेशना सुनाई कि हे भव्य ! इम अपार ममारके अन्दर जीव परिभ्रमन करता है इन्का मूल कारण आरभ और परिग्रह है। जयतक इ-हाका परित्याग न किया जाय वदातक ससारके जन्म, जरा, मृत्यु, रोग, शोक इत्यादि दु खसे मुटना नहोगा यास्ते सर्वशक्तियान् यमके मर्ये व्रत धारण करा अगर एसा न थने तो देशप्रती बनो, ग्रहन किये हुये व्रताको निरति चार पालनेसे जीव आराधि होता है आराधि होनेसे ज० तीन उत्पृष्ट पन्द्रा भवमें अवश्य मोक्ष जाता है इत्यादि देशना दी।

धर्मदेशना श्रवण कर धातागण यथाशक्ति न्याग वैराग्य धारण किया उस समय कालीराणी देशना श्रवण कर हय सतो-षको प्राप्त हो बोली कि हे भगवान ! आप परमाते हैं यह सत्य सत्य है मैं ससारसमुद्रके अन्दर इधर उधर गोधा खा रही हूँ। हे करूणासिन्धु ! मेरा पुत्र कालीकुमार सैन लेके कोण्वराजाके साथ रथमुशल सग्राममें गया है तो क्या वह शत्रुवोंपर विजय करेगा या नहीं ? जीवेगा या नहीं ? हे प्रभो ! मे मेरा पुत्रको जीयता देखुंगी या नहीं ?

भगवानने उत्तर दिया कि हे कालीराणी ! तेरा पुत्र तीन हजार हस्ती, तीन हजार अश्व, तीन हजार रथ और तीन घोड

पैदलके परिवारसे रथमुशल संग्राममें गया है। पहले दिन चेटक^१ नामका राजा जो श्रेणिकराजाका सुसगा खेलनाराणीका पिता शोणकराजाके नानाजी कालीकुमारके सामने आया कालीकुमारने कहा कि हे वृद्धययधाम्क नानाजी ! आपका बाण आने दिजिये नहीं तो फीर बाण फेंकनेकी दिलहीमें रहेगी। चेटकराजा पाश्च्य-नायजीका धात्रक था वह यगर अपराधे किसीपर हाथ नहीं उठाते थे। कालीकुमारने धनुषबाणको खुज जोगसे चढ़ाया, अपने हींवाणको जमानपर स्थापन कर धनुष्यकी फाणवकी कानतक लेजाके जोगमें बाण फेंका परन्तु चेटकराजाको बाण लगा नहीं आता हुआ बाणको देख चेटकराजाको बहुत गुस्मा हुआ। अपना अपराधि जानके चेटकराजाने पगाक्रमसे बाण मारा जिसने जेन पर्यतकी टूक गीरती है इसी माफीक एकही बाणमें कालीकुमार मृत्युधर्मकी प्राप्त हो गया। बस, मामत शीतल हो गये, धनजा-पताका निचे गिर पड़ी वास्तं हे कालीराणी ! तु तेरा कालीकुमार पुत्रको जीयता नही देखेगी।

कालीराणी भगवानके मुखारविन्दसे कालीकुमार मृत्युवि-यात धनणकर अत्यन्त दुःखसे पुत्रका शोक के मारे मुर्च्छित होके जैसे ठेदी हुई चम्पककी लता धरतीपर गिरती है इसी माफीक कालीराणी भी धरतीपर गिर पड़ी सर्व अग शीतल हो गया *।

महर्त्तादि कालके बादमे कालीराणी सचेतन होके भगवानसे

१ चेटकराजाको देवीका वर था वास्ते उनका बाण कभी माली नहीं जाता था।

* छत्रार्थोक्ता यह व्यवहार नहीं है कि किसीका दुःख हो ऐसा कह परन्तु मर्दान भक्तिपरा लभ जाना था कथातिनोके लिये कौमी प्रकारका कायदा नही होता है। इसी कारणम कालीराणीन दीक्षा ग्रहण करी थी।

बढ़ने लगी कि हे भगवान आप परमात्मे हो यह सत्य है मन न-
जरोसे नहीं देगा है तथापि नजरान देगे हुये कि माफीक सत्य
है ऐसा यह पशुन नमस्कार कर अपने रथपर बैठक अपने रथा
नपर जानेके लिये गमन किया ।

नाट—अन्तमद दशाग आठवें चरमें इन कारणसे वैरागको
प्राप्त हो भगवानक पास दिग्ग प्रहल कर पकावली आदि तप
भर्या धूर कम रिपुया जीत अन्तमें बचलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष गइ
है यह दशा राजीया समझना ।

भगवानने कागीराजीको उत्तर दीयाथा उस समय गौतम
स्वामि भी वहा मौजूद थे उत्तर सुनके गौतमस्वामिन प्रभ
किया कि हे भगवान । कालीकुमार चेटक राजाके दानसे सग्राममें
मृत्यु धमका प्राप्त हुआ है ना ऐसे सग्राममें मरनेवागैकि क्या
गति होती है अर्थात् कालीकुमार मरक कीनसे स्थानमें उत्पन्न
हुवा होगा ?

भगवानने उत्तर दिया कि हे गौतम ! कालीकुमार सग्राममें
मरण चौथी पक्षप्रभा नामकि नरकके हेमाल नामका नरका
धाममें दश सागरोपमकि स्थितिवाला नैरियापणे उत्पन्न हुवा है ।

हे भगवान ! कालीकुमारने कीनसा आरभ आरभ समारभ
कीया था कीनसा भोग सभोगमें गृहित, मुष्टित और कीनसा
अशुभ कर्मोंके प्रभावसे चौथी पक्षप्रभा नरकके हेमाल नरकाका
मम नैरियापणे उत्पन्न हुवा है ।

उत्तरमें भगवान सविस्तारसे परमात्मे है कि हे गौतम !
जिस समय राजगृह नगरके अन्दर धेणिकराजा राज कर रहा
था धेणिकराजाके नन्दा नामकि राणी सुकुमाल सुदराकारथी
उसी नन्दाराणीके अगज अभय नामका कुंमर था । यह चार

हुडि सयुक्त माम, दाम, दड, भेदका जाणकार, राजतंत्र चढा-
नेमें बडाही दक्ष था श्रेणिकराजाके अनेक रहस्य कार्य गुप्त कार्य
करनेमें अग्रेश्वर था ।

राजा श्रेणिकके चलना नामकि राणी एक समय अपनी सुख
शय्या के अन्दर न सुती न जागृत एमी अवस्थामें राणीने सिंहका
स्वप्न देखा राजामे कहना स्थानपाठकीको योछाना स्वप्नोंके
अर्थ ग्रहण करना यह सर्व गौतममुनिगके अधिकारमें देवता ।

राणी चलनाका माधिक तीन मास होनेपर गर्भके प्रभावसे
दोहले उत्पन्न हुये कि धन्य है जो गर्भवन्ती मातायों जिन्होंने
सीधित सफल है कि राजा श्रेणिकके उदरका मास जिसको तेलके
अन्दर शोला बनाने मदिराके माय गाती हुई भोगवती हुई रहे
अर्थात् दोहलाको पूर्ण करे । एमा दोहलेकी पूर्ण नहीं करती हुई
चलना राणी शरीरमें कृप वन गई शरीर कम जोर पहुँचकर
यदन बिलखा नेत्रांकि चेष्टा आदि दीन वन गई औरभी चलना-
राणी, पुष्पमाला गन्ध बस्त्र भूषण आदि जो विशेष उपभोगमें
लिये जातेथे-उसकी त्यागरूप कर दिया था और अदोनिश
अपने गालोंपर हाथ दे के आर्तध्यान करने लगी ।

उस समय चलना राणीके अगकि रक्षा करनेवाली दासी
योंने चलना राणीकि यह दशा देखके राजा श्रेणिकसे सर्व घात
नियेवन कि । राजा सर्व शत सुनके चलनाराणीके पाम आया
और चलना राणीको सुखे सुखे भूरे अर्थात् शरीरकि स्वराय चेष्टा
देग योछाकि हे प्रिये ! आपका यह हाल क्यों हो रहा है तुमारे
दीर्घमें क्या घात है यह सब हमका कहो ? राणी राजाका वचन
सुना परन्तु पीछा उत्तर कुछभी न दीया घातभी टीका है कि
उत्तर देने योग्य घातभी नहींथी ।

राजाश्रेणिकने और भी दोय तीनवार कहा परन्तु राणीने कुछ भी जवाब नहीं दीया। आखिर राजाने कहा, हे राणी ! क्या तेरे एसी भी रहस्यकी बात है कि मेरेके भी नहीं कहती है ? राणीने कहा कि हे प्राणनाथ मेरे एसी कोई भी बात नहीं है कि मैं आपने सुन रखु परन्तु क्या करू यह बात आपको कहने योग्य नहीं है। राजाने कहा कि एसी कोनसी बात है कि मेने सुनने लायक नहीं है मेरी आज्ञा है कि जो बात हो सो मुझे कह दो। यह सुनके राणीने कहा कि हे म्यामि ! उस स्वप्न प्रभावसे मेरे जो गर्भ के तीन मान्माधिक होनेसे मुझे दोहला उत्पन्न हुआ है कि मैं आपके उदरके मान्मके शुले मदिराके साथ भोगवती रहू। यह दोहला पुन न होनेसे मेरी यह दशा हुई है।

राजा श्रेणिक यह बात सुनके बोला कि हे देवी ! अब आप इस बात कि बिल्कुल चिन्ता मत करो जिम रीतीसे यह तुमारा दोहला सम्पूर्ण होगा एसा ही मे उपाय करूंगा इत्यादि मधुर शब्दोंसे विश्वास देके राजाश्रेणिक अपने कचेरीका ख्याम था कहा पर आ गये।

राजाश्रेणिक सिंहासन पर बैठके विचार करने लगा कि अब इस दोहले को कीम उपायसे पून करना उत्पातिक, चित्तियक, कर्मिक, परिणामिक इस च्यारों बुद्धियोंके अन्दर राजाने खूब उपाय सोच कर यह निश्चय किया कि यातो अपने उदरका मांस देना पड़ेगा या अपनि जवान जावेगा तीसरा कोई उपाय राजाने नहीं देखा। इस लिये राजा शुन्योपयोग होके चिन्ता कर रहा था।

इतनेमें अभयकुमार राजाको नमस्कार करनेके लिये आया, राजाको चिन्ताग्रस्त देखके कुमार बोला। हे तातजी ! अन्य

दिनोंमें जय मैं आपके चरण कमलों में मेरा शिर देता हूँ तब आप मुझे बतलाते हैं राज कि याता अलाप करते हैं। आज तो कुछ भी नहीं, इतना ही नहीं बल्कि मेरे आनेका भी आपको स्याद ही ख्याल होगा। तो इस्का कारण क्या है मेरे भोजुदगीमें आपको इतनी क्या फीकर है ?

राजाश्रेणिकने खेलनाराणीके दोहले नयन्धी मय यात कटी है पुत्र ! मैं इसी चिन्तामें हूँ कि अब राणी खेलनाका दोहला येम पुर्ण करना चाहिये। यह वृत्तान्त सुनके अभयकुमार बोला है पिताजी ! आप इस यातका विचिन् भी फीकर न करे, इस दोहलाकों में पुण करुगा यह सुन राजाका पूर्ण चिन्तयाम होगया अभयकुमार राजाको नमस्कार कर अपने स्थानपर गया यदा जाके विचार करने पर एक उपाय मोचके अपने रहस्यके कार्य करनेवाले पुरुषोंको बुलवाये। और कहेने लगे कि तुम जायाँ माम वैचनेवालोंके यह तत्कालिन माम रुधिर सयुक्त गुप्तपणे ले आओ इदर राजा श्रेणिकसे सख्त कर दीया कि जय आपके हृदय पर हम मम रखके काटेगे तब आप जोरसे पुकार करते रहना, राणी खेलनाको एक किनातके अन्तरमें बेठादी इतनेमें यह पुदप मास ले आये युद्धिके सागर अभयकुमारने इसी प्रकारसे राणी खेलनाका दोहला पुर्ण कर रहाथा कि राजाके उदर पर यह लाया हुवा मम रख उसको काट काटके शूल बनाके राणीको दीया राणी गर्भके प्रभावसे उस्का आचरण कर अपने दोहलेको पुर्ण कीया। तब राणीके दोल्को शान्ति हुई।

नोट—शास्त्रकाराने 'स्थान स्थान पर फरमाया है कि हे भव्य जीवो ! कीसी जीवके साथ घैर मत रखो कर्म मत धान्धो न जाने यह घैर तथा कर्म किम प्रकारसे कीस यक्षतमें उदय

डागा राजा श्रेणिक और चेलनाक गर्भका जीव एक तापमक भयमे कम उपाजन कीयाथा वह इम भयमें उदय हुवा है। इस ब्यानिक सबन्धका सार यह है कि कीमीने साथ घेर मत रखा कम मत बान्धो किमधिकम्।

एक समय राणीने यह विचार किया कि यह भरे गर्भका जीव गर्भमें आते ही अपने पिताके उदर मासभक्षण कीया है, तो न जाने जन्म होनेसे क्या अनघ करेगा इम लिये मुझे उचित है कि गर्भहीमें इमका विध्वंस करदु। इमके लिये अनेक प्रयोग किया परन्तु नयके सब निष्फल हो गये। गर्भक दिन पुन हानेसे चेलनाराणीने पुत्रको जन्म दिया। उम बखत भी चेलनाराणीने विचार किया कि यह कोई दुष्ट जीव है जो कि गर्भमें आते ही पिताके उदरका मासभक्षण कीया था तो न जाने बड़ा होनेसे कुछका क्षय करेगा या और कुछ करेगा वास्ते मुझे उचित है कि इम जग्मा हुवा पुत्रको कीसी एकान्त स्थानपर (उखरडीपर) डालदु। एसा विचार कर एक दासीको बुलाके अपने पुत्रका एकान्तमें डालदेनेकी आज्ञा दे दी।

वह दुष्मकी नोकर-दासी उम राजपुत्रको लेकर आशाक नामकी सुकी हुई बाड़ीमें एकान्त जाके डालदीया। उम राजपुत्रको भग्नयाडीमे डालतो ही पुत्रके पुग्योदयने वह बाड़ी नथपल धित हो गई। उसकी खबर राजाके पास आई।

नोट—दासाने विचारा कि मैं राणीके कहनेसे कार्य किया है परन्तु कभी राजा पुच्छेगा तो मैं क्या जवाब दुगी वास्ते यह सब हाल राजासे अर्ज करदेना चाहिये। दासीने सब हाल राजासे कहा राजाने सुना। फिर

राजा श्रेणिक अशोकवाड़ीमें आया वहापर देखा जावे ता

तत्काल जन्मा हुआ राजपुत्र एकान्त स्थानमें पड़ा है, देखतेही राजा बहुत गुस्से हुआ, उस पुत्रको लेके राणी खेलनाके पास आया राणी खेलनाका तिरस्कार करता हुआ राजाने कहा कि हे देवी ! यह तुमारे पहला ही पहले पुत्र हुआ है, इसका अनुक्रमे अच्छी तरहसे सम्भरण करो राणी खेलना लज्जित होके राजाके वचनोंका सविनय स्वीकार कर अपने शिगपे चढ़ाये और राजा श्रेणिकके हाथसे अपने पुत्रको ग्रहण कर पालन करने लगी ।

जब राजपुत्रको एकान्त ढालाया उस समय कुमारकी एक अंगुली कुर्दने पाटडाली थी उसीमें रौद्रधिकार होके रक्त हो गई उसके द्वारा यह बालक रौद्र शब्दसे रुदन कर रहा था राणीने राजाके कहनेसे पुत्रको स्वीकार किया था । परन्तु अन्दरसे तो यह भी प्रती थी जब पुत्रका रुदन शब्द सुन खुद राजा श्रेणिकपुत्रके पास आके उस मडे हुये रौद्रको अपने मुहमें अंगुलीसे चुम चुमके बाहर डालता था जब कम वेदना होनेसे यह पुत्र स्वरूप देर चुप रहता था और फिर रुदन करने लगजाता था इस माफीक राजा गतभर उस पुत्रका पालन करनेमें खुबही प्रयत्न किया था ।

नोट—पाठक्यर्गको ध्यान रखना चाहिये कि मातापिता-धाका कितना उपकार है और यह बालककी कितनी दिफानत रखते हैं ।

उस बालकको तीजे दिन चन्द्र-सूर्यके दर्शन कराये, छठे दिन रात्रिजाग्रन किया, इग्यारमे दिन असूचि कर्म दूर किया, बारहवें दिन अमनादि वनायके न्यात-जातबालोंको गुलायके उस कुमारका गुणनिष्पन्न नाम जोकी इस बालकको जन्मसमय

एकान्त डालनेसे कुर्कटने अगुली काटडाली थी, वास्ते इस कुमाराका नाम "कोणक" दीया था

क्रमसर वृद्धि होने हुयेके अनेक महोत्सव करते हुये युवक अवस्था होनेपर आठ राजकन्याओंके साथ बियाह कर दिये, यायत् मनुष्य सैयम्बी कामभोग भोगयता हुआ सुखपूर्णक काल निर्गमन करने लगा

एक समय कोणककुमारके दिलमें यह विचार हुआ कि श्रेणिकराजाके माजुदगीमें मैं स्वयं राज नहीं करसक्ता हुं, वास्ते काह मोका पाये श्रेणिकराजाको नियन्त्रयन्धन कर मैं स्वयं राज्याभिषेक करवाके राज करता हुआ विचरूं। केह दिन हम यातकी कोशीय करी, परन्तु पता अगसर ही नहीं बना। तत्र कोणकने काली आदि दश कुमारांको बुलवायके अपने दीलका विचार सुनाके कहा कि अगर तुम दशो भाइ हमारी मददमें रहो तो मे अपने राजका इग्यारा भाग कर एक भाग मैं रखुगा और दश भाग तुम दशो भाइयांको भेंट कुगा। दशो भाइयोंने भी राजका लोभमें आये हम यातकी स्वीकार कर कोणककी मददमें हो गये। "परिग्रह दुनियोंने पापका मूल कारण है परिग्रहके लिये केस कसे अनर्थ किये जाते है '

एक समय कोणकने श्रेणिकराजाको पकड़ नियन्त्रयन्धन बाधके पिंजरेमें बन्ध कर दिया, और आप राज्याभिषेक करवाके स्वयं राजा बन गया एक दिन आप स्नानमग्नन कर अच्छे श्रमामूषण धारण कर अपनी माता चेलनाराणीके धरण ग्रहन करनेको गया था राणी, चेलनाने कोणकका कुछ भी सत्कार या आशिर्वाद नहीं दिया। इसपर कोणक बोला कि हे माता! आज तेरे पुत्रको राज प्राप्त हुआ है तो तेरेको दर्प क्यों नहीं

होता है। चेलनाने उत्तर दिया कि हे पुत्र ! तुमने कौनसा अच्छा काम किया है कि जिसके जरिये मुझे खुशी हो। क्या कि मैं तो गर्भमें आया था जयहीसे तुम्हें ज्ञात होती थी, परन्तु तेरे पिताने तेरेपर बहुतही अनुराग रखा था जिसका फल तेरे हाथसे मीला है अर्थात् तेरे देवगुरु तुल्य तेरा पिता है उन्होंनेको पित्रेमें बन्ध कर तु राजप्राप्त कीया है, यह कितने दुःखकी बात है अब तुही कह के मुझे किम बातकी खुशी आये।

कोणकके पुण्यमयका घन श्रेणिकराजासे था वह निवृत्ति हो गया अब चेलनागणीके बचनका कारण मीलनेसे कोणकने पुरुडा कि हे माता ! श्रेणिकराजाका मेरेपर क्या अनुराग था तब गर्भसे लेके सब बात राणी चेलनाने सुनाई। इतना सुनतेही अत्यन्त भक्तिभावसे कोणक बोला कि हे माता ! अब मैं मेरे हाथने पिताका बन्धन छेदन करुंगा। ऐसा कहके कोणकने एक कुराट (कर्मी) हाथमे लेके श्रेणिकराजाके पास जाने लगा। उधर राजा श्रेणिकने कोणकको आता हुआ देखके विचार किया कि पेस्तर तो हम दुष्टने मुझे बन्धन बांधके पित्रगर्भमें पुर दीया है अब यह कुराट लेने आरहा है तो न जाने मुझे कीस कुमौतसे मारेगा इससे मुझे ब्ययही भर जाना अच्छा है, ऐसा विचारके अपने पास मुद्रिकामें नग-हीरकणी थी वह भक्षण कर तत्काल शरीरका त्याग कर दीया जब कोणक नजदीक आके देखे तो श्रेणिक निःशेष अर्थात् मृत्यु पाये हुये शरीरही देखाई देने लगा उस समय कोणकने बहुत रुदन-धिलाप किया परन्तु भव्यताको कौन मीटा सके उस समय सामन्त आदि पक्ष होके कोणकका आश्वासना दी तब कोणकने रुदन करता हुआ तथा अन्य लोक मीलके श्रेणिकका निर्वाण कार्य अर्थात् मृत्युक्रिया करी। तत्पश्चात् कितनेक रोजके बाद कोणकराजा राजगृहीमें निवास

करते हुवेको बड़ाही मानमिक दुःख होने लगा बखत बखतपर दीलमें आति है कि मैं केसा अधन्य हु, अपुन्य हु, अशुताय हु, कि मेरे पिता-देवगुरुकी माफीक मेरेपर पण प्रेम रखनेवाले होनेपर भी मेरी कितनी कृतघ्नता है। इत्यादि दीलको बहुत रंज होनेके कारणसे आप अपनी राजधानी चम्पानगरीमें ले गये और बड़ाही निवास करने लगा। यहापर काली भादि दश भाइयोंको बुलायके राजके इग्यारा भाग कर एक भाग आप रखके शेष दश भाग दश भाइयोंको भेंट दीया, और राज आप अपने स्वतन्त्रतासे करने लगगये, और दशों भाइओंने कोणककी आज्ञा स्वीकार करी।

चम्पानगरीके अन्दर भेजिकराजाका पुत्र खेलनाराणीका अंगज बहलकुमार ओके कोणकराजाके छोटाभाइ निवास करता था भेजिकराजा जीयनो 'नीचाणक गन्ध हस्ती और अठारें सरावाला हार धँदीया था। नीचाणक गन्ध हस्ती ऐसे प्राप्त हुवा यह बात मूलपाठमें नहीं है तथापि यहा पर भक्षित अन्य स्थलसे लिखते हैं।

एक धनमें हस्तीयाका युव रहता था उस युवके मालीक हस्तीको अपने युवका इतना ता ममम्ब भाव था कि कीसी भी हस्तणीके बचा होनेपर वह तुरत मारहालता था कारण अगर यह बचा बड़ा होनेपर मुझे भारके युवका मालिक धन प्रावना। सब हस्तणीयोंके अन्दर एक हस्तणी गर्भवन्ती हो अपन पेरोंसे लगडी हो १-२ दिन युवसे पीछे रेहने लगी, हस्तीने विचार किया कि यह पायासे कमजोर होगी। हस्तणीने गर्भ दिन नमीक जानके एक तापमाक वृक्षजालीके अन्दर पुत्रको जन्म दीया फिर आप युवमें सेमल हो गई। तापसोंने उस हस्ती बचेको पोषण कर बड़ा किया और उसके सृढ़के अन्दर एक

बाल्टी डालके नदीसे पाणी भगवायके बगेचेको पाणी पीलाना शुरू कर दीया बगेचेको पाणी सींचन करनेसे ही इसका नाम तापसोने सींचाणा हस्ती रखाथा । कितनेक कालके बाद हस्ती बच्चा, मदमें आया हुआ, उन्ही तापसोंके आश्रम और बगेचेका भेग कर दीया, तापस क्रोधके मारा राजा श्रेणिक पाम जाके कहा कि यह हस्ती आपके राजमें रखने योग्य है राजाने हुकम कर हस्तीको भगवायके नकल डाल बन्ध कर दीया उन्ही रहस्ते तापस निकलते हस्तीको उद्देश कर बोला रे पापी ले तेरे कीये हुये दुष्कृत्यका फल तुजे मीला है जो कि अतन्त्रतासे रहेनेवाले तुझको आज इन कारागृहमें बन्ध होना पडा है यह सुन हस्ती अमर्षके मारे संकलाको तोड जंगलमें भाग गया राजा श्रेणिकको इस बातका बडाही रज हुआ तब अभयकुमार देयीकि आराधना कर हस्तीके पाम भेजी देयी हस्तीको मोघ दीया और पुर्णभव व हलकुमारका सबन्ध घतलाया इसनेमें हस्तीको जातिस्मरण जान हुआ देयीके कहनेसे हस्ती अपने आप राजाके यहा आ गया राजा भी उसको राज अभिशेप कर पट्टधारी रम्नी बना लिया इति ।

हारकि उत्पत्ति—भगवान् धीरप्रभु एक समय राजगृह नगर पधारे थे राजा श्रेणिक बडाही आडयरसे भगवानकी बन्दन करनेको गया ।

सौधमें इन्द्र एक उखत सम्यक्स्थकि इदताका व्याख्यान करते हुये राजा श्रेणिककि तारीफ करी कि कोह देय दानय भि समर्थ नही है कि राजा श्रेणिकको समक्षितसे क्षोभित करसके ।

सर्वे परिपदोंके देखोने यह बात स्वीकार करलीथी परन्तु बोय मिथ्यादृष्टी देखोने इन बातको न मानते हुये अभिमान कर मृत्युलोकेमें आने लगे ।

राजाश्रेणिक भगवान कि अमृतमय देशना भयणकर थापीस
नगरमें जा रहा था उस समय दोय देयता श्रेणिकराजाकि
परिक्षा करनेके लिये एकने उदरवृद्धि कर माधियका रूप बनाया
दुकान दुकान सुठ अजमाकि याचना कर रहीथी राजा श्रेणिकने
देख उसे कहा कि अगर तेरेको जो कुछ चाहिये तो मेरे यहा
से लेजा परन्तु यहा फीरव धर्मकि हीलना क्या करती है।
साधियने उत्तर दीया कि हे राजन् ! मेरेजेसी ३६००० है तु कीस
कीसको सामग्री देयेंगा। राजाने कहाकी हे दुष्ट ! छत्तीस हजार
हे वह नर्व रत्नोंकि माला है तेरे जेमी तो एक तुही है। दुमरा
देय साधु यन एक मच्छी पकडनेकि जाल हाथमे लेके जाताको
राजा देख उसे भा कहा कि तेरी इच्छा होगा यह हमारे यहा मील
जायगा। तब साधु बोलाकि एसे १४००० है तुम कीस कीसको
दोगे राजा उत्तर दीया कि १४००० रत्नोंकि माला है तेरे जेमा
तुही है यह दोनों देयतोन उपयोग लगाके देखा तो राजाके एक
आत्मप्रदेशमें भी शका नही हुए तब देयतायाने बड़ीही तारीफ
कनी। एक मृशुक (मटी) का गोला और एक कुडरुकि जाड़ी यह
दो पदार्थ देय देय आकाशमें गमन करते हुये। राजा श्रेणिकने
कुंडल युगल तो नदागणीकी दीया और मटीका गोला राणी
चेलनाकी दीया। चेलना उस मटीका गोलाको देख अपमानके
मारी गोलाका फेंक दीया, उस गोलाके फेंक देनेसे फूटके एक
दोव्य द्वार निकला इति।

इस द्वार और मीचाण हस्तीसे बहलकुमारका उहुतसा
प्रेमथा इस घास्ते राजा श्रेणिक और राणी चेतनाने जीवतो द्वार
और हस्ती बहलकुमारको दे दीया।

बहलकुमार अपने अन्तेवर साथमें लेके चम्पानगरीके मध्य
भागसे निकलके गया महा नदी पर जातेथे वहापर सीवाना

गन्धहस्ती यहलकुमारकि राणीको शुडसे पकड जल धीडा करता हुवा कयी अपने शिरपर कयी कुमस्थलपर कयी पीठपर इत्यादि अनेक प्रकारकि बिडा करताथा पसे यहुतसे दिन निर्गमन हो गये। इम बातकी चम्पानगरीके दोय तीन चार तथा यहुतसे रहन्ते एक्त्र होते है वहापर लोक श्लाघा करने लगे कि राजका मोजमजा सुख साहीयी तो यहलकुमर ही भोगव रहा है कि जिन्होके पास सीचानक गन्धहस्ती और अठारा सर घाला दिव्य हार है। पसा सुख राजाकाणकके नहो है कयु कि उसके शिर तो सय राजकि गटपट है इत्यादि लोक प्रधाह चल रहाथा।

नगर निवासी लागोंकी वह घातों कांणकराजाकी राणी पद्मावतिने सुनी, ओरतोंका स्वभावही होता है कि एक बुम्मेकी मपत्तिको, शान्तहृदिसे कभी नहीं देख सकती है, तो वहा तो देराणी-जैठाणीका मामला होनेसे देव्यही कैसे सके। पद्मावती राणी हारहस्ती लेनेमें घडी ही आनुरता रखती हुई उसी बखत राजा काणकके पास जाके अच्छी तरह राजाका कान भर दिया कि यह दुनियाका अपथाद मुझे सुना नहीं जाता है, वास्ते आप कृपा कर हारहस्ती मुझे भगवा दो।

राजा काणक अपनी राणीकी बात सुनके धोला कि, हे देवी! इस बातका कुछ भी विचार न करो हारहस्ती मेरे पितामामाकी मौजुदगीमें यहलकुमारको दीया गया है और यह मेरा लघुबन्धव है, तो यह हारहस्ती मेरे पास रहे तो क्या और यहलकुमारके पास रहे तो क्या अगर भगवाना चाहुगा तबही भेगा सहुंगा। इत्यादि मधुरतासे उत्तर दिया।

दुनिया कहती है कि “ वाका एग बाइपदमोंका है ” राणी पद्मावतीको संतोष न हुआ। फिर दोय तीनचार राजासे अर्ज

राजाश्रेणिक भगवान कि अमृतमय देशना भयणकर घापीम नगरमें जा रहा था उस समय दोय देयता श्रेणिकराजाकि परिक्षा करनेके लिये पकने उदरवृद्धि कर माध्यिका रूप बनाया दुकान दुकान मुठ अजमाकि याचना कर रहीथी राजा श्रेणिकने देख उसे कहा कि अगर तेरेको जो कुछ चाहिये तो मेरे यहा लेजा परन्तु यहा फौरन धर्मकि होलना क्या करती है। साधियने उत्तर दीया कि हे राजन् ! मेरेजेमी ३६००० है तु कीम कीसको सामग्री देखेंगा। राजाने कहाकी हे दुष्टा ! छतीस हजार हे यह नर्थ रत्नोंकि माठा है तेरे जेमी तो एक तुही है। दुसरा देय साधु बन एक मच्छी पकडनेकि जाल हाथमे लेके जाताको राजा देख उसे भी कहा कि तेरी इच्छा होगा यह हमारे यहा मील जायगा। तब साधु बोलाकि पसे १४००० है तुम कीम कीमको दोगे राजा उत्तर दीया कि १८००० रत्नोंकि माला है तेरे जेमा तुही है यह दोनों देयताने उपयोग लगाके देखा तो राजाके एक आत्ममदेशमें भी शका नही हुई तब देयतावाने बड़ीही तारीफ करी। एक मृशुक (मटी) का गोला और एक कुंडलकि जोड़ी यह दो पदार्थ देक देय आकाशमें गमन करते हुये। राजा श्रेणिकने कुंडल युगल तो नदाराणीकी दीया और मटीका गोला राणी चेलनाको दीया। चेलना उस मटीका गोलाको देख अपमानके मारी गोलाको फेक दीया, उस गालाके फेक देनेसे फूटके एक दीव्य हार निकला इति।

इस हार और सींचाण हस्तीसे बहलकुमारका बहुतसा प्रेमथा इस यास्ते राजा श्रेणिक और राणी चेलनाने जीयतो हार और हस्ती बहलकुमारको दे दीया।

बहलकुमार अपने अन्तेवर साथमें लेके चम्पानगरीके मध्य भागसे निकलक गंगा महा नदी पर जातेथे यहापर सीचांन

गन्धहस्ती यहलकुमारकि राणीका शुद्धसे पकड़ जल फीड़ा करता हुआ कबी अपने शिरपर कबी कुभस्थलपर कबी पीठपर इत्यादि अनेक प्रकारकि फिड़ा करताथा एने बहुतसे दिन निर्गमन हो गये। इस रातकी चम्पानगरीके दोय तीन चार तथा बहुतसे रहस्ते पक्ष होतें हैं बहापर लोक श्लाघा करने लगें कि राजका मोक्षमज्ञा सुख साहोयी तो यहलकुमार ही भोगर रहा है कि जिन्होके पास मोक्षानक गन्धहस्ती और अठारा मर वाला दिव्य हार है। ऐसा सुख राजाकोणकके नहीं है क्यु कि उसके शिर तो मय राजकि खटपट है इत्यादि लोक प्रवाह चल रहाथा।

नगर मित्रामी लार्गाकी यह वार्ता कोणकगजाकी राणी पद्मावतिने सुनी, ओरतोंका प्रभावही होमा है कि एक दुमरेकी भयत्तिकी शान्तदृष्टिसे कभी नहीं देख सकती है, तो यहा तो वेग-णी-जेठाणीका मामला होनेमें देखही केने सके। पद्मावती राणी हारहस्ती लेनमें उड़ी ही आनुरता रखती हुई उम्मी यखत राजा कोणकके पास जाके अच्छी तरह राजाका कान भर दिया कि यह दुनियाका अपवाद मुझमें सुना नहीं जाता है, चाहते आप कृपा कर हारहस्ती मुझे मगवा दो।

राजा कोणक अपनी राणीकी बात सुनके बोला कि हे देयी ! इस बातका कुछ भी विश्वास न करा हारहस्ती मेरे पितामानाकी मौजुदगीमें यहलकुमारको दीया गया है और यह मरा लघुग्रन्थ है, तो यह हारहस्ती मेरे पास रहे तो क्या और यहलकुमारके पास रहे तो क्या अगर भगाना चाहुगा तबही मंगा मरुंगा। इत्यादि मजुगतासे उत्तर दिया।

दुनिया कहती है कि “ वाका पग वाडपदमोंका है ” राणी पद्मावतीको भंतोष न हुआ। फिर दोय तीनचार राजामे अर्ज

लाया, परन्तु बहलकुमर कि तर्फसे वह ही उत्तर मीला कि यातों अपने मातापिताके इन्साफ पर कायम रहे, हारहस्ती मेरे पास रहने दो, आप अपने राजसे ही संतोष रखो, अगर आपको अपने मातापिताके इन्साफ भजुर न रखना हो तो आधा राज हमका देदो और हारहस्ती लेलो इत्यादि ।

राजा कोणक इस बात पर ध्यान नहीं देता हुआ हारहस्ती लेनेके ही कोशील करता रहा ।

बहलकुमरने अपने दिलमें सोचा कि यह कोणक जब अपने पिताको मिथड़ बन्धन कर पिंजरेमें डालनेमें कियत् मात्र शरम नहीं रखी तो मेरे पाससे हारहस्ती जबर जस्ती लेले इसमें क्या आश्चर्य है ? क्यों कि राजसत्ता सैन्यादि सब इसके हाथमें है । इस लिये मुझे चाहिये कि कोणकके गेरहाजरीमें मैं अपना अन्तेवर आदि सब जायदाद लेके वैशालानगरीका राजा चेटक जो हमारे नानाजी हैं उन्हींके पास चला जाऊँ । कारण चेटकराजा धर्मिष्ठ न्यायशील है वह मेरा इन्साफ कर मेरा रक्षण करेगा । अलम् । अक्सर पाये बहलकुमर अपने अन्तेवर और हारहस्ती आदि सब सामग्री ले चम्पानगरीसे निकल वैशालानगरी चला गया वहा जाये अपने नानाजी चेटकराजाको सब दक्षिणत सुनादि चेटकराजाने बहलकुमारका न्यायपक्ष जान अपने पास रख लिया ।

पीछेसे इस बातकी राजा कोणकको खबर हुई तब बहुत ही गुस्सा किया कि बहलकुमरने मुझे पुच्छा भी नहीं और वैशाला चला गया उसी वखत एक दूतको भोगया और कहा कि तुम वैशालानगरी जाओ हमारे नानाजी चेटकराजा प्रत्ये हमारा नमस्कार करो और नानाजीने कहा कि बहलकुमर कोणकराजाको

संग्राम करनेको तैयार होनका आदेश दिया काली आदि दशो भार राजके दश भाग लिया था वास्ते उन्होंने कोणकका हुक्म मानके संग्रामकी तैयारी करना ही पडा । राजा कोणकने कहा कि हे बन्धुओं ! आप अपने अपने देशमें जाये तीन तीन हजार गज, अश्व रथ और तीन कोड पैदलसे युद्धकि तैयारी करो, एसा हुक्म कोणकराजाका पा के अपने अपने राजधामीमें जा के सैना कि तैयारी कर कोणकराजाके पाम आये । कोणकराजा दश भाइयोंको आता हुआ देखके आप भी तैयार हो गया, सय सैन्य तेतीस हजार हस्ती तेतीस हजार अश्व, तेतीस हजार मग्रामीक रथ, तेतीस कोड पैदल इस सब सैनाको पक्ष कर अगदेशक मध्य भागमें चलते हुये विदेह देशकि तर्फ जा रहाथा ।

इधर चेटकराजाको ज्ञात हुआ कि कोणकराजा कालीआदि दश भाइयोंके साथ युद्ध करनेको आ रहा है । तब चेटकराजा कासी, कोशाल, अठारा देशके राजाओं को कि अपने स्वधर्मी थे उन्होंने दूतां द्वारा बुलवाये । अठारा देशके राजा धर्मप्रेमी बुलवानेके साथ ही चेटकराजाके सेवामें हाजर हुए । और बोले कि ह स्था मि ! क्या कार्य है सो फरमाय ।

चेटकराजाने बहलकुमारकी सब दक्षिणत कह सुनाई कि अब क्या करना अगर आप लोगोंकी सलाह हो तो बहलकुमारको दे देवे और आप लोगोकी मरजी हो तो कोणकसे संग्राम करे । यह सुनने कमवीर अठारा देशोंके राजा सलाह कर बोले कि इन्माफये तौरपर न्यायपक्ष गय मरणे आयाथा प्रतिपालन क रना आपका फर्ज है अगर कोणक राजा अन्याय कर आपके उपर युद्ध करनेका आता हातो हम अठारा देशोंके राजा आपकि तर्फ

से युद्ध करनेको तैयार है। चेटक राजाने कहा कि अगर आप-
 कि पसी मरजी हो तो अपनी अपनी राजधानीमें जाके म्ब म्ब
 मैना तैयार कर जलदी आजाओ। इसना सुनतेही म्ब राजा
 म्ब म्ब स्थान गये यहापर तीन तीन हजार हस्ती, अश्व रथ,
 और तीन तीन घोड पैदल तैयार कर राजा चेटकने पास आ
 पहुचे, राजा चेटक भी अपनी मैना तैयार कर म्ब म्ब
 हजार हस्ती सत्तावन हजार अश्व सत्तावन हजार रथ सत्तावन
 घोड पैदल का दल लेने रवाना हुआ यहभि अपने देशान्त यि
 भागमे अपना झंडा रोप पढाय कर दिया। उधर अग देशान्त
 विभागमे कोणक राजाका 'पढाय होगया है। दोनों दलके निशान
 'यज्ञा पताकाओं लगगइ है। भग्रामकि तैयारी हो रही है

हस्ती वालोंसे हस्तीवाले अश्ववालोंसे अश्ववाले रथवालों
 से रथवाले पैदल सुभटाने पैदलवाले इत्यादि साइश युगल य
 नचे भग्राम प्रारंभ समय योद्धा पुरुषोंका सिंहनादमे गगा गर्जना
 कर रहा था अनेक प्रकारके योजित्र वाज रहे थे कर्म सुराओंका
 उत्साह संग्रामके अन्दर बढ़ रहा था आपसमें शस्त्रोंके धपाव हो
 रहीथी अनेक लोकोंका शिर पृथ्वीपर गिर रहाथा, रौद्रसे धर
 तीपर कीच मथरहा था हा हा कार शब्द होरहा था

कोणक राजाकी तर्फसे मैनापति कालीकुमार नियत किया-
 गया था इधरकि तफसे चेटकगजा मैनाका अग्नेश्वर था दोनों सै-
 नापतियोंका आपसमे सन्नाह होते चेटक राजाने कहाकि मैं यिनो
 अपराधिका नही मारताहूँ, यह सुन कालीकुमार कोपित हो,

१ 'यज्ञ' राजानि सैनाकि रचना 'पस्टके' आकारपर रचि गई थी

२ कोणक राजानि मैना रथमुखल तथा गण्डक अकारपर रचि गई थी

अपने धनुष्यपर बाणको चढ़ाके बड़े ही जोरसे बाण फेंका किन्तु चेटक राजाको बाण लगा नहीं परन्तु अपराधि जानके चेटक राजाने एकही बाणमें कालीकुमारका मृत्युके धामपर पहुँचा दिया जब कालीकुमार सेनापति गिर पड़ा तब उस रोज सग्राम बन्ध हो गया।

भगवान् फरमाते हैं कि हे गौतम ! कालीकुमारने इस सग्रामके अन्दर महान् आरम्भ, सारम्भ, समारम्भ कर अपने अध्यक्षताओंको मन्गीन कर महान् अशुभ कर्म उपार्जन कर काल प्राप्त हो चौथी पक्षप्रभा मरकटे अन्दर दश सागरोपमकी स्थितियाँ लैरिया हुयी हैं।

गौतमस्वामिने प्रश्न किया कि हे भगवान् ! यह कालीकुमारका जीव चौथी नरकसे निकल कर कहा आवेगा।

भगवान्ने उत्तर दिया कि हे गौतम ! कालीकुमारका जीव नरकसे निकलके महाविदेह क्षेत्रमें उत्तम जाति-कुलके अन्दर जन्म धारण करेगा (कारण अशुभ कर्म बंधे थे यह नरकमें अन्दर भोग्य लिया था) वहापर अच्छा मत्स्य पाके मुनियोंकी उपासना कर आत्मभाव प्राप्त हो, दीक्षा धारण करेगा महान् तपश्चर्या कर घनघातीया कर्म क्षय कर वैश्वज्ञान प्राप्त कर अनेक भव्य जीवोंको उपदेश दे अपने आयुष्यके अन्तिम भ्वासोभ्वासका त्याग कर मोक्षमें आवेगा

यह सुन भगवान् गौतमस्वामी प्रभुको वन्दन-नमस्कार कर अपनी ध्यानवृत्तिके अन्दर रमणता करने लगगये।

इति निरयानलिका सूत्र प्रथम अध्यायन।

(२) दुसरा अध्ययन—सुकालीकुमारका इन्होंकी माताका नाम सुकालीराणी है भगवानका पधारणा, सुकालीका पुत्रके लिये

प्रश्न करना भगवान् उत्तर देना गौतमस्वामिका प्रश्न पुछना भगवान् मज्झिम्बर उत्तर देना यह सब प्रथमाध्ययनकी माफीक अथात् प्रथम दिनक सग्राममें कालीकुमारका मृत्यु हुआ था और दुमरे दिन सुकालीकुमारका मृत्यु हुआ था । इति ।

(३) तीसरा अध्ययन—महाकालीराणीका पुत्र महाकालीकुमारका है ।

(४) चौथा अध्ययन—कृष्णारानीके पुत्र कृष्णकुमारका है ।

(५) पाचवा अध्ययन—सुकृष्णारानीका पुत्र सुकृष्णकुमारका है ।

(६) छठा अध्ययन—महाकृष्णारानीके पुत्र महाकृष्णकुमारका है ।

(७) सातवा अध्ययन—वीरकृष्णारानीके पुत्र वीरकृष्णका है ।

(८) आठवा अध्ययन—रामकृष्णारानीका पुत्र रामकृष्णका है ।

(९) नववा अध्ययन—पद्मश्रेणकृष्णारानीके पुत्र पद्मश्रेणकृष्णकुमारका है ।

(१०) दशवा अध्ययन महाश्रेण कृष्णा राणीके पुत्र महाश्रेणकृष्णका है ॥ यह श्रेणिक राजाकी दश राणीयोंके दश पुत्र हैं दशों पुत्र चेटकगजाके हाथसे दश दिनोंमें मारा गया है दशों राणीयोंने भगवानसे प्रश्न किया है भगवानने प्रथमाध्ययनकी माफीक उत्तर दीया है दशों कुमार चौथी नरक गये हैं महाविदेहमें दशों जीय मोक्ष जावेगा काली आदि दशों राणीयां पुत्रके निमित्त थीर ध्वन सुन अन्तगढ दशागके आठवा धर्म दीक्षा ले तपश्र्या कर अन्तिम वैयल्लज्ञान प्राप्त कर मोक्ष गई हैं इति निरयावलीका सूत्रके दश अध्ययन समाप्त हुये

नोट —दश दिनोंमें दश भाइ स्वतन्त्र हो गये फिर उम

संग्रामका क्या हुआ, उसका लिये यहाँ पर भगवतीसूत्र शतक ७ उद्देशा ९ से सयन्ध लिखा जाता है

नाग-जय दश दिनामें कोणक राजाके दशा या द्वादश संग्राममें काम आगये तब कोणकने विचार किया कि एक दिनका काम और है क्या कि चेटक राजाका पाण अचुक है जैसे दश दिनामें दश भाइयोंकी गति हुई है वह एक दिन मरे लीये ही होगा वास्ते कुछ दूसरा उपाय सोचना चाहिये ऐसा विचार कर कोणक राजाने अष्टम तप (तीन उपवास) का स्मरण करने लगा कि अगर किसी भी भयमें मुझे बचन दिया था, यह हम प्रवत और मुझे सहायता दी ऐसा स्मरण करनेसे 'बमरेन्द्र' और 'शम्भु' यह दोनों और कोणक राजा किसी भयमें तापस थे उस प्रवत इन दोनों इन्द्रोने बचन दिया था, इन कारण दोनों इन्द्र आये, कोणकको बहुत समझाये कि यह चेटक राजा तुमारा नानाजी है अगर तु जीत भी जायगा तो भी हमीके आगे हाग जैसाही होगा वास्ते हम अपना हठको छाड़ दे। इतना कहने पर भी कोणकने नहीं माना और इन्द्रासे कहा कि यह हमारा काम आपका करना ही होगा। इन्द्र बचनके अन्दर बंधे हुये थे। वास्ते कोणकका पक्ष करना ही पड़ा।

भगवती सूत्र—पहले दिन महाशीलाधटक नामका संग्राम का अन्दर कोणक राजाके उदयण नामके हस्तीपर चम्परदोगता हुआ कोणक राजा घेठा और शम्भु अगाड़ी एक अभेद नामका शस्त्र लेकर बैठ गया था जिसीसे दूसरोंका पाणादि शस्त्र कोणकको नहीं लगे और कोणककी तफसे तृण घाए बकर भी फेंके तो चेटक राजाकी सेना पर महाशीलाकी माफीक मालम होता था। इन्द्रकी सहायतासे प्रथम दिनके संग्राममें ८४००००० मनुष्योंका क्षय हुआ

इस संग्राममें कोणककी जय और चेदक तथा अठारा देशोंके राजाओंका पराजय हुआ था। प्रायः मर्य जीव नरक तथा तीर्यचमें गये। दूसरे दिन भूताइन्द्र हस्ती पर, त्रीचमें कोणक राजा आगे शकेन्द्र पीछे चमरेन्द्र पथ तीन इन्द्र संग्राम करनेका गये इस संग्रामका नाम रथमुशल संग्राम था दूसरे दिन ९६००००० मनुष्योंकी हत्या हुई थी जिसमें १०००० जीव तो एक मच्छीकी कुक्षी में उत्पन्न हुये थे एक वर्णभागनत्थों देवलोकमें और उसका बाल मिथी मनुष्य गतिमें गया शेष जीव गह्वरा नरक तीर्यच गतिमें उत्पन्न हुआ।

उत्तराध्ययन सूत्रकी टीकामें शेषाधिकार है तथा कीर्तनीक धर्त श्रेणिक चन्द्रिमें भी है प्रमंगोपात कुच्छ यहा लिखी जाती है।

जय कामी-काशाल देशके अठारा राजाओंके साथ चेदक राजाका पराजय हो गया तब इन्द्रने अपने स्थान जानेकी रजा मागी उस पर कोणक बोला कि मैं चम्रयति हू। इन्द्रानि कहा कि चम्रयति तो मारद हो चुके है, तेरहवा चम्रयति न हुआ न होगा, यह सुनके कोणक बोला कि मैं तेरहवा चम्रयति होउगा, यान्ते आप मुझे चौदा रत्न दीजिये दोनों इन्द्रोंने बहुतसा नम्र शायी परन्तु कोणकने अपना हठको नहीं छोड़ा तब इन्द्रानि पकेन्द्रियादि रत्नवृत्तकी बनाके दे दीया और अपना मन्त्रध सोढके, इन्द्र मन्त्रस्थान गमन करते कह दीया कि अब हमको न बुलाना न हम आयेगे यह बात एक कथाके अन्दर है अगर कोणकने दिग्विजयका प्रयाणके समय वृत्तय रत्न प्रनाया हो तो भी बन सक्ता है

जय चेदकराजाका दल कमजोर होगया और वहभि जान

गया था कि कोणकको इन्द्र साक्षिता कर रहा है ! तब चेटकराजा अपनी शीप रही हुई सैना ले वैशाला नगरीमें प्रवेश कर नगरीका दरवाजा उधर कर दीया वैशाला नगरीमें श्री मुनिसुप्रत भगवानका स्थुभ था उससे प्रभावसे कोणकराजा नगरीका भेग करनेमें असमर्थ था वास्ते नगरीके बहार निवास कर बैठा था अठारा देशके राजा अपने अपने राजधानीपर चले गये थे ।

बहलकुमार रात्रीके समय सीखानकगन्ध हस्तीपर आरुढ़ हो, कोणकराजाकि सैना जो वैशाला नगरीके चोतर्फ घेरा दे रक्ता था उसी सैनाके अन्दर आके बहुतसे सामग्रीको भार डालता था ऐसे कीतनेही धीन हो जानेसे राजा कोणकको खबर हुई तब कोणकने आगमनके रहस्तेके अन्दर खाई खोदाके अन्दर अग्नि प्रज्वलित कर उपर आछादीत कर दीया इन्नादाया कि इस रस्ते आत समय अग्निमें पड़के मर जायगा, “क्या कर्मोंकि विचित्र गति है और कसे अनर्थ कायकर्म कर्गते हैं” रात्री समय बहलकुमार उसी रहस्तेसे आ रहा था परन्तु हस्तीको जातिस्मरण ज्ञान, हा नेमें अग्निके ध्यानपर आके बहलकुमार डेर गया बहलकुमारने बहुतसे अकुश लगाया परन्तु हस्ती एक कदमभी आगे नहीं धरा बहलकुमार बोला रे हस्ती ! तेरे लिये इतना अनर्थ हुवा है अब तू मुझे इस समय क्यों उत्तर देता है यह सुनके हस्ती अपनी मदसे बहलकुमारको दूर रख, आप आगे चलता हुआ उस अच्छादित अग्निमें जा पड़ा शुभ ध्यानसे मरके देवगतिमें उत्पन्न हुआ बहलकुमारको देवता भगवानके समीपकरणमें ले गया यह बड़ा पर दीक्षा धारण करली अठारा सरयालाहार जिम देवताने दीया था वह थापीम ले गया ।

पाठकों ! सत्कारकी वृत्तिकों ध्यान देव देखिये जिसद्वार और

हमित्वे लिये इतना अनर्थ हुवाया वह हस्ती आगमें जल गया, द्वार देखता ले गया वहलकुंभर दीक्षा धारण करली है। तथापि कोणक राजाका कोप शान्त नहीं हुआ।

कोणक राजा एक निमित्तियाकी बुलवायके पुच्छा कि हे निमित्तिया इस वैशाल नगरीका भग वेसे हो सक्ता है, निमित्तियाने कहाकि हे राजन् कोई प्रतित साधु हो वह इस नगरीकी भाग कर नेमें नाहित हो सक्ता है राजा कोणकने यह बात सुन एक कमल लता वैश्याको बुलवाके उमको कहा कि कोई तपस्वी साधुकी लाजो, वैश्या राजाका आदेश पाके यहाने साधुकि शोध करनेको गई तो एक नदीके पास एक स्थानपर कुलबालुक नामका साधु ध्यान करताथा उस साधुका संग्रन्ध ऐसा है कि—

कुलबालुक साधु अपने घृद्ध गुरुके साथ तीर्थयात्रा करनेको गया था एक पर्वत उत्तरता आगे गुरु चल रहेथे, कुशीष्यने पीछेसे एक पत्थर (घड़ीशीला) गुरुके पीछे डाली गुरुका आयुष्य अधिक होनेसे शीलाकी आति हुई देख रहन्तेसे हुए हो गये, जय शिष्य आया तब गुरुने उपात्म दीयाकि हे दुरात्मन् तु मेरेको मारनेका विचार कीया था, जा कीमी औरतके योग्यसे तेरा चारित्र्य भ्रष्ट होगा ऐसा कहके उस उपात्र शिष्यको निकाट दीया

यह शिष्य गुरुके बधन असत्य करनेकी एकान्त स्थानपर तपश्चया कर रहा था। वहापर कमललता वैश्या आके साधुको देखा वह तपस्वी साधु तीन दिनोंसे उतरके एक शीलाकी अपनि जयानसे तीनवार स्वाद लेके पीर तपश्चयांकि भूमिधपर स्थित हो जाता था, वैश्याने उम शीलापर कुच्छ औषधिका प्रयोग (लेपन) कर दीया जय साधु आके उम शीलापर जयानसे स्वाद लेने लगा वह स्वाद मधुर होनेसे साधुकी विचार हुआकि

यहमेरे तपश्चर्याका प्रभाव है, उस औपधिके प्रयोगसे साधुका टटी और उलटी इतनी होगी कि अपना होश भुल गया, तब यश्याने उस साधुकि हीफाजितकर संचैतनकिया साधुउसका उपकार मानके 'गोलाकि तेरे कुछ काम दोतो मुझे वहे, तेरे उपकार कायदला देउ । वैश्या बोलीके चलीये । वस । राजा कोणके पास है आइ, कोणकने कहाकि हे मुनि इस नगरीका भग करा दो । यह साधु वहासे नगरीमें गया नगरीक लोफ १२ वष हो जानेसे बहुत व्याकुल हो रहे थे उस निमत्तीयाका रूप धारण करने वाले साधुसे लोकाने पुच्छा कि हे साधु इस नगरीको सुख कर होगा । उत्तर दिया कि यह मुनि सुप्रतस्थामिका स्थुभकों गिरा दोगे तब तुमका सुख होगा । सुषामिलापी लाकोंने उस स्थुभकों गिरा दीया तब राजा कोणकने उस नगरीका भग करना प्रारम्भ कर दीया, मुनि अपना फज अदा कर वहासे चलधरा ।

यह बात देख चेटकराजा पक् कुंघाक अन्दर पड आपघात करना शरु कीया था परन्तु भुयमपति देख उसकों अपने भुयन में ले गया वस । चेटकराजाने वहा पर ही अनसन कर देयगति को प्राप्त हो गये ।

राजा कोणक निराश हो व चम्पानगरी चला गया, यह मसारकि स्थिति है कहा हार, कहा हस्ती, कहा बहलकुमर, कहा चेटकराजा, कहा कोणक, कहा पञ्चावती राणी, छोड़ों मनुष्या की हत्या होने पर भी कीस वस्तुका लाम उठाया ! इस लिये ही महान् पुरुषाने इस मसारका परित्याग कर योगवृत्ति स्त्री काम करी है ।

चम्पानगरी आनेके बाद कोणक राजाको भगवान् वीर प्रभुका दर्शन हुवा और भगवानका उपदेशसे कोणकको इतना ता

अन्तर हुआ कि भगवानका पूण भक्त बन गया उपपातिक सूत्र में एसा उल्लेख है कि कोणक राजाको एसा नियम था कि जयतक भगवान कहा पिराजते हैं उसका निर्णय नहीं हो वहातक मुहपे अन्न जलभी नहीं लेता था अर्थात् प्रतिदिन भगवानकि खबर मगयाके ही भोजन करता था। जत्र भगवान चम्पा नगरी पधारतेथे तत्र बड़ा ही आढम्बरसे भगवानको घन्दन करनेको जाता था। इत्यादि पुन भक्तियान था। घन्दनाधिनारमे जहा तहा कोणक राजाकि औपमा दि जाती हे, इसका सविस्तार व्याख्यान उधवाइ सूत्रमे है।

अन्तिम 'अधस्था' में कोणक राजा कृतव्य रत्नोंसे आप चम्पयसि हो देश भाधन करनेको गया था तमस्रप्रभा गुफाये पाम जाये दरवाजा खोलनेका बंदरुत्नसे कीमाड खोलने लगा उन बखत देवताधाने कहा कि बारह चम्पयसि हो गया है तुम पीरुटे हदजारों नहीं तां यहा कोई उपद्रव होगा परन्तु भवितव्यताके आधिन हो कोणकने यह बात नहीं मानी तत्र अन्दरसे अग्निकि जाला निकली जीमसे कोणक बहा ही फालकर छठी तम प्रभा नरकमे जा पहुँचा।

एक स्थलपर एसाभि उल्लेख है कि कोणकका जीव चौदा भव कर मोक्ष जावेगा तत्थ केवली गम्ये।

प्रसंगोपात् सत्रध समाप्त।

इति श्रीनिरयात्रालिङ्गसूत्र सक्षिप्त माग समाप्तम्।



१ काणस १९ वष हि अरुधामें राजगदी बरुया ३६ वर्षा कि सर्व आयुष्य थी। एसा जेम्स कथाम है।

यहमेरे तपश्चर्याका प्रभाव है, उस औपधिके प्रयोगसे साधुकों टटी और उलटी इतनी होगई कि अपना होश भुल गया, तब चेश्याने उस साधुकि होफाजितकर सचेतन किया साधुउसका उपकार मानके जोलाकि तेरे कुछ काम दोतां मुझे कहे, तेरे उपकार ब्रायदला देउ । चेश्या घोड़ीके चलीये । वस । राजा कोणके पास ले आई, कोणकने कहाकि हे मुनि इस नगरीका भंग करा दो । यह साधु वहासे नगरीमें गया नगरीके लोक १२ वर्ष हो जानेसे बहुत व्याकुल हो रहे थे उस निमसीयाका रूप धारण करने वाले साधुसे लोकोंने पुच्छा कि हे साधु इस नगरीको सुख प्रथ होगा । उत्तर दिया कि यह मुनि सुप्रतस्वामिका स्थुभकों गिरा दीग तब तुमका सुख होगा । सुमाभिलाषी लोकोंने उस स्थुभकों गिरा दीया तब राजा कोणकने उस नगरीका भंग करना प्रारभ कर दीया, मुनि अपना फर्ज अदा कर वहासे चलधरा ।

यह बात देख चेटकराजा एक कुँवाके अन्दर पढ आपघात करना शुरू कीया था परन्तु भुवनपति देव उसका अपने भुवन में ले गया वस । चेटकराजाने वहा पर ही अनमन कर देवगति की प्राप्त हो गये ।

राजा कोणक निराश हो व चम्पानगरी चला गया, यह न सारकि स्थिति है कहा द्वार, कहा हस्ती, कहा बडलकुमर, कहा चेटकराजा, कहा कोणक, कहा पद्मावती राणी, मोहों मनुष्या की दत्ता होने पर भी कीस वस्तुका लाभ उठाया ? इस लिये ही महान पुद्योंने इस ससारका परित्याग कर योगधृति स्वीकार करी है ।

चम्पानगरी आनेक बाद कोणक राजाको भगवान धीर प्रभुका दर्शन हुवा और भगवानका उपदेशसे कोणकको इतना ती

असर हुआ कि भगवानका पूण भक्त उन गया उपपातिक सूत्र मे पमा उल्लेख है कि कोणक राजाको पसा नियम था कि जयतक भगवान कहा विराजते है उसका निर्णय नही हो वहातक मृदुपे अन्न जलभी नही लेता था अर्थात् प्रतिदिन भगवानकि खयर भगवाके ही भोजन करता था । जय भगवान चम्पा नगरी पधारनेथे तत्र घडा ही आढम्बरसे भगवानको घन्दन करनेको जाता था । इत्यादि पुर्न भक्तियान था । घन्दनाधिकारमे जहा तहा कोणक राजाकि औपमा दि जाती हे, इसका सविस्तार व्याख्यान उचथाइ सूत्रमे है ।

अन्तिम 'अधस्था' मे कोणक राजा कृतम्य रत्नोंसे आप चम्पति हो देश भाधन करनेको गया था तमसप्रभा गुफाके पान जाके दरवाजा खोलनेको दडरत्नसे कीमाड खोलने लगा उस वखत देवताओंने कहा कि बारह चम्पति हो गया है तुम पीरुडे दडजाथो नही तों यहा कोई उपद्रव होगा परन्तु भवितव्यताये भाधिन हो कोणकने बह बात नही मानी तय अन्दरसे अग्निकि जाला निकली भीमसे कोणक यहा ही कालकर छटी तम प्रभा नरकमे जा पहुँचा ।

एक स्थलपर पमाभि उल्लेख है कि कोणकका जीथ चौदा भव कर मोक्ष जायंगा तत्त्व धेधली गम्ये ।

प्रसगोपात सत्रध समाप्त ।

इति श्रीनिग्यागलिसूत्र सक्षित मार् समाप्तम् ।



१ पाण्ड १८ वष दि अस्थामे रागानी वगारा २६ वषों कि सर्व आयुष्य थी । एमा उल्लेख थायाम है ।

कप्पवडिंसिया सूत्र

—००००—

(दश अध्ययन)

प्रथमाध्ययन—चम्पा नगरी पुर्णभद्र उद्यान पुणभद्रपक्ष
कोणक राजा पद्मावती राणी श्रेणक राजाकि काली राणी त्रिस्के
काली कुमार पुत्र इस नयका वर्णन प्रथम अध्ययनसे समझना ।

कालीकुमार व प्रभावति राणी जिनको सिंह रूपन सूचित
पद्मनामका कुमारका जन्म हुआ माता पिताने बड़ाही महोत्सव
किया थायत् युवक अथस्था होनेसे आठ राजक-याचोंके साथ
पाणिग्रहण करा दिया थायत् पञ्चेन्द्रियके सुख भोगवते हुये
काल निगमन कर रहे थे ।

भगवान् वीर प्रभु अपने शिष्य मङ्गलके परिवारसे भव्य
आर्षाका उद्धार करते हुये चम्पानगरी व पुर्णभद्र उद्यानमें पधारे ।

कोणक राजा बड़ाही उत्साहसे स्यार प्रकारकी सेना ले
भगवान्को बन्दन करनेकी जारहा था, नगर निवासी लोगभी
एकत्र मीलके भगवान्को बन्दन निमित्त मध्य बजारमें आरहे थे
इस मनुष्यों के वृद्ध की पद्मकुमार देखके अपने अनुचरोंसे पुछा
कि आज चम्पानगरी के अन्दर क्या महोत्सव है ? अनुचरोंने
उत्तर दिया कि हे स्वामिन् आज भगवान् वीर प्रभु पधारे हैं
वास्ते जनसमूह एकत्रही भगवान्को बन्दन करनेको जारहे हैं ।
यह सुनके पद्मकुमार भी स्यार अश्वोंके रथपर आरूढ़ हो भग
वान्को बन्दन करनेकी सर्व लोकाँके साथमें गया भगवान्की
प्रदिक्षणा दे बन्दना कर अपने अपने योग्य स्थानपर बैठ गये ।

भगवान् धीरप्रभुने उस विस्तारवाली परिपदाका विचित्र प्रकारसे धर्मदेशना सुनाई मौख्य यह उपदेश दीयाथा कि हे भव्य जीयो! इस घोर संसारके अन्दर परीभ्रमन करते हुये प्राणी योंकों मनुष्यजन्मादि सामग्री मीलना दुर्लभ्य है अगर फीसी पुन्योदयसे मील भी जाये तों उसको सफल करना अति दुर्लभ्य है वास्ते यथाशक्ति व्रत प्रत्याग्यान कर अपनी आत्माको निर्मल बनाना चाहिये । इत्यादि—

परिपदा धीरबाणीका अमृतपान कर यथाशक्ति त्याग धैराग धारण कर भगवान्को वन्दन नमस्कार कर अपने अपने न्यानपर गमन करने लगे ।

पञ्चकुमार भगवान्कि देशना श्रवणकर परम धैरागका प्राप्त हुवा उठके भगवान्को वन्दन नमस्कार कर बोलाकि हे भगवान् आपने फरमाया यह सत्य है मैं मेरे मातापितायोका पुच्छ आ पकि समिप दीक्षा लेउगा भगवान्ने फरमाया “जहा सुख” जैसे गौतमकुंमरने मातापितायोसे आज्ञा ले दीक्षा लीथी इसी मा फीक पञ्चकुमारभी मातापितायासे नम्रता पूर्वक आज्ञा प्राप्त करी, मातापितायोने बड़ाही महोत्सव कर पञ्चकुमारको भगवान्के पास दीक्षा दरावी । पञ्च अनगर इयांसमिति यावन साधु बन गया तथा रूपके स्थिराये पास विनय भक्ति कर इग्यारा अङ्कका अध्ययन कीया औरभी अनेक प्रकारकि तपश्चर्या कर अपने शरीरको खदककी माफक कृष्य बना दीया अन्तिम एक मासका अर्चन कर समाधि पूर्वक कात्वर प्रथम मौधर्म देवलोकमें दोय सागरोपमकि स्थितिवाला दिव्यता हुवा यह देवतोके मुखोका

१ अत्र गम्याम उत्पद्य हात है उस समय अगुलक ध्वन्यातमें नाम प्रमाण अवगाहना हानी है । अन्तर महर्नमें आहार पयासी, गरीर पयासी, इन्द्रिय पयासी, आमाभाग पर्यासी, भाषा और मनपयासी साथही म वाचते हैं वाम्त शास्त्रमार्गेन

अनुभवकर महाविदेह क्षेत्रमें उत्तम जाति-कुलमें जन्म धारण कर
फीर वहाभी वैद्यलोप्ररूपीत धर्म संघनकर दीक्षा ग्रहणकर वैद्य
ज्ञान प्राप्त कर मोक्ष जायेगा इति प्रथम अध्ययन समाप्त ।

न	सुमात्र अध्वयन	मानाका नाम	विनास नाम	उद्योग मय	श्रीभाकर
१	पद्म कुमार	पद्मावती	कागु सुमार	मीधम नवगक	४२
२	महापद्म	महापद्मावती	महाली	इशान	५
३	भद्र	भद्रा	महाकली	मनन्कुमार	४
४	सुमेध	सुमेधा	कृष्ण	मान्ड	४
	पद्मभद्र	पद्मभद्रा	सुकृष्ण	भद्रा	४
५	पद्मप्रेत	पद्मप्रेता	महाप्रेत	रामनक	३
६	पद्मगुल्म	पद्मगुल्मा	काप्रेत	महागुल्म	३
७	निर्गुण	निर्गुणमा	रामगुण	गन्ध	६
८	आनन्द	आनन्दा	पद्मभद्रा	प्राणन	७
९	नन्दा	नन्दना	महाप्रेत	अच्युत	७

यह दशा सुमार धनक राजाके पासते है भगवान वीर प्रभुकी
देशना सुन संसारका त्याग कर भगवानके पास दीक्षा ग्रहण कर
अन्तिम एवैक मानका अनशन कर वैद्यलोकमें गये है । वहासे
सीधे ही महाविदेह क्षेत्रमें मनुष्यभव कर फीर दीक्षा ग्रहण कर
कमरीपुकी जीत वैद्यलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष जायेगा इति ।

इति श्री कप्पमडिसीया सूत्र सचिप्त सार ममात्मम् ।



पांच पर्याप्ति अन्तर महुतमें बाधक पदकय युक्तावय धारण कर बना कहा है जनें
नवपण उपन होनरा अधिकार आव जाएर प्यत्ता ममजना ।

अथ श्री

पुष्पिका सूत्रम् ।



(दश अध्यायन)

(१) प्रथम अध्ययन । एक समयकी बात है कि अमण भगवान् धीरप्रभु राजगृह नगरके गुणशील उद्यानमें पधारे । राजा अणिकादि पुत्रसमी लक्ष भगवान्को यन्त्रन करनेका गये । विद्याधर तथा चार निकायन देव भी भगवान्की अमृतमय देशना भिक्षापी हो वहा पर उपस्थित हुये थे ।

भगवान् धीरप्रभु उस बारह प्रकारकी परिपदाकां त्रिधित्र प्रकारका धर्म सुनाया श्रोतागण धर्मदेशना श्रवण कर त्याग वैराग्य प्रत्याख्यान आदि यथाशक्ति धारण कर स्वस्वस्थान गमन करते हुये ।

उसी समयकी बात है कि चार हजार सामानिक देव, सो गहजार आत्मरक्षक देव, तीन परिपदाके देवा चार महत्तरिफ देवागता सपरिवाग अन्य भी चन्द्र वैमानासी देवता देवीयोंके धृन्धर्मे बैठे हुये ज्योतीषीयोंका राजा ज्योतीषीयोंका इन्द्र अपना अद्रवतस वैमानकी सौधर्मी सभामें अनेक प्रकारके गीत ग्यान यार्जीत्र तथा नाटकादि देव मंत्रन्धी ऋद्धिको भोग्य रहा था ।

उस समय चन्द्र अधिज्ञानसे इस जम्बुद्वीपके भरतक्षेत्रमें राजगृह नगरके गुणशीलोद्यानमें भगवान् धीरप्रभुको तिराजमान देखके आत्मप्रदेशोमें प्रहाही हर्षित हुये, सिंहासनमें उठके जिस दिशामें भगवान् विराजत थे उस दिशामें नाट आठ षट्म

सामने जाके भगवानको वन्दन नमस्कार कर जोला कि हे भगवान आप यहा पर विराजमान है मैं यहा पर घेठा आपको वन्दन करता हु आप मेरी वन्दन स्वीकृत करावे। यहा पर मय अधिकार सूर्याभ देवताकी माफीक कहना। कारण देव आग मनके अधिकारमें सविस्तर अधिकार रायप्पसेनी सूत्र सूर्याभा धिमाग्में ही कीया है इतना विशेष है कि सुस्वर नामकी घटा यजाइ थी वैश्वसे एक हजार योजन लम्बा चौड़ा साठ योजन उंचा पैमान बनाया था पचसीस योजनकी उंची मट्ट ध्वजा थी इत्यादि बहुतसे देवी देवताओंके वृन्दसे भगवानको वन्दन करनेको आया, वन्दन नमस्कार कर देशना सुनी फिर सूर्याभकी माफीक गौतमादि मुनियोंको भक्तिपूर्वक यत्तीस प्रकारका नाटक बतलाके भगवानको वन्दन नमस्कार कर अपने स्थान जानेको गमन किया।

भगवानसे गौतमस्यामिने प्रश्न किया कि हे कुरुणामिन्दु यह चन्द्रमा इतने रूप कहासे बनाये कह प्रवेश कर दीये।

प्रभुने उत्तर दिया कि हे गौतम! जैसे कुडागशाल (गुप्तघर) होती है उसके अन्दर मनुष्य प्रवेश भी हो सक्ता है और निकल भी सक्ता है इसी माफीक देवोंको भी वैश्विय लब्धि है जिससे वैश्विय शरीरसे अनेक रूप बनाय भि मके और पीछा प्रवेश भी कर सके।

पुन गौतमस्यामिने प्रश्न किया कि हे दयातु! इस चन्द्रन पूर्वभर्में इतना क्या पुण्य किया था कि जिसके जरिये यह देव-रुद्धि प्राप्त हुई है?

भगवानने उत्तर दिया कि हे गौतम! सुन। इस जम्बुद्विप-का भरतक्षेत्रके अन्दर साधव्ती नामकी नगरी थी वहा पर जय-

शत्रु नामका राजा गज करता था उसी नगरीके अन्दर आग-
तिया नामका एक गाथापति धर्मता था वह उडा ही धनाश्रय
और नगरीमें एक प्रतिष्ठित था “ जेमे आनन्द गाथापति ”

उस समय तेषीममें तीर्थकर पार्थर्यनाथ प्रभु विहार करते
साथथी नगरीके कोष्ठनोगानमे पधारे राजादि सब लोग भग-
वानको धन्दन करनेको गये इधर आगतिया गाथापति इन
यात्रियों धधण कर वह भी भगवानको धन्दन करनेको गया । भग-
वानने धर्मदेशना फरमाइ समारका असार पना और चारित्रिका
महत्त्व बतलाया आगतिया गाथापति धर्म सुनके संसारको अ-
सार जाण अपने जेष्टपुत्रको गृहकार्यमें स्थापन कर आप भगदत्त
कि माफीक घडे ही महोत्सवके साथ भगवानके पास चार महा-
व्रत रूप दीक्षा धारण करी ।

आगतिया मुनि पाचममिति समता, तीन गुतीगुप्ता यायत्
महागुप्ति ब्रह्मचर्य व्रत पालन करता हुआ, तथा रूपके स्थयोगोंके
पान नामाधिकादि इग्यारा अगकां हानाभ्याम किया । थादमें
बहुतसी तपश्चर्या करते हुये बहुत वर्षों तक चारित्रपर्याय पालन
करके अन्तमें पन्दरा दिनोंका अनमन किया, परन्तु जो उत्तर
गुणमें दोष' लगा था उसकी आलोचना नहीं करी बान्ते, चिरा-
धिक अयस्यामें काल कर ज्योतिषियोंके इन्द्र ज्योतिषीयांके
राजा यह चन्द्रमा हुआ है पूर्वभधमे चारित्र ग्रहण करनेका यह
फल हुआ कि देवता मन्थन्धी रुद्धि ज्योती कान्ती यायत् देव भध
उदय हुआ है परन्तु साथमें विरोधि होनेसे ज्योतिषी होना पडा
है कारण आराधि माधुकि गति वैमानिक देवतायों कि है ।

१ मूल पाच महाव्रत है इसके सिवाय पिंडविगुद्धि तथा दश प्रत्यान्यान पीत्र
समिति प्रतिनमनादि यह सब उत्तगुणमें है चन्द्र सूर्यने जा दोष लगाया था वह
उत्तगुणमें ही लगाया था ।

गौतमस्वामिने प्रश्न किया कि हे भगवान्! चन्द्रदेवकी स्थिति कितनी है।

हे गौतम! एक पल्योपम और एकत्रय वर्गकि स्थिति चन्द्रकी है।

पुनः प्रश्न किया कि हे भगवान्! यह चन्द्रदेव ज्योतिषीया का इन्द्र यद्दाने भव स्थिति आयुष्य भव होने पर कहा जावेगा ?

हे गौतम! यद्दाने आयुष्य क्षय कर चन्द्रदेव महाविदेह क्षेत्रमें उत्तम जाति-कुलके अन्दर जन्म धारण करेगा। भोगविश्राससे निरस्त हो बचली प्रसूयित धर्म श्रवण कर नम्रार त्याग कर दीक्षा ग्रहण करेगा। श्यार घनघाती कम क्षय कर यवल्लहान प्राप्त कर निधा ही मोक्ष जावेगा। इति प्रथम अध्ययन समाप्तम्।

(२) दूसरा अध्ययनमें, ज्योतिषीयाका इन्द्रसूयका अधिकार है चन्द्रकि माफीक सूयभि भगवानका यन्दन करनेको आयाधा बसीस प्रकारका नाग्य कियाधा, गौतमस्वामिकी पृच्छा भगवानका उत्तर पञ्चत परन्तु सूय पूर्वभयमें मावधी नगरीका सुप्रतिष्ठ नामका गाथापति था। पाश्वप्रभु पास दीभा, इत्यारा भगवानका ज्ञान, बहुत यप दीक्षा पाली, अन्तिम आधा मामका अनस्त, धिराधि भायने कालकरसूर्य दृवा है एक पल्योपम एक हजार वर्गकि स्थिति यद्दाने चन्द्रके महाविदेह क्षेत्रमें चन्द्रकि माफीक केवल ज्ञान प्राप्त कर मोक्ष जावेगा इति द्वितीयाध्ययन समाप्तम् ॥

(३) तीसरा अध्ययन। भगवान घोर प्रभु राजगृह नगर गुणशीला चैयके अन्दर पधारे राजादि य दनका गया।

चन्द्रकि माफीक महाशुभ नामका गृह देवता भगवानका यन्दन करने को आया यावत् उन्नीम प्रकारका नाटक कर थापिस चला गया।

गौतमस्वामिने पुत्रभयकी पृच्छा करी

भगवानने उत्तर फरमाया कि हे गौतम ! इस जम्बुद्वीप के भरत क्षेत्रमें बनारस नामकी नगरी थी । उस नगरी के अन्दर बड़ाही धनाढ्य च्याग जेठ इतिहास पुगणका ज्ञाता सोमल नामका ब्राह्मण जन्मा था वह अपने ब्राह्मणोंका धर्म में उड़ाही श्रद्धावन्त था ।

उसी समय पार्श्व प्रभुका पधारणा बनारसी नगरी के उद्यानमें हुआ था च्याग प्रकारके देवता, विद्याधर और राजादि भगवानको घण्टन करनेको आयाथा ।

भगवानने आगमन कि यात्री सोमल ब्राह्मणने सुनके विचारा कि पार्श्वप्रभु यहापर पधारे हैं तो चलके अपने दीलने अन्दर जो जो शक है वह प्रश्न पुछे । यमा इरादा कर आप भगवानके पास गया (जैसे कि भगवतीसूत्रमें सोमल ब्राह्मण जीरप्रभुके पास गया था) परन्तु स्तना विशेष है कि इसके साथ कोई शिष्य नहीं था ।

सोमल ब्राह्मण पार्श्वनाथ प्रभुके पास गया था, परन्तु घण्टन-नमस्कार नहीं करता हुआ प्रश्न किया ।

हे भगवान् ! आपका यात्रा है ? जपनि है ? अव्यायाध है ? फासुक विहार है ।

भगवानने उत्तर दिया हा सोमल ! हमारे यात्रा भी है जपनि भि है अव्यायाध भि है और फासुक विहार भी है ।

सोमलने कहा कि कौनसे कौनसे है ?

भगवानने कहा कि ह सोमल—

(१) हमारे यात्रा—जा कि तप नियम संयम मध्यमाय ध्यान आयश्यकदि के अदर योगाका व्यापार यत्न पुत्रक करना यह यात्रा है। यह आदि शब्द मे औरभी बोल समावेश हो सकते हैं।

(२) जपनि हमारे दोय प्रकारकि है (१) इन्द्रियापेक्षा (२) नाह्द्रियापेक्षा। जिस्में इन्द्रियापेक्षाका पाच भेद है (१) श्रोत्रेन्द्रिय (२) श्रुतिन्द्रिय (३) घ्राणेन्द्रिय (४) रसेन्द्रिय (५) स्पर्शेन्द्रिय यह पांचो इन्द्रिय स्व स्व विषयमें प्रवृत्ति करती हुईको ज्ञानके जगिरे अपने कर्जें कर लेना इसको इन्द्रिय जपनि कहते है, और बाध भान माया लाभ उच्छेद हो गया है उन कि उदिरणा नही हातो है अर्थात् इस इन्द्रिय आग कपाय रूपी बाधोका हम जीतलिये है।

(३) अव्याबाध ? जे वायु पित कफ मन्निपात आदि मय रोग भय तथा उपमम है किन्तु उदिरणा नहीं है।

(४) फासुक विहार। जहा आगम उत्थान देयकुल मभा पाणी पीगैरे के पथ, जहा खि नपुसक पशु आदि नहीं पमी घस्ती हा यह हमारे फासुक विहार है।

(प्र०) हे भगवान ? मरमय आपके भ्रमण करण याग्य है या अभय है ?

(उ०) हे सोमल ? मरमय भक्षभी है तथा अभक्ष भी है।

(प्र०) हे भगवान ! क्या कारण है ?

(उ०) हे सोमल ? मरमयको विशेष प्रतिनिधि लिये कहते है कि तुमारे ब्राह्मणोंके न्यायशास्त्रमें मरमय दो प्रकारके है (१) मित्र मरमय (२) धान्य सरसवा। जिस्में मित्र मरमयका तीन भेद है (१) साथमें जन्मा (२) माथमे वृद्धिहुइ (३) साथमें धूला-दिमें खेलना। यह तीन हमारे भ्रमण निग्रहका अभक्ष है और

जा धान्य मरस्य है यह दोय प्रकारे है (१) शस्त्र लगा हुआ अग्नि प्रमुग्धका । जिससे अचित हा जाता है । (२) शस्त्र नहीं लगा हा (सचित) यह हमारे अ० नि० अभक्ष है । जो शस्त्र लगा हुआ है उसका दो भेद है (१) पण्णीक जेयात्मास दोष गहीत (२) अने-पणीक जो अनेमणीक है यह हमारे अ० नि० अभक्ष है । जो पण्णीक है उसका दोय भेद है (१) याचीहुइ (२) अयाचीहुइ, जो, अयाचीहुइ है यह अ० नि० अभक्ष है । जो याचीहुइ है उसका दो भेद है (१) याचना करनेपर भी दातार दें यह लड्डिया और न-दें यह अलड्डिया, जिसमें अलड्डिया तो अ० नि० अभक्ष है और लड्डिया है यह भक्ष है इन् यास्ते हे सोमल मरस्य भक्षभि है अभक्षभि है ।

(प्र०) हे भगवान ! मामा अपको भक्ष है या अभक्ष है ?

(उ०) हे सोमल ! स्यात् भक्ष भी है स्यात् अभक्ष भी है ।

(प्र०) क्या कारण है एसा होनेका ?

(उ०) हे सोमल ! तुमारे ब्रह्मणाके न्याय प्रथमें मामा दाय प्रकारके है (१) द्रव्यमासा (२) कालमासा, जिसमें कालमासा तो ध्रावणमासा से यायत् आसादमामा तक पर्य पारहमासा अ० नि० अभक्ष है और जो द्रव्यमासा है जिसका दोय भेद है (१) अय-मासा (२) धात्रमासा अयंमामा तो जैसे सुवर्ण चादीके साथ तोल कीया जाता है यह अ० नि० अभक्ष है और धात्रमामा (उदद) मरमजरी माफीक जो लड्डिया है यह भक्ष है । इसयास्ते हे मा-मल मामा भक्ष भी है अभक्ष भी है ।

(प्र०) हे भगवान ! तुल्य भक्ष है या अभक्ष है ।

(उ०) हे सोमल ! तुल्य भक्ष भी है अभक्ष भी है ।

(प्र०) हे भगवान ! एसा होनेका क्या कारण है ?

(३०) हे सामल ! तुमारे ब्राह्मणाके न्यायशास्त्रमें कुलत्थ दोय प्रकारका कहा है (१) त्रिकुलत्थ (२) धातु कुलत्थ । जिसमें त्रिकुलत्थके तीन भेद है । कुलकन्या कुम्बहु, कुम्माता, यह धर्म न निम्नन्याकी अभ्य है और धातुकुलत्थ जो सरसय धातुकि माफक जो लद्विया है यह भक्ष है शेष अभक्ष है इसवास्ते हे सोमल कुलत्थ भक्ष भी है तथा अभ्य भी है ।

(३०) हे भगवान ! आप पचाहो ? दायहा ? अभयहा ? अवेद हो ? अवस्थितहो ? अनेक भावभूतहो ?

(३०) हा सोमल ! मैं एक भिहु यात्रत अनेक० ।

(३०) हे भगवान ! ऐसा होनेका क्या कारण है ।

(३०) हे सोमल ! द्रव्यापेक्षामें एक हूँ । ज्ञानदशनापेक्षामें दाय हूँ । आत्मप्रदेशापेक्षामें अक्षय, अवेद, अवस्थित हूँ और उपयोग अपेक्षामें अनेक भावभूत हूँ, कारण उपयोग लोकांलोक व्याप्त है वास्ते हे सामल एक भी मैं हूँ यात्रत् अनेक भावभूत भी मैं हूँ ।

इस प्रश्नाका उत्तर श्रवणकर सोमल ब्राह्मण प्रतिपाधीत हा- गया । भगवान को उन्दन नमस्कार कर बोला कि हे प्रभु ! मैं आपकि घाणीका प्यामा हूँ वास्ते कृपाकर मुझ धर्म सुनावा ।

भगवानने सोमलका विचित्र प्रकारका धर्म सुनाया सोमल धर्म श्रवणकर यात्राकि हे भगवान ! धन्य है आपने पाम मसारीक उपाधिया छाड़ दीक्षा लेते हैं उन्दका ।

हे भगवान ! मैं आपने पाम दीक्षा लेनेमें तो असमथ हूँ । किन्तु मैं आपकेपास श्रावकव्रत ग्रहण करवा । भगवानने परमा या कि “ जहासुम् ” मामल ब्राह्मण परमेश्वर पाश्र्वनाथजात्रे

समिप प्रायश्चित्त ग्रहणकर भगवानका उन्दन नमस्कारकर अपने स्थानपर गमन करता हुआ ।

तत्पश्चात् पार्श्वप्रभु भी वनारसी नगरीके उद्यानमें अन्य जनपदों देशमें विहार कोया

भगवान पार्श्वप्रभु विहार करनेके बाद में कीलनेही समय वनारसी नगरीमें साधुधोका आगमन नहीं होनेसे मोमल ब्राह्मणकी भद्रा शीतल होती रदा, आखिर यह नतीजा हुआकि परकी माफिक (मन्थकत्रका त्यागकर) मिथ्यान्धी बन गया ।

एक समय कि बात है कि मोमलको रात्रीकि उखत कुटम्ब ध्यान करते हुये एसा विचार हुआ कि मैं इस वनारसी नगरीके अन्दर पवित्र ब्राह्मणकुलमें जन्म लिया है विराट-मादी करी है मैंने पुत्रभि हुआ है मैं नेद पुगणादिका पठनपाठनभि कीया है अश्वमेदादि पशु होमने यज्ञभि कराया है । बृद्ध ब्राह्मणों का दक्षणादेने यज्ञस्थभ भि रापा है इत्यादि बहुतसे अच्छे अच्छे कार्य किया है अत्रीभि सूर्यादय होनेपर इस वनारसी नगरीके गार्ग आत्रादि अनेक जातिने वृक्ष तथा लताओं पुष्प फलादि-याला सुन्दर यगेचा वनार नामन्त्रीकर । एसा विचारकर सूर्यादय प्रममर एसाणी थीया अर्थात् उगेचा तैयार करधायने उसकी वृद्धिचे लिये भरण करतें हुये, यह उगेचा स्वल्पही समयमें वृक्ष लता पुष्प फलकर अच्छा मनोहर बनगया । जिसने मोमल ब्राह्मणकि दुनियामे तारीफ होने लग गई । तत्पश्चात् मोमल ब्राह्मण एक समय रात्रीमें कुटम्ब चितवन करताहुयाको एसा विचार हुआ कि मैंने बहुतसे अच्छे अच्छे काम करलिया है यावत् जन्ममें लेके यगेचे तक । अब मुझे उचित है कि बल सूर्यादय दातेही बहुतम तापसो भयन्धी भडोपकरण बनधायके बहुतमे प्रकारका अशमादि भाजन बनधारे न्यातजातके लोकाको भो-

जनप्रसाद करवायके मेरा जट्टपुत्रकी गृहभार सुप्रतकरव । ताप
 मो सन्धा, भडामस्त कारण, उनवाकर जा गंगा नदीपर रहेने
 बाल तापस है उमक नाम (१) हामकरनेवाले (२) यन्त्र धारण
 करनेवाले (३) भूमि शयन करनेवाले (४) यज्ञ करनेवाले (५) ज
 नोह धारण करनेवाले (६) धन्वायान (७) ब्रह्मचारी (८) लोहेर
 उपकरणवाले (९) एक कमल रखनेवाले (१०) फलाहार (११)
 एकवार पाणीमे पसनिक्कल भाजन करे (१२) पत्र बहुतवार (१३)
 स्वरूपकाल पाणीमे रहै (१४) दूधकाल रहै (१५) मटी घनके
 स्नान करे (१६) गंगाके दक्षिण तटपर रहेनेवाले (१७) पत्र उत्तर
 तटपर रहेनेवाले (१८) मन्त्र बाजाक भाजन करे (१९) गृहस्थर
 कुलम जाके भाजन करे (२०) मृगा मारक उमका भाजन करे (२१)
 हस्ती मारक उमका भाजन करे (२२) उध्वद्वद रखनेवाले (२३)
 दिशापापण करनेवाले (२४) पाणीमे यमनेवाले (२५) धील गुफा
 धामी (२६) वृक्षनिचे बसनेवाले (२७) बल्कलके यन्त्र वृक्षके छा
 लक यन्त्र धारण करनेवाले (२८) अशु भक्षणकरे (२९) वायु भक्षण
 करे (३०) सैयाल भक्षण करे (३१) मूल कन्द मरचा पत्र पुष्प फल
 गीजका भक्षण करनेवाले तथा महे हुय रिध्वम हुय पमा कन्द
 मूल फल पुष्पादि भक्षण करनेवाले (३२) जलाभिषेप करनेवाले
 (३३) घन कायद धारण करनेवाले (३४) आतापना लेनेवाले
 (३५) पद्याग्नि तापनेवाले (३६) इगाले कालमे, कष्टशय्या इत्यादि
 जा कष्ट करनेवाल तापस है जिम्मे अन्दर जा दिशापोषण कर
 नेवाले तापस है उन्हाके पास मेरे तापसी दीक्षा लेना और मा
 थमे पमा अभिग्रहभि करना, कि कल्पे मुझे जायजीव तब सूयके
 सन्मुख आतापना लेताहुना छठ छठ पारणा करना आतरा गद्दी
 त, पारणाके दिन च्यागतिप क्रम मर दिशावाके मालक देवीदेव
 है उन्हाका पापण करना जेसे जिमगज छठका पारणा आय उस

गोज आतापनाहि भूमिमें निचा उतरणा यागलथस पहेरने अप-
 नि जुटी (जुपडी) में धामकि कायड लेना पूयदिशोने मालक
 मोमनामके दिगपालकि आक्षा लेना कि हे देय । यह मोमल महा-
 नक्रपि अगर तुमागे दिशामे जोरुच्छ कन्दमूलादि ग्रहन करे तो
 आक्षा है । एसा कहवे पूयदिशामे जाव यह कन्दमूलादिमे कायड
 भरने अपनि जुटीमे आनाकायड यहापर ग्व डाभका तृण उमके
 उपर रगे । एक डाभका तृण लेने गगानदीपर आना यहापर
 जलमञ्जन, जलाभिषेक, जलक्रीडाकर परमसुखि दाने, जलकलस
 भर उसपर डाभतृण ग्वने पीछछा अपनि जुटीपर आना । यहापर
 एक गेलु रेतकी रेदिका बनाना, अरण्यके काष्ठमें अग्नि प्रज्वलित
 करना नमाधिने लकड़ी प्रक्षेप करना अग्निने दक्षिणपामे दह-
 क मडदादि सात उपकरण रचना, फीर आहुती देताहुआ धृतमधु
 तदुल आदिका दाम करना इत्यादि प्रार्थना करताहुआ यलीदा
 न देनेके बाद यह कन्दमूलादिका भोजन करना एसा विचार साम
 लने रात्री समय किया जेसा विचार कियाथा तेमाहि सूर्यादय
 होतेही आप तापनी दीक्षालेही छठ छठ पारणा प्रारम्भ करदीया ।
 प्रथम छठने पारणा मत्र पूरयाहुइ कियाकर फीर छठका निय
 मकर आतापना नेने लगगया, जत्र दुसरा छठका पारणा आयातत्र
 यहही प्रिया करी पग्नु यह दक्षिणदिशा यमलोकपाल कि आक्षा
 लीयी । इन्ही माफीक तीमरे पारणे पग्नु पश्चिमदिशा धरुण
 लोकपालकी आक्षा और चौथे पारणे उत्तरदिशा कुपेगदिगपा
 लकि आक्षा लीयी, इमोमाफीक पूरादि चारों दिशोमें धम मत्र
 पारणा करताहुआ मोमल माहणक्रपि विहार करता था ।

एक समयकि रात है कि मामल माहणक्रपि रात्री समयमें
 अनित्य जागृणा करते हुयेको एसा विचार उत्पन्न हुवा कि मैं
 यनाग्मी नगरीने अन्त ब्राह्मणकुलमें जन्म पावे मत्र अच्छे काम

कीया है यायत तापसी दीक्षा लेली है तो अब मुझे सूर्यादय हा-
नेही पूर्यसगातीया तापम तथा पीच्छेम भगती करनेवाला ताप-
म औरभि आधमस्थितोंका पुच्छव यागलवन्न, वामकि कावड
लेव, काएकि मुहपति मुहपग बन्धरे उत्तरदिशाति तफे मुह कर
ध प्रस्थान करु यमा विचारकरा।

सूर्यादय हातेही अपने रात्रीमें कियाहुवा विचारमाफीक
यागलवन्न पहेरव वामकी कावड लेवे काएकि मुहपतिसे मुहव
न्धवे उत्तरदीशा न मुख मुहकरने नामल महाणऋपि चलता
प्रारभकीया उस समय औरभि अभिग्रह कर्गनिया कि चलते
चलते, जल आवे, स्थल आवे, पयत आवे, स्वाडआवे दूरी आवे
त्रिपमस्थान आवे अर्थात् कोई प्रकारका उपद्रव आवे तोभी
पीच्छा नहीं हटना यमा अभिग्रहकर चला जाते जाते घरम प
होरहुवा उमसमय अपने नियमानुस्मार अशाकधृभवे नीचे एक
येतुरेतीकी येदका रची उमपर कावडधरी डायतण रखा आप
गगानदीमें जाके पूषवत् जलमञ्जन जलझीडा करी फीर उस अ
शोकधृभवे नीचे जाके काएकि मुहपतिसे मुहवन्ध लगावे श्रूप
चाप बैठगया।

आदी रात्रीके समय नामल ऋषिके पास एक देवता आया
वह देवता नामलऋपिप्रते यमा बोलताहुवा। भो ! मोमल माह-
णऋपि ! तेरी प्रवृत्ता (अर्थात् यह तापसी दीक्षा) है वह बुष्ट प्रवृ-
त्ता है नामलने सुना परन्तु कुछभी उत्तर न दीया, मौन कर
ली। देवताने दुमरी-तीसरीबार कहा परन्तु सामल इस बातपर
ध्यान नहीं दीया। तब देव अपने स्थान चला गया

सूर्यादय होतेही नामल यागऋने उन्न पहेर कावडादि उप-
करण ले काएकी मुहपतिसे मुहवन्ध उत्तरदिशाकी स्थीवारकर
चलना प्रारभ करदीया, चलते चलते पीच्छले पदार सीतावनवृक्ष-

वे निचे पूर्वक रीती निवास कीया, देवता आया पूर्ववत् दोय ती-
नधार कहके अपने स्थान चला गया पथ तीमरेदिन अशोकवृक्षके
निचे यहाभी देवताने दोतीनवार कहा, चौथेदिन घडवृक्षके निचे
निधाम किया यहाभी देव आया दोतीन दफे कहा परन्तु सो-
मलतो मौनमेही रहा देव अपने स्थान चला गया । पाचमेदिन
उम्बरवृक्षके निचे सोमलने निवास कीया मत्र किया पहिले दिन
वे माफीक करी । रात्री समय देवता आया और बोलाकि हे
सोमल ! तेरी प्रवृज्जा है सो दुष्ट प्रवृज्जा है पसा दोय तीनधार कहा
इसपर सोमलमहाणरूपि त्रिचार कियाकि, यह कोन है और
किसवास्ते मेरी उत्तम तापसी प्रवृज्जाको दुष्ट थतलाता है ?
वास्ते मुझे पुच्छना चाहिये सोमल० उम देवप्रते पुच्छाकि तुम
मेरी उत्तम प्रवृज्जाको दुष्ट क्यों कहते हो ? उत्तरमे देवता जयाव
दियाकि हे सोमल पेस्तु तुमने पार्श्वनाथस्वामिके समिप था
वकये व्रत धारण कियाया बाद मे साधुजोंके न आनेसे मिथ्या-
न्धी लोकोंके संगतकर मिथ्यास्वी उन यावत् यह तापसी दीक्षा
ले अज्ञान कष्टकर रहा है तो हममे तुमकोक्या फायदा है तु
साधु नाम धराके अनन्तजीवों मयुक्त कन्द मूलादिका भक्षण कर-
तेहैं अग्नि जलके आरभ करतेहै वास्ते तुमारी यह अज्ञान
मय प्रवृज्जा दुष्टप्रवृज्जा है ।

सोमल देवताका वचन सुनके बोलाकि अब मेरी प्रवृज्जा
पैसे अच्छी हो सकता है, अर्थात् मेरा आत्मकल्याण कैसे हो
सकता है ।

देवने कहा कि हे सोमल अगर तु तेरा आत्मकल्याण करना
चाहता है तो जो पूर्व पार्श्वप्रभुकेपास आवकये वारह व्रत धारण
किये थे उमको अजी भि पालन करो और इस तंगी कर्मकाण्डो

छोड़ दे तब तुमारी सुन्दर प्रवृत्ता होसकती है। देवने अपने ज्ञानसे सामलके अच्छे प्रणाम जान घन्दन नमस्कारकर निज स्थानको गमन करता हुआ।

मोमलने पूर्व ग्रहन किये हुवे श्रावकव्रताका पुन स्वीकार कर अपनि भद्राका प्रज्जुत बनाके पार्श्वप्रभुसे ग्रहन किया हुआ तत्त्वज्ञानमे रमणता करताहुवा विचरने लगा।

मोमल श्रावक बहुतसे चोथ छठ अठम अधमान मानव मणकी तपश्चर्या करता हुआ बहुत कालतक श्रावकव्रत पालता हुआ अन्तिम आधा मास (१५ दिन) का अनमन किया परन्तु पहले जो मिथ्यात्वकी क्रिया करीधी उसकी आलोचना न करी, प्रायश्चित्त नलिया निराधिक अवस्थामें काठपर महाशुन पैमान उत्पात सभाकि देवशय्यामें अगुलने अमरग्यात भागकि अवगाह नामे उत्पन्न हुआ, अन्तरमहुतमें पार्चा पर्याप्तीको पूर्णकर युषक वय धारण करता हुआ देवभयका अनुभव करने लगा।

हे गौतम ! यह महाशुन नामका गृह देवका जा ऋद्धि उयोती म्रान्ती मीली है यायत् उपभोगमें आह है इसका मूल कारण पूष भवमे धीतरागकि आशा संयुक्त श्रावकव्रत पालाया। यद्यपि श्रावककी जघन्य सौधम देवलोकि, उत्कृष्ट अच्युत देवलोकि गति है परन्तु सामलने आलोचना न करनेसे ज्यातीषी देवो में उत्पन्न हुआ है। परन्तु यहासे चयके महाविदेह क्षेत्रमें 'दृढपह' ज्ञा कि माफीक मोक्ष जावेगा इति तीमराध्ययन समाप्तम्।

(४) अध्ययन चोथा—राजग्रहागर के गुणशीलोचानमें भगवान धीरप्रभुका आगमन हुआ राजा अणकादि पौरजन भगवानको घन्दन करनेको गये।

उम समय च्यार हजार सामानिकदेव सोरा हजार आत्म

रक्षकदेव, तीन परिपदाके देव, चार महसरीक देवीयाँ और
 भि बहुपुत्तीया वैमानवासी देव देवीयाँ वृन्दसे परिपूत बहु
 पुत्तीया नामकि देवी सौधर्म देवलोकके बहुपुत्तीय वैमानकी
 सौधर्मी सभाके अन्दर नाना प्रकारके गीतग्यान नाटकादि देव
 सयन्धी सुख भोगच रही थी, अन्यदा अवधिज्ञानसे आप जम्बुद्वि
 पत्र भरतक्षेत्र राजग्रहनगरका गुणशीलोद्यानमें भगवान् घोरप्र
 भुक्तो विराजमान देख, हर्ष-मंतोष का प्राप्त हो सिंहासनम् उ
 त्तर मात आठ वरुम सम्मुख जाये वन्दन नमस्कार कर धोली
 कि, हे भगवान् ! आप यहापर विराजते हैं मैं यहापर उपस्थित
 हो आपको वन्दन करती हूँ आप नमस्कार है मेरी वन्दन स्वीकार
 कराने ।

बहुपुत्तीयादेवीने भगवन्तका वन्दनकी तैयारी जैसे सूरिया
 भदेयने करीथी इसी माफीक करी । अपने अनुचर देवीको आज्ञा
 दि कि तुम भगवान् के पास जाओ हमारा नामगौत्र सुनाने वन्दन
 नमस्कार करके एक जोजन परिमाणका मडल तैयार करो जि
 ममें साफकर सुगन्धी जल पुष्प रूप आदिसे देव आने योग्य न
 नाथों देव आज्ञा स्वीकारकर बहा गये और कहनेके माफीक
 मय कार्यकर वापीम आये आज्ञा सुप्रत कर दी

बहुपुत्तीयादेवी एकहजार जोजनका वैमान प्रनायने अपने
 मय परिवारवाले देवता देवायाको साथ ले भगवान् के पास
 आई भगवान् को वन्दन नमस्कारकर सेवा करने लगी

भगवान् ने उस तरह प्रकारकी परिपदाको विचित्र प्रका
 रका धर्म सुनाया । देशना सुन लोकोंने यथाशक्ति व्रतव्रत्याभ्यास
 कर अपने अपने स्थान जानेकी तैयारी करी ।

बहुपुत्तीयादेवी भगवान् के धर्म सुन भगवान् को वन्दन नम

स्कार कर बोली कि हे भगवान ! आप सचज्ञ हा मेरी भक्ति-
मय समय जानने हों परन्तु गौतमादि छदमस्थ मुनियोंका हम
हमारी भक्तिपूषक घत्तीम प्रकारका नाटक उतलायेगी भगवानने
मौन रखी थी ।

भगवानने निषेध न कर्नसे बहुपुत्तीयादेयी एकान्त जाय वै
म्रिय समुद्घातकर जीमणी भूजासे एकमो आठ देवकुमार ढापी
भुजासे एकमो आठ देवकुमारी और भी गालक रूपयाले अनेक
देवदेयी वैम्रिय घनाये तथा ४९ जातिके धार्जिअ और उन्हाक व
जानेवाला देवदेयी घनाक गौतमादि मुनियोंका आगे घत्तीम प्रका
रका नाटककर अपना भक्तिभाव दर्शाया, तत्पश्चात् अपनी सय
अद्विको शरीरमें प्रवेशकर भगवानको वन्दन नमस्कारकर अपने
स्थान गमन करती हुई ।

गौतमम्बामिने प्रश्न किया कि हे भगवान ! यह बहुपुत्तीया
देयी इतनि अद्वि कहासे निकाली और कहा प्रवेश करो ।

भगवानने उत्तर दिया कि हे गौतम ! यह वैम्रिय शरीरका
महत्त्व है कि जेसे कुडागशालामे मनुष्य प्रवेश भी करसक्ते हैं
और निकल भी सक्ते हैं । यह प्रशान्त गायपसेनीसूत्रमें सविस्तार
कहा गया है ।

गौतमम्बामीने औरभी प्रश्न किया कि हे करुणासिन्धु ! इस
बहुपुत्तीयादेयीने पुष भवमें एसा क्या पुण्य उपार्जन कियाया कि
जिस्के जरिये इतनि अद्वि प्राप्त हुई है ।

भगवानने परमाया कि हे गौतम ! इस जम्बुद्विपके भरतक्षे
त्रमे बनारसी नगरीथी, उस नगरीके गहवार आन्रशाल नामका उ
द्यान था, बनारसी नगरीके अन्दर भद्र नामका एक घडाही धना
व्य सेठ (साथवाह) नियाम करता था, उस भद्र सेठके सुभद्रा नाम

की सेठाणी थी। यह अच्छी स्वरूपमान थी परन्तु अध्या अर्थात् इसके पुत्रपुत्री कुछ भी नहीं था। एक समय सुभद्रा सेठाणी ग्रीष्म कुटुम्ब चिन्ता करती हुई जो एसा रिचार हुआ कि मैं मेरा पति के साथ एचेन्द्रिय मगन्धी उहुत कालसे सुख भाग्य रही हूँ परन्तु मेरे अभीतक एकभी पुत्रपुत्री नहीं हुआ है, वास्ते धन्य है यह जगतमें कि जो अपने पुत्रकी जनम देती है-गान्त्रीडा कराती है-स्तनोंका दुध पीलाती है-गीतग्यानकर अपने मनुष्यभक्तों सफर करती है, मैं जगतमें अधन्य अपुन्य अकृताथ हूँ, मेरा जन्मही निरर्थक है कि मेरेका एक भी उचा न हुआ एसा आत ध्यान करने लगी।

उसी समयकी बात है कि उहुश्रुति बहुत परिवारसे रिहार करती हुई सुत्रताजी नामकी साध्विजी यमारमी नगरीमें पधारी साध्विजी एक मिघाडेसे भिक्षा निमित्त नगरीमें भ्रमन करती सुभद्रा सेठाणीके यहा जा पहुची। उम साध्विजीको आते हुये देख आप आमनसे उठ मात आठ कदम सामने जा बन्दन कर अपने चौकामें ले जायके विविध प्रकारका अशन-पाण-स्त्रादिम स्वादिम प्रतिलाभा (दानदीया) ” नितीह न्योगोमे धिनयभक्ति तथा दान देनेका स्वाभाविक गुन होता है ’ बादमे साध्विजीसे अर्ज करी कि हे महाराज मैं मेरे पति के साथ उहुत कालसे भोग भोग बनेपर भी मेरे एकभी पुत्रपुत्री नहीं हुआ है तो आप बहुत शास्त्रके जानकर है, उहुतमे ग्राम नगरादिमें रिचरते हैं ता मुझे कोइ एसा मंत्र येत्र तत्र धमन विरेचन औषध भैमज्ज पतलाया कि मेरे एकाद पुत्रपुत्री होये जिससे मैं इस उध्यापणके कलकसे मुक्त हो जाउ। उत्तरमे साध्विजीने कहा कि हे सुभद्रा! हम भ्रमणि निग्रन्थी इयांसमिति याधत् शुभ ब्रह्मचारिणी है हमारेको एसा शब्द श्रयणोद्गाग श्रयण कगनाही मना है तो मुहसे कहना कहा रहा ?

हमलाग ता मोक्षमाग साधन करनेके लिये केवली प्रहपीत धर्म सुनानेका व्यापार करते हैं। सुभद्रान कहा कि गेर! अपना धर्म ही सुनाइये।

तब साध्विजीने उस पुत्रपीपामी सुभद्राको खड़े खड़े धर्म सुनाना प्रारम्भ किया है सुभद्रा 'यह ममार असार है एकेक जीव जगतके सब जीवाके साथ माताका भय पिताका भय पुत्रका भय पुत्रीका भय इत्यादि अनन्ती अनन्तीवार सबंध कीया है अनन्तीवार देयतायाकी ऋद्धि भोगयो है अनन्तीवार नरक निगा दफा दुख भी सहन किया है परन्तु योतरागका धर्म जिम जी ध्यान अगीकार नहीं कीया है यह जीव भविष्यके लिये ही इस ससारमें परिभ्रमन करता ही रहेगा वास्ते हे सुभद्रा! तु इस ससारको अनित्य-असार समझ योतरागके धर्मको स्वीकार करता जीससे तेरा कल्याण हो इत्यादि।

यह शान्ति रसमय देशना सुन सुभद्र हय-सतोषको प्राप्त हो बोली कि हे आय! आपने आज मुझे यह अपूर्व धर्म सुनाके अच्छी कृपाथ करी है। हे आय! इतना तो मुझे विचार हुआ है कि जो प्राणी इस ससारके अन्दर दुखी है, तृष्णाकि नदीमें झूल रहे हैं यह सब मोहनियकमकाही फल है। हे महाराज! आपका बचनमे श्रद्धा है मुझे प्रतित आइ है मेरे अन्तरआत्मामें लची हुई है धर्म्य है आपके पास दीक्षा लेते हैं। मैं इस घातमें तो अम मय हु परन्तु आपके पास मैं श्रावकधर्मको स्वीकार करुगी।

साध्विजीने कहा कि हे यहन! सुखहो पसा करो परन्तु शुभ कार्यमें विलम्ब करना ठीक नहीं है। इसपर सुभद्रा सेठानीने श्रावकके बारह व्रतको यथा इच्छा मर्यादकर धारण कर लिया।

सुभद्राको श्रावकव्रत पालन करते कितनायक काल निर्ग-

मन होनेसे यह भावना उत्पन्न हुई कि मैं इतने काल मेरे पतिके साथ भोग भोगवनेपर मेरे एक भी बालक न हुआ तो अब मुझे माध्वीजीके पास दीक्षा लेनाही ठीक है । यमा विचारकर अपने पति भद्रसेठसे पुच्छा कि मेरा विचार दीक्षालेनेका है आप मुझे आह्वा दीराय

भद्रसेठने कहा हे सेठानी ! दीक्षाका काम बड़ाहि कठिन है तुम हालमें मेरे साथ भोग भोगों फीर भुक्तभोगी होनेपर दीक्षा लेना । इत्यादि बहुत समझाइ पगन्तु दठ करना चिरियोंके अन्दर एक स्वाभावीक गुण होताहै । जन्ते अपने पतिकी एक भी बातको न मानि तब भद्रसेठ दीक्षाका अच्छा माहत्सवकर हजार पुरुष उठाये पत्नी श्रीजिकाके अन्दर घेठाके घड़ेही मोहत्सवके साथ माध्वीजीके उपानरे जाके अपनी इष्ट भायाको माध्वियोंको शिष्यणीरूप भिक्षा अर्पण करदी अर्थात् सुभद्रा सेठानी सुव्रतासाध्वीजीके पास दीक्षा लेली । सुभद्राने पहले भी कुछ ज्ञान ध्यान नहीं कीया था अब भी ज्ञान ध्यान कुछ भी नहीं केवल पुत्रके दु गके मारी दु गगर्भित वैरागसे दीक्षा ली थी पेंस्तर एक स्त्रधरमें ही नियास करती थी अबतो अनेक धायक धायिकायोंका घरोंमें गमनागमन करनेका अवसर प्राप्त हो गया था ।

सुभद्रामाध्वी आहारपाणी निमित्त गृहस्थ लोगोंके घरोंमें जाती है वहा गृहस्थोंके लडके लडकियाँको देख अपना स्नेहभावसे उमकाँ अपने उपानरेमें षक्य करती है फीर उम वहाके लिये बहुतसा पाणी स्नान करानेको अलताका गग उम वहाके दायपग रगनेको दुध दही खाद खाजा आदि अनेक पदार्थ उम यशोंने गीलानेके लिये तथा अनेक खेलखीलुने उस यशोंको खेलनेके लिये यह सब गृहस्थोंयाँके यहासे याचना करलाना प्रारम्भ करदीया । अर्थात् सुभद्रामाध्वी उस गृहस्थोंके लडके लड-

कीयाँको रमाइना खेलाना स्नानमज्जन कराना काजलट्टीकी व
रना इत्यादि घातिकर्ममें अपना दिन निगमन करने लगी

यह बात सुधतासाधियजीकी खबर पड़ी तब सुभद्राको कह
ने लगी । हे आर्य ! अपने महाव्रतरूप दीक्षा ग्रहणकर भ्रमणी नि
ग्रन्थी शुभ धर्मचरित्रत पालन करनेवागी है तो अपनेको यह गृह
स्थकार्य धृतीपणा करना नहीं कहते हैं इसपरभी तुमने यह
क्या काय करना प्रारम्भ कीया है । क्या तुमने इस कार्यके लिये
दो दीक्षा ली है ? हे भद्र इस अदृश्यकार्यके तुम आलोचना करने
और आगके लिये त्याग करो । पत्ता दाय तीमधार कहा परन्तु
सुभद्रासाधिय इस बातपर कुछ भी लभ नहीं दीया । इसपर नव
साधियाँ उम सुभद्राकां बार बार गोक टाक करनेलगी अर्थात्
कहने लगी कि हे आर्य ! तुमने नमस्को अमार जानके त्याग कीया
है ता फीर यह समारके कायको क्या स्वीकार करती हो
इत्यादि

सुभद्रासाधियने विचार किया कि जबतक मैं दीक्षा नहीं
ली थी तबतक यह नव साधियाँ मेरा आदरसम्कार करती थी
आज मैं दीक्षा ग्रहण करनेके बाद मेरी अवहेलना निंदा घृणा
कर मुझे बार बार गोक टाक करती है ता मुझे इन्हांके साथही क्या
रहना चाहिये वर एक दुमरा उपामराकि याचना कर अपने
बहापर नियाम करदेना । थम ! सुभद्राने एक उपामरा याचके
आप बहापर निवास करदीया । अब तो कीमीका कहना भी न
रहा । दृष्टना चरजना भी न रहा इसीसे स्वच्छंद अपनी इच्छा
नुसार चरताव करनेवाली हो क गृहस्थाके बालप्रचाको लाना
खेलाना रमाना स्नान मज्जन कराना इत्यादि कायमें मुच्छित
बन गई । माधु आचारसेभी शीथिल हो गई । इस हालतमें बहुतसे
यप तपश्चर्यादिकर अन्तिम आधा मामका अनमन किया परन्तु

उम धातिकर्मके कार्यकी आलाचना न करती हुई निराधिभारमें कालकर मौधमें देवलोकांने बहुपुत्तीया जैमानमें बहुपुत्तीया देवी-पणे उत्पन्न हुई है यहापर च्यार पल्योपमकी स्थिति है

हे भगवान् ! देवतावोंमें पुत्रपुत्रीतो नहीं होते हैं फीर इन देवीका नाम बहुपुत्तीया कैसे हुआ !

हे गौतम ! यह देवी शम्भेन्द्रकी आज्ञाधारक है । जिस वखत शम्भेन्द्र इन देवीका दोठाते हैं उन समय पूवभरकी पीपान्ना घालीदेवी बहुतसे देवकुंभर देवकुंमारी उनाके जाती हैं इसवा स्ते देवतायोंने भी इनका नाम बहुपुत्तीया रख दीया है ।

हे भगवान् ! यह बहुपुत्तीयादेवी यहासे चरके कहा जायेंगी ?

हे गौतम ! इमी जम्बुद्विपके भरतक्षेत्रमें विद्याधल नामका पर्यन्तरे पाम पैभिल नामका सन्निवेनके अन्दर एक ब्राह्मणकुलमें पुत्रीपणे जन्म लेगी उसका मातापिता मोहत्सयादि करता हुआ मोमा नाम रखेगा अच्छी सुन्दर स्वरूपवन्त होगी यह ल-डकी चौधन धन प्राप्त करेगी उन समय पुत्रीका मातापिता अपने कुलमें भाणज रष्टकुटके साथ पाणीग्रहन करा देगा । रष्टकुट उस मोमा भार्याको उडे ही हिंसाजतने साथ रखे गा । मोमा भार्या अपने पति रष्टकुटके साथ मनुष्य सयधि भोग भोगयते प्रतिधर्षण एवेक युगलका जन्म होनेसे सोला धर्ष में उन साम्राज्यणीके यत्तीस पुत्र पुत्रीयाका जन्म होगा । जय मोमा उन पुत्र पुत्रीयाका पुरण तौरपर पालन कर न सयेंगा । यह वत्तीम बालक मोमामातासे कोई दुद्ध मागेगा कोई खाद मागेगा कोई ग्राजा मागेगा, कोई हसेगा कोई छींवेगा, कोई मोमाका ताडना करेगा, कोई तरजन करेगा कोई घरमें

टटी करेगा कोई पेशाव करेगा कोई प्रलेप्स करेगा इस पुत्र पुत्रीयाँके मारे मोमा महा दुःखि होगी उमका घर घडाही, दुःगन्ध वाला होगा इस बाल बर्चान अयादामे मौमा अपने पति रष्टकुटवे साथ मनोहच्छित सुख भोगवनेमें असमथ होगी । उस समय सुव्रता नामकी माध्वी एक सिंघाडासे गौचरी आवेगी, उमकी भिक्षा देवे वह मोमा जालेगी कि हे आर्य ! आप बहुत शास्त्रका ज्ञानकर हो मुझे घडाही दुःख है कि मैं इस पुत्र पुत्रीयोँके मारी मेरे पतिवे साथ मनुष्य संवधि भोग भोगव नहीं सकती हुवास्ते कोई ऐसा उपाय चतलाया कि अब मेरे बालक नहो इत्यादि, साध्वि पूज्यत् केवली ग्रहपित धर्म सुनाया मामा धर्म सुन दीक्षा लेनेका विचार करेगी साध्विजीसे कहा कि मेरे पतिकी आज्ञा ले मैं दीक्षा लेहुगी । पतिसे पुच्छने पर ना कहेगा कारण माता दीक्षा ले तो बालकोका पोषण कौन करे ।

मोमा साध्विजीके वन्दन करनेका उपासरे जायेगी धर्मदेवेशना सुनेगी धावकधम बारह व्रत ग्रहन करेगी । जीवादि पदार्थका अच्छा ज्ञान करेगी ।

साध्वि कहासे विहार करेगी मोमा अच्छी ज्ञानकार हो जायेगी कितनेक समयके बाद वह सुव्रता साध्विजी फीर आवेगी मोमा ध्यायिका वादनका जावेगी धर्म देशना ध्वजणकर अपने पतिवि अनुमति लेके उम साध्विजीके पास दीक्षा धारण करेगी विनय भक्तिर इग्यारा आगका अभ्यास करेगी । बहुतसे चोथ छठ, अष्टम मासखमण अदमासखमणादि तपश्चर्या कर अतिम आलोचन कर आदा मामका अनसन कर समाधिमें काल जर मौधम देवलोकमें शकेन्द्रके सामानिक देव दो सागरोपमवि स्थितिमें देवपणे उत्पन्न होगी । कहापर देवसंरन्धि सुखाका

अनुभोगकर चरगी यह महाविदेह क्षेत्रमें उत्तम जातिकुलमें अवतार लेगी यहा भी वैजली प्ररूपित धर्म स्वीकार कर कर्मश-
पुर्वाका पराजय कर वैवल्लभान प्राप्त कर मोक्ष जायेगी । इति
चतुर्याध्ययन समाप्तम् ।

(-) अध्ययन—भगवान् बीरप्रभु गजप्रह्न करक गुणशी
लेशान में त्रिगजमान हैं परिपदाका भगवानकी चन्दन करनेका
आना भगवानका धर्मदेशना देना यह सब पूर्यत् समझना ।

उस समय मीधर्म कल्पके पूर्णभद्रयमान में पूर्णभद्रदेव अपन
देव देवीयोके साथ भोगविलास नाटक आदि देव नयधि सुख
भोगन रहावा ।

पूर्णभद्र देव अधिज्ञानसे भगवानका देगा सूरियाभदेयकि
माफीका भगवानकी चन्दन करनेकी आना उत्तीम प्रकारका
नाटक कर पीन्डा अपने स्वामपर गमन करना । गौतमस्यामिका
पूर्यभय पृच्छाका प्रश्न करना उसपर भगवानके भुगार्थिन्दसे
उत्तर का देना यह सब पूयकि माफिक समझना ।

परन्तु पूर्णभद्र पूर्यभयमें । मणिवति नगरी चन्द्रोत्तर उद्यान
पूर्णभद्र नामका बड़ा धनाढ्य गाथापति स्थित भगवानका
आगमन पणभद्र धर्मदेशना प्रवण करना जेष्ट पुत्रकी गृहभार
सुप्रतकर आप दीक्षा ग्रहण करके इग्यार अगका शानाम्यामकर
अन्तिम आलोचना पुरीक एक मामका अनमन कर समाधि पूर्य-
य पाल कर मीधर्म देवलोकमें पूर्णभद्र देव हुआ है ।

हे भगवान् ! यह पूर्णभद्र देव यहामें चयके कहा जायेगा ?

हे गौतम ! महा विदहक्षेत्रमें उत्तम जाति कुलके अन्दर जन्म
धारणकर वैजली पररूपित धर्मका अगीकार कर, दीक्षा धारणकर,
वैवल्लभान प्राप्त कर मोक्ष जायेगा इति पाचमाध्ययन समाप्तम् ।

(६) इसी माफीक मणिभद्र देवका अध्ययन भी समझना, यह भी पुत्रभयमें मणिधति नगरीमें मणिभद्र गाथापतिथा स्थि चरारि पाम दीक्षा लेके सौधमें कल्पमे देवता हुआथा वहामे महाधिदेहमें मोक्ष जावेगा इति । ६ ।

(७) एउ दत्तदेउ (८) बलनाम देव (९) शिषदेव (१०) अनादीत देउ पुत्रभयमें सब गाथा पति थे दीक्षा ले मोधम देउ लाकमे वेध हुये हैं भगवानको धन्दन कग्नेको गयेथे, बसीम प्रकारक नाटक कर भक्ति करीथी देवभयसे चउरे महा निदेह क्षेत्रमें सन माभ जावेगा इति । १० ।

॥ इति श्री पुष्पिका नामका सूत्रका सक्षिप्त सार ॥



॥ अथश्री ॥

पुष्पचूलिया सूत्रका संक्षिप्त सार.

(दश अध्ययन)

(१) प्रथम अध्ययन । श्री घोरप्रभु अपने शिष्यमण्डलके परिचारसे एक समय राजग्रह नगरके गुणशीलोद्यानमें पधारे चार जातिके देवता, चिंताधर, राजा धेनक और नगरनियासी लोक भगवानको घन्दन करनेको आये ।

उस समय सौधर्मकल्पके, धीघतम घमानमें चार हजार सामानिक देव, सोलाहजार आत्म रक्षक देव, चार महत्तनिक देवीयों और भी न्यत्रैमानवामी देवदेवीयोंके अन्दर गीतग्यान नाटकादि देव सबन्धी भोग भोगप्रती श्रीनामकि देवी अधधिज्ञान से भगवानको देव यायत् यह पुत्तीयादेवीकि माफीय भगवानको घन्दन करनेको गइ घतीम प्रकारका नाटककर अपने स्थानपर गमन किया ।

गीतमस्यामिने उन श्रीदेवोंका पूर्वभर पुच्छा ।

भगवानने फरमाया । कि इसी राजग्रह नगरके अन्दर जय-शशुराजा राज करता था उस समयकि यात है कि इस नगरीमें उडाही धनाढ्य और नगरमें प्रतिष्ठत एक सुदृशन नामका गाथा-पति निवास करता था उसके प्राया नामकि भार्या थी और दम्प-तितसे उत्पन्न हुई भूता नामकि पुत्री थी वह पुत्री केनी थी के यु-वकहानेपरभी वृद्धवय सादृश जिस्का शरीर हज़रसा दीखाइ देता

था जिस्का कटिका भाग नम गया था जघा पतली पड गई थी स्तनका अदर्श आकार अर्थात् वीलकुलही दीखाई नही देता था इत्यादि, जिस्को फोड़भी पुरुष परणनेकि इच्छाभी नही करता था

उमी समय, निलगण, नौ रर (हाथ) परिमाण शरीर, देवा दिसे पुजित तथीमया तीर्थकर श्री पार्श्वनाथ प्रभु मोल हजार मुनि अइतीस हजार साध्वियाकि परिवारसे पृथ्वी मडलकी प-
त्रिच करतै हुन राजप्रहोद्यानमें पधारे । राजादि सब लाख भग
वानकी उद्दन करनेको गये ।

यह बात भूतानेभी सुनी अपने माता पिताकि आना ले
स्नान मज्जनकर च्यार अश्वका रथ तैयार करवाके बहुतसे दाम
दासीया नोकर चाकराकि परिवारसे राजप्रह नगरके मध्यभागने
निकलक बगचेमें आई भगवानक अतिशय देखक रथसे निने
उत्तर पाषाभिगमसे भगवानकी बन्दन नमस्कार कर सेवा क
रने लगी

उन विस्तारवाली परिपदाकी भगवानने त्रिचित्र प्रज्ञासे
धमदेशना सुनाई अन्तिम भगवानने फरमायाकि हे भयजीवा !
ससारक अन्दर जीव-सुख-दु ख गजारक रागी निरोगी स्वरूप
कुरूपमान, धनाढ्य दालीप्र उच गौत्र निच गौत्र इत्यादि प्राप्त करते
हैं वह सब पुण उपाजन त्रिये हुये सुभासुभ कर्मोंवाही फल है ।
घास्ते पेस्तर कर्मस्वरूपकी ठीक ठीक समझक नया कर्म आनेने
आधव द्वार है उसकी रोका और तपअया कर पुराण कर्मोंकी
क्षय करो ताक पुन इन ससारमे आनाही न पडे इत्यादि ।

देशना श्रवण कर परिपदा आनन्दीत हो यथाशक्ति व्रत प्र-
त्यारपान कर उद्दन नमस्कार स्तुति करते हुये स्थ स्थ स्थान
गमन करने लगे ।

भूताकुमारी देशना श्रवण कर हर्ष सतुष्ट हो बोलीकि हे भगवान आपका चेहना मर्त्य है सुख और दुःख पुर्वज्जित कर्माकाही फल है परन्तु अपने कर्म क्षय करनेका भी उपाय अच्छा घतलाया है मैं उस रहस्तेकों सचे दीलसे श्रद्धा है मुझे प्रतितभी आह है आपका चेहना मेरे अन्तर आत्मामें रूच भी गया है हे कल्याण सिन्धु ! मैं मेरे मातापितायोंकों पुच्छके आपकि समिप दीक्षा ग्रहण करूंगा । भगवानने फरमाया ' जहा सुगम् ' भूता भगवानको चन्दन नमस्कार कर अपने रथ परारूढ हो अपने घरपर आह । मातापितायोंसे अर्ज करीकि मैं आज भगवानकि अमृतमय देशना सुन समारसे भयभ्रात हुइ हु अगर आप आज्ञा देये तौ मैं भगवानके पाम दीक्षा ग्रहण कर मेरी आत्माका कन्याण करूँ ? माता पितायोंने कहाकि खुशीसे दीक्षा लें ।

नाट—समारकी बेसी स्वार्थवृत्ति होती है इस पुत्रीके साथ मातापिताका स्वार्थ नहीं था वरने इसीका कोइ परणताभी नहीं था इस हालतमे खुशीसे आज्ञा देदीयी ।

भूताका दीक्षा लेनेका दील होते ही मातापितायोंने (लग्नके चन्दनमें) घड़ा भारी दीक्षा महोत्सवकर हजार मनुष्य उठाये एमी नियिकाके अन्दर भूताको घेठा कर घड़ाही आदम्वरके साथ भगवानके पाम आये और भगवानसे चन्दन कर अर्ज करीकि है प्रभु यह मेरी पुत्री आपकी देशना सुन समारसे भयभ्रात हा आपके पाम दीक्षा लेना चाहति है हे दयातु ! मैं आपको शिष्यणी रूपभिक्षा देता हु आप म्मे स्वीकार कराये

भूताने अपने वस्त्र भूषण अपने मातापिताकदि मुनियेपको धारणकर भगवानके समिप आये नम्रता पुषक अर्ज करी हे भगवान समारके अन्दर अनीता (जन्म) पलिता (मृत्यु) का म-

हान् दु ख है जैसे किसी गाथापतिवे गृह जलता हो-उसके अन्दरसे अमार वस्तु छोड़के सार वस्तु निकाल लेते हैं यह मार वस्तु गृहस्थाकी सुखमे महायता भूत हो जाती है ऐसे मैं भी असार ममार पदार्थोंकी छोड़ मयम मार ग्रहण करती हु इत्यादि दीनती करी ।

भगवानने उस भूताको न्याय महाव्रतरूप दीक्षा देके पुष्प-शूला नामकि साधिवीकी सुप्रति करदि ।

भूतासाधिव दीक्षा लेनेके बाद पासुक पाणी लाके कभी हाथ धोये, कभी पग धोये, कभी खाख धावे, कभी स्तन धोये, कभी मुख नाक आखें शिर आदि धोना तथा जहापर बैठे उठे वहापर प्रथम पाणीके छटकवाप करना इत्यादि शरीरकि सुशुषा करना आरम्भ कर दीया ।

पुष्पशूलासाधिवी भूतामाधिवने कहाकि हे आर्य ! अपने धर्मणी निग्रन्धी है अपनेकी शरीररि सुशुषा करना नहीं कल्पता है तथापि तुमने यह क्या दगमड रखा है कि कभी हाथ धोती है कभी पग धोती है वायत् शिर धोती है हे साध्वी ! हम अकृत्य कार्य कि आलोचन करां और आइदासे ऐसे कार्यका परित्याग करां ऐसा गुरुणीजीके कथन का आदर न करती हुई भूताने अपना अकृत्य कार्यको चातु ही रखा । इसपर बहुतसी साधियां उस भूताकी राकटोन्न करने लगीं हे साध्वी ! तुं बड़ेही आदर्यरसे दीक्षा ग्रहण करीथी तां अब इस तुच्छ सुखोंके लिये भगवान आशायि विराधि हो अपने मीग हुआ चारित्र्य चुड़ामणिकों कयो खी रही है ?

गुरुणिजी तथा अन्य साधियांकि द्वितशिक्षाका नहीं मानती सोमाकि माफीक दुसरा उपामराके अन्दर निवासकर स्व-

इच्छा स्वच्छंदे पास-थपणे विहार करती हुइ जहुत यपों तय तप
 धर्या कर अन्तमे आह मासका अनसनधर पापस्थान अनाआलां-
 चीत फालकर सौधर्म देवलोयमें श्रीयतनम पैमारमें श्री देवीपणे
 उत्पन्न हुइ है यहा च्यार पत्योपमका आयुग्य पुरण कर महाधि
 वेद क्षेत्रमें उत्तम जाति तुलम उत्पन्न होगा कैथली परूपित धर्म
 न्योकार कर दीक्षा ग्रहन करेगी शुद्ध चारित्र्य पालने कैवलज्ञान
 प्राप्त कर मोक्ष जायेगी इति प्रथमा ययन समाप्तम् ।

पय हरीदेवी, धृतिदेवी, वीतिदेवी, बुद्धिदेवी लक्ष्मिदेवी,
 पलादेवी, सुरादेवी, रसादेवी, गन्धादेवी यह दशों देवीयों भ-
 गवानका पन्धन परनेकों आइ यनीन प्रकारका नाटक बिया
 गीतमस्वामि इन्होंने पूर्णभयकि पुच्छा करी भगवानने उत्तर
 परमाया दशों पद्य भयमें गाथापतियोंने पुत्रीयों थीजेसेकि भूता
 दशों पाश्र्वनाथ प्रभुएं पास शिक्षा ग्रहन कर शरीरनि सुशुद्ध
 कर पिराधि हो सौधर्म देवलाक गइ यहासे चयके महाविद
 क्षेत्रमें आराधिपद ग्रहन कर कैवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष जायेगी ।
 इति दशाध्ययन ।

॥ इति पुष्कलिया सूत्र सच्चिन् मार समाप्तम् ॥



॥ अथश्री ॥

विन्हिदसा सूत्र संचिप्तसार ।

(वारहा अध्ययन)

(१) प्रथम अध्ययन—चतुर्थ आराधने अन्तिम परमेश्वर नैमिनाथप्रभु इस भूमण्डलपर विहार करतेथे उस समयकि घात है कि, द्वारकानगरी, रेचन्तगिरि पर्वत, नन्दनवनान्नाथ, सुरप्पिय यक्षका यक्षायतन, श्रीकृष्णराजा सपरिवार इस सबका वणन गौतम कुमारअध्ययनसे देखा ।

उस द्वारकानगरीमें महान् प्राक्प्री चलदेव नामका राजाथा उस चलदेवराजाके रेचन्ती नामकी राणी महिलागुण सयुक्त थी।

एक समय रेचन्ती राणी अपनि सुखशय्याके अदर निहका स्त्रपन देखा थापत् कुमारका जन्म मोहनस्य कर निपेद नाम रत्नाथा ७२ कला प्रणिण हानेसे ५० राजरत्न्यावाक साथ पाणि ग्रहन दत्ता दायका यावत् आनन्द पुत्रक संसारके सुख भोगव रहाथा जैसे गौतमाध्ययने विस्तारपुत्र लिया है वास्ते कहासे देवता चाहिये ।

यादयकुल शृंगार देवादिक पञ्चनिय बायीसये तीर्थकर श्री नैमिनाथ भगवानका पधारना द्वारकानगरीके नन्दनवनमें हुआ ।

श्रीकृष्ण आदि भय लाख सपरिवार भगवानको बदल करनेको गया उस समय निपेदकुमार भी गौतम कि माफीक उन्दन करनेका गये । भगवानने उस विशाल परिपदाकी विचित्र

प्रकारसे धर्मदेशना दी अन्तमे फरमाया कि हे भय जीवों हम ममारके अन्दर पौदगलीक, अस्थिर सुखोंकी, दुनिया सुग मान रही है परन्तु यस्तुत्य यह पुरुष का घर है वास्ते आत्मतत्त्व यस्तुको पेछान हम कर्म सुखोंका त्यागकर अपने अवाधित सुखांश ग्रहण करो अक्षय सुखोंका प्राप्त करनेवालेनां पेस्तर चाग्नि राजासे मीलना चाहिये अर्थात् दीक्षा लेना चाहिये । इत्यादि ।

आतागण देशना सुन यथाशक्ति व्रत प्रत्याग्यान ग्रहणकर भगवानको धन्दन नमस्कार कर निज स्थान गमा करते हुये ।

निपेठकुमर देशना सुन धन्दन नमन कर घोला कि हे भगवान आप फरमाया यह मत्य है यह नाशमान पौदगलीक सुग दु खोंका यजाना ही है । हे प्रभु धन्य है जो राजा महाराजा सेठ सेनापति जोकि आपके समिप दीक्षा लेते है हे दयालु मैं दीक्षा लेनेमे असमर्थ हु परन्तु मैं आपकी समीप आवश्यकम अर्थात् गारहव्रत ग्रहण करंगा । भगवानने फरमाया कि “ जहासुखम् ”

निपेठकुमर स्वइच्छा मयाद रखन श्रावकर गारह व्रत धारण कर भगवानका धन्दन न० कर अपने गथ परान्द हो अपने स्थान पर चला गया ।

भगवान नेमिनाथ प्रभुश जेष्ठ शिष्य वरदत्त नामका मुनि भगवानको धन्दन नमस्कार कर प्रश्न करता हुया कि हे प्रभो ! यह निपेठ कुमर पुत्र भवमें क्या पुन्य किया है कि बहुतमे लो गोको प्रिय लगता है सुन्दर स्वरूप यश कीर्ति आदि सामग्री प्राप्त हुई है ।

भगवानने फरमायाकि हे वरदत्त ! इम जन्मुद्विपये भगवत्क्षे

त्रमें धन धान्यमे समृद्ध धना राडमडा नामका नगर था, जि
मके बाहार मधवनोथान मणिदत्त नामके यक्षका सुन्दर यक्षा
यतन था ।

उस नगरमे बडाही प्राक्मभी न्यायशील प्रजापालक महा
प्रल नामका राजा राज करता था । जिन राजाके महिला गुण स
युक्त सुशीला पद्मावती नामकी राणी थी । उस राणीके मित्र न्यपन
सूचित कुमरका जन्म हुआ अनेक गहान्तय कर कुमरका नाम
'वीरगत्त' दीया था सुख पुत्रक चम्पकलताकि माफीक वृद्धिका
प्राप्त होता यहोत्तर कालमे निपुण हो गया ।

जय वीरगत्त कुमरकि युवक अवस्था हुई देखके राजाने उ
त्तीम राज कन्याकाय साथ पाणिग्रहण करा दिया इतनाही दत्त
आया, कुमर निरायाधित सुग्न भागव रत्नाया कि जिष्का काल
जानेकि खबरही मही थी ।

उनी समय त्रेमी भ्रमणके माफीक यह धृति यहूत शिष्याके
परिचारसे प्रवृत्त मिद्धार्थ नामका आचार्य महाराज उस राहीमडे
नगरके उद्यानमें पधारे राजादि नगगलाक और वीरगत्त कुमर
आचार्य महाराजका वन्दन करनका गये । आचार्यश्रीने विस्तार
पुर्वक धर्मदेशना प्रदान करी । परिपदा यथाशक्ति त्याग वैराग
धारण कर विसर्जन हुई ।

वीरगत्त राजकुमार, देशना सुन परम वैराग रगमें रगाहुया
माता-पिताकि आज्ञापुत्रक बडेही मोहत्सयके साथ आचार्यश्रीके
पास दीभा ग्रहण करी इर्याममिति यायन् गुप्त प्रक्षचय प्रत पा
लन करने लगा विशेष विनय भक्ति कर स्थिवरीसे इग्यारा अ
गका ज्ञानाभ्यास कीया । विचित्र प्रकार तपश्चर्या कर अ तम
आगेचना पुर्वक ४० वर्ष दीभा पालने दोय मासका अनसन कर

समाधि पुर्नक काल पर पाचवा ब्रह्मदेवलोकमें दश मागरोपमकि स्थितिवे स्थान देवतापणे उत्पन्न हुआ। वहासे आयुष्य पुर्न कर इम द्वारकानगरीमें उलदेवराजाकि रेवन्ती नाम की राणीने पुत्र पणे उत्पन्न हुआ है हे वरदत्त पुत्र भवमें तप समयका यह प्रत्यक्ष फल मीला है।

वरदत्तमुनिने प्रश्न कीयाकि हे भगवान यह निपेढकुँमर आवक पाम दीक्षा लेगा ? भगवानने उत्तर दीयाकि हा यह वरदत्त मेरे पाम दीक्षा लेगा। एसा सुन उरदत्तमुनि भगवानका उन्दन नमस्कार कर आत्मव्यानमे रमनता करने लगा। अन्यदा भगवान वहासे विहार कर व अन्य देशमें विचरने लगे।

निपेढकुँमर थायक होनेपर जाना है जीयाजीय पुन्य पाप आश्रय सयर निर्जरा उन्ध मोक्ष तथा अधिकरणादि क्रियाके भेदोंको समझा है यावत्। थायक व्रतोंका निर्मल पालन करने लगा।

एक समय चतुर्दशी आदि पत्र तीथीके रोज पौषदशालामे युगहु कुमारवि माफीक 'पौषदकर धर्म चिंतयन करता' यह भावना व्याप्त हुईकि धन्य है जिस ग्राम नगर यावत् जहापर नेमिनाथप्रभु विहार करते है अर्थात् उस जमीनको धन्य है कि जहापर भगवान चरण रखते है। एउ धन्य है जिस राजा महा राजा सेठ सेनापतिका वी जा भगवानके समीप दीक्षा लेते हैं। धन्य है जो भगवानके समीप थायक व्रत धारण करते हैं। धन्य है जो भगवानकि देशना श्रवण करते हैं। अगर भगवान यहापर पधार जावे तो मैं भगवानके पाम दीक्षा ग्रहन करू एसा विचार रात्रीमें हुआथा।

सूर्यादय होते ही भगवान पधारणे कि वधाई आगई, राजा प्रजा और निपेढकुँमर भगवानका उन्दन करनेको गया भगवा

नने देशना दी निपेटकुंमर देशना मुनि मातापिता कि आज्ञा प्राप्त कर घडे ही आढम्बरन माथ मातापिताने यात्रचा पुत्र कुंमर कि माफीक मोहत्मज कर भगवाननं समिप दीक्षा दीराही। निपेटमुनि सामायिकादि इग्यारा अगका ज्ञानाभ्यास कर पुण भी वष हीभा पाल अन्तिम आलोचना पुर्वक इकधीस दिनका अन मनकर समाधि महीत नालकर मर्याथेसिद्ध नामका महावैमान तेतास सागरापमकि स्थितिमे देवपणे उत्पन्न हुया।

वहा देवताजाने आयुष्य पुणकर महाविदेहक्षेत्रम उत्तम जातिकुल विशुद्ध धम्म कुंमरपणे उत्पन्न होगी भोगोंसे अरुची हागा केवली प्ररूपित धम्म स्वीकारकर, दीक्षा ग्रहनकर घोर तप अर्या करेगा जिस कार्यके लिये वह दीक्षाके परिसह सहन करेगा उस कार्यकों साधन करलेगा अर्थात् कवलज्ञान प्राप्तकर अन्तिम श्वासोश्वास ओर इस 'ममारका त्यागकर मोक्ष पथार' जावेगा इति प्रथम अध्ययन समाप्त।

इसी माफीक (२) अनिघहकुंमर (३) यहकुंमर (४) अर्गति कुंमर (५) युक्तिकुंमर (६) दशरथकुंमर (७) ददरघकुंमर (८) महाधणुकुंमर (९) सप्तधणुकुंमर (१०) द्वाधणुकुंमर (११) नाम कुंमर (१२) शतधणुकुंमर।

यह तारहकुंमर तलदेवराजाकिरेवतीगणीके पुत्र हैं पचास पचास अत्तेवर त्याग थी नेमिनाथ प्रभु पासे दीक्षा ले अन्तिम मर्याथेसिद्ध वैमान गये थे वहासे चवके महाविदेह क्षेत्रमें निपेटकी माफीक सब मोक्ष जावेगा।

इति श्री विन्दिदसास्त्रका सचित्त सार समाप्तम्





इति श्री

शीघ्रबोध भाग १७ वा १८ वां

॥ समाप्तम् ॥

प्रस्तावना.



इस समय जैनशामन में प्राय ४५ आगम माने जाते हैं।
यथा—ग्यारह अंग, बारह उपांग, अथ पञ्चा, छे उद्, चार मूल,
नदी और अनुयोग इति एव ४५

यहां पर हम छे उद् सूत्रों के विषय में ही कुछ लिखना
चाहते हैं एतु निशिथ, महानिशिथ, और पचमस्य इन तीन सूत्रों
के मूल कर्ता पचम गणधर मौधर्मस्वामी हैं तथा बृहत्कल्प, व्यवहार
और दशाश्रुतम्बुध इन तीन सूत्रों के मूल कर्ता भद्रबाहु स्वामी हैं
इन सूत्रों पर नियुक्ति, भाष्य, ग्रहणभाष्य, चूर्णि, जयचूरी और
टिप्पणादि भिन्न २ जाचार्योंने रचे हैं

इन छे उद्में प्राय सात, माध्वीयोने आचार, गोचार, रत्न,
क्रिया और कायदादि मार्गोंका प्रतिपादन किया है इसके साथ २
द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, उत्सर्ग, जपवादादि मार्गोंका भी समयानुसार
निरूपण किया है और इन उद्ओं छेदोंके पठन पाठनका अधिकार
उद्दीको है जो गुरुगम्यता पूर्वक गभीर शैलीमें व्याख्यानमार्गको अच्छी
तरहसे जाने हुवे हैं और गीतार्थ महात्मा हैं और वेही अपने शिष्योंको
योग्यता पूर्वक अध्ययन व पठन पाठन कराते हैं ।

भगवान् वीरप्रभुका हृदय है कि जगतक आचाराग और एतु-
निशिथ सूत्रोंका जानकार न हो तबतक उन मुनिगणोंको आगेजान

होके बिहार करना, भिक्षाग्न उगना और व्याख्यान देना नहीं कल्पता

आचाराग, लुनिश्चित सूत्रमे अनभिन साधु यदि पूर्वोक्त कार्य करे तो उसे चतुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है और गच्छनायक आचार्यादि उक्त अज्ञात साधुओंको पूर्वोक्त कार्योंके विषय आना भी न ठे और यदि दे तो उन आना देनेवालोंकोभी चतुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है इसलिए सर्व साधु साध्वियोंको चाहिये कि वे योग्यता पूर्वक गुरुगमतासे इन छे छेदोंका अवश्य पठन पाठन करें, बिना इनके अध्ययन किये साधु मार्गका यथावत् पालन भी नहीं कर सकते कारण जनतक जिस वस्तुका यथावत् चान १ हो उसका पालन भी ठीक ठीक कैसे हो सक्ता है ?

अगर फोट क्षीयित्वाचारी खुद स्वच्छन्दतासे स्त्रिकार कर अपने साधु साध्वियोंको आचारक अन्धकारमें रख अपनी मन मानी प्रवृत्ति करना चाहे, उनको यह कहना आसान होगा कि साधु साध्वियोंको छेदसूत्र न पठाने चाहिये उनसे यह पूछा जाय कि छेदसूत्र है किम लिये ? अगर ऐसाही होता तो चौरासी आगमोंमेंसे पैंतालीश आगमका पठन पाठन न रखकर उन चालीसका ही रख देते तो क्या हरज की ?

अब समझ यह रहा कि छेद सूत्रोंमें कइ बातें ऐसी अपवाद है कि यह अल्पजनोंको नहीं पढ़ाई जाती (समाधान) मूल सूत्रोंमें तो ऐसी कोईभी अपवादकी बात नहीं है कि जो साधुओंको न पढ़ाई

जाय अगर भाष्य चूर्णि आदि विवरणोंमें द्रव्य क्षेत्र समयानुसार दुष्कालादिके कारणसे अपवाद मार्गना प्रतिपादन किया है वह "अ-मुक्त परिहार" उस विरुद्ध अवस्थाने लिये ही है, परन्तु सूत्रोंमें "सुत्यो रल्लु पदमो" ऐसाभी तो उल्लेख है कि प्रथम सूत्र और सूत्रका शब्दार्थ कहना इस जादेशमें अगर मूल सूत्र और सूत्रका शब्दार्थमें ही शिष्यको छेद सूत्रोंकी वाचना दे तो क्या हर्ज है? क्योंकि इतने-में मुनियोनों अपने मार्गना सामान्यतः बोध हो सकता है

इसमें ग्रन्थोंमें छेदसूत्रोंके परिमाणकी आवश्यकता होनेपर मूल सूत्रोंका पाठ लिख उसका शब्दार्थ कर देते हैं इस तरह अगर सम्पूर्ण छेद सूत्रोंकी भाषा कर दी जाय तो मेरे ख्यालसे कोई प्रकारकी हानी नहीं है, बल्कि अनानके अन्धेरेमें गिरे हुवे महात्माओंके लिये सूर्यके समान प्रकाश होगा

दूसरा सवाल यह रहा कि छेदसूत्रोंके पठन पाठनके अधिकारी केवल मुनिराज ही होते हैं और छपवाके प्रसिद्ध करा दिये जानेपर सर्व साधारण (श्रावक) लोकभी उनके पढ़नेके अधिकारी हो जावेंगे इस बातके लिये फिर करनेकी आवश्यकता नहीं है यह कायदा जबकि सूत्रोंकी मालकी अपने पास थी याने सूत्र अपनेही रखनेमें रखते हुवे थे, तब तबचल सजती थी, परन्तु आज वे सूत्र हाथोहाथ दिसाई देते हैं तो फिर इस बातकी दाक्षिण्यता क्यों? अन्य लोक भी जैन-शास्त्रोंको पढ़ते हैं तो फिर श्रावक लोगोंने ही क्या नुकसान किया है कि उनको सूत्रोंकी भाषा भी पढ़नेका अधिकार नहीं

सूत्रोम ऐसा भी पाठ दिखाई देता है कि भगवान् वीरप्रभुने वदुतमे साधु, साध्वि, श्रावक, श्राविश, देव और देवागनाओंकी परिणामे इन सूत्रोंका व्याख्यान किया है अगर ऐसा है तो फिर हमारे पढ़ेंगे यह आति ही क्यों होनी चाहिये ?

उद्दसूत्रोंमें जैसे विशेषतासे साधुओंके आचारका प्रतिपादन है, वैसे सामान्यतासे श्रावकोंके आचारका भी व्याख्यान है श्रावकोंके सम्यक्त्व प्रतिपादनका अधिकार जैसा छेदसूत्रोंमें है, वसा सायब ही हमारे सूत्रोंमें होगा और श्रावकोंकी ग्यारह प्रतिमाका सविस्तार तथा गुरुकी तेतीस आज्ञातना टालना और निम्नी आचारको पदवीका देना वह योग्य न होनेपर पट्टिका छोड़ाना तथा आलोचना करवाना इत्यादि आचार छेदसूत्रोंमें है इसलिये श्रावकभी सुननेके अधिकारी हो सकने हैं

अब तीसरा सवाल यह रहा की श्रावकलोक मूत्र मूत्र वा अनेक अधिकारी है या नहीं ? इस विषयमें हम इतना ही कहेंगे कि हम इन उद्दसूत्रोंकी केवल भाषाही लिखना चाहते हैं और भाषाका अधिकारी हरएक मनुष्य हो सक्ता है

प्रसंगत इन उद्दसूत्रोंका नितान्त विभाग भित्त २^१ पुस्तकों द्वारा प्रकाशित हो चुका है जैसे मेनप्रश्न, हीरप्रश्न, प्रश्नोत्तरमाला, प्रश्नोत्तरचिन्तामणी, विशेषशतक, गणधरसार्द्धशतक और प्रश्नोत्तरसार्द्धशतकादि ग्रन्थोंमें आवश्यकता होनेपर इन छेदसूत्रोंके कतिपय मूलपाठोंको उद्धृत कर उनका अर्थ और विस्तारार्थमें उल्लेख किया है-

इसमें जैन समाजको बड़ाही लाभ हुआ और यह प्रवृत्ति भव्यात्माओं के मोक्षके लिये ही की गई थी

इस लिये अब क्रमशः सम्पूर्ण सूत्रोंकी भाषाद्वारा प्रामाणित करवा लिया जाय तो विशेष लाभ होगा, इसी हेतुमें इन सूत्रोंकी भाषा की जाती है इसको लिखते समय हमको यह भी ग्राहिण्यता न रखनी चाहिये कि सूत्रोंमें बड़े ही उच्च मोटीमें मूर्तिमार्गको उतलाया है और इस समय हममें ऐसा कठिन मार्ग पल नहीं सकता, इसलिये इन सूत्रोंकी भाषा प्रामाणित न करे जान हम नितना पालते हैं, भविष्यमें मल सहननवालोंमें इतनाभी पलना कठिन होगा, तथापि सूत्र तो यही रहेंगे शास्त्रकारोंने यह भी फरमाया है कि “ज सक्कत करह ज न सक्कत सन्ह, सन्ह माणो जीवो पावई सासयठाण्ण” भावार्थ—जितना बने उतना करना चाहिये, अगर जो न बन सके उसके लिये श्रद्धा रखनी चाहिये, श्रद्धा रखनेहीसे जीवोंको शाश्वत स्थानकी प्राप्ति हो सकती है

उत्पष्ट मुनिमार्गका जो प्रतिपादन आचाराग, मूलवृत्ताग, प्रशव्याकरण, ओषनिर्युक्ति, पिंडनिर्युक्ति आदि सूत्रोंके छपनेमें जाहिर हो चुका है, तो फिर दूसरे सूत्रोंका तो कहनाही क्या?

कितनीक तो गूढ़ी प्रातियें पड जाती है अगर उसे दीर्घ दृष्टी से देखा जाय तो सिवाय नुकसानके दूसरा मोट भी लाभ नहीं है

हम हमारे पाठन वर्गसे अनुरोध करते हैं कि आप एक दूफे

इन शीघ्रबोधकभागोंसे क्रमशः आचोपान्त पढ़ीये इस पढ़नेमें जो पको ज्ञात हो जायगा कि सूत्रोंमें ऐसा जोनसा विषय है कि जो जन समानक पढ़ने योग्य नहीं है? अर्थात् वीतरागकी वाणी भयभीतोंका उद्धार करनेके लिये एक असाधारण कारण है, इसके आराधन करने वीमे भयभीतोंको अक्षय सुखकी प्राप्ति हुई है—होती है—और होगी

अन्तमें पाठकोंसे मेरा यह निवेदन है कि छद्मस्थोसे मूल होनेका स्वाभाविक नियम है निम्नपर मेरे तरीके अल्पनसे मूल हो इसमें आश्चर्य ही क्या है? परन्तु सज्जन जन मेरी मूलसी अगर सूचना देगे तो मैं उनका उपकार मान कर उमे स्वीकार करूँगा और द्वितीया वृत्तिमें सुधारा वधारा कर दिया जायगा

इत्यलम्—

लेखक



। श्रीरत्नप्रभाकर ज्ञान पुष्पमाला पुष्प न ६२ ।

। श्रीकृष्णसूरीश्वर सद्गुरुभ्यो नमः ।

श्रीब्रबोध ज्ञाग १ एवां.



श्रीवृहत्कल्पसूत्रका संक्षिप्त सार



(उद्देशा ६ छे)

प्रथम १ उद्देशा—इम उद्देशामें मुख्य माधु साध्वीयोंका आचारकल्प है । जो कर्मरुधके हेतु और समयको माध करनेवाले पदार्थ है, उसको निषेध करते हुवे शास्त्रकारोंने “ नो कल्पइ ” अथात् नहि कल्पते, और समयके जो माधक पदार्थ है, उसको “ कल्पट ” अथात् यह कल्पते है । यह दोनो प्रकार “ नो कल्पइ ” “ कल्पट ” इमी उद्देशामें कहेंगे । यथाः—

(१) नहि कल्पै—साधु साध्वीयोंको कच्चा तालवृक्षका फल ग्रहण करना न कल्प । भागार्थ—यहा मूलसूत्रमें तालवृक्षका फल कहा है यह किमी देश विशेषका है । क्यों कि भिन्न भिन्न देशमें भिन्न २ मापा होती है । एक देशमें एक वृक्षका अमरु नाम है, तो दुसरे देशमें उसी वृक्षका अन्यही

नाम प्रचलित है । यहा पर तालवृक्षके फलकी आकृति लची और गोल समझनी चाहिये । प्रचलित भाषामें जैमी केलेकी आकृति होती है । साधु साध्वीयोंको ऐसा कच्चा फल लेना नहि कल्पे ।

(२) कल्पै—साधु साध्वीयोंको कच्चा तालवृक्षका फल, जो उस फलकों छेदन भेदन करके निर्जल कर दिया है, अथात् वह अचित्त हो गया हो तो लेना कल्पे ।

(३) कल्पै—साधुओंको पका तालवृक्षका फल, चाहे वह छेदन भेदन कीया हुआ हो, चाहे छेदन भेदन न भी कीया हो, कारण—वह पका हुआ फल अचित्त होता है ।

(४) नहि कल्पै—साध्वीयोंको पका तालवृक्षका फल, जो उमकों छेदन भेदन नहि कीया हो, कारण—उस पूर्ण फलकी आकृति लची और गोल होती है ।

(५) कल्पै—साध्वीयोंको पका तालवृक्षका फल, जिसको छेदन भेदन कीया हो, वह भी विधियुक्त छेदन भेदन कीया हुआ हो, अथात् उस फल ऊमा नही चीरता हुआ, बीचमेंसे टुकड़े किये गये हो, ऐसा फल लेना कल्पै ।

(६) कल्पै—साधुओंको निम्न लिखित १६ स्थानों, शहरपना (कोट) सयुक्त और शहरके बहार वस्ती न हो, अर्थात् उस शहरका विभाग अलग नहीं हुवे ऐसा ग्रामादिमें साधुओंको शीतोष्णकालमें एक मास रहना कल्पे ।

१६ स्थानोंके नाम —

- (१) ग्राम—जहा रहनवाले लोगोंकी सख्या स्वल्प है, खान, पान, भापा हलकी है और जहापर ठहरनेसें बुद्धिमानोंकी बुद्धि मलिन हो जाती है, वो ग्राम कहा जाता है।
- (२) आकर—जहापर सोना, चादी और रत्नोंकी रयाणों हो।
- (३) नगर—शहरपना (कोट) से सयुक्त होके गोलाकार हो, वो नगर कहा जाता है और लम्बी जादा, चौड़ी कम हो वो नगरी कही जाती है।
- (४) रेड—धूलकोट तथा राइ सयुक्त हो।
- (५) करयट—जहापर कुत्सित मनुष्यों वसते हैं।
- (६) पट्टण—जहापर व्यापारी लोगोंका विशेष निवास हो।
(१) गीनतीसें नालीयरादि (२) तोलसें गुल शर्करादि, (३) मापसे कपडा कीनारी इत्यादि, (४) परीचासें रत्नादि-ऐसा चार प्रकारके पदार्थ मिले और विक्रयमी हो मके, उसे पट्टण कहते हैं।
- (७) मडप—जिसके बहार अढाइ अढाइ कोशपर ग्राम न हो।
- (८) द्रोणीमुख—जहापर जल ओर स्थलका दोनोंरस्ता मौजुद हो।
- (९) आश्रम—जहापर तापसोंका बहुत आश्रम हो।
- (१०) सन्निवेश—बड़े नगरके पासमें बस्ती हो।

- (११) निगम—जहापर प्रायः वैश्य लोगोंकी अधिक वस्ती हो ।
- (१२) राजधानी—जहापर खाम करके राजाकी राजधानी हो ।
- (१३) सबहन—जहापर प्रायः किरसानादिककी वस्ती हो ।
- (१४) घोपासि—जहापर प्रायः घोपी लोगों वस्ते हो ।
- (१५) एशीया—जहापर आये गये मुसाफिर ठहरते हैं ।
- (१६) पुडभोय—जहा खेतीवाडीके लीये अन्य ग्रामोंसे लोगों आकरके काम करते हो ।

भावार्थ—एक माससे अधिक रहनेसे गृहस्थ लोगोंका अधिक परिचय होता है और जिससे राग द्वेषकी वृद्धि होती है। सुखशीलीयापना बढ जाता है । वास्ते सन्दुरस्तीके कारन बिना मुनिकों शीतोष्ण कालमें एक माससे अधिक नहि ठहरना ।

(७) पूर्वोक्त १६ गढ, कोट शहरपनासे सयुक्त हो । कोटके बहार पुरा आदि अन्य वस्ती हो, ऐसे स्थानमें साधुको शीतोष्ण कालमें दोय मास रहेना कल्प, एक मास कोटकी अंदर और एक मास कोटकी बहार, परतु एक मास अन्दर रहे वहा भिच्चा अन्दर करे, और उहार रहे तब भिच्चा बहारकी करे । अगर अन्दर एक मास रहेते हुये एक रोजही बहारकी भिच्चा करी हो, तो अन्दर और बहार दोनो स्थानमें एकही मास रहेना कल्पनीय है । अगर अन्दर एक मास रहके बहार

रहते हुये अन्दरकी भिचा लेंगे, तो कल्पातिक्रम दोष लगता है। यास्ते जहा रहे वहाकी भिचा करनेकीही आज्ञा है।

(८) पूर्वोक्त १६ स्थानोंकी बहार बस्ती न हो, तो शीतोष्णकालमें साधियोंको दो मास रहेना कल्पै, भागना पूर्ववत्।

(९) पूर्वोक्त १६ स्थान कोट सयुक्त हो, बहार पुरादि बस्ती हो, तो शीतोष्ण कालमें साधियोंको चार मास रहेना कल्पै। दो मास कोटकी अन्दर और दो मास कोटकी बहार। अन्दर रहे बहातक भिचा अन्दर करे और बहार रहे बहातक भिचा बहार करे।

(१०) पूर्वोक्त ग्रामादिके एक कोट, एक गढ़, एकही दरवाजा, एकही निकास, प्रवेशका रस्ता हो, ऐसा ग्रामादिमें साधु, साधियोंको एकत्र रहेना उचित नहि। कारण-दिन और रात्रिमें स्थंडिलादिकके लीये ग्रामसे बहार जाना हो, तो एकही दरवाजेसे आने जानेमें परिचय बढ़ता है, इस लीये लोकापवाद और शासन लघुतादि दोषोंका ममय है।

(११) पूर्वोक्त ग्रामादिके बहुतमें दरवाजे हो, निकास, प्रवेशके बहुतसे रस्ते हो, बहापर साधु, साध्वी, एक ग्राममें निवास कर सकते हैं। कारण-उन्हींको आने जानेको अलग अलग रस्ता मिल सकता है।

(१२) बाजारकी अन्दर, व्यापारीयोंकी दुकानकी

अन्दर, चोरा (हथाड़ीकी बैठक), चौकके मकानमें और जहा-
पर दोय तीन न्यार तथा बहुतसे रस्ते एकत्र होते हो, ऐसे
मकानमें साध्वीयोंको उतरना और स्वल्प या बहुत काल ठह-
रना उचित नहीं है । कारण ऐसे स्थानोंमें रहनेसे ब्रह्मचर्यकी
गुप्ति (रक्षा) रहनी मुश्कील है ।

भावार्थ—जहापर बहुतसे लोगोंका गमनागमन हो
रहा है, वहापर साध्वीयोंको ठहरना उचित नहीं है ।

(११) पूर्वोक्त स्थानोंमें साधुवोंको रहना कल्पे ।

(१४) जिस मकानके दरवाजोंके किवाड न हो अर्थात्
रात दिन खुला ग्हेते हो, ऐसे मकानमें साध्वीयोंको शीलरक्षाके
लीये रहेना कल्पे नहीं ।

(१५) उक्त मकानमें साधुवोंको रहेना कल्पे ।

(१६) साध्वीयों जिस मकानमें उतरो हो उसी मकानका
किवाड अगर खुला रखना चाहती हो तो एक बख्क का छेडा
अन्दर बाधे और दुसरा छेडा बहार बाधे । कारण—अगर कोई
पुरुष कारणवशात् साध्वीयोंके मकानमें आना चाहता हो,
तोभी एकदम वो नहीं आसकता ।

भावार्थ—यह छत्र साध्वीयोंके शीलकी रक्षाके लीये
फरमाया है ।

(१७) घडाके मुख माफिक सकुचित मुखवाला मात्राका

भाजन अन्दरसे लीपा हुआ, साधुओंको रखना कल्पे नहीं ।
कारण-पिसाव करते बखत चित्तवृत्ति मलिन न हो ।

(१८) उक्त भाजन साधुओंको रखना कल्पे ।

(१९) उपरसे सुपेतादिसे लिप्त किया हुआ नालीका
आकार समान मात्राका भाजन साधुओंको रखना कल्पे नहीं ।
भावना पूर्वक ।

(२०) उक्त मात्राका भाजन साधुओंको कल्पे ।

(२१) साधु साधुओंको बखकी चलमीली अर्थात्
आहारादि करते समय मुनिको वो गुप्त स्थानमें करना चाहिये ।
अगर ऐसा मकान न मिले तो एक बखका पडदा बाधके
आहार करना चाहिये । उस बखको शाखकारोंने चलमील
कहा है ।

(२२) साधु, साधुओंको पाणीके स्थान जैसे नदी,
तलाव, कुवा, कुण्ड, पाणीकी पोवाआदि स्थानपर बैठके
नीचे लिखे हुये कार्य नहीं करना । कारण-इसीसे लोगोंको
शका उत्पन्न होती है कि साधु वहापर कचा पानीका
उपयोग करते होंगे ? इत्यादि ।

(१) मलमूत्र (टटी पेशाव) वहापर करना, (२)
बैठना, (३) उमा रहेना, (४) सोना, (५) निद्रा लेना, (६)
विशेष निद्रा लेना, (७) अशनादि च्यार प्रकारके आहार
करना, (११) स्वाध्याय करना, (१२) ध्यान करना, (१३)

कायोत्सर्ग करना, (१४) आसन लगाना, (१५) धर्मदेशना देना, (१६) वाचना देना, (१७) वाचना लेना—यह १७ गोल जलाशय पर न करनेके लीये हैं ।

(२३) साधु साध्वीयोंको सचित्र—अर्थात् नाना प्रकारके चित्रोंसे चित्रा हुआ मकानमें रहेना कल्पे नहीं ।

भारार्थ—स्वाध्याय ध्यानमें यह चित्र विघ्नभूत है, चित्तवृत्तिको मलिन करनेका कारण है ।

(२४) साधु साध्वीयोंको चित्र रहित मकानमें रहेना कल्पे । जहापर रहनेसे स्वाध्याय ध्यान समाधिपूर्वक हो सके ।

(२५) साध्वीयोंको गृहस्थोंकी निश्रा बिना नहीं रहेना, अर्थात् जहा आसपास गृहस्थोंका घर न हो ऐसे एकांतके मकानमें साध्वीयोंको नहीं रहेना चाहिये । कारण—अगर केह ऐसेभी ग्रामादि होवे कि जहापर अनेक प्रकारके लोग बसते हैं, अगर रात दिनमें कारण हो, तो किसके पास जाये । वास्ते आसपास गृहस्थोंका घर होवे, ऐसे मकाममें साध्वीयोंको रहना चाहिये ।

(२६) साधुओंको चाहे एकान्त हो, चाहे आसपास गृहस्थोंका घर हो, कैसाही मकान हो तो साधु ठहर सके । कारण—साधु जगलमेंभी रह सकता, तो ग्रामादिकका तो कहना ही क्या ? पुरुषकी प्रधानता है ।

(२७) साधु साध्वीयोंको जहापर गृहस्थोंका घन-द्रव्य,

भूषणादि कीमती माला होने, ऐमा उपाश्रय-मकानमें रहेना कल्पे नहीं । कारण अगर कोड तस्करादि चोरी कर जाय तो साधु रहेनेके कारणसे अन्य साधुओंकी भी अप्रतीति हो जाती है, इसलिये दूसरी दफे वस्ती (स्थान) मुश्किलीसे मिलता है ।

(२८) साधु साध्वीयोंको जो गृहस्थोंका धन, धान्यादिसे रहित मकान हो, उहांपर रहेना कल्पै ।

(२९) साधुओंको जो स्त्री सहित मकान होने, वहा नहीं ठहरना चाहिये । (३०) अगर पुरुष सहित होने तो कल्पै भी ।

(३१) साध्वीयोंको पुरुष संयुक्त मकानमें नहीं रहेना । (३२) अगर ऐसाही हो तो स्त्रीसंयुक्त मकानमें ठहर सके ।

भावार्थ—प्रथम तो साधु साध्वीयोंको जहा गृहस्थ रहते हो, ऐमा मकानमें नहीं रहेना चाहिये । कारण—गृहस्थसे परिचयकी बिलकुल मना है । अगर दूसरे मकानके अभावसे ठहरना हो तो उक्त चार सूत्रके अमलसे ठहर सके ।

(३३) साधुओंको जो पापके मकानमें ओरता रहेती हो ऐमा मकानमें भी ठहरना नहीं चाहिये । कारण—रात्रिके समय पेमात्र निगेरे करनेको अति जाते वरत लोगोंकी अप्रतीतिका कारण होता है ।

(३४) साध्वीयों उक्त मकानमें ठहर सकती है ।

(३५) साधुओंको जो गृहस्थोंके घर या मकानके घीचमें हो के आने जानेका रस्ता हो, ऐसा मकानमें नहीं ठहरना

चाहिये । कारन—गृहस्थोंकी बहिन, बेटी, बहुवोंका हरदम वहां रहेना होता है । वह किस अवस्थामें बैठ रहेती है, और महिला परिचय होता है ।

(३६) साध्वीयोंको ऐसा मकान हो, तो भी ठहरना कल्पे ।

(३७) दो साधुवोंको आपसमें कषाय (क्रोधादि) हो गया होवे, तो प्रथम लघु (शिष्यादि) को वृद्ध (गुर्वादि) के पास जाके अपने अपराधकी क्षमा याचनी चाहिये । अगर लघु शिष्य न जाये तो वृद्ध गुर्वादिको जाके क्षमा देनी लेनी चाहिये । वृद्ध जावे उस समय लघु साधु उस वृद्ध महात्माका आदर सत्कार करे, चाहे न भी करे, उठके खड़ा होवे चाहे न भी होवे; उन्दन नमस्कार करे चाहे न भी करे, साथमें भोजन करे, चाहे न भी करे, साथमें रहे, चाहे न भी रहे, तोभी वृद्धोंको जाके अपने निर्मल अन्त करणसे खमायना चाहिये ।

प्रश्न—स्थान स्थान वृद्धोंका विनय करना शास्त्रकारोंने बतलाया है, तो यहांपर वृद्ध मुनि सामने जाके खमावे इसका क्या कारन है ?

उत्तर—सयमकासार यह है कि क्रोधादिको उपशमाना, यहांपर बड़े छोटका कारन नहीं है । जो उपशमावेगा—खमत-खामणा करेगा, उसकी आराधना होगी, और जो वैर विरोध रखेगा अर्थात् नहीं खमावेगा, उसकी आराधना नहीं होगी । वास्ते सर्व जीवोंसे मैत्रीभाज रखना यही सयमका सार है ।

(३८) साधु साध्वीयोंको चतुर्मासमें विहार करना नहीं कल्पे । कारण-चातुर्मासमें जीवादिककी उत्पत्ति अधिक होती है ।

(३९) शीतोष्णकालमें आठ मास विहार करना कल्पे ।

(४०) साधु साध्वीयोंको जो दोय राजावोंका विरुद्ध पक्ष चलता हो, अर्थात् दोय राजाका आपसमें युद्ध होता हो, या युद्धकी तैयारी होती हो, ऐसे क्षेत्रमें बार बार गमनागमन करना नहीं कल्पे । कारण-एक पक्षवालोंको शका होवे कि यह साधु बार बार आते जाते हैं, तो क्या हमारे यहाँके समाचार परपक्षवालोंको कहते होंगे ? इत्यादि । अगर कोई साधु साध्वी दोय राजावोंके विरुद्ध होनेपर बार बार गमनागमन करेगा, उसीको तीर्थत्रेकी और उस राजावोंकी आज्ञाका भंग करनेका पाप लगेगा, जिससे गुरु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त आवेगा ।

(४१) साधु गृहस्थोंके वहा गोचरी जाते हैं । अगर वहा कोई गृहस्थ वस्त्र, पात्र, कमल रजोहरनकी आमंत्रणा करे, तो कहना कि यह वस्तु हम लेते हैं, परन्तु हमारे आचार्यादि वृद्ध मुनियोंके पास ले जाते हैं । अगर खप होगा तो खप लेंगे खप न होगा तो तुमसे वापिस ला देंगे । कारण-आहारादि वस्तु लेनेके बाद वापिस नहीं दी जाती है, परन्तु वस्त्र पात्रादि वस्तु उस रोजके लिये करार कर लाया हो, तो खप न होनेपर वापिस भी दे सकते हैं । वस्त्रादि लाके आचा-

यदि घृद्धोको सुप्रत कर देता, फिर वह आज्ञा देनेपर वह वस्त्रादि काममें ले सकते हैं। भावार्थ—यहां स्वच्छदताका निषेध, और घृद्ध जनोका विनय बहुमान होता है।

(४२) इसी माफिक विहारभूमि जाते हुयेको, स्वाध्याय करनेके अन्य स्थानमें जाते हुयेको आमंत्रणा करे तो।

(४३) एव साध्वी गोचरी जाती हो।

(४४) एव माफ्री विहारभूमि जातीको आमंत्रणा करे, परन्तु यहां साध्वीयां अपनी प्रवर्तिनी—गुरुणीके पास लाये और उसीकी आज्ञामें प्रवर्ते।

नोट.—इस दोषघटनमें विहारभूमिका लिखा है, तो विहार शब्दका अर्थ कोई स्थानपर जिनमंदिरका भी किया है। साधु स्वाध्याय तो मकानमें ही करते हैं, परन्तु जिनमंदिर दर्शनके लीये प्रतिदिन जाना पड़ता है। वास्ते यहांपर जिन मंदिर ही जाना अर्थ ठीक समझ होता है।

(४५) साधु साध्वीयोंको रात्रिममय और पैकालिक (प्रतिक्रमण समय) अशनादि चार आहार ग्रहण करना नहीं कल्पै। कारण—रात्रि—भोजनादि कार्य गृहस्थोंके लीये भी महापाप मतलाया है, तो साधुओंका तो कइना ही क्या?। रात्रिमें जीवोकी जतना नहीं हो सकती। अगर साधुओंको निर्वाह होने योग्य ठहरनेको मकान नहीं मिले उस हालतमें रुपड़े आदिके व्यापारी लोग दुकान मड़ते हो, उसको देनेमें दृष्टि

प्रतिलेखन करी हो, तो वह दुकानों रात्रिमें ग्रहन कर सुनेके काममें ले सकते हैं ।

(४६) साधु साध्वीयोको रात्रिसमय और वैकालिक समय वस्त्र, पात्र, कम्बल, रजोहरन लेना नहीं कल्पे । परन्तु कोइ निशाचर साधुवोके वस्त्रादि चोरके ले गया हो, उसको धोया हो, रंगा हो, साफ गडीबघ करा हो, धूप दीया हो, फिर उसके दिलमें यह निचार हो कि 'साधुवोका वस्त्रादि नहीं रखना चाहिये' ऐसा इरादासे जह दाक्षिण्यका मारा दिनको नहीं आता हुवा रात्रिमें आके कपडा वापिस देवे तो मुनि रात्रि में भी ले सकता है । फिर वह वस्त्रादि किसी भी काममें क्यों न लो, परन्तु असयममें नहीं जाने देना । वास्ते यह कारनसे वो रात्रिमें भी ले सके ।

(४७) साधु साध्वीको रात्रिमें निहार करना नहीं कल्पे । कारन-रात्रिमें इर्यासमितिका भग होता है, जीयादिकी रचा नहीं होती है ।

(४८) साधु साध्वीको किसी ग्रामादिमें जिमणवार मुनके-जानके उस गामकी तर्फ निहार करना नहीं कल्पे । इससे लोलुपताकी वृद्धि, लोकापनाद और लघुता होती है ।

(४९) साधुवोको रात्रि समय और वैकालिक समय-पर स्थण्डिल या मात्रा करनेको जाना हो तो एकेलेको जाना नहीं कल्पे । कारन-राजादि कोइ साधुको दखल करे, या

एकेला साधु कितना बख्त और कहापर जाते हैं इत्यादि ।
 रास्ते चाहिये कि आपसहित दो या तीन साधुओंको साथ
 जाना । कारन—दूसरेकी लजासे भी दोष लगाते हुये रुक जाते
 हैं । तथा एक साधुको राजादिके मनुष्य दखल करता हो तो
 दूसरा साधु स्थानपर आके गुर्जादिको इतन्ला कर सकता है ।

(५०) इसी भाषिक साध्वीया दोष हो तो भी नहीं
 कल्पे, परन्तु आप सहित तीन चार साध्वीयोको साथमें रात्रि
 या वैकालमें जाना चाहिये । इसीसे अपना आचार (तत्त्वचर्य)
 व्रत पालन हो सकता है ।

(५१) साधुसाध्वीयोंको पूर्व दिशामें अगदेश चपा-
 नगरी, तथा राजगृह नगर, दक्षिण दिशामें कोसम्भी नगरी,
 पश्चिम दिशामें स्थूणा नगरी, और उत्तर दिशामें कुणाला
 नगरी, चार दिशामें इस मर्यादा पूरक विहार करना कल्पै ।
 कारन—यहापर प्राय आर्य मनुष्योंका निवास है, इन्हके सिना
 अनार्य लोगोका रहेना है, वहा जानेसे ज्ञानादि उत्तम गुणोंका
 घात होता है, अर्थात् जहापर जानेसे ज्ञानादिकी हानि होती हो,
 वहा जानेके लीये मना है । अगर उपकारका कारन हो, ज्ञाना-
 दि गुणकी वृद्धि हो, आप परीषद सहन करनेमें मजबूत हो,
 विद्याका चमत्कार हो, अन्य भिव्यात्वी जीवोंको बोध देनेमें
 समर्थ हो, शासनकी प्रमाणना होती हो, अपना चरित्रमें दोष
 न लगता हो, वहापर विहार करना योग्य है ।

। इति श्री बृहन्कल्पसूत्रम् प्रथम उद्देशाका मक्षित मार ।

दूसरा उद्देशा.



(१) साधु साध्वी जिम मकानमें ठहरना चाहते हैं. उस मकानमें शालि आदि धान ड़घर उधर पसरा हुआ हो, जहापर पान रखनेका स्थान न हो, वहापर हाथकी रेखा सुभे इतना यखत भी नहीं ठरना चाहिये। अगर वह धानका एक तर्फ ढग किया हो, उसपर राख डालके मुद्रित किया गया हो, कपडेमे ढका हुआ हो, तो साधुको एक मास और साध्वीको दोय मास ठहरना कल्पै, परन्तु चातुर्मास ठहरना नहीं कल्पै। अगर उस धानको किसी कोठेमें डाला हो, ताला कुचीसे जानता किया हो, तो चातुर्मास रहेना भी कल्पै। भाग्यार्थ-गृह-स्थका वानादि अगर कोई चोर ले जाता हो तो भी उसको रोक-टोक करना साधुको कल्पे नहीं। गृहस्थको नुकशान हो नेसे साधुकी अप्रतीति हो और दुसरी दफे मकान मिलना दुष्कर होता है।

प्रश्न—जो ऐसा हो तो साधु एक मास कैमे ठहर सकता है ?।

उत्तर—आचारागसूत्रम ऐसे मकानमें ठहरनेकी विल

१ गृहस्थ लोग अपने उपभोगके लीये बनाया हुआ मकानम गृहस्थोकी आत्मा लेके साधु ठहर सकता है। उस मकानको शास्त्र-कारोंने उपासरा (उपाश्रय) कहा है।

कुल मना की गड़ है, परन्तु यहापर अपवाद है कि दूसरा मकान न मिलता हो या दुसरे गाम जानेमें असमर्थ हो तो ऐसे अपवादका सेवन करके मुनि अपना समयका निर्वाह कर सकता है ।

(२) साधु साध्वीयों जिस मकानमें ठहरना चाहते हैं, उस मकानमें मुरा जातिकी मदिरा, सोबीर जातिकी मदिराके पात्र (बरतन) पड़ा हो, शीतल पाणी, उष्ण पाणीके घड़े पड़े हो, रात्रि भर अग्नि प्रज्वलित हो, सर्व रात्रि दीपक जलते हो, ऐसा मकानमें हाथकी रेखा सुभे वहा तक भी साधु साध्वीयोंको नहीं ठहरना चाहिये । अपने ठहरनेके लिये दूसरा मकानकी याचना करनी । अगर याचना करनेपर भी दूसरा मकान न मिले और ग्रामान्तर विहार करनेमें असमर्थ हो, तो उक्त मकानमें एक रात्रि या दोय रात्रि अपवाद सेवन करके ठहर सकते हैं, अधिक नहीं । अगर एक दो रात्रिमें अधिक रहै तो उस साधु साध्वीको जितने दिन रहै, उतने दिनका छेद तथा तपका प्रायश्चित्त होता है । ३ । ४ । ५ ।

(६) साधु साध्वीयों जिस मकानमें ठहरना चाहे उस मकानमें लड्डु, शीरा, दुध, दही, घृत, तेल, सकुली, तील, पापड़ी, गुलधाणी, सीरखण आदि खुले पड़े हो ऐसा मकानमें हाथकी रेखा सुभे वहातक भी ठहरना नहीं कल्पे । भा-

१—दीक्षात्री अन्दर छेद कर देना अर्थात् इतने दिनोंकी दीक्षा कम समजी जाती है ।

जना पूर्ववत्। अगर दूसरा मकानकी अप्राप्ति होवे, तो वहा लड्डू आदि एक तर्फ रखा हुआ हो, राशि आदि करी हुई हो तो शीतोष्ण कालमें साधुको एक मास और साध्वियोंको दोय मास रहेना कल्पे। अगर कोठेमें रखके तालेसे बंध करके पका उदोऽस्त किया हो वहापर चातुर्मास करना भी कल्पे इसमें भी लाभालाभका कारन और लोगोंकी भावनाका विचार विचक्षण मुनियोंको पेस्तर करना चाहिये।

(७) साध्वियोंको (१) पन्थी लोग उतरते हो ऐसा मुताफिरखानेमें, (२) वशादिकी झाडीमें, (३) वृक्षके नीचे, और (४) चोतर्फ खुला हो ऐसा मकानमें रहेना नहीं कल्पे। कारन—उक्त स्थान पर शीलादिकी रक्षा कभी कभी मुश्कीलसे होती है।

(८) उक्त जगहों स्थान पर साधुओंको रहेना कल्पे।

(९) मकानके दाता शय्यातर कहा जाता। ऐसा शय्यातरके वहाका आहार पाणी साधु साध्वियोंको लेना नहीं कल्पे। अगर शय्यातरके वहा भोजनादि तैयार हुआ है उन्होने अपने वहासे किसी दुमरे सज्जनको देनेके लिये भेजा नहीं है और सज्जनने लिया भी नहीं है, केवल शय्यातर एक पात्रमें रख भेजनेका विचार किया है, वह भोजन साधु साध्वियोंको लेना नहीं कल्पे। कारन—वह अमी तरु शय्यातरका ही है।

(१०) उक्त आहार शय्यातरने अपने वहासे सज्जनके

वहा भेन दीया, परन्तु अभी तक सज्जनने पूर्ण तोर पर स्वीकार नहीं कीया हो, जैसे कि-भोजन आनेपर कहते है कि यहा पर रख दो, हमारे कुटुम्बवालोंकी मरजी होगी तो रख लेंगे, नहीं तो चापिस भेन देंगे ऐमा भोजन भी साधु साध्वियोंको लेना नहीं कल्पै ।

(११) उक्त भोजन सज्जनने रख लिया हो, उसके अन्दरमे नीकला हो, और प्रवेश किया हो तो वह भोजन साधु साध्वियोंको ग्रहण करना कल्पै ।

(१२) उक्त भोजनमें सज्जनने हानि वृद्धि न करी हो, परन्तु साधु साध्वियोंने अपनी आम्नायमे प्रेरणा करके उसमें न्यूनाधिक करवायके वह भोजन स्वयं ग्रहण करे तो उसको ठोय आज्ञाका अतिक्रम दोष लगता है, एक गृहस्थकी और दूसरी भगवान्की आज्ञा निरुद्ध दोष लगै । जिसका गुह चतुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है ।

(१३) जो दोय, तीन, चार या बहुत लोग एकत्र होके भोजन बनयाया है, जिस्में शग्पातर भी सामेल है, जैसे सर्व गामकी पन्नायत और चन्दाकर भोजन बनयते है, उसमें शग्पातर भी सामेल होता है, वह भोजन साधु साध्वियोंको ग्रहण करना नहीं कल्पै । अगर शग्पातर सामेल न हो तथा उसका विभाग अलग कर दीया हो, तो लेना कल्पै ।

(१४) जो कोई शय्यातरके सज्जनने अपने वहाँसे सु-
खड़ी प्रभुस शय्यातरके वहाँ भेजी है, उसको शय्यातरने अपनी
करके रख ली हो, तो साधु साध्वियोंको लेना नहीं कल्प ।

(१५) अगर शय्यातरने नहीं रखी हो तो कल्प ।

(१६) शय्यातरने अपने वहाँसे सज्जनके (स्वजनके)
वहाँ भेजी हो वह नहीं रखी हो तो साधुको लेना नहीं कल्प ।

(१७) अगर रख ली हो तो साधुको कल्प ।

(१८) शय्यातरके मिजवान कलाचार्य विगेरे आये
हो उसको रमोइ उनयानेको शय्यातरने सामान दीया है, और
कहा कि—‘ आप रमोइ बनाओ, आपको जरूरत हो वह आप
काममें लेना, शेष उचा हुआ भोजन हमारे सुप्रत कर देना ’ ।
उम भोजनमें अगर जो शय्यातर देवे, तो साधुओंको लेना
नहीं कल्प ।

(१९) मिजवान देवे तो नहीं कल्प ।

(२०) सामान देते वखत कहा होने कि ‘ हमें तो
आपको दे दिया है अब वचे उम भोजनको आपकी इच्छानु-
समार काममें लेना ’ । उस आहारसे शय्यातर देता हो तो साधुको
नहीं कल्प । कारन—दुसराका आहार भी शय्यातरके हाथसे
साधु नहीं ले सकते हैं ।

(२१) परन्तु शय्यातरके सिवा कोई देता हो तो साधु-

आको कल्प ग्रहन करना । शय्यातरका इतना परेज रखनेका कारन-अगर जिस मकानमें साधु ठहरे उसके घरका आहार लेनेमें प्रथम तो आधाकमी आदि दोष लगनेका सभव है, दुसरा मकान मिलना दुर्लभ होगा इत्यादि ।

(२२) साधु साध्वीयोंको पाच प्रकारके वस्त्र ग्रहन करना कल्पै (१) कपासका, (२) उनका, (३) अलसीकी छालका, (४) सणका, (५) अर्कतूलका ।

(२३) साधु साध्वीयोंको पाच प्रकारके रजोहरन रखना कल्पै (१) उनका, (२) ओटीजटका, (३) सणका, (४) मुजका, (५) तृणोंका ।

। इति श्री बृहत्कल्पसूत्रमें दूसरा उद्देशका संक्षिप्त सार ।



तीसरा उद्देशा



(१) साधुओंको न कल्पै कि वो साध्वीयोंके मकान पर जाके उभा रहै, बैठे, सोवे, निद्रा लेवे, विशेष प्रचला करे, अशन, पान, खादिम, स्वादिम करे, लघुनीति या बड़ी नीति करे, परठे, स्वाध्याय करे, ध्यान या कायोत्सर्ग करे, आसन लगावे, धर्मचिन्तन करे-इत्यादि कोई भी कार्य वहा पर नहीं करना चाहिये ।

(२) उक्त कार्य सा गीयों भी साधुके मकान पर न करे-कारन इमीसे अधिक परिचय पढ जाता है । दूसरे भी अनेक दूषण उत्पन्न होते हैं । अगर माधुओंके स्थान पर व्याख्यात और आगमवाचना होती हो, तो माध्वीयों जा सकती हैं, व्यनहारमर्ममें एमा उल्लेख है ।

(३) साध्वीयोंको रोमयुक्त चर्मपर ठठना नहीं कल्प ।
 भाग्यार्थ—अगर कोठ गरीरके कारनसे चर्म रखना पडे तो भी रोमयुक्त नहीं कल्प ।

(४) साधुओंको अगर किसी कारणवशात् चर्म लाना हो तो गृहस्थोंके वहा जापरा हुआ, वह भी एक रात्रिके लिये मागके लाने । वह रोमयुक्त हो तो भी साधुओंको कल्प ।

(५) साधु साध्वीयोंको सपूर्ण चर्म, (६) सम्पूर्ण वस्त्र, (७) अमेदा हुआ वस्त्र लेना और रखना-जापरना नहीं कल्प ।
 भाग्यार्थ—सम्पूर्ण चर्म और वस्त्र कामती होता है, उससे चौरादिका भय रहेता है, ममत्वभानकी वृद्धि होती है, उपधि अधिक बढ़ती है, गृहस्थोंको शका होती है । वास्ते (८) चर्म-खण्ड, (९) वस्त्रखण्ड, (१०) अगर अधिक रख होनेमे सम्पूर्ण वस्त्र ग्रहण किया हो तो भी उसका काममें आने योग्य खण्ड, खण्ड करके साधु रख सकता है ।

(११) साध्वीयोंको काच्छपाट (कच्छपटा) और कलुवा रखना कल्प । स्त्रीजाति होनेसे शीलरक्षाके लिये

(१२) यह दोनों उपकरण साधुओंको नहीं कल्पे ।

(१३) साधुओंको गोचरी गमन समय अगर वस्त्र याचनाका प्रयोग हो तो स्वयं अपने नामसे नहीं, किन्तु अपनी प्रतिर्नी या वृद्धा हो उसके नामसे याचना करनी चाहिये । इसीसे विनय धर्मका महत्त्व स्पष्टचन्दताका निगारण और गृहस्थोंको प्रतीति इत्यादि गुण प्राप्त होते हैं ।

(१४) गृहस्थ पुरुषको गृहनासको त्याग करनेके समय (१) रजो हरण (२) मुखवास्त्रिका (३) गुच्छा (पात्रोंपर रखनेका) भोली 'पात्र तीन सपूर्ण' वस्त्र इसकी अदर सत्र वस्त्र हो सकते हैं ।

(१५) अगर दीक्षा लेनवाली स्त्री हो तो पूर्ववत् । परन्तु वस्त्र चार होना चाहिये । इसके सिवा केड उपकरण अन्य स्थानों पर भी कहा है । केड उपगृही उपकरण भी होते हैं । अगर साधु साधुओंको दीक्षा लेनेके बाद कोई प्रायश्चित्त स्थान सेवन करनेसे पुनः दीक्षा लेनी पड़े तो नये उपकरण याचनेकी आवश्यकता नहीं । वह जो अपने पास पूर्वसे ग्रहण किये हुये उपकरण है, उन्हेसे ही दीक्षा ले लेनी चाहिये ऐसा कल्प है ।

(१६) साधु साधुओंको चतुर्मासमें वस्त्र लेना नहीं

१ पात्र तीन । २ एक वस्त्र ३ हाथका लबा, एक हाथका पना एवं ७२ हाथ ।

कल्पें । भावार्थ-चतुर्मास चेत्रपाले लोगोंको भक्तिके लिये
पद्मादि मगवाना पड़ता, उससे कृतगट आदि दोषका समर है।

(१७) अगर वस्त्र लेना हो, तो चतुर्मासिक प्रतिक्रमण
करनेसे पहिले ग्रहण कर लेना, अर्थात् शीतोष्णकाल या ठ
मासमें साधु साध्वीयोंको वस्त्र लेना कल्पें ।

(१८) साधु साध्वीयोंको उपयोग रखना चाहिये कि
वस्त्रादि प्रथम रत्नत्रयसे वृद्ध होये उन्हांके लिये क्रमशः
लेना । एव

(१९) शय्या-सस्तरक भी लेना ।

(२०) एव प्रथम रत्नादिको वन्दन करना । इसीमे वि-
नय धर्मका प्रतिपादन हो सकता है ।

(२१) साधु साध्वीयोंको गृहस्थके घरपे जाके बैठना,
उभा रहेना, सो जाना, निद्रा लेना, प्रचला (विशेष निद्रा)
करना, अशनादि च्यार आहार करना, टटी पेसान जाना,
सङ्काय ध्यान, कायोत्सर्ग याग आसन लगाना तथा धर्म-
चिंतन करना नहीं कल्पें । कारन-उक्त कार्य करनेमे साधु धर्म-
मे पतित होगा । दशवैकालिकके छठे अध्ययन-प्राचारसे
अष्ट, और निशीथसूत्रमें प्रायश्चित्त कहा है । अगर कोई वृद्ध
साधु हो, अशक्त हो, दुर्बल हो, तपस्वी हो, चक्र आते हो,
व्याधिमे पीडित हो-ऐसी हालतमें गृहस्थोंके वहा उक्त कार्य
कर सकते हैं ।

(२२) साधु साध्वीयोंको गृहस्थके घरपे जाके चार पाच गाथ (गाथा) विस्तार सहित कहना नहीं कल्पै । अगर कारण हो तो सच्चेपसे एक गाथा, एक प्रश्नका उत्तर एक वागरणा (सच्चेपार्थ) कहेना, सो भी उमा रहके कहेना, परन्तु गृहस्थोंके घर पर बैठके नहीं कहेना । कारण—मुनिधर्म है सो निःस्पृही है । अगर एकके घरपे धर्म सुनाया जाय तो दुसरेके वहा जाना पड़ेगा, नहीं जावे तो राग डेपकी वृद्धि होगी । वास्ते अपने स्थान पर आये हुंको यथासमय धर्मदेशना देनी ही कल्पै ।

(२३) एउ पाच महात्रत पचवीश भावना सयुक्त विस्तारसे नहीं कहेना । अगर कारन हो तो पूर्ववत् । एक गाथा एक वागरणा कहना सो भी खडे खुडे ।

(२४) साधु साध्वीयोंने जो गृहस्थके वहाँमे शय्या (पाट पाटा), सस्तारक, (तृणादि) बापरनेके लिये लाया हो, उसको बापिस दिया बिना बिहार करना नहीं कल्पै । एव उस पाटो पर जीनोत्पत्तिके कारनसे लेप लगाया हो, तो उस लेपको उतारे बिना देना नहीं कल्पै । अगर जीव पड गया हो, तो जीव सहित देना भी नहीं कल्पै । (२५) अगर उस पाटादिको चोर ले गया हो, तो साधुको उसकी तलास करनी चाहिये, तलास करने पर भी मिल जावे, तो गृहस्थसे कहके दुसरी बार आज्ञा लेनी, अगर नहीं मिले तो गृहस्थसे कह देना कि—‘तुमारा पाटादि चोर ले गया हमने तलास की परन्तु क्या करे मिला नहीं । एसा कहके दुसरा पाटादिकी

याचना करनी कल्पै। कारन-जीवोंकी यतना और गृहस्थोंकी प्रतीति रहे।

(२७) साधुओं जिस मकानमें ठहरे है, उसी मकानसे शय्या, मस्तारक आज़ासे ग्रहण किया था, वह अपने उपभोगमें न आनेसे उभी मकानमें वापिस रख दिया, उसी दिन अन्य साधु आये और उन्हें उम शय्या सस्वारककी आवश्यकता हो, तो प्रथमके साधुसे रजा लेके भोगये। कारन-पहिलेके साधुने अबतक गृहस्थको सुप्रत नहीं कीया। अगर पहिलेके साधुओंका मास कल्पादि पूर्ण हो गया तो पुन गृहस्थोंकी आज़ा लेके उस पाटादिको वापर सकते है, तीसरे त्रतकी रत्ता निमित्ते।

(२८) पहिलेके साधु विहार कर गये हो, उन्होका बस्तादि कोइभी उपकरण रह गया हो, तो पीछेके साधुओंको गृहस्थकी आज़ासे लेना और जब वो साधु मिलजावे अगर उन्हका हो तो उसको दे देना चाहिये अगर उन्हका न हो, तो एकान्त स्थानपर परठ देना। भावार्थ-ग्रहण करते समय पहिले साधुओंके नामपर लिया था, अब अपना सत्यत्रत रखनेके लिये आप काममें नहीं लेते हुवे परठना ही अच्छा है।

(२९) कोइ ऐसा मकान हो कि जिसमें कोइ रहता न हो, उसकी देखरेख भी नहीं करता हो, किसीकी मालिकी न हो, कोइ पंथी (मुसाफिर) लोक भी नहीं ठहरता हो, उम

मकानकी आज्ञा भी कोई नहीं देता हो, अर्थात् वह मकानमें देवादिकका भय हो, देवता निवास करता हो, अगर ऐसा मकानमें साधुओंको ठहरना हो, तो उस मकान निवामी देवकी भी आज्ञा लेना, परंतु आज्ञा बिना ठहरना नहीं। अगर कोई मकान पर प्रथम भिक्षु (साधु) उतरे हो, तो उस भिक्षुकी भी आज्ञा लेना चाहिये जिसमें तीसरे ऋतकी रक्षा और लोकव्यवहारका पालन होता है।

(३१) अगर कोई काट (गढ) के पासमें मकान हो, भीत, खाट, उद्यान, राजमार्गादि किसी स्थानपरके मकानमें साधुओंको ठहरना हो तो जहातक घरका मालिक हो, जहातक उसकी आज्ञास ठहरे, नहि तो पूर्व उतरे हुये मुसाफिरकी भी आज्ञा लेना, परंतु बिना आज्ञा नहीं ठहरना। पूर्ववत्

(३२) जहा पर राजाकी सैन्या निवास हो, तथा सार्थवाहके साथका निवास हो, वहा पर साधु-साध्वी अगर भिक्षाको गया हो, परंतु भिक्षा लेनेके बाद उस रात्रि वहा ठहरना न कल्पे। कारण-राजादिको शका हो, आधारुमी दोषका समव है, तथा शुभाशुभ होनेसे अप्रतीतिका कारण होता है। ऐसा जानके वहा नहीं ठहरे। अगर कोई ठहरे तो उसको एक तीर्थकरोंकी दूसरी राजा और सार्थवाह-इन्ह दोनों की आज्ञाका अतिक्रम दोष लगनेसे गुरु चातुर्मासिक प्रायश्चित होता है।

(३३) जिस ग्राम यावत् राजधानीमें रहे हुवे साधु-साध्वीयोंको पांच गाउ तक जाना कल्पै । कारण-दोय कोश तक तो गोचरी जाना आना हो सकता है, और दोय कोश जाने के बाद आधा कोश वहासे स्थडिल (बड़ी नीति) जा सकता है. एवं अढाइ कोश पश्चिमका मिलाके पाच कोश जाना आना कल्पै । अधिक जाना हो तो, शीतोष्ण कालमें अपने भद्रोपकरण लेके बिहार कर सकते हैं । इति ॥

इति श्री गृह्यसूत्र-तीनरा उद्देशाका मक्षित मार्ग ।



चौथा उद्देशा

(१) साधु-साध्वीयों जो स्वधर्मीकी चौरी^१ करे, परधर्मीकी चौरी करे, साधु आपसमें मारपीट करे-इस तीनों कारणों से आठवा प्रायश्चित्त अर्थात् पुनः दीक्षा लेनका प्रायश्चित्त होता है

(२) हस्तकर्म करे, मैथुन सेने रात्रिभोजन करे, इस तीन कारणों से नौवा प्रायश्चित्त, अर्थात् गृहस्थलिंग करवाके पुनः दीक्षा दी जावे

१ चौरी १ सचित्त-शिष्य, २ अचित्त उखपात्रादि द्रव्य,
३ मिश्र-उपधि सहित शिष्य अर्थात्-बिगर आक्षा कोई भी वस्तु लेना, उसको चौरी कहते है

(३) दुष्टता-जिसका दोष भेद. (१) कयाय
 जैसा कि एक माधुने मृत-गुरुका दात पत्थर से तोड़ा
 विषय दुष्टता-जैसा कि राजाकि राखी और माधुमी
 मेघन करे प्रमाद-जो पाचमी स्थानाद्वि निद्रावाला, वह
 में सप्राप्तादिभी कर लेता है अन्योन्य-साधु-माधुके
 अकृत्य कार्य करे. इस तीनों कारणों में दशमा प्रा
 होता है, अर्थात् गृहस्थलिंग करवाके सबको ज्ञात
 लीये दुःखानोंमें कोई प्रमुख मगनाना, इत्यादि. भ
 मोहनीय कर्म बड़ाही जबरजस्त है बड़े पड़े महात्मा
 थेलिमें गिरा देता है गिरनेपरभी अपनी दशाको स
 प्रधात्ताप पूर्वक आलोचना करनेसे शुद्ध हो मकता
 प्रायश्चित्त जनसमूहकी प्रसिद्धिमें सेवन कीया हो तो
 विश्वास के लीये जनसमूहके सामने हि प्रायश्चित्त देना
 कारणे फरमाया है इस समय नौग दशवा प्रायश्चित्त
 है आठवा प्रायश्चित्त देनेकी परंपरा अभी चलती है

(४) नपुंसक हो, स्त्री देखनेपर अपने वीर्यक
 नेमें असमर्थ हो, स्त्रियोंके कामक्रीडाके शब्द श्रवण क
 कामातुर हो जाता हो, इस तीन जनोंको दीक्षा न दे
 हिये. अगर अज्ञातपनेसे देदी हो, पीछेसे ज्ञात हुवा
 उसे मुडन न करना चाहिये. अज्ञातपनेसे मुडन कीया
 निमित्त न देना चाहिये. प्राय हो प्राय हो हो

साथमें भोजन न करना चाहिये भागार्थ—अैसे अयोग्यको गन्धमें रखनेमे शासनकी हीलना होती है. दुसरे साधुओंको भी चेपी रोग लग जाता है वास्ते जिस समय ज्ञात हो कि तीनों दुर्गुणोंसे कोईभी दुर्गुण है, तो उसे मधुर वचनों द्वारा हित शिक्षा देके अपनेमे अलग कर देना विशेष विस्तार देखो प्रपचन सारोद्धार.

(५) अग्निव्यग्रह हो, विगड़क लोलुपी हो, निरतर कपाय करनेवाला हो, इस तीन दुर्गुणोंवालोंको आगम वाचनादि ज्ञान नहीं देना चाहिये. कारण—सर्पको दुध पीलानाभी विषवृद्धिका कारण होता है.

(६) विनयवान हो, विगड़का प्रतिवधी न हो, दीर्घ कपायवाला न हो, इस तीन भव्य गुणोंवालोंको आगम ज्ञानकी पाचना देना चाहिये. कारण—वाचना देना, यह एक शासनका स्तम्भ—आलम्बन है.

(७) दुष्ट—जिसका हृदय मलीन हो, मूढ—जिसको हिताहितका रपाल न हो, और कदाग्रही—इम तीनोंको बोध लगना असम्भव है.

(८) थदुष्ट, अमूढ और भद्रिक—सरल स्वभावी—इम तीनोंको प्रतिबोध देना सुमाध्य है.

(९) साधु बीमार होनेपर तथा किसी स्थानमे गिरिते हुयेको दुसरे साधुके अमानसे उसी साधुकी ससार अवस्थाकी

माता बहिन और पुत्री-उम साधुको ग्रहण करे उसका कोमल स्पर्श हो तो अपने दिलमें अकृत्य (मैथुन) भावना लाने तो गुरुचातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है

(९०) एव साध्वीको अपना पिता, भाइ या पुत्र ग्रहण कर सकै.

(११) साधु-साध्वीयोंको जो प्रथम पोरसीमें ग्रहण कीया हुआ अशनादि चार प्रकारके आहार, चरम (छेड़ी) पोरसी तक रखना तथा रखके भोगना नहीं कल्प अगर अनजान (भूल) से रहभी जावे, तो उसको एकात निर्जान भूमिका देख परठे और आप भोगने या दुसरे साधुयोंको देवे तो गुरु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है

(१२) साधु-साध्वीयोंको जो अशनादि चार प्रकार के आहार जिस ग्रामादिमें किया हो, उसीसे दोय कोस उपरात ले जाना नहीं कल्प अगर भूलसे ले गया हो, तो पूर्ववत् परठ देना, परंतु नहीं परठके आप भोगवे या अन्य साधुओंको देने तो गुरुचातुर्मासिक प्रायश्चित्त आता है

(१३) साधु-साध्वी भिक्षा ग्रहण करते हुने, अगर अनजानसे दोपित आहार ग्रहण कीया, बादमें ज्ञात होनेपर उस दोपित आहारको स्वयं नहीं भोगवे, किन्तु कोई नय दक्षित साधु हो (जिसको अभी बड़ी दीक्षा लेनी है) उसको देना कल्प अगर असा न हो तो पूर्ववत् परठ देना चाहिये

(१४) प्रथम और चरम तीर्थकरोंके साधुयोंके लीये

किसी गृहस्थोंने आहार बनाया हो तो उम साधुओंको लेना नहीं कल्पै.

(१५) मध्यके २२ जिनोंके साधुओंको प्रज्ञावत और श्रुजु (मरल) होनेसे कल्पै

(१६) मध्य जिनोंके साधुओंके लीये बनाया हुआ अणनादि गरीश तीर्थंकरोंके साधुओंको लेना कल्पै

(१७) परन्तु प्रथम-चरम जिनोंके साधुओंको नहीं कल्पै.

(१८) साधु कभी ऐसी इच्छा करे कि मे स्वगच्छसे निकलके परगच्छमें जाऊ, तो उस मुनिको—

(१) आचार्य-गच्छनायक, (२) उपाध्याय-आगमवाचनके दाता, (३) स्थविर-सारणा वारणा दे, अस्थिरको मधुर वचनोंसे स्थिर करे (४) प्रवर्त्तक-साधुओंको अच्छे रस्तेमें चलनेकी प्रेरणा करे. (५) गणी-जिसके समीप आचार्यने सूर्यार्थ धारण किया हो (६) गणधर-जो गच्छको धारण करके उसकी सार-समाल करते हो, (७) गणविच्छेदक-जो चार, पांच साधुओंको लेकर विहार करते हो. इस सात पट्टी-धरोंको पुछने विगर अन्य गच्छमें जाना नहीं कल्पै. पूछनेपर भी उक्त सातों पट्टीधर विशेष कारण जान, जानेकि आज्ञा देवे, तो अन्य गच्छमें जाना कल्पै. अगर आज्ञा नहीं देवे तो, जाना नहीं कल्पै

(१९) गणविच्छेदक स्वगच्छको छोड़के परगच्छमें-

जानेका इरादा करे तो उसको अपनी पट्टी दूसरेको दीया बिगर जाना नहीं कल्पै, परंतु पट्टी छोड़के सात पट्टीगालोंको पूछे, अगर आज्ञा दे, तो अन्य गच्छमें जाना कल्पै, आज्ञा नहीं देवे तो नहीं कल्पै

(२०) आचार्य, उपाध्याय, स्वगच्छ छोड़कर परगच्छमें जानेका इरादा करे, तो अपनी पट्टी अन्यको दीया बिना अन्य गच्छमें जाना नहीं कल्पै अगर पट्टी दूसरेको देनेपरभी पूर्ववत् सात पट्टीगालोंको पूछे, अगर वह सात पट्टी धर आज्ञा दे, तो जाना कल्पै, आज्ञा नहीं देवे तो जाना नहीं कल्पै भाग्यार्थ—अन्य गच्छके नायक कालधर्म प्राप्त हो गये हो पीछे साधु समुदाय बहुत हैं, परंतु सर्व साधुओंका निर्वाह करने योग्य साधुका अभाव है, इस लीये साधु गणविच्छेदक तथा आचार्य महालाभका कारण जान, अपने गच्छको छोड़ उपकार निमित्त परगच्छमें जाके उसका निर्वाह करे आज्ञा देनेवाले अन्य गच्छका आचार धर्म आदिकी योग्यता देखे तो जानेकी आज्ञा देवे, अथवा नहींभी देवे

(२१) इसी माफिक साधु इरादा करेकि अन्य गच्छ वाली साधुओंसे समोग (एक मडलेपर साथमें भोजनका करना) करे, तो पेस्तर पूर्ववत् सात पट्टीधरोंमें आज्ञा लेवे, अगर आचारधर्म, क्षमाधर्म, विनयधर्म अपने सदृश होनेपर आज्ञा देवे, तो परगच्छके साथ समोग कर मके, अगर आज्ञा नहीं देवे, तो नहीं करे

(२२) एव—गणनिच्छेदक.

(२३) एव—आचार्योपाध्यायभी समझना

(२४) साधु इच्छा करो कि मैं अन्य गच्छमें साधुओंकी वैयावध करनेको जाऊ, तो कल्प—उस साधुओंको, पूर्ववत् मात पट्टीधरोंको पूछे, अगर वह आज्ञा देवे तो जाना कल्प, आज्ञा नहीं देवे तो नहीं कल्प.

(२५) एव गणनिच्छेदक

(२६) एव आचार्योपाध्याय. परन्तु अपनी पट्टी अन्यको देके जा सकते हैं.

(२७) साधु इच्छा करे कि मैं अन्य गच्छमें साधु-
वोंको ज्ञान देनेको जाऊ, पूर्ववत् मात पट्टीधरोंको पूछे, अगर
आज्ञा देवे तो जाना कल्प और आज्ञा नहीं देवे तो जाना
नहीं कल्प

(२८) एव गणनिच्छेदक

(२९) एव आचार्योपाध्याय परन्तु अपनी पट्टी दुसरेको
देके आज्ञा पूर्वक जा सकते हैं भावार्थ—अन्य गच्छके गीतार्थ
साधु काल धर्म प्राप्त हो गये हो, शेष साधुवर्ग अगीतार्थ हो,
इस हालतमें अन्याचार्य विचार कर सकते हैं, कि मेरे गच्छमें
तो गीतार्थ साधु बहुत हैं, मैं इस अगीतार्थ साधुगणमें
जाके इसमें ज्ञानाभ्यास करनेवाले साधुओंको ज्ञानाभ्यास करा
के योग्य पदपर स्थापन कर, गच्छकी अच्छी व्यवस्था करदु

इसीसे भविष्यमें बहुत ही लाभका कारन होगा इस इरादेसे अन्य गच्छमें जा सकते हैं

(नोट) इन्हीं महात्मावोंकी कितनी उच्च कोटिकी भावना और शासनोन्नति, आपममे धर्मस्नेह है ऐसी प्रवृत्ति होनेसे ही शासनकी प्रभावना हो सकती है

(३०) कोई साधु रात्रीमें या बैकाल समयमें काल धर्म प्राप्त हो जाय तो अन्य साधु गृहस्थ सगंधी एक उपकरण (वास) सरचीना थाचना करके लावे और कबली प्रमुखकी भोली बनाके उस घामसे एकांत निर्जीन भूमिकापर परठै भावार्थ—वास लाती बखत हाथमें उभा वासको पकड़े, लाते समय कोई गृहस्थ पूछे कि—‘ हे मुनि ! इस वासको आप क्या करोगे ? ’ मुनि कहै—‘ हे भद्र ! हमारे एक साधु कालधर्म प्राप्त हो गया है, उसके लीये हम यह वास ले जाते हैं इतनेमें अगर गृहस्थ कहै कि—हे मुनि ! इस मृत मुनिकी उत्तर क्रिया हम करेंगे, हमारा आचार है तो साधुओंको उस मृत कलेवरको वहापर ही बसिराय देना चाहिये. नहि तो अपनी रीति माफिक ही करना उचित है

(३१) साधुओंके आपसमें क्रोधादि कषाय हुआ हो तो उस साधुओंको बिना खमतखामखा—(१) गृहस्थों के घर-पर गौचरी नहीं जाना, अशनादि च्यार प्रकारका आहार करना नहीं कल्पै. टटी पैसाव करना, एक गामसे दुसरे गाम जाना, और एक गच्छ छोडके दुसरे गच्छमें जाना नहीं कल्पै. अलग

चातुर्मास करना नहीं कल्पै मागार्थ—कालका निश्वास नहीं है. अगर ऐसीही अवस्थामें काल करै, तो विराग्नक होता है. चास्ते खमतखामखा कर अपने आचार्योंपाध्याय तथा गीतार्थ मुनियोंके पास आलोचना कर प्रायश्चित्त लेके निर्मल चित्त रखना चाहिये

(३२) आलोचना करने परभी गग-ड्रेपके कारणमे आचार्यादि न्यूनाधिक प्रायश्चित्त देने, तो नहीं लेना, अगर सूत्रानुसार प्रायश्चित्त देनेपर शिष्य स्वीकार नहीं करता हो, तो उसको गच्छके अन्दर नहीं रखना कारण—ऐसा होनेमे दुसरे साधुभी ऐसाही करेंगे इसीसे भविष्यमें गच्छ—मर्यादा, और समय त्त पालन करना दुष्कर होगा, इत्यादि

(३३) परिहार निशुद्ध (प्रायश्चित्तका तप करता हुआ) साधुको आहार पाणी एक दिनके लीये अन्य माधु साधमें जाके दिला सकै, परन्तु हमेशा के लीये नहीं कारण एक दिन उसको निधि बतलाय देवे परन्तु वह साधु व्याधिग्रस्त हो झुन्नर हो, कमजोर हो, तो उसको अन्य दिनोंमें भी आहार—पाणी देना दिलाना कल्पै जब अपना प्रायश्चित्त पूर्ण हो जावे, तब वैयाग्य करनेवाला माधु भी प्रायश्चित्त लेवे, व्यवहार रखनेके कारणमे

(३४) साधु-साध्वीयोंको एक मामकी अन्दर दोय, तीन, चार, पाच महानदी उतरणी नहीं कल्पै यथा—(१) गंगा, (२) यमुना, (६) सरस्वती, (४) कोशिका, (५) मही,

इस नदीयोंकी अन्दर पाणी बहुत रहेता है, अगर आधी जघा प्रमाण पानी हो, कारणात् उसमें उतरणा भी पड़े, तो एक पग जलमें और दुसरा पगको उचा रखना चाहिये. दुसरा पग पाणीमें रखा जाये तब पहिलाका पग पाणीसे निकाल उचारखे, जहातक पाणीकी बुद उस पगसे गिरनी बघ हो जाय इस विधिसे नदी उतरनेका कल्प है इसी माफिक कुनाला देशमें औरावती नदी है

(३५) तृण, तृणपुज, पलाल, पलालपुज, आदिसे जो मकान बना हुआ है, और उसकी अन्दर अनेक प्रकारके जीवोंकी उत्पत्ति हो, तो ऐसा मकानमें साधु, साध्वीयोंको ठहरना नहीं कल्पै

(३६) अगर जीरादिरहित हो, परन्तु उमा हुआ मनुष्यके कानोंमें भी नीचा हो, असा मकानमें शीतोष्ण काल ठहरना नहीं कल्पै. कारण उमा होनेपर और क्रिया करते हर समय शिरमें लगता, मकानको नुकशानी होती है

(३७) अगर कानोंसे उचा हो, तो शीतोष्ण कालमें ठहरना कल्पै

(३८) उक्त मकान मस्तक तक उचा हो तो वहां चातुर्मास करना नहीं कल्पै

(३९) परन्तु मस्तकसे एक हस्त परिमाण उचा हो तो साधु साध्वीयोंको उस मकानमें चातुर्मास करना कल्पै

। इति श्री बृहत्कल्पसूत्रका चौथा उद्देशाका भक्षित मार ।

पांचवा उद्देशा.

(१) किसी देवताने स्त्रीका रूप प्रक्रिय बनाके किसी साधुको पकड़ा हो, उसी समय उस प्रक्रिय स्त्रीका स्पर्श होनेमें साधु मैथुनसंज्ञाकी इच्छा करे, तो गुरु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है.

(२) एउ देव पुरुषका रूप करके साध्वीको पकड़ने पर भी.

(३) एउ देवी स्त्रीका रूप बनाके साधुको पकड़ें तो

(४) देवी पुरुषरूप बनाके साध्वीको पकड़ने पर भी समग्रना. भावार्थ—देव देवी मोहनीय कर्म—उदीरण विषय परीपह देवे, तो भी साधुओंको अपने प्रतीमें मजबुत रहना चाहिये.

(५) साधु आपसमें कपाय—क्रोधादि करके स्वगच्छमें निकलके अन्य गच्छमें गया हो तो उम गच्छके आचार्यादिकोंको जानना चाहिये कि उस आये हुये साधुको पांच रोजका छेद प्रायश्चित्त देके स्नेहपूर्वक अपने पासमें रखे मगुर वचनोंमें हितशिक्षा देके गायम उमी गच्छमें भेज देने कारण औसी वृत्ति रखनेसे साधु स्वच्छन्द न गने एक दुमरे गच्छकी प्रतीति विश्वास नना रहै, इत्यादि.

(६) साधु—साध्वीयोंकी भिक्षावृत्ति सूर्योदयमें अस्त तक है अगर कोई कारणात् ममर्थ साधु निःशकपणे—अर्थात्

इस नदीयोंकी अन्दर पाणी बहुत रहेता है, अगर आधी जघा प्रमाण पानी हो, कारणात् उसमें उतरणा भी पड़े, तो एक पग जलमें और दुमरा पगको उचा रखना चाहिये दुसरा पग पाणीमें रखा जावे तब पहिलाका पग पाणीमें निकाल उचा रखे, जहांतक पाणीकी बुद उस पगसे गिरनी बध हो जाय इस विधिसे नदी उतरनेका कल्प है इसी माफिक बुनाला देशमें औरावती नदी है

(३५) तृण, तृणपुज, पलाल, पलालपुज, आदिसे जो मकान बना हुवा है, और उसकी अन्दर अनेक प्रकारके जीवोंकी उत्पत्ति हो, तो ऐसा मकानमें माधु, साध्नीयोंको ठहरना नहीं कल्पै

(३६) अगर जीवादिरहित हो, परन्तु उभा हुवा मनुष्यके कानोंसे भी नीचा हो, अर्था मकानमें शीतोष्ण काल ठहरना नहीं कल्पै कारण उभा होनेपर और क्रिया करते हर समय शिरमें लगता, मकानको नुकशानी होती है.

(३७) अगर कानोंसे उचा हो, तो शीतोष्ण कालमें ठहरना कल्पै

(३८) उक्त मकान मस्तक तक उचा हो तो वहां चातुर्मास करना नहीं कल्पै

(३९) परन्तु मस्तकसे एक इस्त परिमाण उचा हो तो साधु साध्नीयोंको उस मकानमें चातुर्मास करना कल्पै

। इति श्री बृहत्कल्पसूत्रका चौथा उद्देशाका मंक्षित मार ।

पांचवा उद्देशा



(१) किसी देवताने स्त्रीका रूप प्रकिय बनाके किसी साधुको पकड़ा हो, उसी समय उस प्रकिय स्त्रीका स्पर्श होनेसे साधु मैथुनसंज्ञाकी इच्छा करे, तो गुरु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है.

(२) एन देव पुरुषका रूप करके साधुकी पकड़ने पर भी

(३) एन देवी स्त्रीका रूप बनाके साधुको पकड़ें तो

(४) देवी पुरुषरूप बनाके साधुकी पकड़ने पर भी समझना. भाग्यार्थ—देव देवी मोहनीय कर्म—उदीरण विषय परीपह देवे, तो भी साधुओंको अपने त्रतोंमें मजबुत रहना चाहिये

(५) साधु आपसमें कपाय—क्रोवादि करके सगच्छमें नीरुलके अन्य गच्छमें गया हो तो उस गच्छके आचार्यादिकोंको जानना चाहिये कि उस आये हुये साधुको पाच रोजका छेद प्रायश्चित्त देके स्नेहपूर्वक अपने पासमें रखे मजुर वचनोंसे हितशिखा देके वापिस उमी गच्छमें भेज देवे कारण असी वृत्ति रखनेसे साधु स्वच्छन्द न बने एक दुसरे गच्छकी प्रतीति विश्वास बना रहै, इत्यादि.

(६) साधु—साधुओंकी भिक्षावृत्ति ग्र्योंदयमें अस्त तक है अगर कोई कारणात् ममर्थ साधु निःशकपणे—अर्थात्

चादला या पर्वतका आडसे सूर्य नहीं दिखा, परन्तु यह जाना जाता था कि सूर्य अवश्य होगा तथा उदय हो गया है, इस इरादासे आहार-पानी ग्रहण कीया जादमें मालुम हुआ कि सूर्य अस्त हो गया तथा अभी उदय नहीं हुआ है, तो उस आहारको भोगवता हो, तो मुहका मुहमे हाथका हाथमें और पात्रका पात्रम रखे, परन्तु एक बिन्दु मात्र भी खावे नहीं, सबको अचित्त भूमिपर परठ देना चाहिये, परन्तु आप खावे नहीं, दुसरेको देवे नहीं, अगर खजर पडनेके बाद आप खावे, तथा दुसरेको देवे तो उस मुनियोंको गुरु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त थात्र

(७) एव समर्थ शकावान्

(८) एव असमर्थ नि शक

(९) एव असमर्थ शकानान् । भावार्थ—कोई आचार्यादिक ब्रह्मचर्य के लीये शीघ्रता पूर्वक विहार कर मुनि जा रहा है किसी ग्रामादिमे सरे गोचरी न मिलीथी श्यामको किमी नगरमें गया उस समय पर्वतका आड तथा चादलमें सूर्य जानके भिन्ना ग्रहण की और सरे सूर्योदय पहिले तक्रादि ग्रहण करी हो, ग्रहन कर भोजन करनेको बैठनेके बाद ज्ञात हुआ कि शायद सूर्योदय नहीं हुआ हो अथवा अस्त हो गया हो असा दुसरोसे निश्चय हो गया हो तो उस मुहका, हाथका और पात्रका सब आहारको निर्जीव भूमिपर परठ देनेसे आज्ञाका उल्लघन नहीं होता है

(१०) अगर रात्रि या वैकाल समयमें मुनिको भ्रात-पाणीका उगाला आ गया हो, तो उमको निर्जीव भूमिपर यत-नापूर्वक परठ देना चाहिये अगर नहीं परठे और पीछा गले उतार देने, तो उम मुनिको रात्रि भोजनका पाप लगनेमें गुरु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है

(११) साधु-साध्वियोंको जीव सहित आहार-पानी ग्रहण करना नहीं कर्ण्य अगर अनजानपणे आ गया हो, जैसे साकर-खादमें कीडी प्रमुख उमको साधु समर्थ है कि जीवोंको अलग कर सके. तो जीवोंको अलग करके निर्जीव आहारको भोगवे कदाच जीव अलग नहीं होता हो तो उम आहारको एकान्त निर्जीव भूमिका देखके यतनापूर्वक परठे.

(१२) साधु-साध्वी गौचरी लेके अपने स्थानपर आ रहे हैं, उम समय उस आहारकी अन्दर कचे पानीकी बुद गिर जावे, अगर वह आहार गरमागरम हो तो आप स्वयं भोगने दुसरेको भी देवे कारण-उस पानीके जीव उष्णआहारसे चब जाते हैं परन्तु आहार शीतल हो तो न आप भोगने, और न तो अन्य साधुओंको देने उम आहारको विधिपूर्वक एकांत स्थानपर जाके परठे

(१३) सात्री रात्रि तथा वैकाल समय टट्टी-पेसाज करते समय किसी पशु-पक्षी आदिके इन्द्रिय स्पर्श हो, तो आप हस्त कर्म तथा मैथुनादि दुष्ट मानना करें, तो गुरु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है

(१४) एउ शरीर शुद्धि करते वखत पशु-पक्षीकी इन्द्रियसे अकृत्य कार्य करनेसे भी चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है यह दोनों सूत्र मोहनीय कर्मापेक्षा है. कारण-कर्मोंकी निश्चित गति है चास्ते अमे अकृत्य कार्योंके कारणोंको प्रथम ही शास्त्रकारोंने निषेध कीया है

(१५) साधियोंको निम्नलिखित कार्य करना नहीं कर्त्तव्य.

(१६) एकेलीको रहना,

(१७) एकेलीको टटी-पैमान करनेको जाना

(१८) एकेलीको विहार करना,

(१९) वस्त्ररहित होना,

(२०) पात्ररहित गांधरी जाना,

(२१) प्रतिमा कर ध्यान निमित्त कायाको घोसिरा देना,

(२२) प्रतिज्ञा कर एक पसचा (वा)डे सोना,

(२३) ग्राम यात्रा राजधानीसे बाहार जाके प्रतिज्ञा-

पूर्वक ध्यान करना नहीं कर्त्तव्य अगर ध्यान करना हो तो अपने उपामरेकी अन्दर दरवाजा बन्ध कर ध्यान कर सकते हैं

(२४) प्रतिमा धारण करना,

(२५) निषद्या-जिसके पाच भेद हैं-दोनों पांच घरा-बर रख बैठना, पाच योनिसे स्पर्श करते बैठना, पात्रपर पाच चट्टाके बैठना, पालटी मारके बैठना, अथ पालटी मारके बैठना,

(२६) वीरासन करना,

(२७) ददासन करना,

(२८) ओकहु आसन करना,

(२९) लगड आसन करना,

(३०) आम्रसुजासन करना,

(३१) उर्ध्व मुख कर सोना,

(३२) अधोमुख कर सोना,

(३३) पाँच उर्ध्व करना,

(३४) ढींचणोंपर होना-यह सर्व साध्वीके लीये निषेध कीया है. वह अभिग्रह-प्रतिज्ञाकी अपेक्षा है कारण-प्रतिज्ञा करनेके बाद कितने ही उपमार्ग क्यों नहीं हो ? परन्तु उससे चलित होना उचित नहीं है. अगर ऐसे आसनादि करनेपर कोई अनार्य पुरुष अकृत्य करनेपर ब्रह्मचर्यका रक्षण करना आवश्यक है. नास्ते साध्वीयोंको ऐसे अभिग्रह करनेका निषेध कीया है. अगर मोक्षमार्ग ही साधन करना हो तो दुसरे भी अनेक कारण है उसकी अन्दर यथाशक्ति प्रयत्न करना चाहिये.

(३५) साधु उक्त अभिग्रह-प्रतिज्ञा कर सकते हैं.

(३६) साधु गोडाचालक ही लगाके बैठ सकता है.

(३७) साध्वीयोंको गोडाचालक ही लगाके बैठना नहीं कल्पै.

(३८) साधुओंको पीछाडी आटे सहित (खुरसीके आकार) पाटपर बैठना कल्पै.

(३६) असे साध्वीयोंको नहीं कल्पै

(४०) पाटाके शिरपर पागारोंका आकार होते हैं,
ऐसा पाटापर साधुवोंको बैठना सोना कल्पै

(४१) साध्वीयोंको नहीं कल्पै

(४२) साधुवोंको नालिका सहित तुमड़ा रखना और
भोगवना कल्पै

(४३) साध्वीयोंको नहीं कल्पै

(४४) उघाड़ी डडीका राजेहरण (कारणात् १॥
मास) रखना और भोगवना कल्पै.

(४५) साध्वीयोंको नहीं कल्पै

(४६) साधुवोंको डाडी समुक्त पुजथी रखना कल्पै

(४७) साध्वीयोंको नहीं कल्पै

(४८) साधु-साध्वीयोंको आपसमें लघु नीति (पेसान) देना
लेना नहीं कल्पै. परन्तु कोई अतिकारन हो, तो कल्पै भी
भावार्थ—किसी समय साधु एकेला हो और सर्पादिका कारण
हो, असे अग्रमरपर देना लेना कल्पै भी.

(४९) साधु साध्वीयोंको प्रथम ग्रहरमे ग्रहन कीया
हुवा अशनादि आहार, चरम ग्रहरमे रखना नहीं कल्पै. परन्तु
अगर कोई अति कारन हो, जैसे साधु बिमार होवे और बत-
लाया हुवा भोजन दुसरे स्थानपर न मिले इत्यादि अपवादमें
कल्पै भी सही

(५०) साधु-साध्वीयोंको ग्रहन कीये स्थानसे दो कोश उपरात ले जाना अगनादि नहीं कल्पै, परन्तु अगर कोई विशेष कारण हो तो-जैसे किसी आचार्यादिकी वैयास्य के लीये शीघ्रतापूर्वक जाना है क्षुधासहित चल न सकै, रस्तेमें ग्रामादि न हो, तो दोय कोश उपरात भी ले जा सकते हैं.

(५१) साधु-साध्वीयोंको प्रथम ग्रहरमे ग्रहन कीया हुआ त्रिलेपनकी जाति चरम ग्रहरमे नहीं कल्पै. परन्तु कोई विशेष कारण हो तो कल्पै. (५२) एव तेल, घृत, मखन, चरमी (५३) कारुण्य द्रव्य, लोद्र द्रव्यादि भी समझना.

(५४) साधु अपने दोषका प्रायश्चित कर रहा है अगर उस साधुको किसी स्थविर (वृद्ध) मुनियोंकी वैयास्यम भेजे, और वह स्थविर उस प्रायश्चित तप करनेवाले साधुका लाया आहार पानी करै, तो व्यवहार रखनेके लीये नाम मात्र प्रायश्चित उस स्थविराको भी देना चाहिये. इससे दुसरे साधुओंको लोभ रहेता है.

(५५) साध्वीयों गृहस्थोके वहा गौचरी जानेपर किसीने सरस आहार दीया, तो उस साध्वीयोंको उस रोज इतना ही आहार करना, अगर उस आहारमे अपनी पूरती न हुइ, ज्ञान-ध्यान ठीक न हो, तो दुसरी दफे गौचरी जाना. भावार्थ-सरस आहार आने पर प्रथम उपासरेमें आना चाहिये.

सबसे पृथ्वी चाहिये कारण-फिर ज्यादा हो तो परलनेमें
महान् दोष है वास्ते उणोदरी तप करना

॥ इति श्री बृहत्कल्प सूत्रका पाचथा उद्देशाका मन्त्रित्त सार ॥



छद्मा उद्देशा

(१) साधु-साध्वीयों किसी जीवोंपर

- (१) अछता-रूडा कनक देना,
- (२) दुसरेकी हीलना-निंदा करना,
- (३) किसीका जातिदोष प्रगट करना,
- (४) किसीकोंभी कठोर वचन बोलना,
- (५) गृहस्थोंकी माफिक हे माता, हे पिता, हे मामा,
हे मासी-इत्यादि भकार चकारादि शब्द बोलना.
- (६) उपशमा हुवा क्रोधादिककी पुन. उदीरणा करनी
यह छे वचन बोलना साधु-साध्वीयोंको नहीं
कल्पे कारण-इमसे परजीवोंको दुःख होता है,
साधुकी भाषासमितिका भग होता है

(२) साधु-साध्वीयों अगर किसी दुमरे साधुओंका दो-
षको जानते हो, तोभी उसकी पूर्ण जाच करना, निर्णय करना,
गयाह करना, बादहीमे गुर्वादिकको कहना चाहिये अगर
ऐसा न करता हुवा एक साधु दुसरे साधुपर आक्षेप कर देवे,
तो गुर्वादिकको जानना चाहियेकि आक्षेप करनेवालेको प्राय-

श्रित देवे अगर प्रायश्चित्त न देवेगा तो, कोईभी साधु किसीके साथ स्वल्पही द्वेष होनेसे आक्षेप कर देगा. इसके लीये कल्पके छे पत्थर कहा है. (१) कोई साधुने आचार्यसे कहाकि अमुक साधुने जीव मारा है. जोस साधुका नाम लीया, उसको आचार्य पूछेकि—हे आर्य ! क्या तुमने जीव मारा है ? अगर वह साधु स्त्रीकार करेकि—हा महाराज ! यह अकृत्य मेरे हाथसे हुवा है, तो उस मुनिको आगमानुसार प्रायश्चित्त देवे, अगर वह साधु ब्रह्मेकि—नहीं, मैंने तो जीव नहीं मारा है. तब आक्षेप करनेवाले साधुको पूछना, अगर वह पूर्ण साधुती नहीं देवे, तो जितना प्रायश्चित्त जीव मारनेका होता है, उतनाही प्रायश्चित्त उस आक्षेप करनेवाले साधुको देना चाहियेकि दूसरी बार कोईभी साधु किसीपर जूठा आक्षेप न करे. भावार्थ—निर्बल साधु तो जूठा आक्षेप करेही नहीं, परन्तु कर्मोंकी निचित्र गति होती ह. कर्मी द्वेषका मारा करभी देवे, तो गच्छ निर्वाहकारक आचार्यको इस नीतिका प्रयोग करना चाहिये. (२) एव मृपावाद आक्षेपका, (३) एव चौरी आक्षेपका, (४) एवं मैथुन आक्षेपका, (५) एव नपुंसक आक्षेपका (६) एव नातिहीन आक्षेपका—सर्व पूर्वमत् समजना.

(३) साधुके पावमें काटा, खीला, फस, काच—आदि भागा हो, उस समय साधु निकालनेको निशुद्धि करनेको असमर्थ हो, औसी हालतमें साधु उस काटा या मत् काचसडको पगसे निकाले, तो जिनाज्ञा उल्लघन नहीं होता है. भावार्थ—

गृहस्थोंका सर्व योग साधन है, वास्ते गृहस्थोंसे नहीं निकल-
वाना, धर्मपुद्गिसे साध्नीयोंसे नीकलाना चाहिये कारन-ऐसा
कार्यतो कभी पडता है अगर गृहस्थोंसे काम करानेमें छुट
होगा, तो आरिखर परिचय बढनेका सभन होता है

(४) साधुके आँखों (नेत्रों) मे कोइ ठण, कुस, रज,
बीज या सुक्ष्म जीवादि पड जावे, उम समय साधु निकाल-
नेमें अममर्थ हो, तो पूर्ववत् साध्नीयों निकाले, तो जिनाका
उल्लघन नहीं होता है. (कारणवशात्) एउ (५-६) दोय
अलापक साध्नीयोंके काटादि या नेत्रोंमे जीवादि पड जानेपर
साध्नीयों असमर्थ हो तो, साधु निकाल सक्ता है, पूर्ववत्

(७) साध्नी अगर परतसे गिरती हो, रिपम स्थानसे
पडती हो, उस समय साधु धर्मपुत्री समज, उमको आलघन
दे, आधार दे, पकड ले, अर्थात् समय रक्षण करता हुवा
जिनाका उल्लघन नहीं होता है अर्थात् वह जिनाका
पालन करता है

(८) साध्नीयों पाणी सहित कर्दममें या पाणी
रहित कर्दममें सुची हो, आप न्हार निकलेमें अममर्थ हो,
उस साधु धर्मपुत्री समज हाथ पकट बाहार निकाले तो भग-
वानकी आवा उल्लघन नहीं करै, किन्तु पालन करे.

(९) साध्नी नौकापर चढती उतरती, नदी में दृवती
को साधु हाथ पकड निकाले तो पूर्ववत् जिनाका पालन
करता है.

(१०) साध्वीयों दत्तचित्त (निषयादिसे),

(११) चित्त चित्त (चोभ पानेमे),

(१२) यक्षाधिष्ठित,

(१३) उन्मत्तपनेसे,

(१४) उपसर्ग के योगमे,

(१५) अधिकरण-क्रोधादिसे,

(१६) सप्रायश्चित्तसे.

(१७) अनशन करी हुई ग्लानपनासे,

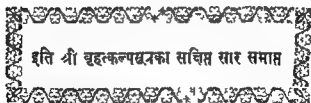
(१८) सलोभ धनादि देखनेसे, इन कारणोंसे संयमका त्याग करती हुई, तथा आपघात करती हुईको साधु हाथ पकड़ रखे, चित्तको स्थिर करे, संयमका साहित्य देवे तो भगवानकी आज्ञाका उल्लंघन न करे, अर्थात् आज्ञाका पालन करे.

(१९) साधु साधुवीर्योंके कल्पके पालिमन्थु छे प्रकार के होते हैं. जैसे सूर्यकी कातिकी गदले दवा देते हैं, इसी प्रकार छे बातों साधुओंके संयमको निस्तेज कर देती हैं. यथा (१) स्थान चपलता, शरीर चपलता, भाषा चपलता—यह तीनों चपलता संयमका पालिमन्थु है अर्थात् (कुकड़) संयमका पालिमन्थु है. (२) बार बार घोलना, सत्यभाषाका पालिमन्थु है. (३) तुण्य तुणाट अर्थात् आतुरता करना गोचरीका पालिमन्थु है. (४) चक्षु लोलुपता—इर्यासमितिका पालिमन्थु है. (५)

इच्छा लोलुपता अर्थात् तृष्णाको बढ़ाना, वह सर्व कार्योंका पलिमन्थु है (६) तप-सयमादि कृत कार्यका बार बार निदान (नियाणा) करना, यह मोक्ष मार्गका पलिमन्थु है अर्थात् यह छे बातों साधुओंको नुकसानकारी है वास्ते त्याग करना चाहिये

(२०) छे प्रकार के कल्प हैं (१) सामायिक कल्प, (२) छेदोपस्थापनीय कल्प, (३) निगृहमाण, (४) निवट्टकाय, (५) जिनकल्प, (६) स्थगिरकल्प इति

इति श्री बृहत्करपसूत्र—छट्ठा उद्देशाका सञ्चित्त सार



इति श्री बृहत्कल्पसूत्रका सञ्चित्त सार समाप्त

॥ श्री देवगुप्तसूरीश्वर सद्गुरुभ्यो नमः ॥

अथश्री

शीघ्रबोध ज्ञाग १० वा ।



अथश्री दशाश्रुतस्कन्धसूत्रका संक्षिप्त सार



(अध्ययन दश)

(१) प्रथम अध्ययन—पुरुष अपनी प्रकृतिसे प्रतिकूल आचरण करनेसे असमाधिका कारण होता है. इसी माफिक मुनि अपने समय-प्रतिकूल आचरण करनेसे समय-असमाधिको प्राप्त होता है. जिसके २० स्थान शास्त्रकारोंने बतलाया है. यथा—

(१) आतुरतापूर्वक चलनेसे असमाधि-दोष

(२) रात्रि समय त्रिगर पुजी भूमिकापर चलनेमे असमाधि दोष.

(३) पुजे तोमी अग्निधिसे कहाँपर पुजे, कहाँपर नहीं पुजे तो असमाधि दोष.

(४) मर्यादामे अधिक शय्या, सस्तारक भोगने तो अस० दो०

- (५) स्तनत्रयादिसे वृद्ध जनोंके सामने बोले, अविनय करे तो अस० दोष०
- (६) स्थगिर मुनियोंकी घात चिंतवे, दुर्ध्यान करे तो अस० दोष०
- (७) प्राणभूत जीव-सत्त्वकी घात चिंतवे, तो अस० दोष०
- (८) किसीके पीछे अवगुण-वाद बोलनेसे अस० दोष०
- (९) शकाकारी भाषाको निश्चयकारी बोलनेसे अम० दोष०
- (१०) घर घर क्रोध करनेसे अस० दोष०
- (११) नया क्रोधका कारण उत्पन्न करनेसे अस० दोष०
- (१२) पुराणे क्रोधादिकी उदीरणा करनेसे अम० दोष०
- (१३) अकालमे सज्जाय करनेसे अस० दोष०
- (१४) प्रहर रात्रि जानेके बाद उच स्वरसे बोले तो अस० दोष० लगे
- (१५) सचित्त पृच्छादिसे लिप्त पात्रोंसे आसनपर बैठे तो अस० दोष० लगे
- (१६) मनसे झूझ करे किसीका खराब होना इच्छे तो अस० दोष०
- (१७) वचनसे झूझ करे, किसीको दुर्वचन बोले तो अम० दोष० लगे
- (१८) कायासे झूझ करे अग मोडे रुटका करे, तो अस० दोष०
- (१९) सूर्योदयसे अस्ततक लाना, खानेमे मस्त रहे तो अम० दोष०

(२०) भात-पाणीकी शुद्ध गोपणा न करनेसे अस० दोष। इस गोलोको सेवन करनेसे साधु, साध्वियोंको असमाधि दोष लगता है अर्थात् सयम असमाधि (कमजोर) को प्राप्त करता है। वास्ते मोक्षार्थी महात्माओंको सदैवके लीये यतना पूर्वक सयमका रख करना चाहिये।

॥ इति प्रथम अध्ययनका मक्षिप्त मार ॥

(२) दूसरा अध्ययन

जैसे सग्राममें गये हुये पुरुषको गोलीकी चोट लगनेसे अथवा सबल प्रहार लगनेसे बिलकुल कमजोर हो जाता है; इसी माफिक मुनियोंके सयममें निम्न लिखित २१ सगल दोष लगनेसे चारित्र बिलकुल कमजोर हो जाता है यथा—

(१) हस्तकर्म (कुचेष्टा) करनेसे सबल दोष।

(२) मैथुन सेवन करनेसे सबल दोष

(३) रात्रिभोजन करनेसे " "

(४) आदाकर्मी आहार, वस्त्र, मकानादि सेवन करनेसे सबल दोष।

(५) राजपिंड भोगनेसे* सगल दोष।

(६) मूल्य देके लाया हुवा, उधारा हुवा, निर्बलके पाससे

* राजपिंड—(१) राज्याभिषेक करते समय, (२) राजाका बलिष्ठ आहार ज्यो तत्काल वीर्यवृद्धि करे, (३) राजाका भोजन समये बचा हुवा आहारमें पडे लोगोका विभाग होता है

जवरदस्तीसे लाया हुआ, भागीदारकी विगर मरजीसे लाया हुआ, और सामने लाया हुआ—अग्ने पांच दोष सयुक्त आहार—पाणी भोगनेसे सबल दोष लगे

- (७) प्रत्याख्यान कर बार बार भग करनेसे सबल दोष
- (८) दीक्षा लेके छे मासमें एक गच्छमे दुसरे गच्छमें जानेसे सबल दोष लगे
- (९) एक मासमें तीन उदग (नदी) लेप+लगानेसे सबल दोष
- (१०) एक मासमें तीन मायास्थान सेवे तो सबल दोष
- (११) शय्यातरके वहांका अशनादि भोगनेसे सबल दोष
- (१२) जानता हुआ जीवको मारनेसे सबल दोष लगे
- (१३) जानता हुआ जूठ धोले तो सबल दोष
- (१४) जानता हुआ पृथ्व्यादिपर बैठ—सोने तो सबल दोष लगे
- (१५) स्नाघ पृथ्व्यादि पर बैठ, सोने, सज्जाय करे तो सबल दोष.
- (१७) व्रस, स्थावर, तथा पाच वर्णकी नील, हरी अक्षुरा यावत् कलोडीयें जीवोंके भालोंपर बैठ, सोये तो सबल दोष लगे
- (१८) जानता हुआ कची वनस्पति, मूलादिको भोगनेसे सबल दोष
- (१९) एक वरसमें दश नदीके लेप लगानेसे सबल दोष

+ लेप—देखो मूलमंत्रमें

- (२०) एक वर्षमें दश मायास्थान सेवन करनेमें सबल दोष
 (२१) सचित्त पृथ्वी-पाणीसे स्पर्श हुवे हाथोंमें भात, पाणी
 ग्रहण करे तो सबल दोष लगता है दोषोंके साथ परि-
 णामभी देखा जाता है और सब दोष सदृश भी नहीं
 होते हैं. हमकी आलोचना देनेवाले उडेही गीतार्थ
 होना चाहिये
 इस २१ सबल दोषोंमें मुनि महाराजोंको सदैव ध्येय
 चाहिये.

इति श्री दशा श्रुत म्यन्ध—दुम्नरे अध्ययनका मक्षित भार

(३) तीसरा अध्ययन

गुरु महाराजकी तेतीस आशातना होती है यथा—

- (१) गुरु महाराज और शिष्य राहस्ते चलते समय शिष्य
 गुरुसे आगे चले तो आशातना होवे
 (२) बराबर चले तो आशातना, (३) पीछे चले परन्तु गु-
 रुसे स्पर्श करता चले तो आशातना,—एक तीन आ-
 शातना बैठनेकी, एक तीन आशातना उभा रहनेकी—
 कुल आशातना ६ ।
 (१०) गुरु और शिष्य साथमें जगल गये कारणवशात् एक
 पात्रमें पाणी ले गये, गुरुसे पहिला शिष्य शूचि करे
 तो आशातना, (११) जगलसे आयके गुरु पहिला
 शिष्य इरियावही पतिक्रमे तो आशातना.

- (१२) कोड विदेशी आवरु आया हुवा है, गुरु महाराजसे वार्तालाप करनेके पेत्र उम विदेशीसे शिष्य बात करे तो आशातना.
- (१३) रात्रि समय गुरु पूछते हैं—भो शिष्यो ! कौन सोते कौन जागते हो ? शिष्य जाग्रत होने परभी नहीं बोले. भावार्थ—शिष्यका इरादा हो कि अभी सोलुगा तो लघुनीति परठनेको जाना पड़ेगा. आशातना
- (१४) शिष्य गौचरी लाके प्रथम लघु साधुवोंको बतलावे पीछे गुरुको बतलावे तो आशातना
- (१५) एव प्रथम लघु मुनियोंके पास गौचरी की आलोचना करे पीछे गुरुके पास आलोचना कर तो आशातना
- (१६) शिष्य गौचरी लाके प्रथम लघु मुनियोंको आमन्त्रण करे और पीछे गुरुको आमन्त्रण करे तो आशातना
- (१७) गुरुको मित्र पूछे अपना इच्छानुसार आहार साधुवांको भेट देवे, जिसमे भी किमीको सरस आहार और किसीको नीरस आहार देवे तो आशातना.
- (१८) शिष्य और गुरु साथमे भोजन करनेको बैठे. इसमे शिष्य अपने मनोइ भोजन कर लेवे तो आशातना.
- (१९) गुरुके बोलानेसे शिष्य न बोले तो आशातना.
- (२०) गुरुके बोलानेपर शिष्य आमनपर बैठा हुवा उत्तर देवे तो आशातना

- (२१) गुरुके बोलानेपर शिष्य कहे—क्या कहते हो ? दिन-भर क्या कहे तो हो ? आशातना.
- (२२) गुरुके बोलानेपर शिष्य कहे—तुम क्या कहते हो ? तुम क्या कहे ? असा तुच्छ शब्द बोले तो आशातना.
- (२३) गुरु धर्मकथा कहै शिष्य न सुने तो आशातना
- (२४) गुरु धर्मकथा कहै, शिष्य सुशी न हो तो आशातना.
- (२५) गुरु धर्मकथा कहै शिष्य परिपदमें छेद भेद करे, अर्थात् आप स्वयं उस परिपदको रोक रखे तो आशातना.
- (२६) गुरु कथा कह रहे हैं, आप बिचमे बोले तो आशातना.
- (२७) गुरु कथा कह रहे हैं, आप कहे—असा अर्थ नहीं, इसका अर्थ आप नहीं जानते हो, इसका अर्थ असा होता है आशातना.
- (२८) गुरुने कथा कही उसी परिपदमे उसी कथाको निस्तारसे कहके परिपदका दिलको अपनी तरफ आकर्षण करे तो आशातना.
- (२९) गुरुके जाति दोषादिकों प्रगट करे तो आशातना.
- (३०) गुरु कहै—हे शिष्य ! इस ग्लान मुनिकी वैयासच करो, तुमको लाभ होगा शिष्य कहै—क्या आपको लाभ नहीं चाहिये ? असा कहै तो आशातना.
- (३१) गुरुसे उचे आसनपे बैठे तो आशातना
- (३२) गुरुके आसनपर बैठे तो आशातना.

(३३) गुरुके आसनको पाप आदि लगनेपर समासना दे अपना अपराध न समाये तो शिष्यको आशातना लगती है

इम तेतीस (३३) आशातना तथा अन्य भी आशातनासे रचना चाहिये क्योंकि आशातना मोधिगीजका नाश करनेवाली है गुरुमहाराजका कितना उपकार होता है, इस ससारसमुद्रसे तारनेवाले गुरुमहाराज ही होते हैं

॥ इति दशाधृतन्यन्ध मोक्षरा अभ्ययनका मक्षिप्त भार ॥

(४) चौथा अध्ययन

आचार्य महाराजकी आठ संप्रदाय होती है अर्थात् इस आठ संप्रदाय कर संयुक्त हो, वह आचार्यपदको योग्य होते हैं वह ही अपनी संप्रदाय (गच्छ) का निर्वाह कर सकते हैं वह ही शासनकी प्रभावना-उन्नति कर सकते हैं कारण-जैन शासनकी उन्नति करनेवाले जैनाचार्य ही हैं. पूर्वमें जो बडे २ विद्वान् आचार्य हो गये, जिन्होंने शासन-सेवाके लिये कैमे २ कार्य किये हैं, जो आजपर्यंत प्रख्यात हैं. विद्वान् आचार्यों बिना शासनोन्नति होनी असंभव है. इस-लिये आचार्योंमें कौन २ सी योग्यता होनी चाहिये और शास्त्र-कार क्या फरमाते हैं, वही यहापर योग्यता लिखी जाती है इन योग्यताओंके होनेही से शास्त्रकारोंने आचार्यपदके योग्य कहा है. यथा (१) आचार सपदा, (२) सूत्र सपदा, (३) शरीर

सपदा, (४) उचन सपदा, (५) वाचना सपदा, (६) मति सपदा, (७) प्रयोग सपदा, (८) सग्रह सपदा-इति।

(१) आचार संपदा के चार भेद

(१) पंच महाव्रत, पंच समिति, तीन गुप्ति, मत्तर प्रकार-के समय, दश प्रकारके यतिधर्मादिसे अलङ्घित आचारमन्त हो, सारणा, धारणा, वारणा, चोयणा, प्रतिचोयणादिसे सत्रको अच्छे आचारमें प्रवर्ताने। (२) आठ प्रकारके मद और तीन गारमसे रहित-ग्रहृत लोकोंके माननेमें अहकार न करे और क्रोधादिसे अग्रहित हो। (३) अप्रतिग्रह-द्रव्यसे भडोमत्तोपगरण वस्त्र-पात्रादि, क्षेत्रसे ग्राम, नगर उपाधयादि, कालसे शीतोष्णादि कालमें नियमसर जगह रहना और भावसे राग, द्वेष (एकपर राग, दूसरेपर द्वेष करना) इन चार प्रकारके प्रतिग्रह रहित हो। (४) चंचलता-चपलता रहित, इंद्रियोंको दमन करे, हमेशा त्यागवृत्ति रखे, और बड़े आचारमन्त हो।

(२) सूत्र संपदाका चार भेद यथा—

(१) बहुश्रुत हो (क्रमोत्क्रम गुरुगमसे वाचना ली हो) (२) स्वसमय, परसमयका जाननेवाला हो याने जिस कालमें जितना सूत्र है, उनका पारगामी हो और प्राचीन प्राचीनको उत्तर देने समर्थ हो (३) जितना आगम पढ़े या सुने उसको निश्चल धारण कर रखे, अपने नाम माफिक कभी न भूले। (४) उदात्त, अनुदात्त, घोष-उच्चारण शुद्ध स्पष्ट हो।

(३) शरीर सपदाके चार भेद यथा—

(१) प्रमाणोपेत (उचा पूरा) शरीर हो (२) दृढ सहननवाला हो. (३) अलज्ज्मत शरीर हो, परिपूर्ण इन्द्रियायुक्त हो (४) हस्तादि अगोपाग सौम्य शोभनीक हो, और जिनका दर्शन दूसरोंको प्रियकारी हो. हस्त, पादादिम अच्छी रेखा वा उचित स्थानपर तील, ममा लक्षण गिरे हो

(४) वचन सपदाके चार भेद यथा—

(१) आदेय वचन—जो वचन आचार्य निकाले, वह निष्फल न जाय सर्वलोक मान्य करे. इसलिये पहिलेहीसे विचार पूर्वक बोले (२) मधुर वचन, कोमळ, सुस्वर, गभीर और श्रोतारजन वचन बोले (३) अनिश्रित-राग, द्वेषसे रहित द्रव्य, घेन, काल, भाव देकर बोले. (४) स्पष्ट वचन—सब लोक समझ सकै बैसा वचन बोले परन्तु अप्रतीतिकारी वचन न बोले

(५) वाचना सपदाके चार भेद यथा—

(१) प्रमाणिक शिष्यको वाचना देनेकी आज्ञा दे [वाचना उपाध्याय देते हैं] यथायोग (२) पहिले दी हुई वाचना अच्छी तरहसे प्रणमावे उपराउपरी वाचना न दे क्योंकि ज्यादा देनेसे धारणा अच्छी तरह नहीं हो सकती. (३) वाचना लेनेवाले शिष्यका उत्साह बढ़ावे, और वाचना

क्रमशः दे, बीचमें तोड़े नहीं, जिससे सबध बना रहे (४) जितनी वाचना दे, उसको अच्छी रीतिसे भिन्न २ कर समजावे, उत्सर्ग, अपवादका रहस्य अच्छी तरहसे बतावे

(६) मति संपदाका चार भेद यथा—

(१) उगम (शब्द सुने), (२) इहा (विचारे), (३) अपाय (निश्चय करे), (४) धारणा (धारणा रखे).

(१) उगम—किसी पुरुषने आ कर आचार्यके पास एक बात कही, उसको आचार्य शीघ्र ग्रहण करे. बहुत प्रकारसे ग्रहण करे, निश्चय ग्रहण करे, अनिश्चय (दूसरोंकी सहाय बिना) पहिले कभी न देखी, न सुनी हो, अभी बातको ग्रहण करे इसी माफिक शास्त्रादि मय नियम समझ लेना (२) इहा—इसी माफिक मय विचारणा करे (३) अपाय—इसी माफिक वस्तुका निश्चय करे. (४) जिस वस्तुको एकवार देखी या सुनी हो, उसको शीघ्र धारे, बहुत विधिसे धारे, चिरकाल पर्यंत धारे, कठिनतासे धारने योग्य हो उसको धारे, दूसरोंकी सहाय बिना धारे.

(७) प्रयोग संपदाके चार भेद यथा—

कोई वार्दीके साथ शास्त्रार्थ करना हो, तो इस रीतिसे करे—

(१) पहिले अपनी शक्तिका विचार करे, और देखे कि मैं इस वादीका पराजय कर सकता हू या नहीं ? मुझमें कितना ज्ञान है और वादीमें कितना है ? इसका विचार करे. (२) यह क्षेत्र किम पक्षका है नगरका राजा न प्रजा सुशील है या दु शील है और जैनवर्मका रागी है या द्वेषी है ? इन सब बातोंका विचार करे (३) स्व और परका विचार करे इस विषयमें शास्त्रार्थ करता हू परन्तु इसका फल (नतीजा) पीछे क्या होगा ? इस क्षेत्रमें स्वपक्षके पुरुष कम हैं, और परपक्षमाले ज्यादा हैं, वे भी जैनपर अच्छा भाव रखते हैं, या नहीं ? अगर राजा और प्रजा दुर्लभबोधि होगा तो शास्त्रार्थ करनेसे जैनोंका इस क्षेत्रमें आना जाना कठिन हो जायगा ऐसी दशामें तीर्थादिकी रक्षा कौन करेगा ? इत्यादि बातोंका विचार करे (४) वादी किस विषयमें शास्त्रार्थ करना चाहता है और उस विषयका ज्ञान अपनेमें कितना है ? इसको विचार कर शास्त्रार्थ करे ऐसे विचार पूर्णक शास्त्रार्थ कर वादीका पराजय करना

(८) सग्रह सपदाके चार भेद यथा—

(१) क्षेत्र सग्रह—गच्छके साधु ग्लान, वृद्ध, रोगी आदिके लीये क्षेत्रका सग्रह याने अमुक साधु उम क्षेत्रमें रहेगा, तो वह अपनी समय यात्राको अच्छी तरहसे निर्वाह मकेगा और श्रोतागणकोभी लाभ मिलेगा (२) शीतोष्ण या सर्पा-

कालके लिये पाट-पाटलादिका संग्रह करे, क्योंकि आचार्य गच्छके मालिक है. इस लिये उनके दर्शनार्थी साधु बहुतसे आते हैं, उन मन्त्री यथायोग्य भक्ति करना आचार्यका काम है और पाट-पाटलाके लिये व्यान रखे कि इस श्रावकके वहा ज्यादाभी मिल सकता है. जिसमें काम पड़े जय ज्यादा फिर-नेकी तरुलीफ न पड़े (३) ज्ञानका नया अभ्यास करते रहें, अनेक प्रकारके विद्यार्थीओंका संग्रह करे. और शासनमें काम पड़नेपर उपयोगमें लाये. क्योंकि शासनका आवार आचार्यपर है. (४) शिष्य—जोकि शासनको शोमानेवाले हो, और देशों देशमें विहार करके जैनधर्मकी वृद्धि करनेवाले ऐसे सुशिष्योंकी सपदाको संग्रह करे.

इति आचार्यकी आठ सपदा समाप्त



आचार्यने सुविनीत शिष्यको चार प्रकारके विनयमें प्रवृत्ति करानी चाहिये. यथा—(१) आचार विनय, (२) सूत्र-विनय, (३) विक्षेपण विनय, (४) दोष निग्राहण विनय.

(१) आचार विनयके ४ भेद

(१) मयम सामाचारीमें आप बर्ते, दूसरेको वर्तवि, और वर्ततेको उच्चेजन दे. (२) तपस्या आप करे, दूसरोंमें करवाने और तपस्या करनेवालोंको उच्चेजन दे. (३) गण—गच्छका कार्य आप करे, दूसरोंसे करवाने और उच्चेजन दे.

(४) योग्यता प्राप्त होनेसे अकेला पडिमा धारण करे, करवाने, और उत्तेजन दे क्यों कि जो गस्तुओंकी प्राप्ति होती है, वह अकेलेमें ध्यान, मौनादि उग्र तपसे ही होती है

(२) सूत्र विनयके ४ भेद

(१) सूत्र या सूत्रकी वाचना देनेवालोंका बहु मानपूर्वक विनय करे, क्यों कि विनय ही से शास्त्रोंका रहस्य शिष्यको प्राप्त हो सकता है. (२) अर्थ और अर्थदाताका विनय करे (३) सूत्रार्थ या सूत्रार्थको देनेवालोंका विनय करे. (४) जिस सूत्र अर्थकी वाचना प्रारम्भ करी हो, उसको आदि-अन्त तक सपूर्ण करे

(३) विच्छेपणा विनयका ४ भेद

(१) उपदेश द्वारा मिथ्यात्मीके मिथ्यात्वको टुडावे (२) सम्यक्त्वी जीवको श्रावक व्रत या ससारसे मुक्त कर दीक्षा दे (३) धर्म या चारित्रसे गिरतेको मधुर वचनोंसे स्थिर करे (४) चारित्र पालनेवालोंको एषणादि दोषसे बचा कर शुद्ध करे

(४) दोष निग्घायणा विनयके ४ भेद

(१) क्रोध करनेवालेको मधुर वचनसे उपशांत करे (२) निषयभोगकी लालसावालेको हितोपदेश करके समयगुण और वैषयिक दोष बता कर शांत करे (३) अनशन किया

हुवा साधु असमाधि चित्तसे अस्थिर होता हो उसको स्थिर करे या मिथ्यात्वमें गिरते हुए को स्थिर कर. (साहित्य दे.)
(४) स्वयं (आप) शातपणे बर्ते और दूसरोंको बर्तावे. इति.

और भी आचार्यके शिष्यका ४ प्रकारका विनय कहा है.

(१) साधुके उपगण विषय विनयका ४ भेद

(१) पहिलेके उपगणका सरक्षण करे और वस्त्र, पात्रादि फुटा, तुटा हो उसको अच्छा करके वापरे (काममें लावे). (२) अति जरूरत हो तो नवा उपगण निर्वध लेवे और जहातक हो बहातक अल्प मूल्यवाला उपगण ले. (३) रस्सादिक फाट गया हो तो भी जहातक बने बहातक उमीसे काम ले मकानमें (उपासरेमें) जीर्ण वस्त्र वापरे. गाढ़ आना-जाना हो तो सामान्य रस्त्र (अच्छा) वापरे. इमी माफिक आप निर्वाह करे, परन्तु दूसरे साधुको अच्छा वस्त्र दे. (४) उपगणादि वस्तु गृहस्थसे याच के लाया हो, उसमेंसे दूसरे साधुको भी विभाग करके देवे

(२) साहिष्ण्वीय विनयके ४ भेद

(१) गुरुमहाराजके बुलानेपर तहकार करता हुआ नम्रतापूर्वक मधुर वचनसे बोले. (२) गुरुमहाराजके काममें अपने शरीरको यतनापूर्वक विनयसे प्रवर्तावे (३) गुरुमहाराजके कार्यको विश्रामादि रहित करे, परन्तु मिलाय न करे.

(४) गुरुमहाराज या अन्य साधुवोंके कार्यमें नम्रता-पूर्वक प्रवर्तें

(३) वण्ण सजलणता विनयके ४ भेद

(१) आचार्यादिका छता गुण दीपावे. (२) आचार्यादिका अवगुण बोलनेवालेको शिचा करे (वारे) याने पहिले मधुर वचनसे समझावे और न माननेपर कठोर वचनसे तिरस्कार करे, परन्तु आचार्यादिका अवगुण न सुने (३) आचार्यादिके गुण बोलनेवालेको योग्य उत्तेजन दे या साधुको छत्रार्थकी वाचना दे (४) आचार्यके पाम रहा हुआ विनीत शिष्य हमेशा चढते परिणामसे सयम पाले

(४) भारपच्चरुहणता विनयके ४ भेद

(१) सयम भार लीया हुआ स्थितोस्थित पहुचावे (जावजीव सयममें रमणता करे), और सयमपतकी सार-सभाल करे (२) शिष्यको आचार-रिचारमें प्रवर्तावे, अकार्य करतेको वारे और कहे-भो शिष्य ! अनत सुखका देनेवाला यह चारित्र तेरेको मिला है, इसकी चिन्तामणि रत्नके समान यतना कर, प्रमाद करनेसे यह अरसर निकल जायगा-इत्यादि मधुर वचनोंसे समझावे (३) स्वधर्मी, ग्लान, रोगी, बुद्धकी वैयावच्च करनी (४) सध या साधर्मिकमे क्लेश न करे, न करावे, कदाचित् क्लेश हो गया हो तो मध्यस्थ (कोडका पक्ष न करते) होकर क्लेशको उपशान्त करे इति

यह आठ प्रकारकी सपदा आचार्यकी तथा आठ प्रकारका विनय शिष्यके लिये कहा. क्योंकि विनय प्रवृत्ति रखने-हीमे शासनका अधिकारी और शासनका कुछ कार्य करने योग्य हो सक्ता है इस प्रवृत्तिमें चलना और चलाना यह कार्य आचार्य महाराजका है

इति श्री दशाधुत स्कन्ध—चतुर्थाध्ययनका सश्लिप्त सार'



(५) पंचम अध्ययन



चित्त समाधिके दश स्थान है —

राणियाग्राम नगरके दुतिपलासोद्यानमें परमात्मा वीर-प्रभु अपने शिष्यरत्नोंके परिवारसे पधारे, राजा जयशत्रु न्यार प्रकारकी सेना सयुक्त और नगर निवासी लोक बडेही आड-म्बरके साथ भगवानको वन्दन करने आये. भगवानने उस विशाल परिपदको विचित्र प्रकारमे धर्मकथा सुनाइ जीवादि पदार्थका स्वरूप समजाते हुये आत्मकल्याणमें चित्तसमाधिकी खास आवश्यकता उतलाइथी परिपदने प्रेमपूर्वक देशना श्रवण कर आनन्द सहित भगवानको वन्दन नमस्कार कर आये जिस दिशामें गमन कीया

भगवान् वीरप्रभु अपने साधु-साध्वीयोंको आमन्त्रण कर आदेश करते हुवे कि-हे आर्यो ! साधु, माध्वी पाच स-

(५) अग्रधिज्ञान—पूर्व उत्पन्न नहीं हुआ ऐसा उत्पन्न होनेसे जघन्य अगुलके असरयाते भागे उत्कृष्ट संपूर्ण लोक जाने, जिससे चित्तसमाधि होती है अग्रधिज्ञान किमको प्राप्त होता है ? जो तपस्वी मुनि सर्व प्रकारके कामविकार, त्रिषय कपायमे विरक्त हुआ हो, देव, मनुष्य, तिर्यचादिका उपलब्धियोंको सम्यक् प्रकारसे सहन करे, ऐसे मुनियोंको अवधिज्ञान होनेसे चित्तसमाधि होती है

(६) अग्रधिदर्शन—पूर्व उत्पन्न न हुआ ऐसा अवधिदर्शन उत्पन्न होनेसे जघन्य अगुलके असरयाते भागे उत्कृष्ट लोकके रुपीद्रव्योंको देखे अग्रधिदर्शनकी प्राप्ति किमको होती है ? जो पूर्ण गुणोंवाले, शांत स्वभावी, शुद्ध लेश्याके परिणामवाले मुनि उर्ध्वलोक, अधोलोक और तन्मय लोकों अग्रधिज्ञान द्वारा रुपीपदार्थोंके देखनेसे चित्तमें समाधि उत्पन्न होती है

(७) मन पर्यवज्ञान—पूर्व प्राप्त नहीं हुआ ऐसा मन पर्यवज्ञान उत्पन्न होनेसे अदाःद्वीपके सङ्गीपर्याप्ता जीवों पर मनोभाजको देखते हुवे चित्तसमाधिको प्राप्त होता है मन पर्यवज्ञान किमको उत्पन्न होता है ? सुसमाधिपन्त, शुद्ध रयावन्त, जिनवचनमें निश्चय, अभ्यन्तर और बाह्य शरीर का सर्वथा त्यागी, सर्व सगरहित, गुणोंका रागी इत्यादि गुण सयुक्त हो, उस अप्रमत्त मुनिको मन पर्यवज्ञान उत्पन्न होता है

(८) केवलज्ञान—पूर्व नहीं हुआ वह उत्पन्न होने

चित्तको परम समाधि होती है. केवलज्ञानकी प्राप्ति किसको होती है ? जो मुनि अप्रमत्त भावसे सयम आराधन करते हुये ज्ञानावरणीय कर्मका सर्वांश क्षय कर दीया है, ऐसा क्षपकश्रेणिप्रतिपन्न मुनियोंको केवलज्ञान उत्पन्न होता है वह सर्व लोकालोकके पदार्थोंको हस्तामलककी भाँति जानते हैं

(६) केवलदर्शन—पूर्व नहीं हुवा ऐसा केवलदर्शन होनेसे लोकालोकको देखते हुयेको चित्तसमाधि होती है. केवलदर्शनकी प्राप्ति किसको होती है ? जो मुनियों अप्रमत्त गजारूढ हो, क्षपकश्रेणि करते हुये गारहने गुणस्थानके अन्तमें दर्शनावरणीय कर्मका सर्वांश क्षय कर, केवलदर्शन उत्पन्न कर लोकालोकको हस्तामलककी भाँति देखते हैं.

(१०) केवलमृत्यु—(केवलज्ञान सयुक्त) पूर्व नहीं हुवा ऐसा केवलमृत्युकी प्राप्ति होनेमें चित्तमें समाधि होती है. केवलमृत्युकी प्राप्ति किसको होती है ? जो गारह प्रकारकी भिक्षुप्रतिमाका निशुद्धपणसे आराधन किया हो और मोहनीय कर्मका सर्वांश क्षय किया हो, वह जीव केवलमृत्यु मरता हुवा, अर्थात् केवलज्ञान सयुक्त पण्डित मरण मरता हुवा सर्व शारीरिक और मानसिक दुःखोंका अंत करते, पत्नी समाधि जो शाश्वत, अव्यायाध सुखोमें विराजमान हो जाता है. मोहनीय कर्म क्षय हो जानेसे शेष कर्मोंका जोर नहीं चलता है इस पर शास्त्रकारोंने दृष्टान्त उतलाया है जैसेकि—

(१) तालवृक्षके फलके शिरपर सुइ (सूचि) छेद चिटका

नय वह तत्काल गिर पड़ता है, इसी माफिक मोहनीय कर्मका शिरच्छेद करनेसे सर्व कर्मोंका नाश हो जाता है (२) सेनापति भाग जानेमे सेना स्वयही कमजोर होकर भग जाती है इसी माफिक मोहनीय कर्मरूप सेनापति क्षय होनेसे शेष कर्मों-रूपी सैन्य स्वयही भाग जाता है (क्षय हो जाता है) (३) धूम रहित अग्नि इन्धनके अभावसे स्वय क्षय होता है इसी माफिक मोहनीय कर्मरूप अग्निको राग-द्वेपरूप इन्धन न मिलनेसे क्षय होता है. मोहनीयकर्म क्षय होनेपर शेष कर्मक्षय होता है (४) जैसे सुके हुवे वृक्षके मूल जल सिंचन करनेसे कमी नय-पल्लवित नहीं होते हैं इसी माफिक मोहनीयकर्म छक (क्षय) जानेपर दूसरे कर्मोंका कमी अकुर उत्पन्न नहीं हो सक्ता है (५) जैसे बीजको अग्निसे दग्ध कर दीया हो, तो फिर अकुर उत्पन्न नहीं हो सक्ता है इसी माफिक कर्मोंका बीज (मोहनीय) दग्ध करनेसे पुन भयरूप अकुर उत्पन्न नहीं होते हैं

इस प्रकारमे केवलज्ञानी आयुष्यके अन्तमे औदारिक, वैजस, और कर्मण शरीर तथा वेदनीय, व्यायु, नामकर्म और मोत्रकर्मको सर्वाथ छेदन कर कर्मरज रहित सिद्धस्थानको प्राप्त कर लेते हैं

भगवान् गीरग्रन्थ आमन्त्रण कर कहते हैं कि—भो आयुष्मान् ! यह चित्त समाधिके कारण उतलाये है इसको विशुद्ध भावोंसे आराधन करो, सन्मुख रहो, स्वीकार करो इ

सीसे मोक्षमन्दिरके सोपानकी श्रेणि उपागत हा, शिवमन्दिरको प्राप्त करो.

इति दशाश्रुत स्वध—पंचम अव्ययनका मक्षित सार

[६] छठा अध्ययन

पंचम गणधर अपने ज्येष्ठ शिष्य जम्बू अणुगारको श्रावकोंकी इग्यारा प्रतिमाका विवरण सुनाते हैं. इग्यारा प्रतिमाकी अन्दर प्रथम दर्शनप्रतिमाका व्याख्यान करते हैं.*

वादीयोंमें अज्ञानशिरोमणि, नास्तिकमति, जिसको अक्रियावादी कहते हैं. हेय, उपादेय कोई भी पदार्थ नहीं है, ऐसी उन्हींकी प्रज्ञा है, ऐसी उन्हांकी दृष्टि है. वहां सम्यक्त्व वादी नहीं है, नित्य (मोक्ष) वादी भी नहीं है जो शाश्वत पदार्थ है उसको भी नहीं मानते हैं उस अक्रियावादी नास्तिकोंकी मान्यता है कि यहलोक, परलोक, माता, पिता, अरिहत, चक्रवर्ती, वासुदेव, बलदेव, नारक, देवता कोई भी नहीं है, और सुकृत करनेका सुकृत फल भी नहीं है दुष्कृत करनेका दुष्कृत फल भी नहीं है, अर्थात् पुण्य-पापका फल नहीं है. न परभवमें कोई जीव उत्पन्न होता है, वास्ते नरक

* प्रथम मिथ्यात्वका स्वरूप ठीक तोरपर न समझा जावे, यहातक मिथ्यात्वसे अरुचि और मय्यक्त्वपर रुचि होना असंभव है इसी लिये शास्त्रकारों दर्शनप्रतिमाकी आदिमें वादीयोंके मतका परिचय कराते हैं

नहीं है, यावत् मित्र भी नहीं है अक्रियावादीयोंकी ऐसी प्रज्ञा-दृष्टि प्ररूपणा है ऐसा ही उन्होंनेका छेदा है, ऐसा ही उन्होंनेका राग है, और ऐसा ही अभीष्ट है, ऐसे पाप-पुण्यकी नास्ति करते हुये वह नास्तिकलोक महारम, महापरिग्रहकी अन्दर मूर्च्छित है। इसीसे वह लोक अधर्मी, अधर्मानुचर, अधर्मको सेवन करनेवाले, अधर्मको ही इष्ट जाननेवाले, अधर्म बोलनेवाले, अधर्म पालनेवाले, अधर्मका ही जिन्होंनेका आचार है, अधर्मका प्रचार करनेवाले, रातदिन अधर्मका ही चिंतन करनेवाले, सदा अधर्मकी अन्दर रमणता करते हैं।

नास्तिक कहते हैं-इम अमुरु जीवोंको मारो, खड्गादिसे छेदो, भालादिसे भेदो, प्राणोंका अंत करो, ऐसा अकृत्य कार्य करते हुये के हाथ सदैव लोड़ी (रौद्र) से लिप्त रहते हैं वह स्वमानसे ही प्रचंड क्रोधवाले, रौद्र, क्षुद्र पर दुःख देनेमें तथा अकृत्य कार्य करनेमें साहसिक, परजीवोंको पाशमे डाल ठगनेवाले, गूढ़ माया करनेवाले, इत्यादि अनेक कुप्रयोगमें प्रवृत्ति करनेवाले, जिन्होंनेका दुःशील, दुराचार, दुर्नयके स्थापक, दुर्नृतपालक, दुमरोंका दुःख देखके आप ध्यानन्द माननेवाले, आचार, गुप्ति, दया, प्रत्याख्यान, पौषधोपवास रहित हैं असाधु, मलिनवृत्ति, पापाचारी, प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन, परिग्रह, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, कलह, अभ्याख्यान, पैशुन्य, परपरिवाद, रति अरति, मायामृषावाद और मिथ्यात्वशून्य-इस अटारा पापोंमे

निवृत्त नहीं, अर्थात् जानजीवतक अठारा पापको सेवन करने-
वाले, सर्व कपाय, स्नान, मञ्जन, दन्तधावन, मालीस, त्रिले-
पन, माला, अलंकार, शब्द, रूप, गंध, रस, स्पर्शसे जान-
जीवतक निवृत्त नहीं अर्थात् किमी कीस्मका त्याग नहीं है।

सर्वप्रकारकी असजारी गाड़ी, गाड़ा, रथ, पालखी,
तथा पशु, हस्ती, अश्व, गौ, महिष [पाहा] ज़ाली, तथा
गवाल, दामदासी, कामकारी-इत्यादिमें भी निवृत्ति नहीं करी है

सर्व प्रकारके क्रय-विक्रय, गणित्य, व्यापार, कृत्य,
अकृत्य तथा सुवर्ण, रूपा, रत्न, माणिक्य, मोती, धन, धान्य
इत्यादि, तथा सर्व प्रकारसे कुड़ा तोल कुड़ा मापसे भी निवृत्ति
नहीं करी है

सर्व प्रकारके आरम्भ, सारम्भ, समारम्भ, पचन, पचावन,
करण, करावण, परजीनोंको मारना, पीटना, तर्जना करना,
वध वधनसे परको क्लेश देना-इत्यादिमें निवृत्ति नहीं करी है।

जैसा वर्णन किया है, वैसेही सर्व सावध कर्तव्य के
करनेवाले, मोधिर्वाज रहित, परजीनोंको परिताप उत्पन्न कर-
नेसे जानजीव पर्यंत निवृत्त नहीं है जैसे दृष्टान्त-कोई पुरुष
बटाणा, मछर, चीणा, तील, मुग, उटद-इत्यादि अपने भक्ष्यार्थ
दलते है, चरण करते है इसी भाषिक मिथ्यादृष्टि, अनार्य,
मासभची ज्यों तीतर, बटेवर, लवोक, पारेया, कपींजल, म-
यूर, मृग, सूर, महिष, कान्छप, सर्प-आदि जानवरोंको

बिना अपराध मार डालते हैं निध्वंस परिणामी, किसी प्रकार की घृणा रहित ऐसे अनार्य नास्तिक होते हैं

ऐसे अक्रियानादीयोंके बाहिरकी परिपद जो दास-दासी, प्रेपक, दूत, भट्ट, सुभट, भार्गीदार, कामदार, नोकर, चाकर, मेता, पुरुष, कृपीकार-इत्यादि जो लघु अपराध किया हो, तो उसको बड़ा भारी दंड देते हैं जैसे इसको दंडो, मुंडो, तर्जना, ताड़ना करो, मारो, पीटो मजबूत बन्धन करो इसको खाड़ेमें भारखसीमें डाल दो, इसके शरीरकी हड्डियों तोड़ दो-एव हाथ, पाव, नाक, कान, ओष्ठ, दान्त-आदि अंगोपांगको छेदन करो, एव इसका चमड़ा निकालो, हृदयको भेदो, आस, दान्त, जीभको छेदन करो, शूली दो, तलवारसे खड़ खड़ करो, इसको अग्निमें जला दो, इनको सिंहकी पूछमें बांधो, हस्तीके पांव नीचे डालो, इत्यादि लघु अपराध कर नेपर अपराधीको अनेक प्रकारके कुमोतसे मारनेका दंड देते हैं ऐसी अनार्य नास्तिकोंकी निर्दय वृत्ति है

आभ्यन्तर परिपद् जैसे माता, पिता, बान्धव, भर्गिनी, भार्या, पुत्री, पुत्रवधू-इत्यादि इन्होंने कभी किंचिन्मात्र अपराध हो जाय, तो आप स्वयं भारी दंड देते हैं जैसे शीतकालमें शीतल पाणी तथा उष्णकालमें उष्ण पाणी इसके शरीरपर डालो, अग्निकी अन्दर शरीर तपावों, रसीकर, बेंत कर, नाडीकर, चामक कर, छड़ीकर, लताकर, शरीरके पसवाड़े प्रहार करो, चामड़ाको उखेड़ो, हडीकर, लकड़ीकर, मुष्टिकर,

ककर कर, केदलू कर, मारो, पीटो, परिताप करो, इसी माफिक स्वजन, परजन, परको स्वल्प अपराधका महान् दंड करनेवाले, ऐसे क्रुर पुरुषोंसे उन्हींके परिवारवाले दूर निवास करना चाहते हैं, जैसे बीलीसे चुहें दूर रहते हैं। ऐसे निर्दय अनायोंका इस लोकमें अहित होता है, हमेशा कोपित रहता है, और परलोकमें भी दुःखी होता है अनेक ज्ञेश, शोक, सताप पाता है, वह अनार्य दूसरोंकी संपत्ति देख महान् दुःख करता है। उसको लुरुशान पहुचानेका इरादा करता है। वह दुष्ट परिणामी उभय लोकमें दु खपरपराको भोगता है

ऐसा अक्रियावादी पुरुष, स्त्री संनधी (मँधुन) काम-भोगोंमें मूर्च्छित, गृद्ध, अत्यंत आसक्त, ऐसा च्यार, पांच, छे दश वर्ष तथा स्वल्प या बहुतकाल ऐसे भोगोपभोग भोगवता हुआ बहुत जीवोंके साथ चैर-विरोध कर, बहुत जबर पापकर्म उपार्जन कर, कृतकर्म-प्रेरित तत्काल ही उस पापकर्मोंका भोक्ता होता है जैसे कि लोहाका गोला पानीपर रखनेसे वह तत्काल ही रसातलको पहुच जाता है। इसी माफिक अक्रियावादी वज्रपापके सेवनसे कर्मरूप धूली और पापरूप कर्मसे चीकणा बन्ध करता हुआ बहुत जीवोंके साथ चैर, विरोध, धूर्तबाजी, माया, निमिड मायासे परवचन, आशातना, अयश, अप्रतीतिवाले कार्य करता हुआ बहुत त्रस, स्थावर प्राणीयोंकी घात कर दुर्ध्यान अस्थामें कालअनसरमें

जिना अपराध मार डालते हैं निधिस परिणामी, किसी प्रकार की घृणा रहित ऐसे अनार्य नास्तिक होते हैं

ऐसे अक्रियावादीयोंके बाहिरकी परिपद जो दास-दासी, प्रेपक, दूत, भट्ट, सुभट, मार्गदार, कामदार, नोकर, चाकर, मेता, पुरुष, कृपीकार-इत्यादि जो लघु अपराध कीया हो, तो उसको बड़ा भारी दड देते हैं. जैसे इसको दडो, मुडो, तर्जना, ताडना करो, मारो, पीटो मजबूत बन्धन करो इसको खाडमें भाखसीमें डाल दो, इसके शरीरकी हडीयों तोड दो-एव हाथ, पाव, नाक, कान, ओष्ठ, दान्त-आदि अगोपागको छेदन करो, एव इसका चमडा निकालो, हृदयको भेदो, आख, दान्त, जीभको छेदन करो, शूली दो, तलवारसे खड खड करो, इसको अग्निमें जला दो, इनको सिंहकी पूछमें गांधो, हस्तीके पांज नीचे डालो, इत्यादि लघु अपराध कर नेपर अपराधीको अनेक प्रकारके कुमोतसे मारनेका दड देते हैं ऐसी अनार्य नास्तिकोंकी निर्दय वृत्ति है

आभ्यन्तर परिपद जैसे माता, पिता, बान्धव, भगीनी, भार्या, पुत्री, पुत्रवधु-इत्यादि इन्होंने कभी किंचिन्मात्र अपराध हो जाय, तो आप स्वयं भारी दड देने हैं जैसे शीतकालमें शीतल पाणी तथा उष्णकालमें उष्ण पाणी इसके शरीरपर डालो, अग्निकी अन्दर शरीर तपावों, रसीकर, बेंत कर, नाडीकर, चाबक कर, छडीकर, लताकर, शरीरके पसवाडे प्रहार करो, चामडको उखेडो, हडीकर, लकडीकर, मुष्टिकर,

ककर कर, केदलू कर, मारो, पीटो, परिताप करो, इसी माफिरु
 स्वजन, परजन, परको स्वल्प अपराधका महान् दंड करनेवाले,
 ऐसे क्रूर पुरुषोंसे उन्हींके परिारवाले दूर निवास करना चा-
 हते हैं. जैसे वीलीसे चुहें दूर रहते हैं. ऐसे निर्दय अनार्योंका
 इस लोकमें अहित होता है, हमेशा कोपित रहता है, और
 परलोकमें भी दुःखी होता है अनेक क्रेश, शोक, सताप पाता
 है. वह अनार्य दूसरोंकी संपत्ति देख महान् दुःख करता है.
 उसको नुरुशान पहचानेका इरादा करता है वह दुष्ट परि-
 णामी उभय लोकमें दुःखपरपराको भोगता है

ऐसा अक्रियावादी पुरुष, स्त्री सचधी (मधुन) काम-
 भोगोंमें मूर्च्छित, गृद्ध, अत्यंत आसक्त, ऐसा च्यार, पांच,
 छे दश वर्ष तथा स्वल्प या बहुतकाल ऐसे भोगोपभोग
 भोगवत्ता हुवा बहुत जीवोंके साथ वैर-विरोध कर, बहुत
 जपर पापकर्म उपार्जन कर, कृतकर्म-प्रेरित तत्काल ही
 उस पापकर्मोंका भोक्ता होता है जैसे कि लोहाका गोला
 पानीपर रखनेसे वह तत्काल ही रसातलको पहुच जाता है.
 इसी माफिरु अक्रियावादी वज्रपापके सेवनसे कर्मरूप धूली
 और पापरूप कर्मसे चीरुणा बन्ध करता हुवा बहुत जीवोंके
 साथ वैर, विरोध, धूर्तबाजी, माया, निमिड मायासे परवचन,
 आशातना, अग्रश, अप्रतीतिवाले कार्य करता हुवा बहुत त्रस,
 स्थावर प्राणीवोंकी घात कर दुर्ध्यान अस्थामें कालअसरमें

काल कर घोर अधकार व्याप्त धरणीतले नरकगतिको प्राप्त होता है

वह नरकावास अन्दरसे वर्तुल (गोलाकार) बाहरसे चोरस है. जमीन ठुरी-अस्तरे जैसी तीक्ष्ण है. मदैव महा अन्धकार व्याप्त, ज्योतिषीयोंकी प्रभा रहित और रौद्र, मांस, चरबी, मेद, पीपपडलसे व्याप्त है. श्वान, सर्प, मनुष्यादिक मृत कलेवरकी दुर्गन्धसे भी अधिक दुर्गन्ध दशों दिशामें व्याप्त है स्पर्श घडा ही कठिन है सहन करना पडा ही मुरकील है. अशुभ नरक, अशुभ नरकाला बहापर नारकीके नैरिय किंचित् भी निद्रा-प्रचला करना, सुना, रसिवेदनेका तो स्वप्न भी कहासे होवे ? सदैवके लिये निस्तरण प्रकारकी उज्ज्वल, प्रकृष्ट, कर्कश, कडुक, रौद्र, तीव्र, दुःख सहन कर सके ऐसी नारककी अन्दर नैरिया पूर्वकृत कर्मोंको भोगवते हुवे विचरते है

जैसे दृष्टान्त—पर्वतका उन्नत शिखरपरसे मूल छेदा हुवा पृष्ठ अपने गुरुत्वपनेसे नीचे स्थान खाडे, खाइ, विषम, दुर्गम स्थानपर पडते है, इसी माफिक अक्रियावादी अपने किये हुवे पापकर्मरूप शस्त्रसे पुन्यरूप वृक्षमूलको छेदन कर, अपने कर्मगुरुत्व कर स्वय ही नरकादि गतिमें गिरते है. फिर अनेक जाति-योनिमें परिभ्रमण करता हुवा एक गर्भसे दूसरे गर्भमें सक्रमण करता हुवा दक्षिणदिशागामी नारकी कृष्ण-पक्षी भविष्यकालमें भी दुर्लभबोधि होगा, इति अक्रियावादी.

(२) क्रियावादी—क्रियावादी आत्माका अस्तित्व मानते हैं. आत्माका हितवादी है. ऐसी उसकी प्रज्ञा है, बुद्धि है. आत्महित साधनरूप सम्यग्दृष्टिपना होनेसे समवादी कहा जाते हैं सर्व पदार्थोंको यथार्थपने मानते हैं सर्व पदार्थोंको द्रव्यास्तिक नयापेक्षासे नित्य और पर्यायास्तिक नयापेक्षासे अनित्य मानते हैं. सत्यवाद स्थापन करनेगले है, उन्होंकी मान्यता है कि यह लोक, परलोक अरिहत, चक्रवर्ती, गलदेव, वासुदेव हैं. अस्तिरूप मुकृतका फल है, दुष्कृतका भी फल है, पुण्य है, पाप है. परलोकमें जीव उत्पन्न होते हैं पापकर्म करनेमें नरकमें और पुण्यकर्म करनेमें देवलोकमें उत्पन्न भी होते हैं नरकसे यावत् सिद्धि तक सर्व स्थान अस्तिभाव है. ऐसी जिसकी प्रज्ञा, दृष्टि, छन्दा, राग. मान्यता है; वह महारभी यावत् महा इच्छागला है. तथापि उत्तर दिशाकी नरकमें उत्पन्न होता है. शुक्रपक्षी, स्वप्न ससारी भविष्यमें सुलभमोधि होता है

नोट—आस्तिक सम्यग्वादी होनेपर क्या नरकमें जाते हैं? (उत्तर)—प्रथम मिथ्यात्वावस्थामें नरकायुष बांधा हो, पीछेसे अच्छा सत्सग होनेसे सम्यक्त्वकी प्राप्ति हुई हो. वह जीव नरकमें उत्तर दिशामें जाता है. परन्तु शुक्रपक्षी होनेसे भविष्यमें सुलभमोधि होता है.

इसी प्रकार अक्रियावादीयोंका मिथ्यामत, और क्रियावादीयोंका सम्यक्त्वका जानकार हो, उत्तम धर्मकी अन्दर

फाल कर घोर अधकार व्याप्त धरणीतले नरकगतिको प्राप्त होता है

वह नरकावास अन्दरसे वर्तुल (गोलाकार) बाहरसे चोरस है जमीन छुरी-अस्तरे जैसी तीव्रण है सदैव महा अन्धकार व्याप्त, ज्योतिषीयोंकी प्रभा रहित और रौद्र, मांस, चरयी, मेद, पीपपडलसे व्याप्त है श्वान, सर्प, मनुष्यादिक मृत कलेवरकी दुर्गन्धसे भी अधिक दुर्गन्ध दशों दिशामें व्याप्त है स्पर्श बड़ा ही कठिन है. सहन करना पडा ही मुरझील है अशुभ नरक, अशुभ नरकवाला बहापर नारकीके नैरिय किंचित् भी निद्रा-प्रचला करना, सुना, रतिवेदनेका तो स्वप्न भी कहासे होवे ? सदैवके लिये विस्तरण प्रकारकी उज्ज्वल, प्रकृष्ट, फर्कश, फडक, रौद्र, तीव्र, दुःख सहन कर सके ऐसी नारककी अन्दर नैरिया पूर्णकृत कर्मोंको भोगवते हुवे विचरते है.

जैसे दृष्टान्त—पर्वतका उन्नत शिखरपरसे मूल छेदा हुआ पृथ्व अपने गुरुत्वपनेसे नीचे स्थान खाडे, खाइ. विषम, दुर्गम स्थानपर पडते है, इसी माफिक अक्रियावादी अपने किये हुवे पापकर्मरूप शस्त्रसे पुण्यरूप वृक्षमूलको छेदन कर, अपने कर्मगुरुत्व कर स्वय ही नरकादि गतिमें गिरते है. फिर अनेक जाति-योनिमें परिभ्रमण करता हुआ एक गर्भसे दूसरे गर्भमें सक्रमण करता हुआ दक्षिणदिशागामी नारकी कुण्ड-पत्नी भविष्यकालमें भी दुर्लभबोधि होगा इति अक्रियावादी

(२) क्रियावादी—क्रियावादी आत्माका अस्तित्व मानते हैं. आत्माका हितवादी है. ऐसी उसकी प्रज्ञा है, बुद्धि है. आत्महित साधनरूप सम्यग्दृष्टिपना होनेसे समवादी कहा जाते हैं सर्व पदार्थोंको यथार्थपने मानते हैं सर्व पदार्थोंको द्रव्यास्तिक नयापेक्षासे नित्य और पर्यायास्तिक नयापेक्षासे अनित्य मानते हैं सत्यवाद स्थापन करनेवाले हैं, उन्हींकी मान्यता है कि यह लोक, परलोक अरिहत, चक्रवर्ती, गलदेव, वासुदेव है अस्तित्व सुकृतका फल है, दुष्कृतका भी फल है, पुण्य है, पाप है. परलोकमें जीव उत्पन्न होते हैं पापकर्म करनेसे नरकमें और पुण्यकर्म करनेसे देवलोकमें उत्पन्न भी होते हैं. नरकसे यावत् सिद्धि तक सर्व स्थान अस्तिभाव है. ऐसी जिसकी प्रज्ञा, दृष्टि, छन्दा, राग. मान्यता है; वह महारभी यावत् महा इच्छावाला है. तथापि उत्तर दिशाकी नरकमें उत्पन्न होता है. शुक्लपक्षी, स्वल्प ससारी भविष्यमें सुलभबोधि होता है

नोट:—आस्तिक सम्यग्वादी होनेपर क्या नरकमें जाते हैं? (उत्तर)—प्रथम मिथ्यात्वावस्थामें नरकायुष बांधा हो, पीछेमें अच्छा सत्सग होनेसे सम्यक्त्वकी प्राप्ति हुई हो. वह जीव नरकमें उत्तर दिशामें जाता है. परन्तु शुक्लपक्षी होनेसे भविष्यमें सुलभबोधि होता है.

इसी प्रकार अक्रियावादीयोंका मिथ्यामत, और क्रियावादीयोंका सम्यक्त्वका जानकार हो, उत्तम धर्मकी अन्दर

काल कर घोर अंधकार व्याप्त घरखीतले नरकगतिको प्राप्त होता है

वह नरकावास अन्दरसे वर्तुल (गोलाकार) बाहरसे चोरस है जमीन छुरी-अस्तरे जैसी तीक्ष्ण है. मदैव महा अन्धकार व्याप्त, ज्योतिषीयोंकी प्रभा रहित और रौद्र, मांस, चरबी, मेद, पीपपडलसे व्याप्त है श्वान, सर्प, मनुष्यादिक मृत कलेवरकी दुर्गन्धसे भी अधिक दुर्गन्ध दशों दिशाम व्याप्त है. स्पर्श घडा ही कठिन है सहन करना घडा ही मुरकील है. अशुभ नरक, अशुभ नरकाला बहापर नारकीके नैरिय किंचित् भी निद्रा-प्रचला करना, सुना, रत्तिवेदनेका तो स्वप्न भी कहासे होवे ? सदैवके लिये विस्तरण प्रकारकी उज्ज्वल, प्रकट, कर्कश, कटुक, रौद्र, तीव्र, दुःख सहन कर सके ऐसी नारककी अन्दर नैरिया पूर्वकृत कर्मोंको भोगवते हुये विचरते है

जैसे दृष्टान्त—पर्वतका उन्नत शिखरपरसे मूल छेदा हुआ पृष्ठ अपने गुरुत्वपनेसे नीचे स्थान साडे, छाड़, विपम, दुर्गम स्थानपर पडते है, इसी माफिक अक्रियावादी अपने किये हुवे पापकर्मरूप शस्त्रसे पुन्यरूप वृक्षमूलको छेदन कर, अपने कर्मगुरुत्व कर स्वय ही नरकादि गतिमें गिरते है. फिर अनेक जाति-योनिमें परिभ्रमण करता हुआ एक गर्भसे दूसरे गर्भमें सक्रमण करता हुआ दक्षिणदिशागामी नारकी कृष्ण-पत्नी भविष्यकालमें भी दुर्लभबोधि होगा. इति अक्रियावादी

(२) क्रियावादी—क्रियावादी आत्माका अस्तित्व मानते हैं. आत्माका हितवादी है. ऐसी उसकी प्रज्ञा है, बुद्धि है. आत्महित साधनरूप सम्यग्दृष्टिपना होनेसे समवादी कहा जाते हैं सर्व पदार्थोंको यथार्थपने मानते हैं सर्व पदार्थोंको द्रव्यास्तिक नयापेक्षासे नित्य और पर्यायाम्भिक नयापेक्षासे अनित्य मानते हैं. सत्यवाद स्थापन करनेवाले हैं, उन्हींकी मान्यता है कि यह लोक, परलोक अरिहत, चक्रवर्ती, जलदेव, वासुदेव है. अस्तिरूप मुक्तका फल है, दुष्कृतका भी फल है, पुण्य है, पाप है. परलोकमें जीव उत्पन्न होते हैं पापकर्म करनेमें नरकमें और पुण्यकर्म करनेसे देवलोकमें उत्पन्न भी होते हैं. नरकसे यावत् सिद्धि तक सर्व स्थान अस्तिभाव है. ऐसी जिसकी प्रज्ञा, दृष्टि, छन्दा, राग. मान्यता है; वह महारभी यावत् महा इच्छावाला है. तथापि उत्तर दिशाकी नरकमें उत्पन्न होता है. शुक्लपची, स्वल्प ससारी भविष्यमें सुलभमोधि होता है

नोट —आस्तिक सम्यग्वादी होनेपर क्या नरकमें जाते हैं? (उत्तर)—प्रथम मिथ्यात्वावस्थामें नरकायुष चांधा हो, पीछेमें अच्छा सत्संग होनेसे सम्यक्त्वकी प्राप्ति हुई हो. वह जीव नरकमें उत्तर दिशामें जाता है. परन्तु शुक्लपची होनेसे भविष्यमें सुलभमोधि होता है.

इसी प्रकार अक्रियावादीयोंका मिथ्यामत, और क्रियावादीयोंका सम्यक्त्वका जानकार हो, उत्तम धर्मकी अन्दर

रुचिवान् ग्रने, तीर्थंकर भगवानने फरमाये हुये पवित्र धर्ममें दृढ श्रद्धा रखे जीनादि पदार्थका स्वरूपको निर्णयपूर्वक समझे हेय, ज्ञेय और उपादेयका जानकार बने यह प्रथम सम्यक्त्व प्रतिमा चतुर्थ गुणस्थानवर्ती जीनोंको होती है सम्यक्त्वकी अन्दर देवादि भी चोभ नहीं कर सके निरति-चार सम्यक्त्वका आराधन करे परन्तु नवकारसी आदि व्रत प्रत्याख्यान जो जानता हुआ भी मोहनीय कर्मके उदयसे प्रत्याख्यान करनेको असमर्थ है। इति प्रथम सम्यक्त्व प्रतिमा

(२) दूसरी व्रत प्रतिमा—जो पूर्वोक्त धर्मकी रुचि-वाला होते है, और शील-आचार, व्रत-नवकारसी आदि दश प्रत्याख्यान, गुणव्रत, निरमण, प्रत्याख्यान, पौषध (अयंपारादि), ज्ञानादि गुणोंसे आत्माको पुष्ट बनानेको उपवास कर सकते परन्तु प्रत्याख्यानी मोहनीय कर्मोदयसे सामायिक और दिशावगासिक करनेको असमर्थ है इति दूसरी प्रतिमा.

(३) सामायिक प्रतिमा—पूर्वोक्त सम्यक्त्वरुचि व्रत, प्रत्याख्यान, सामायिक, दिशावगासिक सम्यक् प्रकारसे पालन कर सके परन्तु अष्टमी, चतुर्दशी, पूर्णिमा, अमावास्या, (कल्याणक तिथि) प्रतिपूर्ण पौषध करनेमें असमर्थ है इति तीसरी सामायिक प्रतिमा

(४) चौथी पौषध प्रतिमा—पूर्वोक्त धर्मरुचिमे यावत् प्रतिपूर्ण पौषध कर सके, परन्तु एक रात्रिकी जो प्रतिमा (एक

रात्रिका कायोत्सर्ग करना) यहा पाच गोल धारण करना पडता है यह करनेमें अममर्थ है यह प्रतिमा जघन्य एक दोय, तीन रात्रि, यात्रत् उत्कृष्ट न्यार माम तककी है. इति चौथी पाँपघ प्रतिमा

(५) पाचमी एक रात्रिकी प्रतिमा—पूर्वोक्त यावत् पाँपघ पाल कर और पाच गोल जो—(१) खान मजनका त्याग (२) रात्रिभोचन करनेका त्याग (३) घोरीकी एक बाम राढ बीरा घरे. (४) दिनको कुशीलका त्याग (ब्रह्मचर्य पालन करे) (५) रात्रि ममय मर्यादा करे. इम पांच नियमोंको पालन करे इति पाचमी प्रतिमा उत्कृष्ट पाच मास घरे

(६) छठी ब्रह्मचर्य प्रतिमा—पूर्वोक्त सर्व कर्म करते हुये मर्यत ब्रह्मचर्यत्रत पालन करे इति छठी ब्रह्मचर्य प्रतिमा. छ मास धारण करे.

(७) सचित्त प्रतिमा—पूर्वोक्त सर्व पालन कर और सचित्त वस्तु खानेका त्याग करे, यावत् सात मास करे इति सातवी सचित्त प्रतिमा.

(८) आठवी आरंभ प्रतिमा—पूर्वोक्त सर्व नियम पालन करे और अपने हाथोंसे आरम न करे यावत् आठ मास करे. इति आठवी आरम प्रतिमा.

(९) नौवी सारभ प्रतिमा—पूर्वोक्त सर्व नियम पाले, और अपने वास्ते आरमादि करे, यह पदार्थ अपने काममें

नहीं आये. अर्थात् त्याग करे. यावत् नव मास करे इति नौवीं सारंभ प्रतिमा.

(१०) प्रसारभ प्रतिमा—पूर्वोक्त सर्व नियम पाले और प्रतिमाधारीके निमित्त अगर कोई थारभ कर थशनादि देवे, तोभी उसको लेना नहीं कल्पै. विशेष इतना है कि इस प्रतिमाका आराधन करनेवाले थावक खुरमुडन-शिरमुडन कराके हजामत करावे, परन्तु शिरपर एक शिरा (चोटी) रखावे ताके साधु थावककी पहिचान रहे अगर कोई करम्य गाला आके पूछे उस पर प्रतिमाधारीको दो मापा घोलनी कल्पै अगर जानता हो तो कहेकि मैं जानता हु और न जानता हो तो कहे कि मैं नहीं जानु ज्यादा घोलना नहीं कल्पै यावत् दश मास धरे. इति दशवी प्रतिमा.

(११) अमणभूत प्रतिमा—पूर्वोक्त सर्व क्रिया साधन करे खुरमुडन करे. स्वशक्ति शिरलोचन करे साधुके माफिक वस्त्र, पात्र रखे, आचार विचार साधुकी माफिक पालन करते हुये चलता हुवा इर्यासमिति सयुक्त चार हस्त प्रमाण जमीन देखके चले अगर चलते हुए राहस्ते उस प्राणी देखें तो मत्न करे जीव हो तो अपने पाओंको उचा नीचा तिरछा रखता हुवा अन्य मार्गमें आक्रम करे भिच्चा के लिये अपना पेजवन्ध मुक्त न होनेसे अपने न्यातके घरोंकी भिच्चा करनी कल्पै इसमें भी जिस घरपे अल है, पूर्वे चावल तैयार हो और दाल तैयार पीछेसे होती रहे, तो चावल लेना कल्पै, दाल

नहीं कल्पे अगर पूर्वे दाल तैयार हुइ हो, तो दाल लेना कल्पे, तथा पूर्व दोनों तैयार हुवा हो, तो दोनों लेना कल्पे. और पूर्वे कभी तैयार न हुवा हो तो दोनों लेना नहीं कल्पे. जिस कुलमें भिक्षा निमित्त जाते है वहांपर कहना चाहिये कि-मैं प्रतिमाधारक थावक हु, अगर उस प्रतिमाधारी थावकको देख कोइ पूछे कि-तुम कोन हो ? तब उत्तर देना चाहिये, मैं इग्यारमी प्रतिमाधारक थावक हू. इसी माफिक उत्कृष्ट इग्यार मास तक प्रतिमा आराधन करे, इति.

नोट—प्रथम प्रतिमा एक मासकी है एकान्तर तपश्चर्या करे दूसरी प्रतिमा उत्कृष्ट दोय मासकी है. छठ छठ पारणा करे. एव तीसरी प्रतिमा तीन मासकी, तीन तीन उपवासका पारणा करे चौथी प्रतिमा चार मासकी—यावत् इग्यारवी प्रतिमा इग्यारा मासकी और इग्यार इग्यार उपवासका पारणा करे

आनन्दादि १० श्रानकोंको इग्यारा प्रतिमा बहानेमें साढे पांच वर्षकाल लगाया. इसी माफिक तपश्चर्याभी करीथी.

प्रथमकी चार प्रतिमा सामान्य रूपसे गृहनासमें साधन होती है. पांचवी प्रतिमा कार्तिकशेठने १०० बार बहन करीथी. प्रायः इग्यारवी प्रतिमा बहनकर आयुष्य अधिक हो तो दीक्षा ग्रहण करते है. इति

इति छद्वा अध्ययनका सक्षिप्त सार

(७) सातवा भिक्षुप्रतिमा नामका अध्ययन.

(१) प्रथम एक मासकी भिक्षु प्रतिमा. (२) दो मासकी भिक्षु प्रतिमा. (३) तीन मासकी भिक्षु प्रतिमा (४) चार मासकी भिक्षु प्रतिमा (५) पांच मासकी भिक्षु प्रतिमा. (६) छे मासकी भिक्षु प्रतिमा. (७) सात मासकी भिक्षु प्रतिमा. (८) प्रथम सात अहोरात्रिकी आठवीं भिक्षु प्रतिमा. (९) दूसरी सात अहोरात्रिकी नौवीं भिक्षु प्रतिमा (१०) तीसरी सात अहोरात्रिकी दशवीं भिक्षु प्रतिमा (११) अहोरात्रिकी इग्यारवीं भिक्षु प्रतिमा (१२) एक रात्रिकी बारहवीं भिक्षु प्रतिमा

(१) एक मासकी प्रतिमा स्वीकार करनेवाले मुनिको एक मास तक अपने शरीरकी चिंता (सरक्षण) करना नहीं कल्पै. जो कोई देव, मनुष्य, तिर्यक्ष, सबन्धी परीपद उत्पन्न हो, उसे सम्यक् प्रकारसे सहन करना चाहिये

(२) मासिक प्रतिमा स्वीकार किये हुवे मुनिको प्रतिदिन एक दात भोजनकी, एक दात आहारकी लेना कल्पै. वह भी अज्ञात कुलसे शुद्ध निर्दोष लेना, आहार ऐसा लेना कि जिसको बहुतसे दुपद, चतुष्पद, श्रमण, ब्राह्मण, अतिथि, कृपण, भगा भी नहीं इच्छता हो, वह भी एकला भोजन करता हो वहासे लेना कल्पै परन्तु दोग, तीन, चार, पांच या बहुतसे भोजन करते हो, वहांसे लेना नहीं

कल्पै. तथा गर्भशतीके लिये, बालकके लिये किया हुआ भी नहीं कल्पै जो स्त्री अपने बच्चेको स्तनपान कराती हो, उन्हके हाथसे भी लेना नहीं कल्पै. दोनों पांव डेलीकी अन्दर हो, दोनों पांव डेलीकी बाहार हो, तो भी मिचा लेना नहीं कल्पै. अगर एक पाव बाहार, एक पाव अन्दर हो तो मिचा लेना कल्पै.

(३) मासिक प्रतिमा स्वीकार किये हुने मुनिको गौचरी निमित्ते दिनका आदि, मध्यम और अन्तिम-ऐसे तीन काल कल्पै. जिसमें भी जिस कालमें मिचाको जाते हैं, उसमें मिचा मिले, न मिले तो इतनेमें ही मन्तोप रखे. परन्तु शेषकालमें मिचाको जाना नहीं कल्पै.

(४) मासिक प्रतिमा स्वीकार किये हुने मुनिको छे प्रकारसे गौचरी करनी कल्पै—(१) पेला सम्पूर्ण सदुक्के आकार च्यारों कौनोंके घरोंसे मिचा ग्रहन करे (२) अदपेला, एक तर्फके घरोंसे मिचा ग्रहन करे. (३) गौमूत्रिका—एक इधर एक उधर घरोंमें मिचा ग्रहन करे. (४) पतगीया—पतगकी माफिक एक घर किसी महोलाका तो दूसरा किमी महोलाका घरसे मिचा ग्रहन करे. (५) सखावर्तन—एक घर उचा, एक घर नीचासे मिचा ग्रहन करे (६) सम—सीधा-पक्सर घरोंकी मिचा करे.

(५) मासिक प्रतिमा स्वीकार किये हुने मुनिको

जहाँपर लोग जान जावे कि यह प्रतिमाधारी मुनि हैं, तो उहा एक रात्रिसे अधिक नहीं ठहर सके, अगर न जाने तो दोय रात्रि ठहर सके इसीसे अधिक जितने दिन ठहरे उतना ही छेद या तपका प्रायश्चित्त होते है यहापर ग्रामादि अपेक्षा है, न कि जगलकी

(६) मासिक प्रतिमा स्वीकार कीये हुवे मुनिकों च्यार प्रकारकी भाषा बोलनी कल्पै. (१) याचनी—अशनादिककी याचना करना (२) पृच्छना—प्रश्नादि तथा मार्गका पूछना. (३) अणुषणि—गुर्वादिकी आज्ञा तथा मकानादिकी आज्ञाका लेना (४) पूछा हुवा प्रश्नादिका उत्तर देना

(७) मासिक प्रतिमा स्वीकार कीये हुवे मुनिको तीन उपासरोकी प्रतिलेखना करना कल्पै (१) आराम—यगी-चोंके बगलादिके नीचे (२) मडप—छत्री आदि विकट स्थानोंमें. (३) वृक्षके नीचे

(८) मासिक प्रतिमा स्वीकार किये हुवे मुनिकों उक्त तीनों उपासरोकी आना लेना कल्पै

(९) मासिक प्रतिमा स्वीकार किये हुवे मुनिकों उक्त तीनों उपासरोमें निवास करना कल्पै

(१०) मासिक प्रतिमा स्वीकार किये हुवे मुनिकों तीन सधारा (धिछाना) कि प्रतिलेखना करना कल्पै (१)

पृथ्वीशिलाका पट. (२) काष्ठका पाट. (३) यथा तैयार किया हो वैसा.

(११) मासिक प्रतिमा स्वीकार किये हुवे मुनि जिस मकानमें ठहरे हो, वहापर कोई स्त्री तथा पुरुष आया हो तो उसके लिये मुनिको उस मकानसे नीकलना तथा प्रवेश करना नहीं कल्पै. भावार्थ—कोई पुण्यवान् आया हो, उमको सन्मान देना या दयाके लिये उस मकानसे अन्य स्थानमें नीकलना तथा अन्य स्थानमें प्रवेश करना नहीं कल्पै

(१२) मासिक प्रतिमा स्वीकार किये हुवे मुनि ठहरा हो उसी उपाश्रयमें अग्नि प्रज्वलित हो गई हो तो भी उस अग्निके भयसे अपना शरीरपर ममत्त्वभावके लिये वहासे नीकलना तथा अन्य स्थानमें प्रवेश करना नहीं कल्पै. अगर कोई गृहस्थ मुनिको देखके विचार करे कि इस अग्निमें यह मुनि जल जायगा. मैं इसको निकालु. ऐसा विचारसे मुनिकी बाह पकडके निकाले तो उस मुनिको नहीं कल्पै कि उस निकालनेवाले गृहस्थको पकडके रोक रखे. परन्तु मुनिको कल्पै कि आप इर्यासमिति महित चलता हुआ इस मकानसे निकल जाये

भावार्थ—प्रतिमाधारी मुनि अपने लिये परिपह सहन करे, परन्तु दूसरा अपनेको निकालनेको आया हो, अगर उस समय आप नहीं नीकले, तो आपके निष्पन्न उस गृहस्थको

जहाँपर लोग जान जावे कि यह प्रतिमाधारी मुनि है, तो वहाँ एक रात्रिसे अधिक नहीं ठहर सके, अगर न जाने तो दोय रात्रि ठहर सके इसीसे अधिक जितने दिन ठहरे उतना ही छेद या तपका प्रायश्चित्त होते है यहाँपर ग्रामादि अपेक्षा है, न कि जगलकी

(६) मासिक प्रतिमा स्वीकार कीये हुवे मुनिकों च्यार प्रकारकी भाषा बोलनी कल्पै (१) याचनी—अशनादिककी याचना करना. (२) पृच्छना—प्रश्नादि तथा मार्गका पूछना (३) अखवणि—गुर्गादिकी आज्ञा तथा भकानादिकी आज्ञाका लेना (४) पूछा हुवा प्रश्नादिका उत्तर देना

(७) मासिक प्रतिमा स्वीकार कीये हुवे मुनिको तीन उपासरोकी प्रतिलेखना करना कल्पै (१) आराम—बगी-चोंके बगलादिके नीचे. (२) मडप—छत्री आदि विकट स्थानोंमें (३) वृक्षके नीचे

(८) मासिक प्रतिमा स्वीकार किये हुवे मुनिकों उक्त तीनों उपासरोकी आज्ञा लेना कल्पै.

(९) मासिक प्रतिमा स्वीकार किये हुवे मुनिकों उक्त तीनों उपासरोमें निवास करना कल्पै

(१०) मासिक प्रतिमा स्वीकार किये हुवे मुनिकों तीन सधारा (विछाना) कि प्रतिलेखना करना कल्पै (१)

पृथ्वीशिलाका पट. (२) काष्ठका पाट. (३) यथा तैयार किया हो वैसा.

(११) मासिक प्रतिमा स्वीकार किये हुवे मुनि जिस मकानमें ठहरे हो, वहापर कोई स्त्री तथा पुरुष आया हो तो उसके लिये मुनिको उस मकानमें नीकलना तथा प्रवेश करना नहीं कल्पै. भावार्थ—कोई पुण्यवान् आया हो, उसको सन्मान देना या दण्डनके लिये उस मकानसे अन्य स्थानमें नीकलना तथा अन्य स्थानमें प्रवेश करना नहीं कल्पै

(१२) मासिक प्रतिमा स्वीकार किये हुवे मुनि ठहरा हो उसी उपाश्रयमें अग्नि प्रज्वलित हो गई हो तो भी उस अग्निके भयसे अपना शरीरपर ममत्प्रभाउके लिये वहामें नीकलना तथा अन्य स्थानमें प्रवेश करना नहीं कल्पै. अगर कोई गृहस्थ मुनिको देखके विचार करे कि इस अग्निके यह मुनि जल जायगा मैं इसको निकालु. ऐमा विचारसे मुनिकी बाह पकडके निकाले तो उस मुनिको नहीं कल्पै कि उस निकालनेवाले गृहस्थको पकडके रोक रखे. परन्तु मुनिको कल्पै कि आप इर्यासमिति सहित चलता हुआ इस मकानसे निकल जाये

भावार्थ—प्रतिमाधारी मुनि अपने लिये परिपह सहन करे, परन्तु दूसरा अपनेको निकालनेको आया हो, अगर उस समय आप नहीं नीकले, तो आपके निष्पन्न उस गृहस्थको

भगवान् वीरप्रभुके पाच हस्तोत्तर नक्षत्र (उत्तरा फाल्गुनि नक्षत्र था) (१) हस्तोत्तरा नक्षत्रमें दशवा देवलोकमे च-
 वके देवानदा नागस्थीकी कुक्षिमें अवतार धारण किया. (२)
 हस्तोत्तरा नक्षत्रमें भगवानका सहरण हुवा, अर्थात् देवानदाकी
 कुक्षसे हरिणगमेपी देवताने त्रिशलादे राक्षीकी कुक्षमें सहरण
 कीया (३) हस्तोत्तरा नक्षत्रमें भगवानका जन्म हुवा
 (४) हस्तोत्तरा नक्षत्रमें भगवानने दीक्षा धारण करी
 (५) हस्तोत्तरा नक्षत्रमें भगवानको केरऽज्ञान उत्पन्न हुवा
 यह पांच कार्य भगवानके हस्तोत्तरा नक्षत्रमें हुवा है और स्वा-
 ति नक्षत्रमे भगवान् वीर प्रभु मोक्ष पधारेथे शेषाधिकार पर्यु-
 पणाकल्प अर्थात् कल्पवृक्षमें लिखा है श्रीमद्रघाट्टस्वामी यह
 दशाश्रुत स्कन्ध रचा है. जिसका आठवा अध्यायनरूप कल्पवृक्ष
 है. उसके अर्थरूप भगवान वीरप्रभु बहुतमे मायु, साध्वीयों,
 आवक, आविका, देव, देवीयोंके मायमे निरावमान हो पर-
 माया है उपदेश किया है. विशेष प्रकारमे प्ररूपणा करते हुवे
 बारबार उपदेश किया है.

इति आठवा अध्यायन

[९] नौवा अध्यायन

महा मोहनीय कर्म बन्धके १० स्थान है.

चपानगरी, पूर्णभद्रोद्यान, कोणिकराजा, जिसकी धा-
 रिणी राक्षी, उम नगरीके उद्यानमें भगवान् वीरप्रभुका आग-

मन हुआ, राजा कोणिक सपरिवार न्यार प्रकारकी सेना सहित तथा नगरीके लोक भगवानको उन्दन करनेको आये भगवानने विचित्र प्रकारकी धर्मदेशना दी परिषद देशनामृतका पान कर पीछे गमन कीया

भगवान् अपने माधु, साध्वीयोंको आमत्रण कर कहते हुयेकि—हे आर्यो ! महा मोहनीय कर्मबन्धके तीस स्थान अगर पुरुष या स्त्रीयों बारबार इसका आचरण करनेसे समाचरते हुये महामोहनीय कर्मका बन्ध करते हैं. वहही तीस स्थान मैं आज तुमको सुनाता हु, ध्यान देके सुनो—

(१) व्रस जीवोंको पाणीमें डुगा डुगा के मारता है वह जीव महामोहनीय कर्म उपार्जन करता है. (२) व्रस जीवोंका श्वासोश्वास बन्धकर मारनेसे—(३) व्रस जीवोंको अग्नि या धूमसे मारनेसे—(४) सर्व अगमें मस्तक उत्तम अंग है, अगर कोई मस्तकपर धाव कर मारता है, वह जीव महा मोहनीय कर्म उपार्जन करता है. (५) मस्तकपर चर्म बीटके जीवोंको मारता है, वह महामोहनीय कर्म उपार्जन करता है. (६) कोई बाजले, गूगे, लूले, लगडे या अज्ञानी जीवोंको फल या दडसे मारे या हांसी, ठट्ठा, मरकरी करते है, वह महा मोहनीय कर्म बान्धता है. (७) जो कोई आचारी नाम धराता हुवे, गुप्तपणे अनाचारको सेवन करे, अपना अनाचार गुप्त रखनेके लीये असत्य बोले तथा वीतरागके वचनोंको गुप्त रख आप उत्सृजोंकी प्ररूपणा करे, तो महा मोहनीय कर्म बांधे.

(८) अपने किया हुआ अपराध, अनाचार, दूसरेके शिरपर लगा देनेसे—(९) आप जानते हैं कि यह बात जठी है तो भी परिपन्की अन्दर बैठके मित्र भाषा बोलके क्लेशकी वृद्धि करनेसे—(१०) राजा अपनी मुख्त्यारी प्रधानको तथा श्रेष्ठ मुनिमको मुख्त्यारी देदी हो, यह प्रधान, तथा मुनिम उस राजा तथा श्रेष्ठकी दोलत-धन तथा स्त्री आदिकों अपने स्वाधीन करके राजा तथा श्रेष्ठका विश्वासघात कर निराधार बना उन्हें का तिरस्कार करे, उसके कामभोगोंमें अन्तराय करे, उसको प्रति-कूल दुःख देवे, रुदन करावे, इत्यादि तो महामोहनीय कर्म उपार्जन करे (११) जो कोई बाल ब्रह्मचारी न होनेपर भी लोगोंमें बालब्रह्मचारी कहाता हुआ स्त्रीभोगोंमें मूर्च्छित बन स्त्रीसंग करे, तो महा मोहनीय कर्म उपार्जन करे (१२) जो कोई ब्रह्मचारी नहीं होनेपर भी ब्रह्मचारी नाम धराता हुआ स्त्रियोंके कामभोगमें आसक्त, जैसे गायोंके टोलेमें गर्दभकी माफिक ब्रह्मचारीओंकी अन्दर साधुके रूपको लज्जित-शरमिंदा करनेवाला अपना आत्माका अहित करनेवाला, बाल, अज्ञानी, मायासयुक्त, मृषावाद सेवन करता हुआ, कामभोगकी अभिलाषा रखता हुआ महा मोहनीय कर्म उपार्जन करे (१३) जो कोई राजा, श्रेष्ठ तथा गुर्वादिकी प्रशंसासे लोगोंमें मानने पूजने योग्य बना है, फिर उसी राजा, श्रेष्ठ तथा गुर्वादिकके गुण, यश कीर्तिकों नाश करनेका उपाय करे, अर्थात् उन्हेंसे प्रति कूल बर्ताव करे, तो महा मोहनीय कर्म उपार्जन करे. (१४)

जो कोई अनीश्वरको राजा अपना राज्य लक्ष्मी दे के तथा नगरके लोक मिलके उसको मुखीया (पच) बनाया हो फिर राज्य-लक्ष्मी आदिका गर्व करता हुआ उस लोगोंको दंडे मारे, मरगावे तथा उ-होंका आहित करे, तो महा मोहनीय कर्म धान्धे. (१५) जैसे सर्पिणी इडा उत्पन्न कर आपही उ-सीका भक्षण करे, इसी माफिक स्त्री मर्त्तारकों मारे, सेनापति राजाकों मारे, शिष्य गुरुको मार, तथा विश्वासघात करे, उ-न्होंसे प्रतिकूल करते तो महा मोहनीय (१६) जो कोई देशाधिपति राजाकी घात करनेकी इच्छा करे तथा नगरशेठ आदि महा पुरुषोंकी घात चिन्तवे तो महा मोहनीय -(१७) जैसे समुद्रमें द्वीप आधारभूत होते हैं, इसी माफिक बहुत जीवोंका आधारभूत ऐसा बहुतमें देशोंका राजाकी घात करनेकी इच्छा-वाला जीव महामोहनीय (१८) जो कोई जीव परम वैराग्यको प्राप्त हो, सुसमाधिनन्त साधु बनना चाहे यथात् दीक्षा लेना चाहे, उसको कुयुक्तियोंसे तथा अन्य कारणोंसे चारित्र्यसे परिणाम शीतल करवा दे, तो महा मोहनीय. (१९) जो अनन्त ज्ञान-दर्शनधारक सर्वज्ञ भगवानका अग्र्यवाद बोले तो महा मोहनीय (२०) जो सर्वज्ञ भगवत् तीर्थकरोंने निर्देश किया हुआ स्याद्वादरूप भवतारक धर्मका अग्र्य-वाद बोले, तो महामोहनीय. (२१) जो आचार्य महा-राज, तथा उपाध्यायजी महाराज, दीक्षा, शिक्षा तथा सूत्रज्ञा-नके दातार, परमोपकारीके अपयश करे, हीलना, निंदा, खी-

सना करे, वह बाल अज्ञानी महा मोहनीय—(२२) जो आचार्योपाध्यायके पास ज्ञान, ध्यान कर आप अभिमान, गर्वका मारा उमी उपकारी महा पुरुषोंकी सेवा भक्ति, विनय, घेयावच, यश कीर्ति न करे तो महा मोहनीय (२२) जो कोई अव-
 द्युश्रुत होनेपरभी अपनी तारीफ उठाने कारण लोगोंसे कहैकि—
 मैं वदुश्रुत अर्थात् सर्व शास्त्रोंका पारगामी हूँ, ऐसा अमद्वाद
 बदे तो महा मोहनीय. (२४) जो कोई तपस्वी होनेका दावा
 रखे, अर्थात् अपना कृश शरीर होनेमे दुनीयांको कहै कि मैं
 तपस्वी हूँ—तो महा मोह (२५) जो कोई साधु शरीरादिसे
 सुदृढ सहननवाला होनेपरभी अभिमानके मारे विचारेकि—
 मैं ज्ञानी हूँ, वदुश्रुत हूँ, तो ग्लानादिकी बेयावच क्यों कर ?
 इसनेभी मेरी बेयावच नहीं करीथी, अथवा ग्लान, तपस्वी,
 बुद्धादिकी बेयावच करनेका कबूल कर फिर बेयावच न करे
 तो महा मोहनीय कर्म उपाजर्जन करे (२६) जो कोई चतुर्विध
 सधमें बलेशयुद्धि करना, छेद, भेद डलाना, फुट पाड देना—
 ऐसा उपदेश दे कथा करे कराने तो महा मोहनीय—(२७)
 जो कोई अधर्मकी प्रशंसा करे तथा यत्र, मत्र, तत्र, यशोकर-
 ण प्रयुजे ऐसे अधर्मउर्धक कार्य करे, तो महामोहनीय (२८)
 जो कोई इस लोक-मनुष्य सगन्धी परलोक-देवता मगन्धी,
 कामभोगसे अतृप्त अर्थात् सदैव कामभोगकी अभिलाषा रखे, जहाँ
 मरणावस्था आगइ हो, वहातकभी कामाभिलाष रखे, तो महा
 मोहनीय (२९) जो कोई देवता महान्मद्भि, ज्योति, कान्ति,
 महाबल, महायशका धनी देव है, उसका अवर्णवाट बोले,

निन्दा करे, कथवा कोई तब पालके देवता हुआ है, उसका अवर्णनाद बोले तो, महामोहनीय. (३०) जिसके पास देवता नहीं आता है, जिन्होंने देवताओंको नहीं देखा हो और अपनी पूजा, प्रतिष्ठा मान बढ़ानेके लीये जनसमूहके आगे कहेकि— चार जातिके देवताओंमे अमृत जातिका देवता मेरे पास आता है, तो महामोहनीय कर्म उपार्जन करे.

यह ३० कारणोंमे जीव महा मोहनीय कर्म उपार्जन (बन्ध) करता है. ताम्बे मुनिमहाराज इन्हीं कारणोंको सम्यक् प्रकारमे जानके परित्याग करे. अपना आत्माका द्वितीय शुद्ध चारित्रका रूप करे. अगर पूर्वजन्ममें इस मोहनीय कर्म बन्धके स्थानोंको सेवन कीया हो, उस कर्मवृत्ति करनेको प्रयत्न करे. आचारग्रन्थ, गुणग्रन्थ, शुद्धात्मा चान्त्यादि दश प्रकारका पवित्र धर्मका पालन कर पापका परित्याग, जैसा सर्प काचलीका त्याग करता है, इसी माफिक को इस लोक और परलोकमे कीर्तिभी उभी महा पुरुषोंकी होती है कि जिन्होंने ज्ञान, दर्शन चारित्र, तप कर इस मोहनरेन्द्रका मूलमे पराजय कीया है. अहो शूरवीर ! पूर्ण पराक्रमधारी ! तुमारा अनादि कालका परम शत्रु जो जन्म, जरा, मृत्युरूप दुःख देनेवालाका जल्दी दमन करो. जिससे चेतन अपना निवस्थानपर गमन करता हुवेमें कोई मिथन न करे अर्थात् शाश्वत सुखोंमे विराजमान होवे ऐसा फरमान सर्वज्ञका है.

॥ इति नौषा अध्ययन समाप्त ॥

(१०) दशवा अध्ययन.

नौ निदानाधिकार

राजगृह नगर, गुणशीलोद्यान, श्रेष्ठिक राजा, चेलणा राणी, इस सबका वर्णन जैसा उग्रदाजी छत्रके माफिक समझना

एक समय राजा श्रेष्ठिक स्नान भजन कर, शरीरको चन्दनादिकका लेपन किया, कठकी अन्दर अच्छे सुगन्धिदार पुष्पोंकी मालाको धारण कर सुवर्ण आदिमे मडित, मणि आदि रत्नोंसे जडित भूषणोंको धारण किये, हाथोंकी अंगुलियोंमें मुद्रिका पहनी, कम्मरकी अन्दर कदोरा धारण किया है, मुगटमे मस्तक सुशोभनीक बना है, इत्यादि अच्छे रत्न भूषणोंसे शरीरको कल्पवृक्षकी माफिक अलंकृत कर, शिरपर कौरववृक्षकी माला समुक्त छत्र धरायता हुआ, जैसे ग्रहगण, नक्षत्र, तारोंके सुपरिमारसे चन्द्र आकाशमें शोभायमान होता है इसी माफिक भूमिके भूषणरूप श्रेष्ठिक नरेन्द्र, निम्का दर्शन लोगोंको परमप्रिय है यह एक समय बाहारकी आस्थानशालाकी अन्दर आ कर राजयोग्य सिंहासनपर बैठके अपने अनुचरोंको पुलवायके ऐसा आदेश करता हुआ—
तुम इस राजगृह नगरकी बाहार आराममें जावो, जहां स्त्री-पुरुष क्रीडा करते हो, उद्यान जहां नानाप्रकारके वृक्ष, पुष्प, पत्रादि होते हैं कुम्भकारादिकी शाला, यक्षादिके देवालय,

समाके स्थानोंमें पाणीके पर्यकी शाला, करियाणकी शाला, बैपारीयोंकी दुकानोंमें, रथोंकी शालाओंमें, तुनादिकी शालामें, सुतारोंकी शालामें, तुनारोंकी शालामें, इत्यादि स्थानोंमें जाके कहो कि—राजा श्रेणिक (अवरनाम भमसार) की यह आज्ञा है कि श्रमणभगवन्त वीरप्रभु पृथ्वीमडलको पवित्र करते हुये, एक ग्रामसे दूसरे ग्राम विहार करते हुये, सुखे सुखे तप-सयमकी अन्दर अपनी आत्माको भावते हुये, यहाँपर पधार जाये तो तुम लोग उन्हेंको बड़ा आदरसत्कार करके स्थानादि जो चाहिये उन्हेंकी आज्ञा दो, भक्ति करो, घाटमें भगवान् पधारनेको रुश खबर राजा श्रेणिकको शीघ्रता पूर्वक देना, ऐसा हुकम राजा श्रेणिकका है.

आदेशकारी पुरुषों इस श्रेणिकराजाका हुकमको मचिनय सादर कर—कमलोंसे अपना गिरपर चढाके बोलेकि—हे घराधिप ! यह आपका हुकम मैं शीघ्रता पूर्वक सार्थक करुगा. ऐसा कहके वह कूटम्बीक पुरुष राजगृह नगरके मध्य भाग होके नगरकी राहार् जाके जो पूर्वोक्त स्थानोंमें राजा श्रेणिकका हुकमकी उद्घोषणा कर शीघ्रतासे राजा श्रेणिकके पास आके आज्ञाको सुप्रत करदी

उसी समय भगवान् वीरप्रभु, जिन्होंका धर्मचक्र आकाशमें चल रहा है, चौदा हजार मुनियों, छत्तीस हजार साध्वीयों कोटिगमे देव-देवीयोंके परिवारमें भूमडलको पवित्र करते हुये राजगृह नगरके उद्यानमें समवसरण करते हुये

राजगृह नगरके दो, तीन, चार यात्रु बहुतसे राहस्ते-पर लोगोंको खबर मिलनेही बड़े उत्साहमें भगवान्को वन्दन करनेको गये वन्दन नमस्कार कर, सेवा भक्ति कर अपना जन्म पवित्र कर रहेथे

भगवान्को पधारे हुये देखके महत्तर वनपालक भगवान्के पास आया, भगवान्का नाम—गोत्र पूजा और हृदयमें धारण कर वन्दन नमस्कार कीया बादमें वह सब वनपालक लोक एकत्र मिल आपसमें कहने लगे—अहो ! देवाणुप्रिय ! राजा श्रेणिक जिस भगवान्के दर्शनकी अभिलाषा करते थे वह भगवान् आज इस उद्यानमें पधार गये है तो अपनेको शीघ्रता पूर्वक राजा श्रेणिकसे निवेदन करना चाहिये

सब लोक एकत्र मिलके राजा श्रेणिकके पास गये और कहते हुये कि—हे स्वामिन् ! जिस भगवान्के दर्शनकी आपको प्यास थी अभिलाषा करते थे, वह भगवान् वीरप्रभु आज उद्यानमें पधार गये है यह सुनकर राजा श्रेणिक बड़ाही हर्ष सतोषको प्राप्त हुआ सिंहासनसे उठ जिस दिशामें भगवान् विराजमान थे, उमी दिशामें मात आठ कदम जाके नमोऽर्पुण देके बोला कि—हे भगवान् ! आप उद्यानमें विराजमान हो, मैं यहाँपर रहा आपको वन्दन करता हूँ आप स्वीकार करीये

बादमें राजा श्रेणिक उम खबर देनेवालोंका पडाही

आदर, मत्कार कीया और चढाइकी अन्दर इतना द्रव्य दीया कि उन्होंनेकी कितनी परपरा तक भी खाया न जाय. बादमें उन्होंनेको विसर्जन किया और नगर गुतीया (कोटवाल) को गुलाबके आदेश करते हुवे कि तुम जानों राजगृह नगर अभ्यन्तर और गह्वारमे साफ करवायों, सुगन्धि जलमे छटकाय करवायों, जगे जगेपर पुष्पोंके ढेर लगवायों, सुगन्धि धूपमे नगर व्याप्त कर दो-इत्यादि आज्ञाको शिरपर चढाके कोटवाल अपने कार्यमें प्रवृत्ति करता हुआ

राजा श्रेणिक मैनापतिको बुलाके आज्ञादि कि तुम जाये-हस्ती, अश्व, रथ और- पैदल-यह चार प्रकारकी मैना तैयार कर हमारी आज्ञा वार्षास सुप्रत करो. मैनापति राजाकी आज्ञाको सहर्ष स्वीकार, अपने कार्यमें प्रवृत्ति कर आज्ञा सुप्रत कर दी.

राजा श्रेणिक अपने रथकारको बुलाय हुकम किया कि-धार्मिक रथ तैयार कर उत्थानशालामें लाके हाजर करो राजाके हुकमको शिरपर चढाके सहर्ष रथकार रथशालामें जाके रथकी सर्व सामग्री तैयार कर, गहलशालामें गया वहाँमे अच्छे, देखनेमें सुंदर चलनेमे शीघ्र चाबुगले युक्त धूपमोंको निकाल, उसको स्नान कराके अच्छे भूषण वस्त्र (भूनों) धारण करा रथके साथ जोड, रथ तैयार कर, राजा श्रेणिकसे अर्ज करी कि-हे नाथ ! आपकी आज्ञा माफिक यह रथ तैयार है. रथकारकी यह बात श्रवण कर अर्थात् रथकी मजबूतको देख-

कर राजा श्रेणिक बड़ा ही हर्षको प्राप्त हुआ आप मञ्जन घरमें प्रवेश करके स्नान मञ्जन कर पूर्वकी माफिक अच्छे सुन्दर वस्त्रभूषण धारण कर, कल्पवृक्षकी माफिक उनके जहाँपर चेलणा राखी थी, वहाँपर आया और चेलणा राखीसे कहा कि—हे प्रिया ! भ्रान्त भ्रमण भगवान् वीरप्रभु गुणशीलोद्यानमें पधारे हुवे है. उन्हींका नाम—गोत्र श्रवण करनेका भी महाफन है, तो भगवान्को वन्दन करना, नमस्कार करना और श्रीमुखसे देशना श्रवण करना इसके फलका तो कहेना ही क्या ? रास्ते चलो भगवान्को वन्दन-नमस्कार करे, भगवान् महाभगल है देवताके चैत्यकी माफिक उपामना करने योग्य है राखी चेलणा यह वचन सुनके बड़ा ही हर्षको प्राप्त हुई अपने पतिकी आज्ञाको शिरसे घटाके आप मञ्जन घरमें प्रवेश किया वहाँपर स्वच्छ सुगन्धि जलसे सप्रिधि स्नान मञ्जन कर शरीरको चन्दनादिसे लेपन कर (कृतबलिकर्म—देनपूजन करी है) शरीरमें भूषण, जैसे पारोंमें नेपुण, कम्मरमें मणिमण्डित कदोरा, हृदयपर हार, कानोंमें चमकते बुडल, अंगुलीयोंमें मुद्रिका, उत्तम खलकती चुडीयें, मादलीयें—इत्यादि रत्नजडित भूषणोंसे सुशोभित, जिसके कुडलोंकी प्रमाने वदनकी शोभामें वृद्धि करी है पेहने है कान्तिकारी रमणीय, बड़ा ही सुकुमाल जो नाककी हवासे उड जावे, मक्कीके जाल जैसे वस्त्र, और भी सुगन्धि पुष्पोंके बने हुने तुरे गजरे, सेहरे, मालानों आदि धारण किया है चर्चित चन्दन कान्तिकारी है दर्शन बिन्हींका, जिसका रूप

विलास आश्चर्यकारी है—इत्यादि अच्छा सुन्दर रूप शृंगार कर बहुतसे दाम-दामीयों नाजर फोजोंके परिवारसे अपने घरमे नीकले बाहारकी उत्थानशालामें चेलणा राणी आइ है.

राजा श्रेणिक चेलणा राणी माथमें रथपर बैठके राज-गृह नगरके मध्य बाजार होके जैसे उवनाइजी सूत्रमें कोणिक वन्दनाधिकारमें वर्णन किया है इमो माफिक बडे ही आड-म्यरसे भगवानको वन्दन करनेको गये भगवानके छायादि अतिशयको देख आप मचारीमे उतर पैदल पांच अभिगम धारण करते हुये जहा भगवान् निराजमान थे वहांपर आये. भगवानको तीन प्रदक्षिणा दे वन्दन-नमस्कार कर राजा श्रेणिकको आगे कर चेलणा आदि मय लोग भगवानकी सेवा-भक्ति करने लगे

उस समय भगवान् वींगप्रभु राजा श्रेणिक, राणी चेलणा आदि मनुष्य परिषद, यति परिषद, मुनि परिषद, देव परिषद, देवी परिषद—इत्यादि १२ प्रकारकी परिषदकी अन्दर विस्तारसे धर्मकथा सुनाइ. विस्तार उवनाइजी सूत्रसे देखे

परिषद भगवान्की मधुर अमृतमय देशना श्रवण कर बटा ही आनन्द पाया, यथाशक्ति त्रुत, प्रत्याख्यान कर अपने अपने स्थानकी तर्फ गमन किया. राजा श्रेणिक राणी चेलणा भी भगवानकी भवतारक देशना सुन, भगवान्को वन्दन-नमस्कार कर अपने स्थानपर गमन किया

वहापर भगवान्के समवसरणमें रहे हुये कितनेक साधु-

माधुर्यों राजा श्रेणिक और राणी चेलणाको देखके उसी साधु माधुर्योंके ऐसे अध्ययनाय, मनोगत परिणाम हुआ कि—
 अहो ! आश्चर्य ! यह श्रेणिक राजा बड़ा महद्विक, महाश्रद्धि
 महा ज्योति, महाकान्ति, यात्रा महासुखके धनी, जिन्होंने
 किया है स्नान मञ्जन, शरीरको उच्च भूषणसे कल्पवृक्ष सदृश
 बनाया है और चेलणा राणी यहभी इमी प्रकारसे एक भृगा-
 रका घर है जिसके राजा श्रेणिक मनुष्य सखन्धी कामभोग
 भोगरता हुआ विचर रहा है. हमने देखा नहीं देखे हैं, परन्तु
 यह प्रत्यक्ष देव देवीकी भाषिकही देख पड़ते हैं अगर हमारे
 तप, अनशनादिसयम व्रतरूप तथा ब्रह्मचर्यके फल हो, तो
 हमभी भविष्यकालमें राजा श्रेणिककी भाषिक मनुष्य सखन्धी
 भोग भोगरते विचरे अर्थात् हमकोभी श्रेणिक राजा सदृश
 भोगोंकी प्राप्ति हो । इति साधु—माधुर्योंने ऐसा निदान
 (नियाणा) किया

अहो ! आश्चर्य ! यह चेलणा राणी स्नान मञ्जन कर
 यात्रा सर्व अग सुन्दर कर भृगार किया हुआ, राजा श्रेणिकके
 साथ मनुष्य सखन्धी भोग भोग रही है हमने देवतोंको नहीं
 देखा है, परन्तु यह प्रत्यक्ष देवताकी भाषिक भोग भोगरते हैं
 इसलीये अगर हमारे तप, सयम, ब्रह्मचर्यका फल हो, तो ह-
 मभी भविष्यमें चेलणा राणीके सदृश मनुष्य सखन्धी सुख
 भोगरते विचरे अर्थात् हमकोभी चेलणा राणीके जैसे भोग

विलास मिले । माध्वीयोंने भगवानके समनसरणमें ऐसा निदान किया था.

भगवान् वीर प्रभु समनसरण स्थित साधु, माध्वीयोंके यह अकृत्य कार्य (निदान) को अपने केवलज्ञान द्वारा जानके साधु, साध्वीयोंको आमन्त्रण कर (बुलवाय कर) कहने लगे—
अहो ! आर्य ! आज राजा श्रेणिकको देखके तुमने पूर्वोक्त निदान किया है इति नाहु. हे साध्वीयों ! आज राणी चेलणाको देख तुमने पूर्वोक्त निदान किया है । इति साध्वीयों हे साधु साध्वीया ! क्या यह बात सची है ? अर्थात् तुमने पूर्वोक्त निदान किया है ? साधु, साध्वीयोंने निष्कपट भावसे कहा—हा भगवान् ! आपका फरमान सत्य है हम लोगोंने ऐसाही निदान किया है

हे आर्य ! निश्चयकर मैंने जो धर्म (द्वादशांगरूप) प्ररूपा है, वह सत्य, प्रधान, परिपूर्ण, निःकेवल राग द्वेष रहित शुद्ध-पवित्र, न्यायमयुक्त, सरल, शून्य रहित, सर्व कार्यमें मिद्धि करनेका राहस्ता है, ससारमें पार होनेका मार्ग है, निर्घृतिपुरीको प्राप्त करनेका मार्ग है, अग्रस्थित स्थानका मार्ग है, निर्मल, पवित्र मार्ग है, शारीरिक मानसिक दुःखोंका अन्त करनेका मार्ग है, इस पवित्र राहस्ते चलता हुआ जीव सर्व कायोंको सिद्ध कर लेता है लोकालोकके भावोंको जाना है, सकल कर्मोंसे मुक्त हुवे है. सकल कषायरूप तापसे शीतलाभूत हुना है. सर्व शारीरिक मानसिक दुःखोंका अन्त किया है

इस धर्मकी अन्दर ग्रहण और आमेवन शिद्दाके लीये सावधान साधु, क्षुधा, पिपासा, शीत, उष्ण आदि अनेक परीपह-उपसर्गको सहन करते, महान् सुमट कामदेवका पराजय करते हुवे सयम मार्गमे निर्मल चित्तमे प्रवृत्ति करे, प्रवृत्ति करता हुआ उग्रकुलमें उत्पन्न हुवा उग्रकुलके पुत्र, महामाता अर्थात् उच्च जाति की मातावोंसे जिन्होंका जन्म हुवा है, एव भोगकुलोत्पन्न हुवा पुरुष जो बाहारसे गमन कर नगरमें आते हुवे को तथा नगरसे बाहार जाते हुवे को देखे जिन्होंके आगे महा दासी दास, नोकर चाकर, पैदलके परिवारसे कितनेक छत्र धारण किये हैं एव भडारी, दहादि, उसके आगे अश्व, अशवार, दोनों पाम हस्ती, पीछे रथ, और रथधर, इसी माफिक बहुतसे हस्ती, अश्व रथ और पैदलके परिवारसे चलते हैं, जिसके शिरपर उज्ज्वल छत्र हो रहा है, पासमे रहे के श्वेत चामर ढोलते हैं, जिसको देखनेके लीये नर नारीयों घरसे बाहार आते हैं, अन्दर जाते हैं, जिन्होंकी कान्ति-प्रभा शोभनीय है, जिन्होंने किया है स्नान, मञ्जन, देवपूजा, यावत् भूषण वस्त्रोंसे अलंकृत हो महा विस्तारवन्त, कोठागार, शास्त्राके सामान्य भकानकी अन्दर यावत् रत्न जडित सिंहासनपर रोशनीकी ज्योतिके प्रकाशमें स्त्रीयोंके वृन्दमे, महान् नाटक, गीत, वाजिन, तंत्री, ताल, तूटीत, मृदंग, पड्डा—इत्यादि प्रधान मनुष्य सबन्धी भोग भोगवता विचरता है, वह एक मनुष्यको बोलाता है, तन चार पांच स्त्री पुरुष आके खडे

होते हैं, वह कहते हैं कि हे नाथ ! हम क्या करें ? क्या आपका हुक्म है ? क्या आपकी इच्छा है ? किसपर आपकी रुचि है ? इत्यादि उस कुलादिके उत्पन्न हुए पुरुष पुण्यवन्तकी श्रद्धिका ठाठ देख अगर कोई साधु निदान करे कि हमारे तप, संयम, ब्रह्मचर्यका फल हो, तो भविष्यमें हमको मनुष्य सवन्धी ऐसे भोग प्राप्त हो, इति साधु ।

हे श्रमण ! आयुष्यवन्त ! अगर साधु ऐसा निदान कर उसकी आलोचना न करे, प्रतिक्रमण न करे, पापका प्रायश्चित्त न लेने और विराधक भावमें काल करे, तो वहांमें मरके महा श्रद्धिवन्त देवता होने, वहापर दिव्य श्रद्धि ज्योति यावत् महा सुखोंको प्राप्त करे, उस देवताओं सवन्धी दीर्घ काल सुख भोगकरे, वहामें चरके इस मनुष्य लोकमें उग्र कुलमें उत्तम वंशमें पुत्रपण्य उत्पन्न हुये, जो पूर्व निदान कियाथा, ऐसी श्रद्धि प्राप्त हो जाने यावत् स्त्रीयोंके वृन्दर्म नाटक होते हुये, वाजिन वाजते हुये मनुष्य सवन्धी भोग भोगवते हुये निचरे.

हे भगवन् ! उस कृत निदान पुरुषको केवली प्ररूपित धर्म उभयकाल सुनानेवाला धर्मगुरु धर्म सुना शके ?

हां, धर्म सुना शके, परन्तु वह जीव धर्म सुननेको श्र-योग्य होते हैं, वह जीव महारथ, महा परिग्रह, स्त्रीयोंका काम-भोगकी महा इच्छा, अधर्मी, अधर्मका व्यापार, अधर्मका स-

कल्प यावत् मरके दक्षिणकी नरकमे जाने भविष्यके लीयेभी दुर्लभ बोधी होता है

हे आपुण्यवत श्रमणो ! तथारूपके निदानका यह फल हुआ कि वह जीव केगली प्ररूपित धर्म श्रमण करनेके लीयेभी अयोग्य है अर्थात् केगली प्ररूपित धर्मका श्रमण करनाही दुष्कर हो जाता है. इति प्रथम निदान.

(२) अहो श्रमणो ! मैंने जो धर्म प्ररूपित किया है, वह यावत् सर्व शारीरिक और मानसिक दुःखोंका अन्त करने-वाला है इस धर्मकी अन्दर प्रवृत्ति करती हुई साधुगणों बहुतसे परीपह-उपमर्गोंको सहन करती हुई, काम विकारका पराजय करनेमे पराक्रम करती हुई विचरती है. सर्व अधिकार प्रथम निदानकी माफिक समझना.

एक समय एक स्त्रीको देखे, वह स्त्री कैसी है कि जगतमे वह एकही अद्भुत रूप लागण्य, चतुराईवाली है, मानो एक मातानेही ऐसी पुत्रीको जन्म दीया है. रत्नोंके आभरण समान, तेलकी सीमीकी माफिक उसको गुप्त रीतिसे सरक्षण किया है, उत्तम जरी खानछाप आदि वस्त्रकी भिंदुकी माफिक उन्हका सरक्षण किया है, रत्नोंके करडकी माफिक परम अमूल्य जिन्हको सर्व दुखोंसे बचाके रक्षण किया है वह स्त्री अपने पिताके घरसे निकलती हुई, पतिके घरमें जाती हुई, जिसके आगे पीछे बहुतसे दाम, दासी, नोकर, चाकर, यावत् एकको

बुलानेपर चार पाच हजार होते हैं. यावत् सर्व प्रथम निदानकी माफिक उम स्त्रीको देख साध्वीयों निदान करेकि—मेरे तप, समय, ब्रह्मचर्यका फल हो, तो मैं भविष्यमें इस स्त्रीकी माफिक भोग भोगवती निचरु. इति साध्वीका निदान.

हे आर्य! वह साध्वीयों निदान कर उसकी आलोचना न करे, यावत् प्रायश्चित्त न ले, निराधरु भावमें काल कर महर्दिक देवतापण उत्पन्न होवे, वहासे जो निदान किया था, ऐसी स्त्री होवे, ऐमाही सुख-भोग प्राप्त करे, यावत् भोग भोगवती हुई निचरे, उम स्त्रीको दोनों कालमें धर्म सुनानेवाला मिलने परभी धर्म नहीं सुने, अर्थात् धर्म श्रवण करनेकोभी अयोग्य है. वह महारभ यावत् कामभोगमें मूर्च्छित हो, कालकर दक्षिण दिशाकी नारकीमें उत्पन्न होवे, भविष्यमेंभी दुर्लभ बोधि होवे.

हे मुनियों इस निदानका यह फल हुआकि केवली प्ररूपित धर्मका श्रवण करनाभी नहीं गने, अर्थात् धर्म श्रवण करनेके लीयेभी अयोग्य होती है.

(३) हे आर्य! मैं जो धर्म प्ररूपण किया है, उसकी अन्दर यावत् पराक्रम करता हुआ साधु कोइ स्त्रीको देखे, वह अति रूप-शौनवती यावत् पूर्ववत् वर्णन करना. उसको देख, साधु निदान करेकि निश्चय कर पुरुषपणा बडाही सराव है, कारण, पुरुष होनेसे उठे बडे संग्राम करना पडता है. जिसकी अन्दर तीक्ष्ण शस्त्रसे प्राण देना पडता है. औरभी व्यापार

करना, द्रव्योपार्जन करना, देश देशान्तर जाना, सब लोगों (आश्रितों) का पोषण करना—इत्यादि पुरुष होना अच्छा नहीं है। अगर हमारे तप, सयम, ब्रह्मचर्यका फल हो, तो भविष्यमें हम स्त्रीपनेको प्राप्त करे, वहभी पूर्ववत् रूप, यौवन, लावण्य, चतुराई, जोकि जगतमें एकही पाइ जाय ऐसी फिर पुरुषोंके साथ निर्विघ्नतासे भोग भोगवती विचरे । इति साधु । यह निदान साधु करे, उस ग्यानकी आलोचना न करे, यावत् प्रायश्चित्त न लेवे, विराधक भावसे काल कर महर्दिक देवता-बोंमें उत्पन्न हुवे, वह देव सवन्धी दिव्य सुख भोगके आयुष्य पूर्ण कर मनुष्य लोकमें अच्छा कुल—जातिको अच्छे रूप, यौवन, लावण्यको प्राप्त हुई, उस पुत्रीको उच कुलमें भार्या करके देवे, पूर्व निदानकृत फलसे मनुष्य सवन्धी कामभोग भोगवती आनन्दमें विचरे

उस स्त्रीको अगर कोई दोनो काल धर्म सुनानेवाला मिले, तोभी वह धर्म नहीं सुने, अर्थात् धर्म सुननेके लीये अयोग्य है बहुत काल महारम, महा परिग्रह, महा काम भोगमें गृद्ध, मूर्च्छित हो काल कर दक्षिणकी नारकीमें नैरियापने उत्पन्न होगा भविष्यके लीयेभी दुर्लभबोधि होगा

हे आर्य ! इस निदानका यह फल हुआकि वह धर्म सुननेके लीयेभी अयोग्य है, अर्थात् धर्म सुननाभी उदय नहीं आता है । इति ।

(४) हे आर्य ! मैं धर्म प्ररूपण कीया है. वह या सर्व दुःखोंका अन्त करनेवाला है. इस धर्मको धारण कर ध्वीया अनेक प्रकारके परीपह सहन करती हुई किसी स पुरुषोंको देखे, जैसे उग्र कुलकी महामातामे जन्मा हुवा, मो कुलकी महामातासे जन्मा हुवा, नगरसे जाते हुवे तथा नग प्रवेश करते हुये जिन्होंकी अदि-साहिनी, पूर्वकी माफिक कको मोलानेपर चार पाच हजार होवे ऐसे अद्विगन्त पुरुषों देख, साध्वी निदान करेकि-अहो ! लोकमें स्त्रीयोंका ज महा दुःख दाता है. अर्थात् स्त्रीपना है, वह दुःख है क्यों आम यावत् राजधानी सन्निवेशकी अन्दर खुल्ली रहके फिर नहीं. अगर फिरे तो, स्त्री जाति कैसी है. सो दृष्टान्त—आ के फल, आगलिके फल, बीजोरेके फल, ममपेसी, इल्लुके ख सबलीवृक्षके सुन्दर फल, यह पदार्थों बहुतसे लोग को आस्वादनीय लगते हैं इस पदार्थोंको बहुत लोग खाना चाहते हैं, बहुत लोक इसकी अपेक्षा रखते बहुत लोक इसकी अभिलाषा रखते हैं. हमी माफि स्त्री जातिकों बहुतसे लोक आस्वादन (भोगवना) करना चाहते हैं. यावत् स्त्रीजातिको कहामी सुख—चैन नहीं है. स गृहकार्य करना पड़ता है. औरभी स्त्रीजातिपन एक दुःख खजाना है. वास्ते स्त्रीपन अच्छा नहीं है. परन्तु पुरुषपन जात अन्धा है, स्वतन्त्र है. अगर हमारे तप, सयम, ब्रह्मचर्यका फल हो, तो भविष्यमें हम पुरुष उग्र कुल, भोगकुल यावत् महा

ऋद्धिमान् पुरुष हो, स्त्रीयोंके साथ मनुष्य सबन्धी भोग भोग-वते विचरे, इति साध्वी निदान कर उसकी आलोचना न करे यावत् प्रायश्चित्त न लेवे, काल कर महार्द्धिक देवपने उत्पन्न हो वह देवसबन्धी सुख भोग आयुष्यके अन्तमे बहासि चवके कृतनिदान माफिक पुरुषपने उत्पन्न होवे, वह धर्म सुननेके लीये अयोग्य अर्थात् धर्म सुननाभी उदय नहीं आता वह कृत निदान पुरुष महारम, महापरिग्रह, महा भोग भोगवनेमें गृह्य मूर्च्छित हो, अन्तमे काल कर दक्षिण दिशाकी नारकीमें नैरियपने उत्पन्न हुवे, भविष्यमेभी दुर्लभ बोधि होवे

हे आर्य ! इस निदानका यह फल हुआकि यह जीव केवली प्ररुपित धर्मभी सुन नहीं सके अर्थात् धर्म सुननेकोभी अयोग्य होता है । इति ।

(५) हे आर्य ! मैं जो धर्म प्ररुपित किया है, यावत् उस धर्मकी अन्दर साधु-साध्वी अनेक परीपह सहन करते हुवे, धर्ममे पराक्रम करते हुवे मनुष्य सबन्धी कामभोगोंसे विरक्त हुआ ऐसा विचार करोकि-अहो ! आश्चर्य ! यह मनुष्य सबन्धी कामभोग अधुन, अनित्य, अशाश्वत, सडन पडन मिथ्यसन हमका सदैव धर्म है, अहो ! यह मनुष्यका शरीर मल मूत्र, श्लेष्म, मस, चरबी, नाकमेल, वमन, पित्त, शुक्र, रक्त, इत्यादि अशुचिका स्थान है देखनेसेही विरुप दिखाता है, उश्वास निश्वास दुर्गन्धिमय है मल, मूत्र कर भरा हुआ है

व्याधिका रजाना है. वहभी पहिले व पीछे अवश्य छोडना पडेगा. इससे तो वह उर्ध्वलोक निवास करनेगले देवता-
 वों अच्छे है, कि वह देवता अन्य किसी देवताओंकी
 देवीयोंको अपने वशमें कर सर्व कामभोग उस देवीके साथ
 भोगयते है तथा आप स्वय अपने शरीरसे देवरूप और देवी-
 रूप बनाके उसके साथ भोग करे तथा अपनी देवीयोंके साथ
 भोग करे अर्थात् ऐसा देवपना अच्छा है. वास्ते मेरे तप, स-
 यम, ब्रह्मचर्यका फल हो तो भविष्य कालमेंमेंमी यहासे मरके
 उस देवीकी अन्दर उत्पन्न हो. पूर्वोक्त तीनों प्रकारकी देवी-
 योंके साथ मनोहर भोग भोगवते हुये विचरु. । इति ।

हे आर्य ! जो कोई साधु-साध्वीयों ऐसा निदान कर
 उसकी आलोचना न करे, यावत् पापका प्रायश्चित्त न लेवे
 और काल करे, वह देवीमें उत्पन्न हुवे. वह महर्द्धिक, महा-
 ज्योति यावत् महान् सुखवाले देवता होवे वह देवता अन्य
 देवताओंकी देवीयोंको तथा अपने शरीरसे वैक्रिय बनाइ छुइ
 देवीयोंसे और अपनी देवीयोंमें देवता सबन्धी मनोवाञ्छित
 भोग भोगवे. चिरकाल देवसुख भोगवके अन्तमें वहासे चक्के
 उग्रकुलादि उत्तम कुलम जन्म धारण करे यावत् आते जातेके
 साथे बहुतसे दाम-दासीयों, वहातककी एक बुलानेपर च्यार
 पांच आके हाजर होये.

हे भगवन् ! उस पुरुषकों कोई केवली प्ररूपित धर्म
 सुना सके ? हाँ, धर्म सुना सकते है. हे भगवन् ! वह धर्म

श्रवण कर श्रद्धा प्रतीत रुचि कर सके? धर्म सुन तो मक, परन्तु श्रद्धा प्रतीत रुचि कर सके? धर्म सुन तो सके परन्तु श्रद्धा प्रतीत रुचि नहीं ला सके, वह महारमी, यावत् काम-भोगकी इच्छायाला मरके दक्षिणकी नरकमें उत्पन्न होता है, भविष्यमें दुर्लभप्राप्ति होगा

हे आर्य ! उस निदानका यह फल हुवा कि वह धर्म श्रवण करनेके योग्य होता है, परन्तु धर्मपर श्रद्धा प्रतीत रुचि नहीं कर सके ॥ इति ॥

(६) हे आर्य ! मैं जो धर्म प्ररुपा है वह सर्व दु खोंका श्रान्त करनेवाला है इस धर्मकी श्रन्दर साधु-साध्वी पराक्रम करते हुवेकों मनुष्य सबन्धि कामभोग अनित्य है, यावत् पहिले पीछे श्रवश्य छोडने योग्य है । इससे तो उर्ध्वलोकमें जो देवों है, वह श्रन्य देवतावोंकी देवीयोंको वश कर नहीं भोगवते है, परन्तु अपनी देवीयोंको वश कर भोगवते है तथा अपने शरीरसे पैक्रिय देव-देवी बनाके भोग भोगवते है, वह श्रच्छे है, वास्ते हमारे तप, सयम, ब्रह्मचर्यका फल हो तो हम उस देवोंमें उत्पन्न हुवे, ऐसा निदान कर आलोचना नहीं करता हुवा काल कर वह देवता होते है, पूर्वकृत निदान माफिक देवतावों सबन्धी सुख भोगनके वहासे चवके उत्तम कुल-जातिमें मनुष्यपण्ये उत्पन्न होते है, यावत् महान्मुद्विषन्त जहांतक एक्को बोलानेपर पांच आके हाजर हुवे,

हे भगवन् ! उसको केजलीप्ररूपित धर्म सुना सके ? हां, धर्म सुना सके. हे भगवन् ! वह धर्म श्रवण कर श्रद्धा प्रतीत रुचि करे ? नहीं करे. परन्तु वह अरण्यवासी तापस तथा ग्राम नजदीकवासी तपस्वी रहस्य (गुप्तपने) अत्याचार सेवन करनेवाले विशेष समयप्रत यद्यपि व्यवहार क्रियाकल्प रखते भी हो, तो भी सम्यक् न होनेसे वह कष्टक्रिया भी अज्ञानरूप है, और सर्व प्राणभूत जीव-सत्त्वकी घातसे नहीं निर्वृति पाइ है, अपने मान, पूजा रखनेके लीये मिश्रभाषा बोलते है, तथा आगे कहेंगे-ऐसी विपरीत भाषा बोलते है हम उत्तम है, हमको मत मारो, अन्य अधर्मी है, उसको मारो इसी माफिक हमको दंडादिका प्रहार मत करो, परि-ताप मत दो, दुःख मत दो, पकड़ो मत, उपद्रव मत करो, यह सब अन्य जीवोंको करो, अर्थात् अपना सुख वाछना और दूसरोको दुःख देना, यह उन्होंका मूल सिद्धान्त है, वह बाल, अज्ञानी, स्त्रीयों सबन्धी कामभोगमें गृह्य मूर्च्छित हुये काल प्राप्त हो, आसुरीकाय तथा किन्चिपीया देवोंमें उत्पन्न हो, वहासे मरके बारवार हलका बकरे (मीठे) गुगे, लूले, लगडे, बोंबडेपनेमें उत्पन्न होगा. हे आर्य ! उक्त निदान करनेवाला जीव धर्मपर श्रद्धाप्रतीत रुचि करनेवाला नहीं होता है. ॥ इति ॥

(७) हे आर्य ! मैं जो धर्म कहा है, वह सर्व दुःखोंका

अन्त करनेवाला है उस धर्मकी अन्दर पराक्रम करते हुवे मनुष्य सधन्धी कामभोग अनित्य है, यावत् जो उर्ध्वलोकमें देवों है, जो पारकी देवीकों अपने वश कर नहीं भोगते हैं तथा अपने शरीरसे बनाके देवोंको भी नहीं भोगते हैं परन्तु जो अपनी देवी है, उसको अपने वशमें कर भोगते हैं अगर हमारे तप, सयम, ब्रह्मचर्यका फल हो, तो हम उक्त देवता हुवे ऐसा निदान कर आलोचना न करे, यावत् प्रायश्चित्त न करते हुवे काल कर उक्त देवोंमें उत्पन्न होते हैं वहा देवतायों सधन्धी चिरकाल सुख भोगके वहामे काल कर उत्तम कुल-जातिकी अन्दर मनुष्य हुवे. वह महर्दिक यावत् एकको बुलानेपर च्यार पाच आठे हाजर हुवे.

हे भगवन् ! उस मनुष्यों कोइ श्रमण महान् केवली प्ररूपित धर्म सुना शके ? हा, सुना सके. क्या वह धर्मपर श्रद्धाप्रतीति रुचि करे ? हाँ, करे वह दर्शन श्रावक हो सके परन्तु निदानके पाप फलसे वह पाच अणुव्रत, सात शिष्टाव्रत यह श्रावकके नारहा व्रत तथा नोकारसी आदि प्रत्याख्यान करनेको समर्थ नहीं होते हैं वह केवल सम्यक्त्वधारी श्रावक होते हैं जीवादि पदार्थका जानकार होते हैं. हाडहाड किमीजी-धर्मकी अन्दर राग जागता है. ऐसा सम्यक्त्वरूप श्रावकपणा पालता हुवा बहुत कालतक आयुष्य पाल वहासे मरके देवोंकी अन्दर जाते हैं.

हे आर्य ! इस निदानका यह फल हुआकि वह समर्थ नहीं है कि श्रावकके पांच अणुग्रत, सात शिवाग्रत, और नो-कारसी आदि तथा पापघ, उपवामादि करनेको समर्थ न हो सके । इति ।

(८) हे आर्य ! मैं जो धर्म कहा है, वह सर्व दुःखोंका अन्त करनेवाला है. इस धर्मकी अन्दर माधु, माध्वी पराक्रम करते हुवे ऐसा जानेकि—यह मनुष्य सबन्धी कामभोग अनित्य, अशाश्वत, यावत् पहिले या पीछे अवश्य छोड़ने योग्य है. तथा देवतानों सबन्धी कामभोगभी अनित्य, अशाश्वत है, वह चल चलायमान है. यावत् पहिले या पीछे अवश्य छोड़नाही होगा. मनुष्य—देवोंके कामभोगसे विरक्त हुआ ऐसा जानेकि—मेरे तप, सयम, ब्रह्मचर्यका फल हो, तो मरिष्यमें मैं उग्र कुल, भोगकुलकी अन्दर महामाता (उत्तम जाति) की अन्दर पुत्र-पणे उत्पन्ने हो, जीनादि पदार्थका जानकार उन, यावत् माधु, साध्वीभोंको प्राप्तक, निर्दोष, एषणिक, निर्जीन, अशन, पान, त्यागिम, स्वादिम आदि चौदा प्रकारका दान देता हुआ विचरु. ऐसा निदान कर आलोचना न करे, यावत् प्रायश्चित्त न लेवे और काल कर वह महाश्रद्धा यावत् महा सुखवाला देवता हुवे, वहा विरकाल देवताका सुख भोगवके, वहांसे मरके उत्तम जाति—कुलकी अन्दर मनुष्य हुवे वहां पर केवली प्ररूपित धर्म सुने, श्रद्धाप्रतीत रुचि करे, सम्यक्त्व सहित वा-

रहा व्रतोंको धारण कर सके। परन्तु निदानके पापोदयसे 'मुड़े भविता' अर्थात् समय-दीक्षा लेनेको असमर्थ है, वह श्रावक हो जीवादि पदार्थोंका जान हुवे, अशनादि चौदा प्रकारका प्रासुक, एषणीय आहार साधु साध्वियोंको देता हुआ बहुतसे व्रत प्रत्याख्यान पौषध, उपवासादि कर अन्तमे आलोचना सहित अनशन कर ममाधिमें काल कर उच देवोंमे उत्पन्न होता है

हे आर्य ! उम पाप निदानका फल यह हुआकि यह सर्व निरति-दीक्षा लेनेको असमर्थ अर्थात् अयोग्य हुआ । इति ।

(६) हे आर्य ! मैं जो धर्म कहा है, यह सर्व दु खोंका अन्त करनेवाला है उस धर्मकी अन्दर साधु साध्वी पराक्रम करते हुये ऐसा जानेकि—यह मनुष्य सबन्धी तथा देवसबन्धी कामभोग अध्रुव, अनित्य, अशाश्वत है, पहिले या पीछे अवश्य छोड़ने योग्य है. अगर मेरे तप, समय, ब्रह्मचर्यका फल हो, तो भविष्यमें मैं ऐसे कुलमें उत्पन्न हो यथा—

(१) अन्तकुल—स्वल्प कुटुम्ब, सोभी गरीब (२) प्रान्त-कुल—मिलकुल गरीब कुल (३) तुच्छकुल—स्वल्पकुटुम्बवाले कुलमें (४) दरिद्रकुल—निर्धन कुटुम्बवाला. (५) कृपणकुल—धन होनेपरमी कृपणता (६) भिक्षुकुल—भिक्षाकर आजीविका करे (७) ब्राह्मणकुल—ब्राह्मणोंका कुल सदैव भिक्षु,

ऐसे कुलमें पुत्रपणे उत्पन्न होनेसे भविष्यमें मैं दीक्षा लेउगा, तो मेरा दीक्षाका कार्यमें कोई भी विघ्न नहीं करेगा. वास्ते मेरेको ऐसा कुल मिले तो अच्छा. ऐसा निदान कर आलोचना न करे, याज्ञत् प्रायश्चित्त न लेता हुआ काल कर उर्ध्वलोकमें महर्द्धिक यावत् महासुखवाला देवता हुवे. वहाँ चिरकाल देवसुख भोगवके वहासे चवके उक्त कुलोंमें उत्पन्न हुवे. उसको धर्मश्रवण करना मिले. श्रद्धाप्रतीति रुचि हुवे. यावत् सर्वविरति-दीक्षाको ग्रहण करे. परन्तु पापनिदानका फलोदयसे उसी भनमें केवलज्ञानको प्राप्त नहीं कर सके.

यह दीक्षा ग्रहण कर इर्याममिति याज्ञत् गुप्त ब्रह्मचर्य पालन करते हुवे बहुत वर्ष चारित्र्य पालके अन्तमें आलोचनापूर्वक अनशन कर काल प्राप्त हो उर्ध्वगतिमें देवतापणे उत्पन्न हुवे. यह महर्द्धिक यावत् महासुखवाला हुवे.

हे आर्य ! इस पापनिदानका फल यह हुआ कि दीक्षा तो ग्रहण कर सके, परन्तु उसी भवकी अन्दर केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष जानेमें असमर्थ है ॥ इति ॥

(१०) हे आर्य ! मैं जो धर्म कहा है, वह धर्म, शारीरिक और मानसिक ऐसे सर्व दुःखोंका अन्त करनेवाला है उस धर्मकी अन्दर साधु-साध्वीयों पराक्रम करते हुने सर्व प्रकारके कामभोगसे विरक्त, एव राग द्वेषसे विरक्त, एव

स्त्री आदिके सगसे निरक्त, एव शरीर, स्नेह, ममत्व-
भावमे निरक्त सर्व चारित्र्यकी क्रियाओंके परिवारमे प्रवृत्त,
उस थमण भगवन्तको अनुत्तर ध्यान, अनुत्तर दर्शन, यावत्
अनुत्तर निर्व्याणका मार्गको मशोधन करता हुआ अपना आ-
त्माको सम्यक्प्रकारसे भावते हुयेकों निन्होंका अन्त नहीं है
ऐसा अनुत्तर प्रधान, जिसको कोई बाध न कर सके, निमको
कोई प्रकारका आग्रह नहीं आ सके, वह भी सपूर्ण, प्रतिपूर्ण,
ऐसा महत्ववाला केवलज्ञान, केवलदर्शन उत्पन्न होते हैं।

यह श्रमण भगवन्त अरिहत होते हैं वह जिन केवली,
सर्पनानी, सर्पदर्शनी, देवता मनुष्य, असुरादिकमे पूजित,
यानत् बहुत कालतरु केवलीपर्याय पालके अपना अग्रोप
आयुष्य जान, भक्त पानीका प्रत्याख्यान अर्थात् अनशन कर
किर चरम आसोआसकों नोमिराते हुये सर्प शारीरिक और मा-
नसिक दुःखोंका अन्त कर मोच महेलमे बिराजमान हो जाते हैं।

हे आर्य ! ऐसा अनिदान अर्थात् निदान नहीं करनेका
फल यह हुआकि उंसी भवमें सर्प कर्मोंका मूलोंको उच्छेदन कर
मोचसुखोंको प्राप्त कर लेते हैं ऐसा उपदेश भगवान् वीरप्रसू
अपने शिष्य साधु-साध्वीयोंको आभाषण करके दीया था,
अर्थात् अपने शिष्योंकी झूठी नौकाको अपने करकमलोंसे
पार करी है।

तत्पश्चात् वह सर्व साधु-साध्वीयों भगवानकी मधुर देशना-हितकारी देशना श्रवण कर उड़ा ही हर्षको-आनन्दको प्राप्त हो, अपने जो राजा श्रेष्ठिक और राणी चेलणाका स्वरूप देख निदान किया गया था, उसकी आलोचना कर, प्रायश्चित्त ग्रहण कर, अपना आत्माको विशुद्ध रनाके भगवानको वन्दन-नमस्कार कर अपना आत्माकी अन्दर रमणता करते हुवे विचरने लगे.

यह व्याख्यान भगवान् महावीरप्रभु राजगृह नगरके गुणशीलोद्यानमें बहुतसे साधु, बहुतसी साध्वीयों, बहुत आचरु, बहुतसी श्रमिकाओं, बहुतमे देवों, उहुनमी देवीयों, सदेव मनुष्य असुरादिनी परिपदके मध्य निराजमान हो आरयान, भाषण, प्ररुपण, प्रिणेष प्ररुपण (आत्माको कर्म-बन्ध निदानरूप अध्ययन) अर्थ सहित, हेतु सहित, कारण सहित, सूत्र सहित, सूत्रके अर्थ सहित, व्याख्या सहित यानत्र ऐसा उपदेश बारबार किया है.

। इति निदान नामका दशमा अध्ययन ।



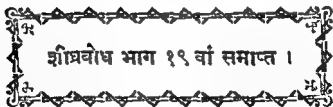
नोट—निदान दो प्रकारके होते है (१) तीत्र रसवाला (२) मन्द रसवाला, जो तीत्र रसवाला निदान कीया हो, तो छे निदानवालोंको केवली प्ररु पित धर्मकी प्राप्ति नहीं होती है,

अगर मन्द रसवाला निदान हो तो छे निदानमें सम्यक्त्वादि धर्मकी प्राप्ति होती है जैसे कृष्ण वासुदेव तथा द्रौपदी महा सतीको सनिदानमी धर्मकी प्राप्ति हुईथी

इति श्री दशाशुतस्वध-दशधा अध्ययन



। इति श्री दशाशुत स्कध सूत्रका सचित्त सार ।



शीघ्रबोध भाग १९ वां समाप्त ।

अथ श्री

शीघ्रबोध भाग २१ वां.



अथ श्री व्यवहारसूत्रका सक्षिप्त सार



(उद्देशा दण)

श्रीमद् आचाराणादि सूत्रोमे मुनियोंने आचारका प्रतिपादन कीया है उस आचारसे पतित होनेवालोंके लीये लघु निशीथ सूत्रमे आलोचना कर, प्रायश्चित्त ले शुद्ध होना बतलाया है।

आलोचना सुननेवाले तथा आलोचना करनेवाले मुनि पैसा होना चाहिये तथा आलोचना किम भायोंसे करते है, उसको कितना प्रायश्चित्त दीया जाता है, यह इस प्रथम उद्देशा द्वारे बतलाया जायेगा

(१) प्रथम उद्देशा—

(१) किमी मुनिने एक मासिक प्रायश्चित्त योग, बुध्यतका स्थान सेवन कीया, उसकी आलोचना गीतार्थ आचार्य के पास निष्कपट भावसे करी हो, उस मुनिको एक मासिक प्रायश्चित्त*

१—मासिक प्रायश्चित्त म्यान देखा—लघु निशीथसूत्र

* मासिक प्रायश्चित्त—जैम तप मासिक छंदमासिक, प्रत्याग्यान मासिक इत्क भी लघुमासिक शुक्रमासिक—दा दा भद है सुलगा नेवा लघुनिशीथ सूत्र

प्रायश्चित्तमें ही धृष्टि करना (इसकी विधि निशीथ सूत्रमें है) आलोचना करनेवालों के चार भाग हैं यथा—आचार्यमहाराजकी आज्ञासे मुनि अन्य स्थल विहार कर कितने अरसेमें यापीस आचार्यमहाराजके समीप आये, उसमें कितने ही दोष लग थे, उसकी आलोचना आचार्यकी पासमें करते हैं

(१) पहले दोष लगा था, उसकी पहले आलोचना करे, अर्थात् क्रम मर प्रायश्चित्त लगा होये, उसी माफिक आलोचना करे

(२) पहले दोष लगा था, परन्तु आलोचना करते समय विस्मृत हो जानेके संप्रसे पहले दूसरे दोषोंकी आलोचना करे फिर स्मृति होनेसे पहले सेवन कीये हुए दोषोंकी पीछे आलोचना करे

(३) पीछे सेवन कीया हुआ दोषोंकी पहले आलोचना करे

(४) पीछे सेवन कीये हुए दोषोंकी पीछे आलोचना करे

आलोचना करते समय परिणामोरी चतुर्भंगी

(१) आलोचना करनेवाले मुनि पहला विचार किया था कि अपने निष्कपटभावसे आलोचना करनी इसी माफिक शुद्ध भाषासे आलोचना करे ज्ञानवन्त मुनि

(२) मायागदित शुद्ध भाषासे आलोचना करनेका इरादा था, परन्तु आलोचना करते समय मायासयुक्त आलोचना करे भाषार्थ—ज्यादा प्रायश्चित्त जानेसे अब लघु मुनियोंसे मुझे लघु होना पड़ेगा, लोगोंने मानपूजाकी हानि होगी—इत्यादि विचारोंसे मायासयुक्त आलोचना करे

(३) पहला विचार था कि मायासयुक्त आलोचना करगा.

आलोचना करते समय मायारहित शुद्ध निर्मल भावोंसे आलोचना करे भावार्थ—पहला विचार था कि ज्यादा प्रायश्चित्त आनेसे मेरी मानपुत्राकी हानि होगी फिर आलोचना करते समय आचार्यमहाराज जो स्थानाग सूत्रमें आलोचना करनेवालोंके गुण और शुद्ध भावोंसे आलोचना करनेवाला इस लोक और परलोकमें पजनीय होता है लोक तारीफ करते हैं यायत् मोक्षसुखकी प्राप्ति हानी है येना सुन अपने परिणामको बदलावे शुद्ध भावोंसे आलोचना करे

(८) पहले विचार था कि मायामयुक्त आलोचना करेगा, और आलोचना करते समय भी मायामयुक्त आलोचना करे वाला, अज्ञानी, भयाभिनन्दी जीर्णका यह लक्षण है

आलोचना करनेवालोंका भावोंको आचार्यमहाराज जानके जैसा जिनको प्रायश्चित्त होता हो येना उन्हे प्रायश्चित्त देने सयके लीये एकसा ही प्रायश्चित्त नहीं है एक ही दोषके भिन्न भिन्न परिणामवालोंको भिन्न भिन्न प्रायश्चित्त दीया जाता है

(१६) इसी माफिक उहुतवार चातुर्मासिक, साधिक चातुर्मासिक, पच मासिक, माधिक पच मासिक, प्रायश्चित्त सेवन कीया हो उसकी दो चोभगीयों १५ या सूत्रमें लिखी गई है यायत् जिस प्रायश्चित्त के योग्य हो, येना प्रायश्चित्त देना भावना पूर्ययत्

(१७) जो मुनि चातुर्मासिक, साधिक चातुर्मासिक, पच मासिक, माधिक पच मासिक प्रायश्चित्त स्थानको सेवन कर आलोचना (पूर्ययत् चतुर्भगीसे) करे, उस मुनिको तपशी अन्दर तथा यथायोग्य यथायथमे स्थापन करे उस तप करते हुयेमें और प्रायश्चित्त सेवन करे, तो उस चालु तपमे प्रायश्चित्तकी वृद्धि

करना तथा प्रायश्चित्त तप करके निकलते हुयेका अगर लघु दाप लग जाये, तो उसी तपकी अन्दर सामान्यतासे क्षुद्रि कर शुद्ध कर देना

(१८) इसी भाषिक बहु वचनापेक्षा भी समझना

जा मुनि प्रायश्चित्त मेयन कर निर्मल भाषासे आलोचना करते हैं उसको कारण यतलाते हुये, हेतु यतलाते हुये, अथ यतलाते हुये इस लोक, परलोकके आराधकपनाके अभय सुख यतलाते हुये प्रायश्चित्त देवे, और दीया हुआ प्रायश्चित्तमें सहायता कर उसको यथा निर्वाह हो पसा तप करावे शुद्ध बना लेवे यह फर्ज गीताथ आचार्य महाराजकी है

(१९) बहुतसे मुनि पेसे हैं कि जो प्रायश्चित्त सेवन किया, उसकी आलोचना भी नहीं करी है उसे शास्त्रकाराने 'प्रायश्चित्तीये' कहा है और बहुतसे मुनि निरतिचार व्रत पालन करते हैं, उसे 'अप्रायश्चित्तीये' कहा है, यह दोनों प्रायश्चित्तीये, अप्रायश्चित्तीये मुनि पक्ष्य रहना चाहे पक्ष्य बैठना चाहे, पक्ष्य शय्या परना चाहे, तो उस मुनियोंको पेस्तर 'स्थविर महाराजको पुछना चाहिये, अगर स्थविर महाराज किसी प्रकारका खास कारण जानके आज्ञा देवे, तो उस दोनों पक्ष्याले मुनियोंको पक्ष्य रहना कल्पे अगर स्थविर महाराज आज्ञा न दे तो उस दोनों पक्ष्यालोंको पक्ष्य रहना नहीं कल्पे अगर स्थविर महाराजकी

१ स्थविर तान प्रकारक होते हैं (१) वय स्थविर ६० वर्षकी आयुप्यवाला (२) दाक्षा स्थविर बीस वर्षका चारित्र पर्यायवाच (३) सूत्र स्थविर स्थानागसूत्र और समवायाम सूत्रक जानभर तथा विननेक स्थानोंपर आचार्य महाराजकी भी स्थविरके नामम ही मतलाय है

आज्ञाका भग कर दोनों पक्षवाले मुनि एकत्र निवास करे, तो जितने दिन वह एकत्र रहे, उतने दिनों का तप प्रायश्चित्त तथा छेद प्रायश्चित्त आवे भाषा—प्रायश्चित्तीये, अप्रायश्चित्तीये मुनि एकत्र रहनेसे लोकमें अप्रतीति का कारण होता है। एसा हो तो फिर प्रायश्चित्तीये मुनियों को शुद्धाचार की आवश्यकता ही क्यों और दोनों का प्रायश्चित्त ही क्यों ले ? इत्यादि कारणोंसे एकत्र रहना नहीं कल्पे अगर द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाषा देखने आचार्य महाराज आज्ञा दे, उस हालतमें कल्पे भी सही यह ही न्यायाद रहस्यका मार्ग है।

(२०) आचार्य महाराज को किमी अन्य ग्यान साधु की वैयाधक लेये किमी साधु की आवश्यकता होनेपर परिहार तप कर देनेवाले साधु को अन्य ग्राम मुनियों की वैयाधक लेये जाने का आदेश दीया, उस समय आचार्य महाराज उस मुनि को कहे कि—हे आर्य ! रहस्तेमें चलना और परिहार तप करना यह दो बातें होना कठिन है वास्ते रहस्तेमें इस तप का छोड़ देना इसपर उस साधु को अशक्ति होती तप छोड़ कर जिन दिशामें अपने न्यधमी साधु विचरते हो उसी दिशा की तरफ विहार करना रहस्तेमें एक रात्रि, दो रात्रिसे ज्यादा रहना नहीं कल्पे अगर शरीरमें व्याधि हो तो जहातक व्याधि रहे, वहातक रहना कल्पे रोगमुक्त होनेपर पहलेवे साधु कहे कि—हे आर्य ! एक दो रात्रि और ठहरो, इससे पूर्ण स्वातरी हो जाय उस हालतमें एक दो रात्रि ठहरना कल्पे अगर एक दो रात्रिसे अधिक (सुखशीलीयापनासे) ठहरे, तो जितने रोज रहे उतने रोज का तप तथा छेद प्रायश्चित्त होता है भाषा—ग्यान मुनियों की वैयाधक लेये भेजा हुआ साधु रहस्तेमें विहार या उपकार निमित्त ठहर नहीं सके तथा रोग मुक्त होनेपर भी ज्यादा ठहर नहीं सके अगर ठहर जाये तो

जिस ग्लानाकी वैयायचके लीये भेजा था, उसकी वैयायच कोन करे ? इस लाये उम मुनिको शीघ्रतापूर्वक ही जाना चाहिये

(२१) इसी माफिक रवाने हाते समय आचार्यमहाराज तप छोड़नेका न कहा हा, तो उस मुनिको जो प्रायश्चित्तका तप कर रहा था, उमी माफिक तप करते हुवे ही ग्लानिको वैयायचमें जाना चाहिये रहस्तेमें विलय न करे

(२२) इसी माफिक पेस्तर आचार्यमहाराजका इरादा था कि विहार समय इस मुनिको कहे कि-रहस्तेमें तप छोड़ देना, परन्तु विहार करते समय किसी कारणसे वह नहीं सका हो तो उम मुनिको तप करते हुवे ही ग्लानोंकी वैयायचमें जाना चाहिये पूषयन् शीघ्रतासे

(२३) कौइ मुनि गच्छको छोड़य पक्कल प्रतिमारुप अभिग्रह धारण कर अकेला विहार करे, अगर अकेले विहार करनेमें अनेक परिसह उत्पन्न होते हैं, उमको सहन करनेमें असमर्थ हो, तथा आधारादि शीथिल हो जानेसे या किसी भी कारणसे पीछे उमी गच्छमें आना चाहे तो गणनायकको चाहिये कि-यह उस मुनिसे फिरसे आलोचना प्रतिप्रश्न कराय और उसको छेद प्रायश्चित्त तथा फिरसे उत्थापन देके गच्छमें लेवे

(२४) इसी माफिक गणविच्छेदक

(२५) इसी माफिक आचार्यापाध्यायको भी समझना भावार्थ—आठ गुणाका धणी हा, वह अकेला विहार कर सकता है अकेला विहार करनेमें अप्रतियद्ध रहनेसे कमनिजरा ग्रहृत होती है परन्तु इतना शक्तिमान् होना चाहिये अगर परिसह सहन करनेमें असमर्थ हो उसे गच्छमें ही रहना अच्छा है

(२६) समयसे शिथिल हो, समयका पान रख छोड़े, उसे पामत्या कहा जाता है कोई मुनि गच्छने कठिन आचारादि पालनेमें अममय होनेसे गच्छ त्याग कर पामत्या धर्मको स्वीकार कर विचरने लगा यादमें परिणाम अच्छा हुआ कि-पौद्गलिक क्षणमात्रके सुम्माने दीये मने गच्छ त्याग कर इस भववृद्धिका कारण पामत्यपनेका स्वीकार कर अहृत्य कार्य किया है वास्ते अब पीछे उसी गच्छमें जाना चाहिये अगर वह साधु पुन गच्छमें आना चाहे, तो ऐस्तर् उसको आश्रयना-प्रतिग्रमण करना चाहिये पुन उद्द प्रायश्चित्त तथा पुन दीक्षा देवे गच्छमें लेना चाये

(२७) एष गच्छ छोड़के स्वच्छन्द विहारी होनेवाला अलायक

(२८) एष उशील—जिन्हाका आचार सरासरी है प्रति दिन विगड सेवन करनेवाला अलायक

(२९) एष उमन्ना—क्रियामें शिथिल, पुजन प्रतिलेखनमें प्रमादी, ओषादि करनेमें अममय, ऐसा उमन्नाका अलायक

(३०) एष सप्तत—आचारान्त साधु मिलनेसे आप आचारवन्त बन जाये, पामत्यादि मिलनेसे पामत्यादि बन जाये, अर्थात् दुराचारीयासे समग रखनेवाला अलायक २६, २७, २८, २९, ३० इस पाँचों अलायकका भावार्थ—उक्त कारणोंसे गच्छका त्याग कर भिन्न भिन्न प्रवृत्ति करनेवाले फिरसे उसी गच्छमें आना चाहे तो प्रथम आलोचना करावे यथायोग्य प्रायश्चित्त तप या उद्द तथा उत्थापन देवे फिर गच्छमें लेना चाहिये कि उस मुनिको तथा अन्य मुनियोंका इस बातका शोभ रहे. गच्छ मयादा तथा सदाचारकी प्रवृत्ति मजबूत रही रहै

(३१) जो कोई साधु गच्छ छाड़के पाखंडी लिंगकी स्वीकार करे अर्थात् अन्य यतियोंके लिंगमें रहे और वापिस स्वगच्छमें आना चाहे, तो उसे कोई आलोचना प्रायश्चित्त नहीं फल व्यवहारमें उसकी आलोचना सुन ले, फिर उस मुनिको गच्छ में ले लेना चाहिये भाषाथ—अगर कोई गप्पादिका जैन मुनियों पर कोप हो जानेसे अन्य साधुओंका योग न होनेपर अपना मन भका निर्वाह करनेके लीये अन्य यतियोंके लिंगमें रह कर, अपनी साधुश्रिया बराबर साधन करता बचल शासन रक्षणके लीये ही ऐसा कार्य करे, तो उसे प्रायश्चित्त नहीं होता है इस विषयमें स्थानाग सूत्र चतुर्थ स्थानकी चौभगी, तथा भगवती सूत्र निर्ग्रन्थाधिकारे विशेष खुगमा है

(३२) जो कोई साधु स्वगच्छका छाड़के व्रत भंग कर गृहस्थधर्मको सेवन कर लिया हो गच्छ में उसको परिणाम हो कि मैंने चारित्र्य चिंतामणिको हाथसे गमा दीया है अर्थात् सत्तारसे अदधि—संयोगकी तफ लभ्य कर फिरसे उसी गच्छमें आना चाहे तो आचार्य महाराज उसकी योग्यता देखे, भविष्यके लीये रयाल कर, उसे छेदके तप प्रायश्चित्त कुछ भी नहीं दे, कन्तु पुन उसी रोजसे दीक्षा देव

(३३) जो कोई साधु अदृश्य पेमा प्रायश्चित्त स्थानकी सेवन करे फिरसे शुद्ध भाषना आनेसे आलोचना करनेकी इच्छा करे तो उस मुनिको अपने आचार्यापाध्याय जो बहुश्रुत, बहु आगमका जाणकार, पांच व्यवहारके ज्ञाता हो उन्हेंके समीप आलोचना करे, प्रतिग्रमण करे, पापसे विशुद्ध हो, प्रायश्चित्तसे निवृत्त हो, हाथ जोड़के कहे कि—अब मे पेमा पापकर्मको सेवन न करुंगा हे भगवन् ! इस प्रायश्चित्तकी यथयोग्य आलोचना दो अर्थात् गुरु देये उस प्रायश्चित्तको स्वीकार करे

(३४) अगर अपने आचार्यापाश्याय उस समय हाजर न हो तो अपने सभोगी (एक मंडलमें भोजन करनेवाले) साधु जो बहुश्रुत—बहुत आगमोंके जानकार, उन्हींके समीप आलोचना कर यावत् प्रायश्चित्तकी स्वीकार करे

(३५) अगर अपने सभोगी साधु न मिले तो अन्य संभोगवाले गीतार्थ—बहुत आगमोंके जानकार मुनि हो, उन्हींके पास आलोचना कर यावत् प्रायश्चित्तकी स्वीकार करे

(३६) अगर अन्य संभोगवाले उक्त मुनि न मिले, तो रूप साधु अर्थात् आचारादि क्रियामें शिथिल है, केवल रजोहरण, मूत्रपक्षिका साधुका रूप उन्हींके पास है, परन्तु बहुश्रुत—बहुत आगमोंका जानकार है, उन्हींके पास आलोचना यावत् प्रायश्चित्तकी स्वीकार करे

(३७) अगर रूपसाधु बहुश्रुत न मिले तो पीछे कृत श्रावक ' जो पहला दीक्षा लेके बहुश्रुत बहुत आगमोंका जानकार हो फिर मोहनीय कर्म के उदयमें श्रावक हो गया हो ' उसके पास आलोचना कर यावत् प्रायश्चित्त स्वीकार करे

(३८) अगर उक्त श्रावक भी न मिले तो—' नमभावियाई चेइयाइ ' अर्थात् सुविहित आचार्योंकी करि हुई प्रतिष्ठा पेसी जिनेग्र देवोंकी प्रतिमाके आगे शुद्ध भावसे आलोचनाकर यावत् प्रायश्चित्त स्वीकार करे *

* ' नमभावियाई चेइयाइ ' का अर्थ—दुःखों में लगे श्रावक तथा गम्यगृष्टि करते हैं यह प्रसन्न हैं क्योंकि आलोचनामें गीतार्थोंकी आवश्यकता है जिसमेंभी छंद सुनों का ता प्रसन्न जानकार होना चाहिये और जानकार श्रावकका पाठ हो पहले आ गया है इस वास्तु पूर्व मूर्तिमें ही देखा व ही अर्थ प्रमाण है

(३०) अगर ऐसा मंदिरमूर्तिका भी जहापर योग न हो, तो फिर ग्राम तथा नगर यावत् सन्निवेश के वाहार अदापर कोई सुननेवाला न हो, ऐसे स्थलमें जाने पूर्व तथा उत्तर दिशाके समुख भुङ्कर दाय दाय जोड़ शिरपे चढ़ाने ऐसा शब्द उच्चारण करना चाहिये हे भगवन् ! मैंने यह अमृत्य काय कीया है हे भगवन् ! मैं आपकी साक्षीसे अर्थात् आपके समीप आलोचना करता हु प्रतिप्रमण करता हु मेरी आत्माकी निंदा करता हु घृणा करता हु पापोंसे निवृत्ति करता हु आत्मा विशुद्ध करता हु आइदासे ऐसा अमृत्य काय नहीं करगा ऐसा कहे यथायोग स्वयं प्रायश्चित्त स्वीकार करना चाहिये

भाषार्थ—जो किंचित् ही पाप लगा हा, उसकी आलोचना क लीये क्षणमात्र भी प्रमाद न करना चाहिये न जाने आयुष्यका किस समय घन्ध पड़ता है काल किस समय आता है इस वास्ते आलोचना शीघ्रतापूर्वक करना चाहिये परन्तु आलोच माने सुननेवाला गीताथ, गभीर, धैर्यवान् होना चाहिये वास्ते शास्त्रकाराने आलोचना करनेकी विधि प्रतलाह है इसी भाकिय करना चाहिये इति

श्री व्यासहार मूल—प्रथम उद्देशाना मन्त्रित सार



(२) दूसरा उद्देशा

(१) दो स्वधर्मों साधु एकत्र हो विहार कर रहे हैं उसमे एक साधुने अमृत्य काय अर्थात् किसी प्रकारका दोषको सेवन कीया है, तो उस दोषका यथायोग उस मुनिको प्रायश्चित्त देवे

उस प्रायश्चित्त तपकी अन्दर स्थापन करना चाहिये, और दुसरा मुनि उसका सहायता अर्थात् धैर्यावश करे

(२) अगर दोनों मुनियोंको साथमें ही प्रायश्चित्त लगा हो, तो उस मुनियोंसे एक मुनि पहले तप करे दुसरा मुनि उसको सहायता करे, जब उस मुनिका तप पूर्ण हो जाय, तब दुसरा मुनि तपधर्या करे और पहला मुनि उसको सहायता करे

(३) यह बहुतसे मुनि एकत्र हो विहार करे जिसमें एक मुनिको दोष लगा हो, तो उसे आलोचना दे तप कराना दुसरा मुनि उसको सहायता करे

(४) जब बहुतसे मुनियोंको एक साथमें दोष लगा हो, जैसे शय्यातरका आहार भूयमें आ गया सर्व साधुओंने भोग्य भी गीया बादमें खतर हुआ कि इस आहारमें शय्यातरका आहार सामेल था, तो सब साधुओंको प्रायश्चित्त होता है उसमें यह साधुको धैर्यावशने गीये रगे और दोष सर्व साधु उस प्रायश्चित्त तप करे उन्हाका तप पूर्ण होनेपर एक साधु रहा था वह तप करे और दुसरे साधु उसकी सहायता करे अगर अधिक साधुओंकी आवश्यकता हो तो अधिकको भी रख सकते हैं

भावार्थ - प्रायश्चित्त महित आयुष्य ग्रह करने काल करनेसे जीव विराधक होता है घाम्ते लगे हुये पापकी आलोचना कर उसका तप ही शीघ्र कर लेना चाहिये जिससे जीव आराधक हो पारगत हो जाता है

(५) प्रतिहार कल्प साधु—जो पहला प्रायश्चित्त सेवन कीया था, वह साधु तपधर्या करता हुआ अकृत्य स्थानको और सेवन कीया उसकी आलोचना करनेपर आचार्य महाराज उसकी

शक्तियों देख तप प्रायश्चित्त देवे अगर वह साधु नफलीफ पाता हा ता उसकी वैयावध्यमें एक दुसरे साधुको रखे अगर वह साधु दुसरे साधुकोसे वैयावध्यही करगव और अपना प्रायश्चित्तका त पभी न करे तो वह मा जु दुतरफी प्रायश्चित्तका अधिकारी बनता है

(६) प्रायश्चित्त तप करता हुआ साधु ग्लानपनेको प्राप्त हुआ ' गणधिच्छेदक ' के पास आवे ता गणधिच्छेदकको नहीं कह्यै कि उस ग्लान साधुको निकाल देना कि तिरस्कार करना गणधिच्छेदक का फर्ज है कि उस ग्लान मुनिकी अग्लानपणे पैया यच्च करावे जहातक वह रोगमुक्त न हो, यहातक, फिर रोगमुक्त हो जानेपर व्यवहार शुद्धि निमित्त सद्योप साधुकी पैयायच्च क रनेपाले मुनिको स्तोत्र—नाम मात्र प्रायश्चित्त देवे

(७) अणुदृष्ट्या प्रायश्चित्त (तीन कारणोंसे वह प्रायश्चित्त होता है, देखो, बहत्वरूपसूत्रमें) वहता हुआ साधु ग्लानपनेको प्राप्त हुआ हो, वह साधु गणधिच्छेदकके पास आवे तो गणधिच्छेदकको नहीं कह्यै उसको गणसे निकाल देना या उसका तिरस्कार करना गणधिच्छेदककी फर्ज है कि उस मुनिकी अग्लानपणे पैयायच्च करावे जहातक उस मुनिका शरीर रोगरहित न हा यहा तक फिर रोग रहित हो आने क बाद जो मुनि पैयायच्च करी थी, उसको नाम मात्र स्तोत्र प्रायश्चित्त देना कारण—वह रोगी साधु प्रायश्चित्त वह रहा था जैन शासनकी उल्लिखारी है कि आप प्रा यश्चित्त भी ग्रहण करे, परन्तु परोपकारके लीये उस ग्लान साधुकी पैयायच्च कर उसे समाधि उपजावे

(८) पय पारचिय प्रायश्चित्त वहता हुआ (दशथा प्रायश्चित्त)

(९) ' क्षिपचिप ' किसी प्रकारकी वायुके प्रयोगसे वि क्षिप्त—यिकल चिप हुआ साधु ग्लान हो, उसको गच्छ बहार

करना गणविच्छेदकको नहीं कल्पे किन्तु उस मुनिकी अम्लानपणे
वैयायथ करना कल्पे जहातक यह मुनिका शरीर रोग रहित
हो, यहातक यात्रत पूर्ववत्

(१०) 'दित्तचित्त' कन्दर्पादि कारणोंसे दित्तचित्त होता है

(११) 'जरसाइष्ट' यक्ष भूतादिके कारणसे " "

(१२) 'उमायपण' उन्मादको प्राप्त हुआ

(१३) 'उपसग' उपसर्गको प्राप्त हुआ

(१४) 'साधिकरण' किसीसे साथ प्रोधादि होनेसे

(१५) 'सप्रायश्चित्त' किसी कारणसे अधिक प्रायश्चित्त

आने पर

(१६) भात पाणीका परित्याग (सथारा) करने पर

(१७) 'अर्पज्ञात' किसी प्रकारकी तीव्र अभिलाष हो, तब

अर्थ याने द्रव्यादि देवनेसे अभिलाषा वशात्

उपर लिखे कारणोंसे साधु अपना स्वरूप भूल वैभान हो
जाता है, ग्लान हो जाता है, उस समय गणविच्छेदकको, उस
मुनिकी गण याद्वार कर देना या तिरस्कार करना नहीं कल्पे
किन्तु उस मुनिकी वैयायथ करना कराना कल्पे कारण-
पेमी हालतमें उस मुनिकी गच्छ याद्वार निकाल दीया
जाय तो शामनकी लघुता होती है मुनियोंमें निर्दयता
और अन्य लोगोंका शामन-गच्छमें दीक्षा लेनेका अभ्यास
हो होता है तथा भयमी जीर्वाको सहायता देना महा
लाभका कारण है वास्ते गणविच्छेदकका चाहिये कि उस मुनि
का शरीर जहातक राग मुक्त न हो यहातक वैयायथ करे कि
उस मुनिका शरीर रोगमुक्त हो जाय तब वैयायथ करनेका

मुनिको व्यवहार शुद्धि के निमित्त नाम मात्र प्रायश्चित्त देवे कारण—यह ग्लान साधु उस समय दीपित है, परन्तु घेयाघ्न करनेवाला उत्कृष्ट परिणामसे तीर्थकर भोग बाध सकता है

(१८) नौवा प्रायश्चित्त सेवन करनेवालेको अगृहस्थपणे दीक्षा देना नहीं कल्पे गणयिच्छेदकको

(१९) नौवा अनवस्थित नामका प्रायश्चित्त कोई साधु सेवन कीया हो, उसको फिरसे गृहस्थलिंग धारण करवावे ही दीक्षा देना गणयिच्छेदकको कल्पे

(२०) दशवा प्रायश्चित्त करनेवालेको अगृहस्थपणे दीक्षा देना नहीं कल्पे गणयिच्छेदकको

(२१) दशवा पारचित्त नामका प्रायश्चित्त किसी साधुने सेवन कीया हो, उसको फिरसे गृहस्थलिंग धारण करवावे ही दीक्षा देना गणयिच्छेदकको कल्पे

(२२) नौवा अवस्थित तथा दशवा पारचित्त नामका प्रायश्चित्त छिनी साधुने सेवन कीया हो उसे गृहस्थलिंग धारण करवावे तथा अगृहस्थ (साधु) लिंगसे ही दीक्षा देना कल्पे

भाषार्थ—नौवा दशवा प्रायश्चित्त (गृहस्थकल्पमें देखो) यह एक लौकिक प्रसिद्ध प्रायश्चित्त है इन वास्ते जनममूहको शासनकी प्रतीति के लिये तथा दुमरे साधुओंका क्षोभके लिये उसे प्रमिद्धिमें ही गृहस्थलिंग करवाके फिरसे नयी दीक्षा देना कल्पे अगर कोई आचार्यादि महान् अतिशय धार्मिक हो, जिसकी विशाल समुदाय हो अगर कोई भवितव्यताके कारण ऐसा दोष सेवन कीया हो, यह बात गुप्तपणे हो तो उसको प्रायश्चित्त अदर ही देना चाहिये तात्पर्य—शुभ प्रायश्चित्त हो, तो आलोचना भी गुप्त देना और प्रसिद्ध प्रायश्चित्त हो तो आलोचना भी प्रसिद्ध देना परन्तु आलो-

चना बिना आराधक नहीं होता है जैसे गच्छको और मघको प्रतीतिका कारण दो, ऐसा करना चाहिये

(२३) दो साधु मद्यश समाचारीवाले साथमें विचरते हैं किसी कारणसे एक साधु दुसरे साधुपर अभ्याख्यान (कलष) देनेसे इरादेसे आचार्यादिके पाम जाके अर्ज करे कि—हे भगवन्, मैंने अमुक माधुके साथ अमुक अकृत्य काम किया है इसपर जिस माधुका नाम लीया, उस माधुको आचार्य बुलवाके हित-बुद्धि और मधुरतासे पुछे—अगर वह साधु स्वीकार करे, तो उसको प्रायश्चित्त देये, अगर वह साधु कहे कि—मैंने यह अकृत्य कार्य नहीं किया है तो कलकदाता मुनिको उसका प्रमाण पुरस्सर पुछे, अगर वह साधुतो पुरी न दे सके, तो जितना प्रायश्चित्त उस मुनिको आता था, उतना ही प्रायश्चित्त उस कलकदाता मुनिको देना चाहिये अगर आचार्य उस बातका पूर्ण निर्णय न कर, गग द्वेपके घश हों अप्रतिसेयीको प्रतिमेयी उनाके प्रायश्चित्त देये तो उतना ही प्रायश्चित्तका भागी प्रायश्चित्त देनेवाला आचार्य होता है

भाषार्थ—नयम है तो आत्माकी साक्षीमें पलता है और सम्य प्रतिज्ञा ऐसा व्यवहार है अगर बिगर साधुती किसीपर आक्षेप कायम कर दिया जायगा, तो फिर हरेक मुनि हरेकपर आक्षेप करते रहेगा, तो गच्छ और शासनकी मयादा रहना असंभव हागा वास्ते बात करनेवाले मुनिको प्रथम पूर्ण साधुती या नाच कर लेना चाहिये

(२४) किसी मुनिको मोहकमका प्रबल उदय होनेसे काम-पीडित हो, गच्छको छोडके ससार्गमें जाना प्रारभ किया, जात हुवेका परिणाम हुआ कि—अहो ! मैंने अकृत्य किया, पाया हुआ चारित्र्य चितामणिको छोड काचका कटका घहन करनेकी अभि-लाषा करता हु ऐसे विचारसे वह माधु फिरसे उसी गच्छमें

आनेकी इच्छा करे, अगर उस समय अन्य साधु शका करे रि-
इमने दोष सेवन कीया होगा या नहीं ? उन्हाकी प्रतीतिके लीये
आचार्यमहाराज उसकी जाच करे प्रथम उस साधुको पूछे
अगर वह साधु कहे कि—मेने अमुक दोष सेवन कीया है तो
उसको यथायोग्य प्रायश्चित्त देना अगर साधु कहे रि—मेने
कुछ भी दोष सेवन नहीं कीया है, तो उसकी मृत्युतापर ही
आधार रखे कारण प्रायश्चित्त आदिव्यवहारमे दी दीया जाता है

भाषार्थ—अगर आचार्यादिको अधिक शका हो तो जहा
पर वह साधु गया हो, वहापर तलाम करा लि जाये भगवती
सूत्र ८-६ मनकी आलोचना मनसे भी शुद्ध हो सकती है

(२५) एक पत्रवाले साधुको स्वल्पशास्त्रके लीये आचार्या
पाध्यायकी पट्टी देना कल्प परन्तु गच्छयामी निग्रंथाको उसकी
प्रतीति होती चाहिये

भाषार्थ—जिन्होंको रागद्वेष आदि नहीं हैं अथवा एक
गच्छमें गुरुकुलनामको चिरका सेवन कीया हो प्राय गुरुकु-
लवास सेवन करनेवालेमें अनेक गुण हीने हैं नये पुराने आचार
व्यवहार, साधु आदिके जानकार होते हैं, गच्छमर्यादा चलानेमे
कृशल होते हैं, उन्होंको आचार्यकी मौजूदगीमे पट्टी दी जाती
है अगर आचार्य कभी बाधम पाया हो, तो भी उन्हाके पीछे
पट्टीका झण्डा न हो, साधु साथ रहै स्वल्पकालकी पट्टी
देनेका कारण यह है कि—अगर दुसरा कोई योग्य हो तो वह
पट्टी उन्हाको भी दे सकते हैं अगर दुसरा पट्टीके योग्य न हो
तो चिरकालके लीये ही उसी पट्टीको रख सकते हैं

(२६) जो कोई मुनि परिहार तप कर रहे हैं, और कित-
नेक अपरिहारिक साधु पक्षत्र नियास करते हैं उन्हाको एक

मंडलपर सविभागके साथ भोजन करना नहीं कल्पे कहातक ? कि जो एक मासिक, दो मासिक, तीन मासिक, चार मासिक पाच मासिक, छे मासिक, जितना तप कीया हो, उतने मास और प्रत्येक मासके पीछे पाच पाच दिन परं छे मासके तपवा लेवे साथ तपके मियाय एक मास साथमें भोजन नहीं करे. कारण-तपस्याके पारणेशालोंको शाताकागे आहार देना चाहिये. घाम्ते एकत्र भोजन नहीं करे बादमें सर्व साधु सविभाग मयुक्त सामेल आहार करे

(२७) परिहार तप करनेवाले मुनिवे पागणादिमें अशनादि चार आहार बह स्वयं ही ले आते हैं दुसरे साधुका देना दिगाना नहीं कल्पे अगर आचार्यमहाराज विशेष कारण जानने आशा दे तो अशनादि आहार देना दिलाना कल्पे इसी मासिक धृतादि विगड भी समझना

(२८) किसी स्थविर महाराजकी पैयायशमें कोई परिहारिक तप करनेवाला साधु रहेता है, तो उस परिहारिक तप-स्वीये पात्रमें लाया हुआ आहार स्थविरके काममें नहीं आवे अगर स्थविर महाराज किसी विशेष कारणसे आशा दे दे कि—हे आर्य ! तुम हमारे गौचरी जाते हो तो हमारे भी इतना आहार ले आना तो भी उस परिहारिक साधुके पात्रमें भोजन न करे आहार लानेके बादमें आचार्य अपने पात्रमें तथा अपने कमंडलमें पाणी लेके वाममें लेवे (भोगवे)

(२९) इसी मासिक परिहारिक साधु स्थविरोंके लीये गौचरी जा रहा है उस समय विशेष कारण जान स्थविर कहे कि—हे आर्य ! तुम हमारे लीये भी अशनादि लेते आना आहारादि लानेके बाद अपने अपने पात्रमें आहार, कमंडलमें पाणी ले लेवे फिर पूवकी मासिक आहारादि भोगवे

भाषार्थ—प्रायश्चित्त लेवे तप कर रहा है इसी वास्ते वह साधु शुद्ध है वास्ते उसने लाया हुआ अन्ननादि स्थविर भोगव सके परन्तु अभी तक तपको पूर्ण नहीं किया है वास्ते उस साधुके पात्रादिमें भोजन न करे उससे उस साधुको क्षोभ रहेता है तपको पूर्णतासे पार पहुँचा सकते हैं इति

श्री व्यवहार सूत्र—दूसरा उद्देशाका सभिस्त सार



(३) तीसरा उद्देशा

(१) साधु इच्छा करे कि मैं गणको धारण कर अर्थात् शिष्यादि परिचारको ले आगवान हो के विचर परन्तु आचाराग और निशीथसूत्रके जानकार नहीं है उन साधुको नहीं कल्पे गणको धारण करना

(२) अगर आचाराग और निशीथसूत्रका ज्ञाता हो, उस साधुको गण धारण करना कल्पे

भाषार्थ—आगेवान हो विचरनेवाले साधुकोको आचाराग सूत्रका ज्ञाता अवश्य होना चाहिये, कारण—साधुकोका आचार, गोचार विनय, दैयाध्व, भाषा आदि मुनि मागका आचाराग सूत्रमें प्रतिपादन किया हुआ है अगर उस आचारसे स्वल्पा हो जाये, अर्थात् दोष लग भी जाये तो उसका प्रायश्चित्त निशीथ सूत्रमें है वास्ते उस दोनों सूत्राका जानकार हो, उस मुनिको ही आगवान होके विहार करना कल्पे

(३) आगेवान हो विहार करनेकी इच्छावाले मुनियोंको पेन्तर स्थविर (आचार्य) महाराजसे पूछना इसपर आचार्य महाराज योग्य ज्ञानके आज्ञा दे तो कल्पे

(४) अगर आज्ञा नहीं देवे तो उस मुनिको आगेवन होके विचरना नहीं कल्पै जो विना आज्ञा गणधारण करे, आगेवान हो विचरे, उस मुनिको, जितने दिन आज्ञा माहार रहै, उतने दिनका छेद तथा तप प्रायश्चित्त होता है और जो उन्हाके साथ रहनेवाले साधु हैं, उसको प्रायश्चित्त नहीं है कारण यह उस अंग्रे श्वर साधु के कहनेसे रहे ये ।

(५) तीन वर्षकी दीक्षा पर्यायवाले साधु आचारमें, संयममें, प्रयत्नमें, प्रज्ञामें, समग्र करनेमें, अवग्रह लेनेमें कुशल—होशीयार हो, जिसका चारित्र्य खडित न हुआ हो संयममें सयला दोष नहीं लगा हो, आचार भेदित न हुआ हो, कपाय कर चारित्र्य सक्लित नहीं हुआ हो, बहु श्रुत, बहुत आगम तथा विद्याओंके जानकार हो, कमसे कम आचाराग सूत्र, निशीथ सूत्र के अर्थ पर मार्गका जानकार हो, उस मुनिको उपाध्याय पद देना कल्पै

(६) इससे विपरीत जो आचारमें अकुशल यावत् अल्प सूत्र अर्थात् आचाराग, निशीथका अज्ञातकी उपाध्यायपद देना नहीं कल्पै

(७) पाच वर्षीकी दीक्षा पर्यायवाला साधु आचारमें कुशल यावत् बहुश्रुत हो, कमसे कम दशाश्रुतस्कन्ध, व्यवहार, वृहत्कल्प सूत्रोंके जानकार हो, उस मुनिको आचार्य, उपाध्यायकी पदवी देना कल्पै

(८) इससे विपरीत हो, उसे आचार्य उपाध्यायकी पदवी देना नहीं कल्पै

(९) आठ वर्षीकी दीक्षा पर्यायवाले मुनि आचार कुशल यावत् बहुश्रुत—बहुत आगमों विद्याओंके जानकार कमसे कम स्यानाग, समवायाग सूत्रोंका जानकार हो, उस महात्माओंको

आचार्य, उपाध्याय, प्रवक्तृ, स्वविर, गणि, गणविच्छेदक, पद्मी देना कल्पे और उस मुनिको उक्त पद्मी लेना भी कल्पे

(१०) इससे विपरीत हो तो न सघको पद्मी देना कल्पे, न उस मुनिको पद्मी लेना कल्पे कारण-पद्मीधरके लीये प्रथम इतनी योग्यता प्राप्त करनी चाहिये जो उपर लिखी हुई है

(११) एक दिनके दिक्षितको भी आचार्यपद्मी देना कल्पे

भाषार्थ—किसी गच्छमें आचार्य कालधर्म प्राप्त हुये, उस गच्छमें साधु संप्रदाय विशाल है, किन्तु पीछे ऐसा कोई योग्य साधु नहीं है कि जिसको आचार्यपद पर स्थापन कर अपना निर्वाह कर सके उस नम्रय अच्छा, उच्च, कुलीन जिस कुलकी अन्दर बड़ी उदारता है, विश्वामकारी उच्च कार्य कीया हुआ है, संसारमें अपने विशाल कुटुम्बका दितपूर्वक निर्वाह कीया हो, लोकमें पूण प्रतीत हो-इत्यादि उत्तम गुणोंवाले कुलका योग्य पुरुष दीक्षा ली हो, ऐसा एक दिनकी दीक्षावालेको आचार्यपद देना कल्पे

(१२) यय पर्याय धारक मुनिको आचार्य उपाध्यायकी पद्मी देना कल्पे

भाषार्थ—कोई गच्छमें आचार्यापाध्याय कालधर्म प्राप्त हो गये हो और चिरदिक्षित आचार्यापाध्यायका योग न हो, उस हालतमें पूर्वोक्त जातिधान, कुलधान, गच्छ निर्वाह करने योग्य अचिरकाल दीक्षित है, उसको भी आचार्यापाध्याय पद्मी देनी कल्पे परन्तु यह मुनि आचाराग निशीयका जानकार न हो तो उसे कह देना चाहिये कि-आप पेस्तर आचाराग निशीयका अभ्यास करो इसपर यह मुनि अभ्यास कर आचाराग निशीय मूत्र पद ले, तो उसे आचार्यापाध्याय पद्मी देना कल्पे अगर

आचाराग निशीथ सूत्रका अभ्यास न करे, तो पट्टी देना नहीं कल्प कारण-साधुवर्गका स्वाम आधार आचाराग और निशीथ सूत्र परही है

(१३) जिस गच्छमें नवयुवक तरुण साधुवर्गका समूह है, उस गच्छके आचार्योंपाध्याय कालधर्म प्राप्त हो जाये तो उस मुनियोंको आचार्योंपाध्याय विना रहेना नहीं कटपै उस मुनियोंको चाहिये कि शीघ्रतासे प्रथम आचार्य, फिर उपाध्यायपद पर स्थापन कर, उन्ही की आज्ञामें प्रवृत्ति करना चाहिये कारण-आचार्योंपाध्याय विना साधुवर्गका निर्याद होना असंभव है

(१४) जिस गच्छमें नव युवक तरुण साधुवर्गका है उन्हाके आचार्य, उपाध्याय और प्रवर्तिनी कालधर्म प्राप्त हो गये हो, तो उन्हाको पहले आचार्यपद, पीछे उपाध्यायपद और पीछे प्रवर्तिनीपद स्थापन करना चाहिये भावना पूर्णवत्

(१५) साधु गच्छम (साधुवेपमे) रह कर मैथुनको सेवन कीया हो, उस साधुको जायजीवतक आचार्य, उपाध्याय, स्वयिर, प्रवर्तक, गणी, गणधर, गणचिच्छेदक, इस पट्टीयोंमेंसे किसी प्रकारकी पट्टी देना नहीं कटपै, और उस साधुको लेना भी नहीं कल्पै जिसको शासनका, गच्छका और वेपकी मर्यादाका भी भय नहीं है, तो वह पट्टीधर हो के शासनका और गच्छका क्या निर्याद कर सके ?

(१६) कोई साधु प्रबल मोहनीयकर्मसे पीडित होनेपर गच्छ संप्रदायको छोड़ने मैथुन सेवन कीया हो, फीर मोहनीयकर्म उपशान्त होनेसे उमी गच्छमें फिरसे दीक्षा लें, अर्थात् दीक्षा देनेवाला उसे दीक्षायोग्य जाने तो दे उस साधुको तीन वर्षतक पूर्वोक्त सात पट्टीसे किसी प्रकारकी पट्टी देना नहीं कल्प

और न तो उस साधुका पट्टी धारण करना कल्प है अगर तीन वर्ष अतिप्रमद के बाद चतुर्य वर्षमें प्रवेश किया हो, वह साधु कामधिकारसे बिलकुल उपशात हुआ हो, निवृत्ति पाइ हो, इन्द्रियों शांत हो, तो पूर्वाह्न सात पट्टीमेंसे किसी प्रकारकी पट्टी देना और उस मुनिको पट्टी लेना कल्प है

भाषार्थ—भक्तिप्यत्ताके योगसे किसी गाताथको कर्मोदय के कारणसे विकार हो तो भी उसके दिलमें शासन बसा हुआ है कि वह गच्छ, वेप छोड़के अकृत्य काय किया है, और काम उपशात होनेसे अपना आत्मस्वरूप समझ दीप्ता ली है ऐसेको पट्टी दी जाये तो शासनप्रभावनापूर्वक गच्छका निवाह कर सकेगा-

(१७) इमी माफिक गण विच्छेदक

(१८) यथ आचार्यापाध्याय

भाषार्थ—अपन पदमें रहके अकृत्य कार्य करे, उस जाय-नाथ किसी प्रकारकी पट्टी देना और उन्हींको पट्टी लेना नहीं कल्प है अगर अपने पदको, येषको छोड़ पूर्वाह्न तीन वर्षोंके बाद योग्य जाने तो पट्टी देना और उन्हींको लेना कल्प है भावनापूर्वकत

(१९) साधु अपने यषको बिना छोड़े और देशांतर बिना गये अकृत्य कार्य करे, ता उस साधुको जायजीवतक मात पट्टीमेंसे कोईभी पट्टी देना नहीं कल्प है

भाषार्थ—जिम देश, ग्राममें येषका त्याग कीया है, उसी देश, ग्रामादिमें अकृत्य काय करनेसे शासनकी लघुता करनेवाला होता है वास्ते उसे किसी प्रकारकी पट्टी देना नहीं कल्प है अगर किसी साधुको भोगावली कर्मादयसे उन्माद प्राप्ति हो भी जाये, परन्तु उसके हृदयमें शासन बस रहा है वह अपना ये-शका त्याग कर, देशान्तर जा, अपनी कामाग्निवा शांत कर, फिर

आत्मभाषना वृत्तिसे पुन उसी गच्छमें दीक्षा ले, बादमें तीन वर्ष हो जाये, काम विकारसे पूर्ण निवृत्त हो जाय, उपशान्त हो, इन्द्रियों शांत हो, उसको योग्य जाने तो मात पट्टीमेंसे किसी प्रकारकी पट्टी देना कल्पे भाषना पर्यवत

(२०) एव गणविच्छेदक

(२१) एव आचार्योपाध्यायभी समक्षना

(२२) माधु बहुश्रुत (पूर्वांगके ज्ञान) बहुत आगम, विद्याके जानकार, अगर कोई जन्म कारण होनेपर मायासयुक्त मृपावाद—उत्सूत्र खोलने अपनी उपजीविका करनेवाला हो, उसे जावजीव तक मात पट्टीमेंसे किसी प्रकारकी पट्टी देना नहीं कल्पे

भाषार्थ—असम्य खोलनेवालोंकी किसी प्रकारसे प्रतीति नहीं रहती है उत्सूत्र खोलनेवाला शासनका घाती कहा जाता है सभीका पता मिलता है, परन्तु असम्यवादीयोंका पता नहीं मिलता है चान्ते असम्य खोलनेवाला पट्टीने अयोग्य है

(२३) एव गणविच्छेदक

(२४) एव आचार्य

(२५) एव उपाध्याय

(२६) बहुतसे माधु एकत्र हो सबके सब उत्सूत्रादि असम्य खोलें

(२७) एव बहुतसे गण विच्छेदक

(२८) एव बहुतसे आचार्य

(२९) एव बहुतसे उपाध्याय

(३०) एव बहुतसे माधु, बहुतसे गणविच्छेदक, बहुतसे आचार्य, बहुतसे उपाध्याय एकत्र हुये, माया सयुक्त मृपावाद

घोले, उदचूय घोले, आगम विरुद्ध अचरण करे—इत्यादि असत्य घोले तो मन्त्रके मन्त्रको जायजीधतक सात प्रकारमेंसे कोईभी पद्धी देना नहीं कल्पै अर्थात् मन्त्रके मन्त्र पद्धीके अयोग्य है इति

श्री व्यवहारसत्र—तीसरा उद्देशाका सक्षिप्त सार.



(४) चौथा उद्देशा

(१) आचार्यापाध्यायजीका शीतोष्ण कालमें अकेले विहार करना नहीं कल्पै

(२) आचार्यापाध्यायजीको शीतोष्ण कालमें आप सहित दो ठाणेसे विहार करना कल्पै अधिक सामग्री न हो तो उतने रहै, परन्तु कमसे कम दो ठाणे तो होनाही चाहिये

(३) गणविच्छेदकको शीतोष्ण कालमें आप सहित दो ठाणे विहार करना नहीं कल्पै

(४) आप सहित तीन ठाणेमें कल्पै भाषना पूर्वयत्

(५) आचार्यापाध्यायको आप सहित दो ठाणे चातुर्मास करना नहीं करै

(६) आप सहित तीन ठाणे चातुर्मास करना कल्पै भाषना पश्चयत्

(७) गणविच्छेदकको आप सहित तीन ठाणे चातुर्मास करना नहीं कल्पै

(८) आप सहित चार ठाणे चातुर्मास रहना कल्पै

भाषार्थ—कमसे कम रहे तो यह कल्प है आचार्योंपाध्यायसे एक साधु गणविच्छेदकको अधिक रखना चाहिये कारण—

दुसरे साधुयाँके कारण हो तो आचार्य इच्छा हो तो वैयायध करें कराये, परन्तु गणविच्छेदकको नो अवश्य वैयायध करना ही पडता है वास्ते एक साधु अधिक रमना ही चाहिये

(९) ग्राम-नगर यायत् राजधानी बहुतसे आचार्यापाध्याय, आप सहित दो ठाणे, बहुतसे गणविच्छेदक आप सहित तीन ठाणे शीतोष्णकालमें विहार करना कल्पै

(१०) और आप सहित तीन ठाणे आचार्यापाध्याय, आप सहित चार ठाणे गणविच्छेदकको चातुमास रहना कल्पै परन्तु साधु अपनी अपनी निश्चा कर रहना चाहिये कारण—कभी अग्न अलग जानेका काम पड़े तो भी नियत कीये हुये साधुओंको माथ है विहार कर सरे भायना पूर्वयत्

(११) आचाराग और निशीथसूत्रके जानकार साधुको आगवान कल्पे उन्हाके साथ अन्य साधु विहार कर रहे थे कदाचित् यह आगवान साधु कालधर्मका प्राप्त हो गया हो, तो शेष रहे हुये साधुओंकी अन्दर अगर आचाराग और निशीथ सूत्रका जानकार साधु हो तो उसे आगेवान कर, मत्र साधु उन्हाकी आज्ञामें विचरना अगर ऐसा न हो, अर्थात् मत्र साधु आचाराग और निशीथसूत्रके अपठित हो तो मत्र साधुओंको प्रतिज्ञापूर्वक वहासे विहार कर जिस दिशामें अपने स्वधर्मों साधु विचरते हो, उसी दिशामें एक रात्रि विहार प्रतिमा ग्रहन कर, उस स्वधर्मोंयात्रे पाम आ जाना चाहिये रहस्तेमें उपकार निमित्त नहीं ठहरना अगर शरीरमें कारण हो तो ठेर मके कारण—निवृत्ति होनेके बाद पूर्वस्थित साधु कहे—हे आर्य ! एक दोय रात्रि और ठहरो कि तुमारे रोगनिवृत्तिकी पूर्ण ग्रातरी हो ऐसा मौकापर एक दोय रात्रि ठहरना भी कल्पे एक दोय

रात्रिसे अधिक नहीं रहना अगर रोगचिकित्सा होनेपर एक दोय रात्रिसे अधिक ठहरे, तो जितना दिन ठहरे, उतना ही दिनोंका छेद तथा तप प्रायश्चित्त होता है

भाषाध—आचाराग और निशीथतंत्रके जानकार हो यह मुनि ही मुनिमार्गको ठीक तौरपर चला सकता है अपठितोंके लीये रहस्तेमें एक दोय रात्रिसे अधिक ठहरना भी शास्त्रकारोंने बिल्कुल मना कर दिया है कारण—लामके बदले बड़ा भारी नुक-
शान उठाना पड़ता है चारित्र तो क्या परन्तु कभी कभी सम्य-
कत्प रत्न ही स्वा घेठना पड़ता है वास्ते आचाराग और निशी-
थके अपठित साधुओंको आगेषान होके विहार करनेकी साफ मनाह है

(१२) इसी मासिक चातुर्मास रहे हुये साधुओंके आगेषान मुनि काल करनेपर दुमरा आचाराग-निशीथके जानकार हो तो उसकी निभाय रहना अगर पेसा न हो तो चातुर्मासमें भी विहार कर, अन्य साधु जो आचाराग-निशीथका जानकार हो, उन्हींके पास आ जाना चाहिये परन्तु एक दोय रात्रिसे अधिक अपठित साधुओंको रहनेकी आज्ञा नहीं है स्वेच्छासे रह भी जाये, तो जितने दिन रहे, उतने दिनका छेद तथा तपप्रायश्चित्त होता है भाषना पूर्यवत्

(१३) आचार्यापाध्याय अस्त मन्त्रय पीछले साधुओंको कह कि—हे आय ! मेरा मृत्युके बाद आचार्यपदत्री अमुक साधुको दे देना एसा कहके आचार्य कालधर्म प्राप्त हो गये पीछेसे साधु (सध) उस साधुको आचार्यापाध्याय पद्रीके योग्य जाने तो उसे आचार्यापाध्याय पद्री दे देवे, अगर वह साधु पद्रीके योग्य नहीं है, (आचार्य रागभावसे ही कह गये हो) अगर गच्छमें

दुसरा माधु पट्टी योग्य हो तो उस योग्य साधुको पट्टी देवे अगर दुसरा साधु भी योग्य न हो, तो मूल जो आचार्य कह गये थे, उम्मी साधुको पट्टी दे देवे परन्तु उस माधुम इतना करार करना चाहिये कि—अभी गच्छमे कोई दुसरा पट्टी योग्य साधु नहीं है, यदातक तुमको यह पदवी दी जाती है फिर पट्टी योग्य साधु निकल आवेगा, उस समय आपको पदवी छोड़नी पड़ेगी हम सरतसे पट्टी दे देवे चाहे कोई पट्टीयोग्य साधु हो तो, संघ एकत्र हो मूल माधुको कहे कि—हे आर्य ! अब हमारे पास पट्टीयोग्य साधु है चाहे आप अपनी पट्टीको छोड़ दे इतना कहने पर यह साधु पट्टी छोड़ दे तो उसकी किमी प्रकारका छेद तथा तप प्रायश्चित्त नहीं है अगर आप उस पट्टीका न छोड़े, तो जितना दिन पट्टी रखे, उतना दिनका छेद तथा तप प्रायश्चित्तका भागी होता है तथा उस पट्टी छोड़ानेका प्रयत्न साधु संघ न करे तो सगरे मग संघ प्रायश्चित्तका भागी होता है

भाषार्थ—गच्छपति योग्य अतिशययान् होता है यह अपने शासन तथा गच्छका नियामक करता हुआ शासनोन्नति कर सकता है चाहे पट्टी योग्य महात्मार्याको ही देना चाहिये, अयोग्य को पट्टी देनेकी माफ मनाई है

(१४) हमी माफिक आचार्यापाध्याय प्रबल मोहकमोहयसे विकार अर्थात् कामदेवको जीत न सके, शेष भोगावलिकर्म भोग करने के लीये गच्छका परिन्याग करते समय कहे कि—मेरी पट्टी अमुक माधुको देना यह योग्य हो तो उसको ही देना, अगर पट्टीके योग्य न हो, तो दुसरा माधु पट्टीके योग्य हो, उसे पट्टी देना अगर दुसरा माधु योग्य न हो, तो मूठ जिस माधुका नाम आचार्यने कहा था, उसे परीक्ष कर पट्टी देना, फिर दुसरा

याग्य साधु होने पर उसकी पदवी ले लेना चाहिये माँगनेपर पछी छोड़ दे तो प्रायश्चित्त नहीं है अगर न छोड़े तथा छोड़ाने क लीये साधु सच प्रयत्न न करे, तो सप्तको तथा प्रकारका छेद और तप प्रायश्चित्त होता है भागना पूर्ववत्

(१२) आचार्यपाध्याय किसी गृहस्थको दीक्षा दी है, उस साधुको षड्दी दीक्षा देनेका समय आनेपर आचार्य जानते हुये च्यार पाच रात्रिसे अधिक न रत्ते अगर कोई राजा और प्रधान श्रेष्ठ और गुमास्ता तथा पिता और पुत्र साथमें दीक्षा ली हो, राजा, श्रेष्ठ, और पिता जो षड्दी दीक्षा योग्य न हुया हो और प्रधान, गुमास्ता, पुत्र षड्दीदीक्षा योग्य हो गये हो तो जबतक राजा श्रेष्ठ और पिता षड्दी दीक्षा योग्य नहो वहातक प्रधान, गुमास्ता और पुत्रको आचार्य षड्दी दीक्षासे रोक सकते हैं परन्तु ऐसा कारण न होनेपर उस लघु दीक्षावाला साधुको षड्दी दीक्षासे रोके तो रोकनेवाला आचार्य उतने दिनके तप तथा छेदके प्रायश्चित्तका भागी होता है

(१६) पथ अनजानते हुये रोने

(१७) पथ जानते अनजानते हुये रंकि, परन्तु यहा दश रात्रिसे ज्यादा रखनेसे प्रायश्चित्त होता है

नोट —अगर पिता, पुत्र और दुसराभी साथमें दीक्षा ली हा, पिता षड्दी दीक्षा योग्य न हुया, परन्तु उसका पुत्र षड्दी दीक्षा योग्य हो गया है और साथमें दीक्षा लेनेवालाभी षड्दी दीक्षाके योग्य हो गया है अगर पिताके लीये पुत्रको रोक दिया

१ सात रात्रि च्यार भाग छ मास—द्वाजी दाप्ताका तीन काल है इतन म मयमें प्रतिक्रमणें पंडिपण नामका अन्ययन तथा दावैकालिका चतुथाव्ययन पणनेवालोंने बड़ी दावा दी जाती है

जाय, तो साथमें हमारे दीक्षा लीयी, यह पुत्रमे दीक्षामें घृद्ध हो जाने इन वास्ते आचार्य महाराज उस दीक्षित पिताको मधुर वचनोंसे समझावे—हे आर्य ! अगर तुमारे पुत्रको बड़ी दीक्षा आवेगा, तो उमका गौरव तुमारेही लीये होगा—इत्यादि समझावे पुत्रको बड़ी दीक्षा दे मत है

(१८) कोई मुनि ज्ञानाभ्यासवे लीये स्वगच्छको छोड़ अन्य गच्छमें जावे अन्य गच्छमें जो रत्नत्रयादिसे घृद्ध साधु है, यह सामान्य ज्ञानवाला है और लघु साधु है, यह अच्छे गोताय है उन्हींके पास यह साधु ज्ञानाभ्यास कर रहा है उस समय कोई अन्य साधर्मि साधु मिले यह पूछते हैं कि—हे आर्य ! तुम किसके पास ज्ञानाभ्यास करते हो ? उत्तरमें अभ्यासी साधु रत्नत्रयादिसे घृद्ध साधुओंका नाम बतलावे तब पूछनेवाला बहे कि—इसे तो तुमारेही ज्ञान अच्छा है तो तुम उन्हींके पास कैसे अभ्यास करते हो तब अभ्यासक बहे कि—मैं ज्ञानाभ्यास तो अमृक मुनिये पास करता हूँ, परन्तु जो महात्मा मुझे ज्ञान देता है, यह उन्ही रत्नत्रयादिसे घृद्धकी आज्ञासे देता है

भावार्थ—यह निवशकाका बहुमान करता हुआ अभ्यास करनेवाला महात्माकाभी चिन्तन महित बहुमान किया है

(१९) बहुतसे स्थधर्मि साधु एकत्र होके विचरनेकी इच्छा करे, परन्तु स्थधिर महाराजकी पूछे बिना एकत्र हो विचरना नहीं करे अगर् स्थधिराजी आज्ञा बिना एकत्र होके विचरे तो जितने दिन आज्ञा बिना विचरे, उतने दिनोंका डेढ़ तथा तप प्रायश्चित्त होता है

भावार्थ—स्थधिर लाभका कारण जाने तो आज्ञा दे, नहीं तो आज्ञा न दे

(२०) बिना आज्ञा विहार करे, तो एक दोय तीन चार पाच रात्रिसे अपने स्वविराजो देवके सत्यभावसे आज्ञाया—प्रतिग्रमण कर, यथायोग्य प्रायश्चित्तको स्वीकार कर पुनः स्वविराजो आज्ञामें रहे, किन्तु हाथकी रेखा सुके बहातक भी आज्ञा बहार न रहै आता है वही प्रधान धर्म है

(२१) आज्ञा बहार विहार करतेशे चार पाच रात्रिसे अधिक समय हो गया हो, यादमें स्वविराजो देव न यथावसे आलोचना-प्रतिग्रमण कर, जो शास्त्र परिमाणसे स्वविराजो तप, छद्, पुनः उत्थापन प्रायश्चित्त देव, उसे सविनय स्वीकार करे दुसरी दवे आज्ञा लेन चिखरे जा जा कार्य करता हो, वह नय स्वविराजो आज्ञासे ही करे, हाथकी रेखा सुके बहातक भी आज्ञासे बहार नहीं रहै तोसरा मदान्नकी रम्भासे निमित्त स्वविराजो आज्ञाको यावत् पाया कर स्पष्ट करे पर

(२२) (२३) दो अनापक विहारसे निवृत्ति होनेवा है

भावार्थ—इस योगी सूत्रामें स्वविराजो आज्ञाका प्रधान पणा बतलाया है स्वविराजो आज्ञाका पावन करनेसे ही मुक्ति पाका तीसरा व्रत पालन हो सकता है

(२४) दो स्वधर्मों साथमें विहार करत है जिसमें एक शिष्य है, दुसरा रत्नत्रयादिसे गुरु है शिष्यका धृतज्ञान तथा शिष्यादिना परिचार बहुत है, और गुरुका स्वतन्त्र है तदपि शिष्यका गुरुमहागजका धिनय वैयाधवादि करना, आहार, पाणी, वस्त्र, पात्रादि अनुकूलतापथ्य लाक देना जल्पे गुरुगुरु पास रह के उन्हाकी सेवा-भक्ति करना कपै मागण—जो परिचार है, वह नय गुरुहृपाका ही फल है

(२५) और जो शिष्यको धृतज्ञान तथा शिष्यादिना

परिवार मरुतप हैं, और गुरुको बहुत परिवार है परन्तु गुरुकी इच्छा हो तो शिष्यको देवे, इच्छा न हो तो न देवे, इच्छा हो तो पासमें रखे, इच्छा हो तो पासमें न रखे, इच्छा हो तो अशनादि देवे, इच्छा हो तो न भी देवे, यह सब गुरुमहाराजजी इच्छापर आधार है परन्तु शिष्यको तो गुरुमहाराजका प्रहमान विनय करना ही चाहिये

(२६) दो स्वधर्मों साधु माथमें विहार करते हो, तो उनको प्रसाद होने रहना नहीं कल्प परन्तु एक गुरु दूसरा शिष्य होके रहना कल्प अर्थात् एक कुम्हरेको वृद्ध समझ उन्होंनेको यन्दन-नमस्कार, सेवा भक्ति करते रहना चाहिये

(२७) छत्र दो गणविच्छेदक

(२८) दो आचार्यापाध्याय

(२९) बहुतसे साधु

(३०) बहुतसे गणविच्छेदक

(३१) बहुतसे आचार्यापाध्याय

(३२) बहुतसे साधु, बहुतसे गणविच्छेदक, बहुतसे आचार्यापाध्याय, एकत्र होके रहते हैं उन्होंनेको सबको प्रसाद होके रहना नहीं कल्प परन्तु उन सबोंकी अन्दर गुरु-लघु होना चाहिये गुरुर्वाच्य प्रति लघुर्वाच्य साधु यन्दन नमस्कार, सेवा-भक्ति करते रहना चाहिये जिससे शासनका प्रभाव और विनयमय धर्मका पालन हो सब अर्थान् छोटा साधु बड़े साधुओंको, छोटा गण-विच्छेदक बड़े गणविच्छेदकों, छोटे आचार्यापाध्याय बड़े आचार्यापाध्यायों यन्दन करे तथा क्रमसर जैसे जैसे दीक्षा पर्याप्त हो, उनी मायिक यन्दन करते हुयेको शीतोष्णकालमें विहार करना कल्प इति

श्री व्यवहारमूल-चतुर्थ उद्देशाका सक्षिप्त सार

(५) पाचवा उद्देशा

(१) जैसे साधुयोगी आचार्य हात है, ऐसे ही साधुयोगीका आचार, गौचरमे प्रयुक्ति करानेवागी प्रयतिनीजी हाती हैं उम प्रयर्तणीजीको शीताण्णकालमें आप सहित डा ठाणे विहार करना नहीं करै

(२) आप सहित तीन ठाणे विहार करना करै

(३) गणविच्छेदणी—एक संघाडेमें आगेवान हाके विचरे, उसे गणविच्छेदणी कहते हैं उसे आप सहित तीन ठाणे शीतो ण्णकालमें विहार करना नहीं करै

(४) परन्तु आप सहित चार ठाणेस विहार करना करै.

(५) प्रयर्तणीको आप सहित तीन ठाणे चानुमान करना नहीं करै

(६) आप सहित चार ठाणे चानुमान करना करै

(७) गणविच्छेदणीको आप सहित चार ठाणे चानुमांस करना नहीं करै

(८) आप सहित पाच ठाणे चानुमांस करना करै भावना पद्यत

(९) ग्रामनगर यावत् राजधानी बहुतसी प्रयर्तणीयां आप सहित तीन ठाण, बहुतसी गणविच्छेदणीयां आप सहित चार ठाणमे शीताण्ण कालमें विचरना करै आर बहुतसी प्रयर्तणीयां आप सहित चार ठाणे बहुतसी गणविच्छेदणीयां आप सहित पाच ठाणे चानुमान करना करै

(१०) एक दुसरेकी निधामें रहें

(११) जो साध्वी आचाराग और निशीथ सूत्रकी जानकार अन्य माध्वीयाओं ले अग्रसर विहार करती हा, कदाचित् यह आगवान माध्वी काल कर जाये, तो शेष माध्वीयोंकी अन्दर जा आचाराग और निशीथ सूत्रकी जानकार अन्य साध्वी हो तो उसकी आगवान कर मत्र माध्वीयों उसकी निश्रामे विचरे कदाच गम्भी जानकार माध्वी न हा तो उस साध्वीयाको अग्य दिशामें जानकार माध्वीया विचरती हो यहापर रहस्तेमें एकक गयी रहने जाना कल्प रहस्तेमें उपकार निमित्त रहना नहीं कपे अगर शरीरमें रोगादि कारण हो, तो जहातक रोग न मिटे, यहातक रहना कपे रोग मुक्त हानेपरभी अन्य माध्वीया रहे रि—हे आर्या ! एक दो रात्रि और ठेरो, ताके तुमारा शरीरका वि/वाम हो, उस हालतमें एक दो रात्रि रहना कपे परन्तु अधिक ठहरना नहीं कपे अगर अधिक रहे, तो जितने दिन रहे, उतने दिनांका उद् तथा तपप्रायश्चित्त होता है

(१२) एन चतुर्मास रहे हुयेका भी अलापक समझना

भायार्थ—अपठित साध्वीयोंका रहना नहीं कल्पे अगर चतुर्मास हो, ता भी यहासे विहार कर, आचाराग, और निशीथ सूत्रके जानकारने पास आजाना चाहिये

(१३) प्रवर्तणी अन्त समय कहे कि—हे आर्या ! मैं काल कर जाउ, तो मेरी पत्नी अमुक माध्वीको दे देना अगर वह साध्वी योग्य हो तो उसे पत्नी दे देना तथा वह साध्वी पदवीके योग्य न हो और दुमरी माध्वीया योग्य हो, तो उसे पत्नि देना चाहिये दुसरी साध्वी पत्नि योग्य न हो, तो जिसका नाम प्रतलाया था, उसे पत्नि दे देना, परन्तु यह सरत कर लेना कि—अभी हमारे पास पत्नीयोग्य साध्वी नहीं है वास्ते

आपको यह प्रयत्तणीके कहनेसे पट्टी दी जाती है, परन्तु अन्य कोई पट्टी या ग्य साधनी होगी, तो आपकी यह पट्टी छोड़नी होगी वादमे कोई साधनी पट्टी योग्य हो, तो पहलेसे पट्टि छोड़ा लेनी इसपर पट्टी छोड़ दे तो किसी प्रकारका प्रायश्चित्त नहीं है, अगर यह पट्टिको नहीं छोड़े ता जितने दिन पट्टी रखे, उतने दिन डेढ़ तथा तपप्रायश्चित्त हाता है अगर उसकी पट्टी छोड़नेमें साधनी और लघु प्रयत्न न करे, ता उस साधनी तथा लघु मात्रों प्रायश्चित्तक भागी बनना पड़ता है

(१४) इसी मासिक प्रयत्नों साधनी प्रबल माहनीयकमरे उदयसे कामपीडित हो, फिर तत्पश्चात् ज्ञात समयकाभी धन कहना भावना चतुर्थ उद्देशा मासिक समझना

(१५) आचार्य महाराज अपन नवयुवक तरुण अवस्था वाल शिष्यका आचाराग और निशीथ सूत्रका अभ्यास कराया हो, परन्तु वह शिष्यको विस्मृत हो गया ज्ञाण आचार्यश्रीने पूछा कि—हे आर्य ! जो तुमकी आचाराग और निशीथसूत्र त्रिस्मृत हुआ है, तो क्या शरीरमें रोगादिकर कारणसे या प्रमादके कारणसे ? शिष्य अज्ञ करे कि—हे भगवन् ! मुझे प्रमादसे सत्र विस्मृत हुआ है ता उस शिष्यको जाधजीयतर माता पट्टीयोंसे किसी प्रकारकी पट्टी देना नहीं करे कारण अभ्यास कीया हुआ ज्ञान त्रिस्मृत हा गया, तो गच्छका रक्षण कैसे करेगा ? अगर शिष्य कहे कि—हे भगवन् ! प्रमादसे नहीं, किन्तु मेरे शरीरमें अमुक रोग हुआ था, उस रोगसे पीडित होनेसे सूत्रा त्रिस्मृत हुआ है तब आचार्यश्री कहे कि—हे शिष्य ! अब उस आचाराग और निशीथका फिरसे याद कर लेगा ? शिष्य कबूल करे कि—हाँ मैं फिरसे उस सूत्राको कटस्थ कर लुगा तो उस शिष्यको

सात पट्टियोंसे पट्टी देना कल्पे अगर कठस्थ करनेका स्वीकार कर, फिरसे कठस्थ नहीं करे तो, उसे न तो पट्टी देना कल्पे और न उम शिष्यको पट्टी लेना कल्पे

(१६) इमी माफिक नवयुवति तरुण साध्वीका भी ममग्रना चाहिये परन्तु यहा पट्टी प्रवर्तणी तथा गणत्रिच्छेदणी-द्वोय कहना शेष माधुयत्

(१७) स्थविर मुनि स्थविर भूमिकों प्राप्त हुये, अगर आचाराग और निशीथसूत्र भूल भी जायें, और पीछेसे कठस्थ करे, न भी करे तो उन्होंनेको सातों पट्टीसे किसी प्रकारकी भी पट्टी देना कल्पे कारण कि चिरकालसे उन महात्माओंने कठस्थ कर उमकी स्त्राध्याय कगी हुई है अगर क्रमसर कठस्थ न भी हो, तो भी उसकी मतलब उन्होंनेकी स्मृतिमें जरूर है, तथा चिरकाल दीक्षापर्याय होनेसे उहुतसे आचार-गोचर प्रवृत्ति उन्होंने देखी हुई है

(१८) स्थविर, स्थविरकी भूमि (६० वर्ष) को प्राप्त हुया, जा आचाराग और निशीथसूत्र विस्मृत हो गया हो, तो वह बैठे बैठे, सोते सोते, एक पमपाडे सोते हुये धीरे धीरेसे याद करे परन्तु आचाराग और निशीथ अवश्य कठस्थ रखना चाहिये कारण—साधुओंकी दीक्षासे लेके अत समय तकका व्यवहार आचारागसूत्रमें है, और उससे स्थलित हो, तो शुद्ध करनेके लिये निशीथसूत्र है

(१९) साधु साध्वीयोंके आपसमें पारद^१ प्रकारका सभोग^२ अर्थात् पख पात्र लेना देना, वाचना देना इत्यादि उस साधु साध्वीयोंकी आलोचना लेना देना आपसमें नहीं कल्पे अर्थात् आलोचना करना हो तो साधु साधुओंके पाम और साध्वीयों

साध्वीयाँके पास ही आलोचना करना कल्पै अगर अपनी अपनी समाजमें आलोचना सुननेवाला हो, तो उन्हेंके पास ही आलोचना करना, प्रायश्चित्त लेना अगर दश गोलोंका जानकार साध्वीयामें उस समय हाजर न हो, तो साध्वीयाँ साधुओंके पास भी आलोचना कर सकें, और साधु साध्वीयोंके पास आलोचना कर सकें

भाषाथ—जहातक आलोचना सुन प्रायश्चित्त देनेवाला हो, यहातक तो साधुओंको साध्वीयाँके पास और साधुओंका साधु याँके पास ही आलोचना करना चाहिये कि जिससे आपसमें परिचय न बढे अगर ऐसा न हो, तो आलोचना क्षणमात्र भी रचना नहीं चाहिये साध्वीयों साधुओंके पास भी आलोचना ले सकें

(२) साधु साध्वीयाँके आपसमें सभाग हैं, तथापि आपसमें बैयावच करना नहीं कल्पै, जहातक अथ बैयावच करने वाला हो यहातक परन्तु दुमरा कोई बैयावच करनेवाला न हो, उस आपसमें साधु, साध्वीयोंकी बैयावच तथा साध्वीयाँ, साधु याँकी बैयावच कर सकें भाषना पूर्ववत्

(२१) साधुको रात्रि तथा बैकालमे अगर सप काट खाया हो तो उसका औषधोपचार पुरुष करता हो यहातक पुरुषके पास ही करामा अगर उसका उपचार करनेवाली कोई स्त्री हो, तो मरणान्त कष्टमें साधु स्त्रीके पास भी औषधोपचार करा सकते हैं इसी भाँतिके साध्वीको सप काट खाया हो तो जहातक स्त्री उपचार करनेवाली हो यहातक स्त्रीसे उपचार कराना, अगर स्त्री न हो किन्तु पुरुष उपचार करता हो, तो मरणान्त कष्टमें पुरुषसे भी उपचार कराना कल्पै यहापर गमालाभका कारण देखना यह कल्प स्थविरकल्पी मुनियोंका है जिनकल्पी मुनियों

तो किसी प्रकारका वैयाघ्र कराना कल्प ही नहीं अगर जिन कल्पी मुनिको मर्ष काट खानेपर उपचार कराये तो प्रायश्चित्तका भागी होता है परन्तु स्वयिरक्तपी पुर्वाक्त उपचार कगनेमे प्रायश्चित्तका भागी नहीं है कारण-उन्हेका चेसा कल्प है इति

श्री व्यवहारमुद्र-पाचरा उद्देशा सप्त सार

(६) छद्मा उद्देशा

(१) साधु इच्छा करे कि मैं मेरे ममारी सन्धी लोगके घरपर गौचरी आदिने लीये गमन कर, तो उस मुनिको चाहिये कि पेत्रर स्वयिर (आचार्य) को पुँउ कि—हे भगवन् ! आपकी आज्ञा हो तो मे अमुक कार्यके लीये मेरे ससारी सन्धीयोके घड़ा जाउ ? इसपर आचार्यमहाराज योग्य ज्ञान आज्ञा दे ता गमन करे, अगर आज्ञा न दे तो उस मुनिको जाना नहीं कल्प कारण—समारी लोगका दीघकालमे परिचय था, वह मोंदकी वृद्धि करनेवाला होता है अगर आचार्यकी आज्ञाका उल्लघन कर स्वच्छन्दाचारी साधु अपने सन्धीयोके घड़ा चला भी जाये, तो जितने दिन आचार्यकी आज्ञा उद्देशा है, उतने दिनाका तप तथा उद प्रायश्चित्तका भागी होता है

(२) साधु अल्पश्रुत, अप आगमविद्याका ज्ञानकार अके लेका अपने ममारी सन्धीयोके उद्देशा जाना नहीं कल्पे

(३) अगर श्रुत गीतार्योके मायमे जाता हो, तो उसे अपने ममारी सन्धीयोके घड़ा जाना कल्पे

(४) साधु गीतार्योके साथमे अपने ममारी सन्धीयोके घड़ा भिक्षाके लीये जाते हैं वह पहले चायल चूलासे उतरा हो तो चायल लेना कल्पे, शेष नहीं

- (५) पहले दाल उतरी हा तो दाल लेना कल्पै, शेष नहीं
- (६) पहले चावल दाल दोनों उतरा हा तो दोनों कल्पै
- (७) चावल दाल दोनों पीठेसे उतरा हा तो दोनों न कल्पै-
- (८) मुनि जानेके पहले जो उतरा हा वह लेना कल्पै
- (९) मुनि जानेके बाद चूलासे जो उतरा हो वह लेना न कल्पै
- (१०) आचार्यापाध्यायना गच्छकी अन्दर पाच अतिशय

होते हैं

(१) स्थण्डिल, गोचरी आदि आष पीठे उपाधयकी अन्दर आने समय उपाधयकी अन्दर आष पगको प्रमाजन करे

(२) उपाधयकी अन्दर लघु बड़ीनीतिसे निवृत्त हो सके

(३) आप समय होनेपर भी अय माधुषाकी प्रियावच इच्छा हो ना करे इच्छा हो तो न भी करे

(४) उपाधयकी अन्दर एक दोय रात्रि परातमें ठेर सके

(५) उपाधयकी बहार अर्थात् प्रामादिसे बहार जंगलमे एक दो रात्रि परातमे ठेर सके

यह पाच ताय मामा य माधु नहीं कर सक, परन्तु आचार्य करे, तो आज्ञाका अतिक्रम न होत

(११) गणविच्छेदक गच्छकी अन्दर दोय अतिशय हाते हैं

(१) उपाधयकी अन्दर एक त एक दो रात्रि रह सके

(२) उपाधयकी बहार एक दो रात्रि परातमे रह सके

भावार्थ—आचार्य तथा गणविच्छेदकाके आधारसे शासन रहा हुआ है उन्होने पाम विद्यादिका प्रयोग अवश्य होना चाहिये कभी शासनका कार्य हो तो अपनी आत्मलक्षिसे शासन की प्रभावना कर सक

(१२) ग्राम, नगर, यावत् मन्निवेश, जिसने एक दरवाजा हो, निकाम प्रवेशका एक ही रहस्ता हो, यहापर बहुतसे साधु जो आचाराग और निशीयसूत्रने अज्ञात हो, उन्हींको उक्त ग्रामादिमें डेरना नहीं कर्तै अगर उन्हींको अन्दर एक साधु भी आचाराग और निशीयका जानकार हो, तो कोई प्रमादका प्रायश्चित्त नहीं है अगर ऐसा जानकार साधु न हो तो उस मय अज्ञात साधुओंको प्रायश्चित्त होता है जितने दिन हैं, उतने दिनोंका उद तथा तप प्रायश्चित्त अज्ञातोंके लीये होता है भाषना पुथयत्

(१३) मय ग्रामादिके अलग अलग दरवाजे, निकाम प्रवेश अलग अलग हो ता भी बहुतसे अज्ञात साधुओंको यहापर रहना नहीं कर्तै अगर एक भी आचाराग निशीय पठित साधु हो तो प्रायश्चित्त नहीं आवे नहि तो मयको तप तथा उद प्रायश्चित्त होता है

भाषाथ—अज्ञात साधु अगर उन्मार्ग जाता हो, तो ज्ञात साधु उसे दियाग मये

(१४) ग्रामादिने बहुत दरवाजे, बहुत निकास प्रवेशके रास्ते हैं यहापर बहुत, बहुतसे आगम विद्याओंके जानकारों अयेग डेरना नहीं कर्तै, तो अज्ञात साधुओंका तो कहना ही क्या ?

(१५) ग्रामादिने एक दरवाजा, एक निकाम प्रवेशका रास्ता हो, यहापर बहुत, बहुत आगमका जानकार मुनियों अवेला रहना कर्तै, परन्तु उस मुनियों अहोनिश साधुभाषका ही चिंतन करना, अप्रमादपणे तप मयमर्मे मग्न रहना चाहिये

(१६) बहुतसे मनुष्य (स्त्री, पुरुष) तथा पशु आदि पक्ष्य हुआ हो, उच्चेष्टाओंमें काम प्रदीप्त करते हो, मैथुन सेवन

करते हो, यहापर साधु साध्वीको नहीं ठेरना चाहिये कारण आत्मा निमित्तपासी है जीर्णको चिरकालका काम विकारसे परिचय है अगर कोई ऐसे अयोग्य स्थानमें ठेरेगा, तो उस कामी पुरुष या पशु आदिको देव विकार उत्पन्न होनेसे थोड़ा अधिक थोड़ासे अपने पापपात के लीये हस्तकर्म करते हुये का अनुधातिक मासिक प्रायश्चित्त होगा

(१७) इमी मासिक मैथुन मज्ञासे हन्त कम करते हुये का अनुधातिक चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होगा

(१८) साधु साध्वीयाँ पात किमी अन्य गच्छसे साध्वी आई हो उसका साधु आचार गड़ित हुआ है नयनमें सजल होप लगा है, अनाचारसे आचारको भेद दीया है, क्रोधादि कर चारित्रको मलिन कर दीया हो उस स्थानकी आलोचना विगर्त सुने प्रतिश्रमण न कराये, प्रायश्चित्त न देव ऐसही गड़ित आचार गालेकी मुखशाला पछना, पाचना देना, दीक्षाका देना साथमें भोज नका करना (साध्वीयाँकी) मदैव साथमें रहना, स्नानपकाल तथा चिरकालकी पढीका देना नहीं कल्पै

(१९) आचारादि गड़ित हुआ हो तो उसे आलोचना प्रति श्रमण कराये, प्रायश्चित्त दे शुद्ध कर उनके साथ पूर्णतः व्यवहार करना कल्पै

(२०) (२१) इमी मासिक साधु आश्रयभी दो अलापक ममज्ञना

भाषा—किसी कारणसे अन्य गच्छ के साधु साध्वी अन्य गच्छमें जाये तो प्रथम उसकी मधुर वचनोंसे ममज्ञाव, आलोचनादि करायें प्रायश्चित्त दे पीछे उसी गच्छमें भेज देव अगर उस गच्छमें दिनय धर्म और ज्ञान धर्मकी गामीसे आया हो, तो उसे

शुद्ध कर आप रख भी मने कारण समधीयाँ महायता देना बहुत लाभका कारण है और योग्य हो तो उसे स्वल्प काल तथा जायजीव तक आचार्यादि पढी भी देना कर्त्तव्य इति

श्री व्यसहात्म्य—छग उद्देशाका सन्निभ मार

(७) सातवा उद्देशा

(१) साधु साध्वीयोने आपसमें अज्ञानादि बारह प्रकारके सभाग है अथात् साधुयोकी आज्ञामें विहार करनेवाली साध्वीयाँ हैं उन्हीं के पास कोई अन्य गच्छसे निकलके साथी आइ है आनेवाली साध्वीका आचार गदित यावत् उसको प्रायश्चित्त दीया बिना स्वल्पकालकी या चिरकालकी पढी देना साध्वी योंको नहीं कर्त्तव्य

(२) साधुयोको पूछ कर उस आइ हुई साध्वीको प्रायश्चित्त देने यावत् स्वल्पकाल या चिरकालकी पढी देना साध्वी योंको कर्त्तव्य

(३) साध्वीयाँको बिना पूछे साधु उस साध्वीको पूर्णतः प्रायश्चित्त नहीं दे सके कारण—आखिर साध्वीयोका निर्वाह करना साध्वीयोके हाथमें है पीछेसे भी साध्वीयोकी प्रकृति नहीं मिलती हो, तो निर्वाह होना मुश्किल होता है

(४) साधु साध्वीयाँको पूछ कर, उस साध्वीकी आलोचना सुन, प्रायश्चित्त देने शुद्ध कर गच्छमें ले सके, यावत् योग्य हो तो प्रवर्षणी या गणत्रिच्छेदणीकी पढी भी दे सके

(५) साधु साध्वीयाँके बारह प्रकारका सभाग है अगर साध्वीयो गच्छ मर्यादाका उल्लंघन कर अवृत्त्य कार्य करे (पास्तया-

करने हो, उदापर साधु माध्वीको नहीं ठगना चाहिये कारण आत्मा निमित्तवासी है जीवाको चिरकालका काम विकारसे परिचय है अगर कोई ऐसे अयोग्य स्थानमें ठरेगा, तो उस कामी पुरुष या पशु आदिको देख विकार उत्पन्न होनेसे कोई अधिकृत श्रोत्रसे अपने श्रोत्रपात के लिये हस्तकर्म करते हुए का अनुधातिक मासिक प्रायश्चित्त होगा

(१७) इसी मासिक मैथुन सज्ञासे हस्त कर्म करते हुए का अनुधातिक चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होगा

(१८) साधु साध्वीयाँ पास किमी अन्य गच्छसे साध्वी आइ हो उनका साधु आचार स्वदित हुआ है समयमें सबल दोष लगा है, अनाचारसे आचारों में भेद दीया है, मोधादि कर चानिग्रको मलिन कर दीया हो उस स्थानकी आलोचना बिगर सुने प्रतिव्रमण न करावे, प्रायश्चित्त न देवे ऐसेही स्वदित आचार गलेकी सुरक्षाता पछता, वाचना देना, दीक्षाका देना साथमें भोजनका करना (साध्वीयाँ) मदीय साथमें रहना, स्वरूपराल तथा चिरकालकी पद्रीका देना नहीं करै

(१९) आचारादि स्वदित हुआ हो तो उसे आलोचना प्रतिव्रमण करावे, प्रायश्चित्त दे शुद्ध कर उसके साथ पूर्णतः व्यवहार करना करै

(२०) (२१) इसी मासिक साधु आश्रमभी दो अलापक ममज्ञाना

भाषा—किसी कारणसे अन्य गच्छ व साधु साध्वी अन्य गच्छमें जावे तो प्रथम उसको अधुर वचनासे समझाय, आलोचनादि करायक प्रायश्चित्त दे पीछे उसी गच्छमें भेज देवे अगर उस गच्छमें धिनय धर्म और ज्ञान धर्मकी स्वामीसे आया हो, तो उसे

शुद्ध कर आप रख भी सके कारण ममयीका सहायता देना बहुत लाभका कारण है और योग्य हो तो उसे स्वरूप का तथा आजीव तत्र आचार्यादि पद्धी भी देना कर्तव्य है

श्री व्यवहाम्भूत—छठा उद्देशाका सन्निध साग

(७) सातवां उद्देशा

(१) साधु साध्वीयाँ आपसमें अशनादि बारह प्रकारके सम्भोग हैं अर्थात् साधुओंकी आज्ञामें विहार करनेवाली साध्वीयाँ हैं उन्हों के पास कोई अन्य गच्छने निकलके साध्वी आइ है आनेवाली साध्वीका आचार गृहित याधत उसको प्रायश्चित्त दीया बिना स्वल्पकालकी या चिरकालकी पद्धी देना साध्वी याँको नहीं कर्तव्य

(२) साधुओंको पूछ कर उस आइ हुई साध्वीको प्रायश्चित्त देके याधत स्वल्पकाल या चिरकालकी पद्धी देना साध्वी याँको कर्तव्य

(३) साध्वीयाँको बिना पूँडे साधु उस साध्वीको पूर्वात्त प्रायश्चित्त नहीं दे सके कारण—आगिर साध्वीयाँका निर्वाह करना साध्वीयाँ हाथमें है पीठसे भी साध्वीयाँकी प्रकृति नहीं मित्रती हो, तो निर्वाह होना मुश्कील होता है

(४) साधु साध्वीयाँको पूछ कर, उस साध्वीको आलोचना मुन, प्रायश्चित्त देके शुद्ध कर गच्छमें ले सके, याधत योग्य हो तो प्रयाणी या गणविच्छेदणीकी पद्धी भी दे सके

(५) साधु साध्वीयाँके बारह प्रकारका सम्भोग है अगर साध्वीयाँ गच्छ मर्यादाका उल्लंघन कर अकृत्य कार्य करे (पामत्या-

योंका घ-दन करना, अशनादि देना लेना उस हालतमें साधु, साध्वीयोंने साथ प्रत्यभमें सभोगका विमभोग करे अर्थात् अपने सभोगसे उद्धार कर देवे प्रथम साध्वीयांको बुलवाके वहे कि—हे आर्या! तुमको दो तीन दफे भना करने पर भी तुम अपने अधृत्य कार्यको नहीं छोड़ती हो इस वास्ते आज हम तुम्हारे साथ सभोगको विमभोग करते हैं उसपर साध्वी गोलें कि—मैंने जा काय कीया है उसकी आलोचना करती हू, फिर ऐसा कार्य न करुंगी तो उसके साथ पत्रकी माफिक सभाग रगना कल्पै अगर साध्वी अपनी भूलको स्वकार न करें, तो प्रत्यभमें ही विमभोग कर देना चाहिये ताक दुसरी साध्वीयांका क्षोभ रहे

(६) पय साधु अधृत्य कार्य करे तो साध्वीयांको प्रत्यभमें सभोगका विमभोग करना उही कर्त्तव्य, परन्तु पराभ जैसे किसी साथ कहला देवे कि—अमुक अमुक कारणसे हम आपके साथ सभाग तोड़ देते हैं अगर साधु अपनी भूलका स्वीकार करे, तो साध्वीको साधुके साथ घ-दन व्यवहारादि सभाग रगना कल्पै अगर साधु अपनी भूलका स्वीकार न करे, तो उसको परोक्षपणे सभोगका विमभोग कर, अपने आचार्यापाचार्य मिलेनपर साध्वी कह देवे कि—हे भगवन्! अमुक साधुने साथ हमने अमुक कारणसे सभोगका विमभोग कीया है

(७) साधुयांका अपने गीये किसी साध्वीका दीक्षा देना, शिक्षा देना, साथमें भाजन करना, साथमें रखना, नहीं कल्पै

(८) अगर किसी देशमें मुनि उपदेशसे गृहस्थ दीक्षा लता हो, परन्तु उसकी उडकी पाधा कर रही है कि—अगर दीक्षा लो, तो मैंभी दीक्षा लेउगी परन्तु साध्वी वहापर हाजर नहीं है उस हालतमें साधु उस पिताने साथमें उडकीको साध्वीयांके लीये

दीक्षा देने यात्रा उसको साध्वीया मिलनेपर सुप्रसन्न कर देने यह सूत्र हमेशाके लीये नहीं है, किन्तु जमा कोई विशेष कारण होनेपर द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाषाके जानकारी अपेक्षाका है

(९) इसी माफिकमात्री अपने लीये साधुको दीक्षा न देवे

(१०) परन्तु किसी माताये साधु पुत्र दीक्षाका आग्रह करता हो, तो मात्रीया साधुके लीये दीक्षा देकर आचार्यादि मिलनेपर साधुका सुप्रसन्न कर देवे भावना पूर्वक

(११) साध्वीयोका त्रिकट देशमें विहार करना नहीं कर्तव्य कारण—जहापर बहुतसे तस्कर लोग अनायास हो, यहापर बखहरण, प्रतभगाधिक अनेक दोषोंका सम्भव है

(१२) साधुजाको त्रिकट देशमेंभी लाभालाभका कारण जान विहार करना कर्तव्य

(१३) साधुओंको आपनमें क्रोधादि हुआ हो, उनमें एक पक्ष वाले साधु त्रिकट देशमें विहार कर गये हो, तो दुसरा पक्षवाले साधुओंको स्वस्थान रहने समतगामना करना नहीं कर्तव्य उन्हांको घटा त्रिकट देशमें जाने अपना अपनाध श्रमाना चाहिये

(१४) साध्वीयोको कर्तव्य, अपने स्थान रहने समतगामना कर लेना कारण—यह त्रिकट देशमें जान नहीं सकती है भावना पूर्वक

(१५) साधु साध्वीयोका अस्वाध्यायकी अन्दर स्वाध्याय करना नहीं कर्तव्य अर्थात् आगममें ३२ अस्वाध्याय तथा अन्य भी अस्वाध्याय कहा है उन्हांकी अन्दर स्वाध्याय करना नहीं कर्तव्य

(१६) साधु साध्वीयोको स्वाध्याय कालमें स्वाध्याय करना कर्तव्य

(१७) साधु साध्वीयोको अपने लीये अस्वाध्यायकी अन्दर स्वाध्याय करना नहीं कर्तव्य

(१८) परन्तु किसी साधु साध्वीयाँकी वाचना चलती हो, तो उसको वाचना देना कल्पे अस्वाध्यायपर पाठे (धृष्ट) ग्रन्थ लेना चाहिये यह विशेष सूत्र गुरुगम्यताका है

(१९) तीन वर्षके दीक्षापर्यायवाला साधु, और तीन वर्षकी दीक्षापर्यायवाली साध्वीको उपाध्यायकी पदवी देना कल्पे

(२०) पाच वर्षके दीक्षापर्यायवाला साधु और साठ वर्षकी दीक्षापर्यायवाली साध्वीको आचार्य (प्रवर्तणी) पदवी देना कल्पे पदवी देते समय योग्यायाग्यका विचार अवश्य करना चाहिये इन विषय चतुर्थ उद्देशमें खुलाना किया हुआ है

(२१) ग्रामानुग्राम विहार करता हुआ साधु, साध्वी कदाच कालधर्म प्राप्त हो, तो उसके साथवाले साधुओंको चाहिये कि- उस मुनि तथा साध्वीका शरीरको लेके बहुत निर्जीवि भूमिपर परठे अर्थात् पक्वान्त भूमिकापर परठे, और उन साधुके भेड़ोपकरण हा, घट साधुओंकी काम आने योग्य हो ता गृहस्थोंकी आज्ञासे ग्रहण कर अपने आचार्यादि वृद्धोंके पास रखे, निम्नको जगृत जानें आचार्यमहाराज उसको देवे वह मुनि, आचार्य श्रीकी आज्ञा लेवे अपने काममें लेवे

(२२) साधु साध्वीयाँ जिस मकानमें ठेरे हैं उस मकानका मालिक अपना मकान किसी अन्यको भाड़े देता हो, उस समय कहे कि इतना मकानमें साधु ठेरे हुये हैं, शेष मकान तुमका भाड़े देता हू, तो घरधणीको शय्यातर रखना अगर घरधणी न कहे, और भाड़े लेनेवाला कहे कि-हे साधु ! यह मकान मैंने भाड़े लिया है परन्तु आप सुखपूर्वक विराजो, तो भाड़े लेनेवालेको शय्यातर रखना अगर दोनों आज्ञा दे तो दोनोंको शय्यातर रखना

(२३) इमी माफिक मकान बेचनेवे विषयमें ममझना

(२४) साजु जिस मकानमें ठेरे, उस मकानकी आज्ञा प्रथम लेना चाहिये अगर कोई गृहस्थकी नित्य निवास करनेवाली विधवा पुत्री हो, तो उसकी भी आज्ञा लेना कटपै, तो फिर पिता, पुत्रादिकी आज्ञाका तो कहना ही क्या ? सुदागण अनित्य निवासवाली पुत्रीकी आज्ञा नहीं लेना कारण-उनका मामरा कहा है कभी उनके हाथमें आहार ग्रहण करनेमें आवे, तो शय्यातर द्रोप लग जाये, परन्तु विधवा नित्य निवास करनेवाली पुत्रीकी आज्ञा ले सकते हैं

(२५) रहस्तेमें चलते चलते कभी वृक्ष नीचे रहनेका काम पड़े, तो भी गृहस्थोंकी आज्ञा लेना अगर कोई न मिले, तो पहले घा पर ठेरे हुये मुसाफिरकी भी आज्ञा लेके ठेरना

(२६) जिस राजाके राज्यमें मुनि विहार करते हो, उस राजाका वेदान्त हो गया हो, या त्रिमी कारणसे अन्य राजाका राज्याभिषेक हुआ हो परन्तु आगके राजाकी स्थितिमें कुछ भी फेरफार नहीं हुआ हो, तो पहलेकी लीइ हुई आज्ञामें ही रहना चाहिये अर्थात् फिरमें आज्ञा लेनेकी जरूरत नहीं है

(२७) अगर नये राजाका अभिषेक होनेपर पहलेका कायदा तोड़ दीया हो, नये कायदे बाधा हो, तो साधुर्षाको उस राजाकी दुसरीवार आज्ञा लेना चाहिये कि-हम लोग आपने देशमें विहार कर, धर्मोपदेश करते हैं इसमें आपकी आज्ञा है ? कारण कि साधु विहार आज्ञा विहार करे, तो तीमरा व्रतका रक्षण नहीं होता है चोरी लगती है वास्ते अवश्य आज्ञा लेके विहार करना चाहिये इति

श्री व्यसहार सूत्र-सातवा उद्देशाका सक्षिप्त सार

(८) आठवा उद्देश

(१) आचार्यमहाराज अपने शिष्य सयुक्त किसी नगरमें चातुर्मास कीया हो वहापर गृहस्थांक मकानमें आशासे ठेरे है उसमें कोई साधु कहे कि—हे भगवन् ! इस मकानका इतना भन्द रका मकान और इतना बहारका मकान में मेरी निधामें रख आचार्यभी उस साधुकी अशठना-सरलता जाणे कि—यह तपस्वी है, बीमार है, तो उसनी जगहकी आशा देवे तो उस मुनिको यह स्थान भागवना कल्पे अगर आचार्य भी जाणे कि—यह धूर्त तासे आप सुखशीलीयापणासे माताकारी मकान अपनी निधामें रखना चाहता है तो उस जगहकी आशा न दे और कहे कि हे आय ! पेंस्तर रत्नप्रयोदिने बृद्ध साधु है उम्हाकि प्रमसर स्थान देनेपर तुमाके विभागमें आये उस मकानका तुम भोगवना ता इस मुनिको जैसी आचार्य भी आशा दे, वैसाही करना कल्पे

(२) मुनि इच्छा करे कि—मैं हल्का पाट, पाटला, तुणादि, शय्या, मस्तारक, गृहस्थोंके बहाने याचना कर लाऊ तो एक हाथसे उठा सके तथा रहस्तमें एक विधामा, दोय विधामा, तीन विधामा लेके लाने योग्य हो, पेसा पाट पाटग शीतोष्ण कालके लीये लाये

भाषाथ—यह है कि प्रथम तो पाट पाटला पेसा हल्काही लाना चाहिये कि जहा विधामाकी आवश्यकता हो न रहै अगर पेसा न मिल तो एक दो तीन विधामा खाते हुवे भी एक हाथसे लाना चाहिये

(३) पाट पाटग एक हाथसे बहन कर उठा सके पेसा एक दो तीन विधामा लेके अपने उपाध्रय तक ला सके पसा जाने कि—यह मेरे चातुर्मासमें काम आवेगा भावना पूववत्

(४) पाट पाटला धक्का हाथसे ग्रहण कर उठा मने एक दो तीन चार पाच जिथामा ले के अपने उपाश्रय आ मने, ऐसा पाट पाटला, वृद्ध उपाधारक मुनि जो स्थिर वामकीया हो, उन्हीं के आधारभूत होगा ऐसा ज्ञान लाये

(५) म्यविर महाराज म्यविर भूमि (साठ वर्षकी आयु-ध्वनी) प्राप्त हुने को रूपै

[१] दड—कान परिमाण दडा, उधार आत जाने समय चलनेमें महायकारी

[२] भंड—मयादासे अधिक पात्र, वृद्ध उपाये कारणसे

[३] उग्र—शिरकी कमजोरी होनेसे शैत्य, गरमी निवारण निमित्त शिरपर कपडादिसे आच्छादन करनेके लिये कम्बली आदि

[४] मृत्तिका भाजन—मट्टीका भाजन लुनीत पड़ी नीत श्लेष्मादिये लीये

[५] लट्ठी—मकानमें इधर, उधर फिरते समय देका रखनेके लीये

[६] भिमिका-पूठ पीछाडी बैठत समय देका रखनेके लीये

[७] चित्र—चित्र, मयादासे कुछ अधिक चित्र, वृद्ध उपाये कारणसे

[८] चलमरी—आहारादि करते समय जीन रक्षानिमित्त पडदा बाधनेका यस्त्रको चलमरी कहते हैं

[९] चर्मगड—पायोंकी चमड़ी कभी पड जानेसे चला न जाता हो, उस कारणसे चर्मगड रखना पड़े

[१०] चमकोश—गुहा स्थानमें विशेष राग दाने पर काममें लीया जाता है

[११] चम अगुठी—बछादि मीने उस समय अगुली आदिमें रखनेके ठीके

चमका उपकरण विशेष कारणसे रखा जाता है अगर गौचरीपाणी निमित्त गृहस्थोंके वहा जाना पड़ता है उस समय आपके साथ ले जानेके नियाय उपकरण किसी गृहस्थोंके वहा रखे तथा उम्हाको सुप्रत करके भिभाका जाये, पीछे आनेपर उस गृहस्थाकी रजा ले कर, उस उपकरणाको अपने उपभोगमें लेये जिनसे गृहस्थाकी खातरी रहै कि यह उपकरण मुनि ही लीया है

(२) जिस मकानमें साधु ठेरे हैं उस मकानका नाम लेख गृहस्थोंके वहासे पाटपाटले लाया हो, फिर दुसरे मकानमें जानेका प्रयोजन हो, तो गृहस्थाकी आज्ञा बिगर वह पाटपाटले दूसरे मकानमें ले जाना नहीं कल्पै

(७) अगर काण हो, तो गृहस्थाकी आज्ञासे ले जा सके है काण—गृहस्थोंके आपनमें केइ प्रकारके डटे फिसाद होत है यास्ते बिगर धूँडे ले जानेपर घरका धनी कहे कि—हमारे पाट पाटले उस दुसरे मकानमें आप क्यों ले गये ? तथा उ-होंके पाटपाटले हमारे मकानमें क्यों गये ? इत्यादि

(८) जहापर साधु ठेरे हो, वहापर शम्घातरका पाटपाटले आज्ञासे लीया हो, फिर विहार करनेके कारणसे उ-होंको सुप्रत कर दीया, यादमें किसी लामालामने कारणसे वहा रहना पडे तो दुसरी दूजे आज्ञा लीया बिगर वह पाटपाटले वापरन नहीं कल्पै

(९) यापरना हो, तो दुमरी दपे और भी आज्ञा लेना चाहिये

(१०) माधु माधुर्याको आज्ञा लेनेके पदला शय्या, मस्तारक यापरना (भोगया) नहीं कर्त्तु पित्तु पेस्तर मकान या पाटपाटलेयालेको आज्ञा लेना, फिर उम शय्या सस्तारक या यापरना करके कदाचित् कोई ग्रामादिमें शेष दिन रह गया हो, आगे जानेका अवकाश न हो और माधुर्योंको मकानादि सुलभतासे मिलता न हो, तो प्रथम मकानमें डेर जाना फिर यादमें आज्ञा लेना कर्त्तु बिगर आज्ञा मकानमें डेर गये फिर घरका धनी तकरार करे उम समय एक शिष्य कहे कि-हे गृहस्थ! हम रात्रिमें चरते नहीं हैं, और दुसरा मकान नहीं है, तो हम माधु कहा जाये? उसपर गृहस्थ तकरार करे, जय बृद्धमुनि अपने शिष्यको कहे-भो शिष्य! एक तो तुम बिना आज्ञा गृहस्थाके मकानमें डेरे हो और दुसरा इन्हींसे तकरार करते हो, यह टीक नहीं है इनसे गृहस्थकी भ्रष्टा बृद्ध मुनिपर यह जानेसे यह कहते हैं कि-हैं मुनि! तुम अच्छे श्यायन्त हो यहा डेरो मेरी आज्ञा है

(११) मुनि, गृहस्थाके घर गांधरी गये, अगर कोई म्यल्प उपकरण भूम्मे पड़ा पड़ जाये, पीठसे कोई दुसरा माधु गया हो, तो उसे गृहस्थाकी आज्ञाने लेना चाहिये फिर वह मुनि मिले तो उसे दे देना चाहिये, अगर न मिले तो उसकी न तो आपले, न अन्य माधुर्याको दे एकान्त भूमिपर परठ देना चाहिये

(१२) हमी माफिक बिहारभूमि जाते मुनिका उपकरण विषय

(१३) एवं ग्रामानुग्राम बिहार करते समय उपकरण विषय

भाषाथ—माधुका उपकरण जानके माधुके नामसे गृहस्थकी आज्ञा लेके ग्रहण कीया था, अब माधु न मिलनेसे अगर आप

भाग्य, ता गृहस्थकी और तीर्थकराकी चोरी लग गृहस्थोंसे आजा लेनेको जानेमे गृहस्थाको अप्रतीत हो कि-क्या मुनिको इस वस्तुका लोभ होगा वास्ते यह मुनि मिले तो उसे दे देना, नहीं तो पक्का त भूमिपर परठ देना इसमें भी आजा लेनेवाला में अधिक योग्यता होना चाहिये

(१४) एक देशमे पात्र फामुक मिलने हों, दुसरे देशमे बिचरनेवाले मुनियोंको पात्रकी जरूरत रहती है, ता उस मुनि याँके लीये अधिक पात्र लेना कल्पे परन्तु जबतक उस मुनिका नहीं पूछा हा यद्दानक यह पात्र दुसरे साधुओंको देना नहीं कटपे अगर उस मुनिको पूछनेसे कहे कि-मेरेको पात्रकी जरूरत नहीं है आपकी इच्छा हा, उसे दीजिये, तो योग्य साधुको यह पात्र देना कल्पे

(१५) अपने मदैय भोजन करते हैं, उस भोजन ३२ वि भाग करना (कटपना करना) उसमें अष्ट विभाग आहार करनेमे पौण उणोदरी, सोल विभाग करनेसे आधी उणादरी, चौ बीस विभाग भोजन करनेसे पाच उणादरी, एक विभाग कम भोजन करनेसे किंचित् उणोदरी तथा एक चाग्रल (सीत) मानेमे उत्कृष्ट उणोदरी कही जाती है साधु महात्माओंको मदैयके गीय उणोदरी तप करना चाहिये इति

श्री व्यवहारसूत्र-ब्राह्म उद्देशाका सत्तिसार

(६) नौवा उद्देशा

मकानका दातार दो, उमे शय्यातर कहते है उन्हाके घरका आहार पाणी साधुयोको लेना नहीं कल्पै यहापर शय्यातरकाही अधिकार कहते है

(१) शय्यातरके पाहुणा (महेमान) आया हो उसको अपने घरकी अन्दर तथा बाह्यकी अन्दर भोजन बनानेके लीये सामान दीया और कह दीया कि—आप भोजन करनेपर बढ जाये यह हमको दे देना उस भोजनकी अन्दरसे साधुको देने तो साधुको लेना नहीं कल्पै कारण—यह भोजन शय्यातरका है

(२) सामान देनेके बाद कह दीया कि—हम तो आपको दे चुके हैं अब बढे हुये भोजनको आपकी इच्छा हो पैसा करना उस आहारसे मुनिको आहार देये, तां मुनिको लेना कल्पै कारण—यह आहार उम पाहुणाकी मालिकीका हो गया है

(३-४) यद्य दो अलापक मकानसे बाहार बैठके भोजन कराये, उस अपेक्षाभी समझना

(५-६-७-८) यद्य चार सूत्र, शय्या तरकी दासी, पेसी कामकारी आदिका मकानकी अन्दरका दो अलापक, और दो अलापक मकानके बाहारका

भाषार्थ—जहा शय्यातरका हक हो, यह भोजन मुनिको लेना नहीं कल्पै और शय्यातरका हक निकट गया हो, यह आहार मुनिको लेना कल्पै

(९) शय्यातरके न्यातीले (स्थजन) एक मकानमें रहते हो, घरकी अन्दर एक चूलेपर एक ही बरतनमे भोजन बनावे अपनी उपजीविका करते हो उम आहारसे मुनिको आहार देये तो मुनिको लेना नहीं कल्पै

(१०) शय्यातरके न्यातीले एक मकानकी अन्दर पाणी बिगरे मामेल है एक खुलेपर भिन्न भिन्न भाजनमे आधार तैयार कीया है उस आधारसे मुनिको आधार देन ता यह आधार मुनिको लेना नहीं कल्पे कारण-पाणी दानाका मामेल है

(११-१२) एक दो सूत्र, घरक बहार खुलापर आधार तैयार करनेका यह चार सूत्र एक घरका कहा इसी माफिक (१३-१४ १५-१६) चार सूत्र अलग अलग घर अर्थात् एक मोलमे अलग अलग घर है, परन्तु एक खुलापर एकही घरतनमे आधार बनाने पाणी बिगरे नम मामेल होनेसे यह आधार साधु माध्वीयाको लेना नहीं कल्पे

(१७) शय्यातरकी दुकान किमीक सीर (हिस्सा-पाती) में है बहापर तैल आदि प्रयविप्रय होता हा रेचनेवाला भागी दार है माधुर्याकी तैलका प्रयोजन होनेपर उम दुकान (जोकि शय्यातरके विभागमे है, तो भी) से तैलादि लेना नहीं कल्पे शय्यातर देता हो, तो भी लेना नहीं कल्पे मीरवाला दे तो भी लेना नहीं कल्पे

(१९-२०) एक शय्यातरकी गुल्की शाला (दुकान)

(२१-२२) एक क्रियाणाकी दुकानका दो सूत्र

(२३-२४) एक कपडाकी दुकानका दो सूत्र

(२५-२६) एक सूतकी दुकानका दो सूत्र

(२७-२८) एक कपास (रुई) की दुकानका दो सूत्र

(२९-३०) एक पसारीकी दुकानका दो सूत्र

(३१-३२) एक हलवाईकी दुकानका दो सूत्र

(३३-३४) एक भोजनशालाका दो सूत्र

(३५-३६) एक आम्रशालाका दो सूत्र

अठारहमे छत्तीसवा मृतक कोइ विशय कारण होनेपर दुकानापर याचना करनी पडती है शय्यातरके विभागमें दुकान है, जिसपर भागीदार क्रय विषय करता है, यह देवे ताभी मुनिको लेना नहीं कपै कारण-शय्यातरका विभाग है, और शय्यातर देता हो, तांभी मुनिको लेना नहीं कपै कारण शय्यातरकी यस्तु प्रदन करनेमे आधाकर्म आदि दोगोंका सभय होता है तथा मकान मीदनेमे भी मुश्किली होनी है

(३७) मत्त मत्तमिय भिक्षु प्रतिमा धारण करनेवाले मुनि योंको ८९ अहोरात्र काल लगता है और आहार पाणीकी ७-१८ २१ २८-३५-४२-४९-१९६ दात होती है अथान प्रथम मात दिन एकदा दात, दुजे मात दिन दो दा दा दात, तीजे सात दिन तीन तीन दात, चौथे मात दिन चार चार दात, पाचये मात दिन पाच पाच दात, छठे मात दिन छे छे दात, सातये मात दिन सात सात दात, दात—एक दफे अगडित धारामे देय, उमे दात कहने है औरभी इस प्रतिमाका जैसा मूर्धामे कल्पमाग यतगया है, उसका सम्यक् प्रकारसे पात्रन करनेमे यावत् आज्ञाका आराधक होता है

(३८) एष अष्ट अष्टमिय भिक्षु प्रतिमाको १४ दिन काल लगता है अथ पाणीकी २८८ दात, यावत् आज्ञाका आराधक होता है

(३९) एष नवमिय भिक्षु प्रतिमाका ८१ दिन, ४०५ आहार पाणीकी दात, यावत् आज्ञाका आराधक होता है

(४०) एष दश दशमिय भिक्षु प्रतिमाको १०० दिन ८८० आहार पाणीकी दात यावत् आज्ञाका आराधक होता है

(४१) यज्ञसूपभनाराच सहान जघन्यसे दश पूर्व, उत्कृष्ट

चौद पृथ्वर महर्षियोंकी प्रतिष्ठा-अपेक्षा (प्रतिमा) दो प्रकारकी कहते हैं श्रुल्लकमोयक प्रतिमा, महामोयक प्रतिमा जिसमे श्रुल्लकमोयक प्रतिमा धारण करनेवाले महर्षियोंको शरदकाल-मृगमर माससे आषाढ मास तक जो ग्राम, नगर यावत् सन्निये शके उहार घन, वनखड जिसमे भी विषम दुग्म पर्यंत, पहाड, गिरिकन्दरा मेमला, गुफा आदि महान भयकर, जो कायर पुन्ध देख तो हृदय कम्पायमान हो जाये, ऐसी विषम भूमि काकी अन्दर भाजन करके जाये, तो छे उपयाम (छे दिनतक) और भोजन न कीया हो तो सात उपयामसे पूण करे, और महामोयक प्रतिमा, जो भाजन करके जाये, तो सात दिन उपयाम, भाजन न करे तो आठ दिन उपयाम करे विशेष इन प्रतिमाकी विधि गुरुगम्यतामे रही हुई है यह गीतार्थ महात्मा वांसे निणय करे कथा कि—अद्यासुत्त, अद्याकप्प, अद्यामग्ग, सूत्रकाराने भी इसी पाठपर आधार रखा है अतमे परमाया है वि—जैमी जिनासा है, वैमी पालन करनेसे आशाका आराधक हो सकता है स्याद्वाद रहस्य गुरुगमसे ही मिल सकता है

(४३) दातकी सग्या कग्गवाले मुनि पात्रधारी गृहस्थाके बहा जाते हैं एक ही दफे जितना आहार तथा पाणी पात्रमे पड जाता है, उसका शास्त्रकाराने एक दातीका मान बतलाया है जैसें बहुतसे जन एक स्थानमे भोजन करते हैं यह स्थल्प स्थल्प आहार पकत्र कर, एक लाडु बनाये एक साथमे देने उमे भी एक ही दाती बही जाती है

(४४) इसी माफिक पाणीकी दाती भी समग्रता

(४५) मुनि मोक्षमार्गका साधन करनेके लीये अनेक प्रकारके अभिग्रह धारण करते हैं यहा तीन प्रकारके अभिग्रह बतलाये हैं

- [१] काष्ठके भाजनमें लावे देवे जैसा आहार ग्रहण करना
 [२] शुद्ध हाथ, शुद्ध भोजन चायठ आदि मिले तो
 ग्रहण करना
 [३] भोजनादिसे खरडे हुवे (लिप्त) हाथोंसे आहार
 देवे तो ग्रहण करना

(४६) तीन प्रकारके अभिग्रह—

- [१] भाजनमें डालता हुआ आहार देवे, तो ग्रहण कर
 [२] भाजनसे निकालता हुआ देवे तो ग्रहण कर
 [३] भाजनका स्वाद लेनेके लिये प्रथम ग्राम मुहमें
 डालता हो जैसा आहार ग्रहण कर

तथा जेसा भी कहते हैं—ग्रहण करता हुआ तथा प्रथमग्राम
 आस्वादन करता हुआ देवे तो मेरे आहारादि ग्रहण करना
 अभिग्रह करनेपर जैसाही आहार मिल तो लेना, नहीं तो अना
 द्रव्य ही परीसरूप शत्रुआका पगजय कर मोक्षमार्गका साधन
 करने रहना इति

श्री न्यवटार मूत्र गोत्रा उद्देशा सन्निप्त साग

(१०) दशवा उद्देशा

(१) भगवान् धीर प्रभुने दोय प्रकारकी प्रतिमा (अभि
 ग्रह) करमाइ है

[१] यज्ञ मध्यम चंद्रप्रतिमा—यज्ञका आदि ओर अन्त वि-
 स्तारघाता तथा मध्य भाग पतला होता है

[२] यथमध्यम चद्रप्रतिमा-यथका आदि अन्त पतला और मध्य भाग विस्तारवाला होता है

इसी माफिक मुनि तपश्चर्या करते हैं जिसमें यथमध्यम प्रतिमा धारण करनेवाले मुनि एक मास तक अपने शरीर में भ्रमणका त्याग कर देते हैं जो देव मनुष्य तिर्यक्ष मयधी काहू भी परीसह उत्पन्न होते हैं उसे सम्बन्ध प्रकारसे सहन करते हैं यह परीसह भी दो प्रकारसे होते हैं

[१] अनुदुल—जो यन्त्र, नमस्कार पूजा न करके राग धमरी खड़ा होता है अर्थात् स्तुतिमें हग नहीं

[२] प्रतिदुल—दंडासे मारे, जातसे, बेंतसे मारे पीट, आक्राश घबराव डाले, उस समय द्वेष गज ब्र म्बडा होता है

इस दोनों प्रकारसे परीषट्का जोत यथमध्यम प्रतिमा धारी मुनिका शुष्कपत्रकी प्रतिपदाको एक दात आहार और एक दात पाणी सेना कल्पे दूजका दो दात, तीजको तीन दात, यावत् पर्णिमाको पंद्रह दात आहार और पंद्रह दात पाणी लेना कल्पे आहारकी विधि जो ग्राम, नगरमें भिक्षा भिक्षा ले कर निवृत्त हो गये हो, अर्थात् दो प्रहर (दुपहर) को भिक्षा लीये जाये चंचलता, चपलता आतुरता रहित जो पकेला भाजन करता हो, दुपद, चतुष्पद ७ धनु येना नीरस आहार हो, सोभी एक पग दरवाजाकी अन्दर, और एक पग दरवाजाके बाहर, घट भा म्बड हाथसे दवे, तो लेना करपै परन्तु दो, तीन, यावत् गहुतसे जन एकत्र हो, भाजन करते हो वहासे न कल्पे बालकके लीये, गर्भवतीके लीये, ग्लानके लीये बीया हुआ भी नहीं कल्पे बच्चाका दुध पान करातीको छोडाके देवे तो भी नहीं कल्पे इत्यादि पण्य आहार पूर्ववत् लेना कल्पे

कृष्णपक्षकी प्रतिपदाका चौदह दात, दूजका तेरह दात, यावत् चतुदशीको एक दात आहार, और एक दात पाणी लेना कल्पै, तथा अमावस्याका चौविहार उपवास करना कल्पै और सूर्यामें इसका व्रतपमार्ग बतलाया है इसी माफिक पालन करनेसे यावत् आज्ञाका आराधक हो मत्ता है

यज्ञ मध्यम चन्द्र प्रतिमा स्वीकार करनेवाले मुनियोंको यावत् अनुकूट प्रतिपूल परीमह महन करे इस प्रतिमाधारी मुनि, कृष्णपक्षकी प्रतिपदाका पंद्रह दात आहार और पंद्रह दात पाणी, यावत् अमावस्याको एक दात आहार, एक दात पाणी लेना कल्पै शुक्लपक्षकी प्रतिपदाका दोय दात आहार दोय दात पाणी लेना कल्पै यावत् शुक्लपक्षकी चतुदशीको पंद्रह दात आहार, पंद्रह दात पाणी, और पूर्णिमाका चौविहार उपवास करना कल्पै यावत् सम्यक् प्रकारसे पालन करनेसे आज्ञाका आराधक होता है यह दोनों प्रतिमामें आहारका जैसा जैसा अभिग्रह कर भिक्षा निमित्त जाते हैं, वैसा वैसाही आहार मित्रनेसे आहार करते हैं अगर पेना आहार न मिले तो, उस गोज उपवासही करते हैं

(२) पाच प्रकारके व्यवहार है—

[१] आगमव्यवहार [२] सूत्रव्यवहार [३] आज्ञा व्यवहार [४] धारणाव्यवहार [५] जीतव्यवहार

(१) आगमव्यवहार—जैसे अग्निहोत, वेचली, मन पर्यव जानी, अपधिजानी, जातिम्मग्न जानी, चौदह पूर्यधर, दश पूर्यधर, धृतवेचली—यह सब आगम व्यवहारी हैं इन्होंके लीये करप-पायदा नहीं है कारण—अतिशय ज्ञानवाले भूत, भविष्य, वतमानमें गमालाभका कारण जाने, वैसी प्रवृत्ति करे

(२) सूत्रव्यवहार—अग, उपाग, मूल उदादि जिस कालमें जितने पत्र हा, उमके अनुमार प्रवृत्ति करना उमे सूत्र व्यवहार कहते हैं

(३) आशायवहार—कितनी एक वाताका सूत्रमें प्रतिपादन भी नहीं है, परन्तु उसका व्यवहार पूय महर्षियोंकी आज्ञासे ही चलता है

(४) धारणाव्यवहार—गुरुमहागुरु आ प्रवृत्ति करते थे, आलोचना देते थे, तत्र शिष्य उस बातकी धारणा कर लेते थे उसी माफिक प्रवृत्ति करना यह धारणा व्यवहार है

(५) जीतव्यवहार—जमाना प्रमानाक उल्लेख सहनन, शक्ति, लीपव्यवहार आदि देख भग्न आचार, शासनका पण्यकारी हो, मन्त्रियम निर्वाहा हो, ऐसी प्रवृत्तिको जीतव्यवहार कहते हैं

आगम व्यवहारी हो, उन समय आगम व्यवहारका स्थापन करे, शेष चारों व्यवहारकी आवश्यकता नहीं है आगम व्यवहारके अभावमें सूत्र व्यवहार स्थापन करे, सूत्र व्यवहारके अभावमें आज्ञा व्यवहार स्थापन करे, आज्ञा व्यवहारके अभावमें धारणा व्यवहार स्थापन करे, धारणा व्यवहारके अभावमें जीत व्यवहार स्थापन करे

प्रश्न—हे भगवन् ! ऐसे किस कारणसे कहते हो ?

उत्तर—हे गौतम ! जिस जिन समयमें जिस जिस व्यवहारकी आवश्यकता होती है, उस उस समय उन उस व्यवहार माफिक प्रवृत्ति करनेसे जीव आज्ञाका आराधक होता है

भावार्थ—व्यवहारके प्रवृत्तानेवाले निस्पृही महात्मा होते

है वह द्रव्य क्षेत्र माल भाग क्षेत्रों प्रवृत्ति करते हैं किसी अपेक्षा में आगमन्यवहारी सूत्रव्यवहारकी प्रवृत्ति, सूत्रव्यवहारी आशाव्यवहारकी प्रवृत्ति, आशाव्यवहारी धारणाव्यवहारकी प्रवृत्ति, धारणाव्यवहारी जीतव्यवहारकी प्रवृत्ति-अर्थात् एक व्यवहारी बुद्धि व्यवहारकी अपेक्षा रहते हैं, उम अपेक्षा संयुक्त व्यवहार प्रवृत्ताने में जिनाशाका आगमन्य हो सक्ता है

(३) ज्यार प्रकारके पुरुष (साधु) कहे जाते हैं

- [१] उपकार करते हैं, परन्तु अभिमान नहीं करे
- [२] उपकार तो नहीं करे, किन्तु अभिमान बहुत करे
- [३] उपकार भी करे और अभिमान भी करे
- [४] उपकार भी नहीं करे और अभिमान भी नहीं करे

(४) ज्यार प्रकारके पुरुष (साधु) होते हैं

- [१] गच्छका कार्य करे परन्तु अभिमान नहीं करे
- [२] गच्छका कार्य नहीं करे, खाने अभिमान हो करे
- [३] गच्छका कार्य भी करे, और अभिमान भी करे
- [४] गच्छका कार्य भी नहीं करे, और अभिमान भी नहीं करे

(५) ज्यार प्रकारके पुरुष होते हैं

- [१] गच्छकी अन्दर साधुओंका संग्रह करे, किन्तु अभिमान नहीं करे
- [२] गच्छकी अन्दर साधुओंका संग्रह नहीं करे, परन्तु अभिमान करे
- [३] गच्छकी अन्दर साधुओंका संग्रह करे और अभिमान भी करे

[४] गच्छका अदर साधुओंका सम्रह भी नहीं करे,
और अभिमान भी नहीं करे, एष यत्न, पात्रादि

(६) चार प्रकारके पुरुष होते हैं—

[१] गच्छक छत्ते गुण दीपाये, शाभा करे, परन्तु अभिमान नहीं करे एष चौभगी

(७) चार प्रकारके पुरुष होते हैं

[१] गच्छकी शुद्धा (विनय भक्ति) करते हैं, किन्तु अभिमान नहीं करते एष चौभगी

एष गच्छकी अदर जा साधुओंको अतिचारादि हो, तो उहोंको आलोचना करके विशुद्ध कराये

(८) चार प्रकारके पुरुष होते हैं—

[१] रूप-साधुका लिंग, राजाद्वर्ण, मुखवस्त्रिकादिको छोड़े
(बुष्कालादि तथा राजादिका कोप होनेसे समयको जानके रूप छोड़े) परन्तु जिनेन्द्रका अद्वारण धमका नहीं छोड़े

[२] रूपका नहीं छोड़े (जमालीवन्) किन्तु धर्मका छोड़े

[३] रूप और धर्म-दोनोंको नहीं छोड़े

[४] रूप और धर्म-दोनोंका छोड़े, जैसे कुलिगी ब्रह्मासे भट और समयरहित

(९) चार प्रकारके पुरुष होते हैं—

[१] जिनाकारूप धमको छोड़े परन्तु गच्छमर्यादाको नहीं छोड़े जैसे गच्छमर्यादा हैं कि-अथ समीचीनीका वाचना नहीं देना, और जिनाज्ञा है कि-योग्य हो उस सबको वाचना देना गच्छमर्यादा रखनेवाला सबको वाचना न देवे

[२] जिनाशा रम्बे, परन्तु गच्छमर्यादा नहीं रम्बे

[३] दोनों रम्बे

[४] दोनों नहीं रम्बे

भावार्थ—ब्रह्मक्षेत्र देवके आचार्यमहाराज मर्यादावादी हो कि—साधु साधुओंकी याचना देवे, साध्वी साध्वीयोंकी याचना दे और जिनाशा है कि योग्य हो तो सजकी भी आगमयाचना दे परन्तु देशकालसे आचार्यमहाराजकी मर्यादाका पालन, भविष्यमें लाभका कारण जान करना पड़ता है

(१०) चार प्रकारके पुरुष होते हैं—

[१] प्रिय धर्मी—शासनपर पूर्ण प्रेम है, धर्म करनेमें उत्साही है, कि तु दृढ धर्मी नहीं है, परिपक्व सहन करने की मन मजबूत रखने में असमर्थ है

[२] दृढ धर्मी है, परन्तु प्रियधर्मी नहीं है

[३] दोनों प्रकार है

[४] दोनों प्रकार असमर्थ है

(११) चार प्रकारके आचार्य होते हैं—

[१] दीक्षा देनेवाले आचार्य हो, किन्तु उत्थापन नहीं करते हैं

[२] उत्थापन करते हैं, परन्तु दीक्षा देनेवाले नहीं हैं

[३] दोनों है

[४] दोनों नहीं है

भावार्थ—एक आचार्य विद्वान् करने आये, वह वैरागी शिष्योंकी दीक्षा देव उदा निग्राम करनेवाले साधुओंकी सुप्रति

कर बिहार कर गये उम नय द्विजित साधुको उत्थापन उद्योग
दीक्षा अन्य आचार्यादि दवे इमी अपेक्षा समझना

(१२) चार प्रकारके आचार्य होते हैं—

- [१] उपदेश करते हैं, परन्तु पाचना नहीं देते हैं
- [२] पाचना देते हैं, किन्तु उपदेश नहीं करते हैं
- [३] दोनों करते हैं
- [४] दोनों नहीं करते हैं

भावार्थ—एक आचार्य उपदेश कर दे कि—अमुक साधुको
अमुक भागमकी पाचना देना यह पाचना उपाध्यायजी देवे
कोई आचार्य ऐसे भी होते हैं कि—आप खुद अपने शिष्य समु-
दायको पाचना देवे

(१३) धर्माचार्य महाराजके चार अंतर्धामी शिष्य होते हैं—

- [१] दीक्षा दीया हुआ शिष्य पासमें रहै, परन्तु उत्थापन
पन कीया हुआ शिष्य पासमें नहीं मिले
- [२] उत्थापनवाला मिले परन्तु दीक्षावाला नहीं मिले
- [३] दोनों पासमें रहै
- [४] दोनों पासमें नहीं मिले

भावार्थ—आचार्य महाराज अपने हाथसे लघु दीक्षा दी
उसको यही दीक्षा किसी अन्य आचार्यने दी यह शिष्य अपने
पासमें है और अपने हाथसे उत्थापन (यही दीक्षा) दी, वह
साधु दूसरे गणपिच्छेदक के पास है तथा लघु दीक्षावाला अ-
साधुवाके पास है, आपके पास सब यही दीक्षावाले हैं

(१४) आचार्य महाराजके पास चार प्रकारके शिष्य
रहते हैं—

[१] उपदेश दीये हुये पासमें है, किन्तु याचना दीया वह पासमें नहीं है

[२] याचनावाला पासमें है, किन्तु उपदेशवाला पासमें नहीं है

[३] दोनों पासमें है

[४] दोनों पासमें नहीं है

भाषार्थ—पुष्पवत्

एव चत्वार सूत्र धर्माचार्य और धर्म अन्तेष्टासी के हैं लघु दीक्षा बड़ीदीक्षा उपदेश और याचनाकी भाषना पुष्पवत् एव १८ सूत्र

(१९) स्थविर महाराजकी तीन भूमिका होती है—

[१] ज्ञाति स्थविर

[२] दीक्षा स्थविर

[३] सूत्र स्थविर

जिसमें माठ वषकी आयुष्यवाला ज्ञातिस्थविर है, बीस वष दीक्षावाला दीक्षा स्थविर है और स्थानाग तथा समवा-याग सूत्र—अर्थने ज्ञानकार सूत्र स्थविर है

(२०) शिष्यकी तीन भूमिका है—

[१] जघन्य—दीक्षा देनेके बाद सात दिनके बाद बड़ी दीक्षा दी जाये

[२] मध्यम दीक्षा देनेके बाद चत्वार मास होनेपर बड़ी दीक्षा दी जाये

[३] उत्कृष्ट छे मास होने पर बड़ी दीक्षा दी जाये

भाषार्थ—लघु दीक्षा देनेके बाद विदेष्टा नामका अध्य-

यन सूत्राय कठस्थ करलेनेक बादम वडी दीक्षा दो जाय, उमका काल बतलाया है

(२१) साधु साध्वीयाका श्रुद्धक—छोटा षडका, लडकी या आठ वर्षसे कम उम्मरवालाका दीक्षा देना, वडीदीक्षा देना, शिभा देना, साथमें भोजन करना, सामेल रहना नहीं कल्पै

भाषाथ—जयतक यह बालक दीक्षाका स्वरूपकी भी नहीं जाने तो फिर उसे दीक्षा दे अपने ज्ञानादिमें व्याघात करनेमें क्या फायदा है ? अगर कोई आगम व्यवहारी हो, यह भविष्यका लाभ जाने तो यह एसेको दीक्षा दे भी सत्ता है ।

(२२) साधु साध्वीयाको आठ वर्षसे अधिक उम्मरवाला बैरागीको दीक्षा देना कल्पै, यायत् उनके सामेल रहना

(२३) साधु साध्वीयाको, जो बालक साधु साध्वी जिसकी वक्षामें गाल (रोम) नहीं आया हो, पैमोंको आचाराग और नि शीथसूत्र पढाना नहीं कल्पै

(२४) साधु साध्वीयाको जिम साधु साध्वीकी काखमें रोम (गाल) आया हो, विचारवान् हा, उसे आचाराग सूत्र और निशीथसूत्र पढाना कल्पै

(२५) तीन वर्षोंके दीक्षित साधुयाको आचाराग और नि शीथ सूत्र पढाना कल्पै निशीथसूत्रका फरमान् हे जि जो आ गम पढनेके योग्य हो, धीर गभीर, आगम रहस्य समझनेमें शक्तिमान् हा उसे आगमाका ज्ञान देना चाहिये

(२६) चार वर्षोंके दीक्षित साधुयाको सूत्रगडाग सूत्रकी वाचना देना कल्पै

(२७) पाच वर्षोंके दीक्षित साधुयाको दश कल्प और व्यग्र धारनूत्रकी वाचना देना कल्पै

(२८) आठ वर्षोंके दीक्षित माधुर्वाको स्थानाग और सम-
चायाग सूत्रकी वाचना देना कल्पै

(२९) दश वर्षोंके दीक्षित साधुर्वाको पाचत्रा आगम भगवती
सूत्रकी वाचना देना कल्पै

(३०) इग्यारा वर्षोंके दीक्षित माधुर्वाको श्रुद्धक प्रवृत्ति,
विमाण महविमाण प्रवृत्ति, अगचुलीया, यगचुलीया, ज्यग्रहार-
चुलीया अध्ययनकी वाचना देना कल्पै

(३१) बारह वर्षोंके दीक्षित मुनिको अरुणोपात, गरुलो-
पात, धरुणोपात, वैश्वमणोपात, वैल्धुगोपात नामका अध्ययनकी
वाचना देना कल्पै,

(३२) तेरह वर्षोंके दीक्षित मुनिको उत्थापसूत्र, समुत्थान-
सूत्र, द्वेवेन्द्रोपात, नागपर्यायसूत्रकी वाचना देना कल्पै

(३३) चौदा वर्षोंके दीक्षित मुनिको स्वप्नभाषना सूत्रकी
वाचना देना कल्पै

(३४) पन्द्रह वर्षोंके दीक्षित मुनिको चरणभाषना सूत्रकी
वाचना देना कल्पै

(३५) सोलह वर्षोंके दीक्षित मुनिको वेदनीशतक नामका
अध्ययनकी वाचना देना कल्पै

(३६) सत्तर वर्षोंके दीक्षित मुनिको आसीविषभाषना ना-
मका अध्ययनकी वाचना देना कल्पै

(३७) अठारह वर्षोंके दीक्षित मुनिको दृष्टिविषभाषना ना-
मका अध्ययनकी वाचना देना कल्पै

(३८) एकोनविंश वर्षोंके दीक्षित मुनिको दृष्टिपाद अगकी
वाचना देना कल्पै

(३९) बीश वर्षोंके दीक्षित साधुको सब सूत्रोंकी पाठना देना कन्यै अर्थात् स्वसमय, परममयक सब ज्ञान पठन पाठन करना कन्यै

(४०) दश प्रकारकी वैयावञ्च करनेसे कर्मोंकी निजरा और ससारका अन्त होता है आचार्य, उपाध्याय, स्थविर, तपस्वी, नवशिष्य ग्लान मुनि कुल, गण सघ, स्वधर्मी इस दशोंकी वैयावञ्च करता हुआ जीव ससारका अन्त और कर्मोंकी निर्जरा कर अक्षय सुखको प्राप्त कर लेता है

इति दशवा उद्देशा समाप्त

इति श्री व्यवहारसूत्रका सक्षिप्त सार समाप्त



॥ श्री रत्नप्रभसूरि सदगुरुभ्यो नमः ॥

अथ श्री

शीघ्रबोध भाग २२ वां



(श्रीनिशीथ सूत्र)

निशीथ—आचाराणादि आगमार्थे मुनियोंका आचार प्रवृत्त लाया है, उस आचारसे स्वलना पाते हुये मुनियोंको नशियत देनेरूप यह निशीथसूत्र है तथा मोक्षमार्गपर चलते हुये मुनियोंको प्रमादादि चौर उन्मार्गपर ले जाता हो, उस मुनियोंको हितशिक्षा दे सन्मार्गपर लानेरूप यह निशीथसूत्र है

शास्त्रकारोंका निर्देश वस्तुतः प्रतिलानेका है, और वस्तु तत्त्वका स्वरूप सम्यक् प्रकारसे समझना उन्नीका नाम ही सम्यग्ज्ञान है,

धर्मनीतिके साथ लोकनीतिका घनिष्ठ संबंध है जैसे लोक नीतिका नियम है कि—अमुक अकृत्य कार्य करनेवाला मनुष्य, अमुक दंडका भागी होता है इससे यह नहीं समझा जाता है कि सब लोग ऐसे अकृत्य कार्य करते होंगे इसी भांति धर्मशास्त्रों में भी लिखा है कि—अमुक अकृत्य कार्य करनेवालेको अमुक प्रायश्चित्त दिया जाता है इसीसे यह नहीं समझा जावे कि—सब धर्मज्ञ अमुक अकृत्य कार्य करनेवाले होंगे हा, धर्मशास्त्र और नीतिका परमान है कि—अगर कोईभी अकृत्य कार्य करेगा,

यह अन्वय दंडका भागी होगा यह उद्देश्य दुराचारसे प्रचाना और सदाचारमें प्रवृत्ति कराने का लीये ही है दुराचार सेवन करना मोहनीय कर्मका उदय है, और दुर्गचारके स्वरूपको मम माना यह ज्ञानावरणीय कर्मका श्रयोपशम है, दुराचारको त्याग करना यह चारित्र्य मोहनीयकर्मका श्रयोपशम है

जब दुराचारका स्वरूपको ठीक तौरपर जान लगा तब ही उस दुराचार प्रति घृणा आवेगी जब दुराचार प्रति घृणा आवेगी तब ही अंत कर्णसे त्यागप्राप्ति होगी इसप्रमाणे ऐतरेय नीतिज्ञ होनेकी खान आन्यस्ता है कारण—नीति धर्मकी माता है माताही पुत्रको पालन और धृष्टि कर सकती है

यह निशियसूत्रमें मुख्य नीतिके साथ सदाचारका ही प्रतिपादन किया है अगर उस सदाचारमें वृत्तत हुए कभी मोहनीय कर्मादयसे स्खलना हो, उसे शुद्ध बनानेका प्रायश्चित्त घटलाया है प्रायश्चित्तका मतलब यह है कि—अज्ञातपनेसे एकदके जिस अप्रत्यय कायका सेवन किया है उसकी आलोचना कर दूसरी बार उस कायका सेवन न करना चाहिये

यह निशियसूत्र राजनीतिक प्रापिक धर्मकानूनका खजाना है जबतक साधु साध्वी इस निशियसूत्ररूप कानूनकोपको ठीक तौरपर नहीं समझे हा, वहातक उसे अग्रेसरपदका अधिकार नहीं मिल सक्ता है अग्रेसरकी फज है कि—अपने आश्रित रहे हुये साधु साध्वीयाका सम्माममें प्रवृत्ति कराये कदाच उसमें स्खलना हो तो इस निशियसूत्रके कानून अनुसार प्रायश्चित्त दे उसे शुद्ध बनाये तापर्य यह है कि साधु साध्वी जबतक आचाराग और निशियसूत्र गुरुगमतासे नहीं पढ़े हो, वहातक उन मुनियोंको अग्रेसर होके विहार करना, व्याख्यान देना, गोचरी जाना नहीं

कर्म वास्ते आचार्यश्रीको भी चाहिये कि अपने शिष्य शिष्य-
णीयोंको योग्यता पूर्वक पेस्तर आचारागसूत्र और निशियसूत्रकी
याचना दे और मुनियोंको भी प्रथम इसका ही अभ्यास करना
चाहिये यह मेरी नम्रता पूर्वक धिनती है

सकेत—

(१) जहापर ३ तीनका अंक रखा जावेगा, उसे—यह कार्य
स्वयं करे नहीं, अन्य साधुओंसे कराये नहीं, अन्य कोई साधु
करते हो उसे अच्छा समझ नहीं—उसको सहायता देयें नहीं

(२) जहापर केवल मुनिशब्द या साधुशब्द रखा हो जहा
साधु और साध्वीयों दोनों समझना चाहिये जो साधुके साथ
घटना होती है, यह साधु शब्दके साथ जोड़ देना और साध्वी-
यके साथ घटना होती हो, यह साध्वीशब्दके साथ जोड़ देना

(३) लघु मासिक, गुरु मासिक लघुचातुर्मासिक, गुरु चा-
तुर्मासिक तथा मासिक, दो मासिक, तीन मासिक, चतुर्मासिक,
पञ्च मासिक और छे मासिक—इस प्रायश्चित्तवालोंकी क्या क्या
प्रायश्चित्त देना, उसके बदलेमें आलोचना सुनके प्रायश्चित्त देने
वाले गीतार्थ—ब्रह्मसूत्रजी महाराज पर ही आधार रखा जाता है
कारण—आलोचना करनेवाले किस भाषोंसे दोष सेवन किया है,
और किस भाषासे आलोचना करी है, कितना शारीरिक सा-
मर्थ्य है, यह प्रव्य, क्षेत्र, काल, भाष देखके ही शरीर तथा सय-
मका निर्धार करके ही प्रायश्चित्त देते हैं इस विषयमें धीसया उद्दे-
शमें कुछ सुलासा किया गया है अन्तु



(१) अथ श्री निश्चिन्तसूत्रका प्रथम उद्देशा

जो भिक्षु—अष्ट कर्मोप शत्रुदलको भेदनेवालोंको भिक्षु कहा जाता है तथा निरवघ भिक्षा ग्रहण कर उपजीविका कर जेवालोंको भिक्षु कहा जाता है यहा भिक्षुशब्दसे शास्त्रकारोंने साधु साध्वीयो दोनोंको ग्रहण किया है 'अगादान' अंग—शरीर (पुरुष स्त्री चिन्हरूप शरीर) कुचेष्टा (हस्तकर्मादि) करनेसे चित्तवृत्ति मलीनके कारण कर्मदल एकत्र हों आत्मप्रदे शोंके साथ कर्मबन्ध होता है उसे 'अगादान' कहने है

(१) हस्तकर्म (२) काष्ठादिसे अंग मंचलन (३) मदन (४) तैलादिसे मालीस करना, (५) वाष्पादि सुगन्धी पदार्थका लेप करना (६) शीतल पाणी तथा गरम पाणीसे प्रक्षालन करना (७) एष्यादिका दूर करना (८) घ्राणेंद्रिय-द्वारा गन्ध लेना (९) अचित्त छिद्रादिसे वीर्यपातका करना यह सूत्र मोहनीय कर्मकी उद्दीरणा करनेवाले हैं ऐसा अकृत्य कार्य साधुओंको न करना चाहिये अगर कोई करेगा, तो निम्न लिखित प्रायश्चित्तका भागी होगा मोहनीय कर्मकी उद्दीरणा करनेवाले मुनियोंको क्या नुकसान होता है, वह दृष्टांतद्वारा बतलाया जाता है

(१) जैसे सुते हुवे सिंहको अपने हाथसे उठाना (२) सुते हुये सर्पको हाथोंसे मसलना (३) जाज्वल्यमान अग्निको अपने हाथोंसे मसलना (४) तीक्ष्ण भालादि शस्त्रपर हाथ मारना (५) दुखती हुई आँखोंको हाथसे मसलना (६) आशीर्षित सर्प तथा अजगर सपका मुँहको फाटना (७) तीक्ष्ण धारवाली तलवारसे हाथ घसना, इत्यादि पूर्वोक्त कार्य करने वाला मनुष्यको अपना जीवन देना पड़ता है अर्थात् सिंह, सप,

अग्नि शस्त्रादिसे उच्चेष्टा करनेसे उच्चेष्टा करनेवालोंका उद्वा भारी नुकसान होता है वास्ते मुनि उक्त कार्य स्वयं करे, अन्यसे पास करावे, अन्य करते हुयेको आप अच्छा ममज्ञ अनुमोदन करे अर्थात् अन्य उक्त कार्य करते हुयेको सहायता करे

(१०) कोई भी माधुमाध्वी सचित्त गन्ध गुलाब, केवडादि पुष्पोंकी सुगन्ध म्वय लेवे, लीरावे, लेतेको अनुमोदन करे

(११) , सचित्त प्रतिउद्ग सुगन्ध ले लीरावे लेतेको अनुमोदे

(१२) , पाणीवाला रहस्ता तथा कीचड़नाला रहस्तापर अन्यतीर्थीयोंके पास अन्यतीर्थीयोंके गृहस्थोंके पास काष्ठ पथरादि रखावे, तथा उखा खदनेके लीये रस्ता सीढ़ी आदि रखावे (३)

(१३) ,, अन्य तीर्थीयाने तथा अन्य० के गृहस्थोंसे पाणी निकालनेकी माली तथा खाइ गटर करावे (३)

(१४) ,, अन्य तीर्थीयोंसे, अन्य० के गृहस्थोंसे छीका छीकावे ढक आदिक करावे (३)

(१५) ,, अन्य० अन्य० के गृहस्थोंसे सूतकी दोरी, उ नवा कदोरा नाड़ी—रमा, तथा चिलमिली (शयन तथा भोजन करते समय जीवरक्षा निमित्त गन्धी जाती है) करे (३)

(१६) , अन्य० अन्य० के गृहस्थोंसे मुद् (सूचि) घसावे—तीक्ष्ण करावे (३)

(१७) ,, परं कतरणी (१८) नखउदणी (१९) का नसोधणी

भाषार्थ—बारहसे उन्नीसवें सूत्रमें अन्य तीर्थीयों तथा अन्य तीर्थीयोंके गृहस्थोंसे कार्य करानेकी मना है कारण—उन्हींसे कार्य करानेसे परिचय उद्भूत है वह अनयति है, अनयनासे कार्य करे अनयतियोंके सब योग भाषण है

(२०) विगल कारण सुइ, (२१) कतरणी, (२२) नख छद्दणी, (२३) वानमाधणीकी याचना करे (३)

भाषार्थ—गृहस्थांके यहा जानेका कोईभी कारण न होने पर भी सुइ, कतरणीका नामसे गृहस्थांके यहा जाये सुइ, कतरणी आदिकी याचना करे -

(२४) , अविधिसे सुइ, (२५) कतरणी (२६) नख छद्दणी (२७) वानसोधणी याचे (३)

भाषार्थ—सुइ आदि याचना करते समय ऐसा कहना चाहिये कि—हम सुइ ले जाते हैं यह कार्य हो जानेपर वापिस ला देंगे, अगर ऐसा न कहे तो अविधि याचना कहते हैं तथा सुइ आदि लेना हो ता गृहस्थ जमीनपर रख दे उसे आशासे उठा लेना परन्तु हाथोहाथ लेना इसे भी अविधि कहते हैं, कारण—लेते रखते कदा भी लग जाये, ता साधुर्वाका नाम सामेल होता है

(२८) , अपने अकेलेके नामसे सुइ याचके गाय अ पना पाय होनेके बाद दुसरा साधु मागनेपर उमको देये (२९) यथ कतरणी (३०) नखछद्दणी (३१) वानसोधणी

भाषार्थ—गृहस्थांको ऐसा कहे कि मैं मेरे कपडे सीनेके लीये सुइ आदि ले जाता हू और फिर दुसरांको देनेसे सत्यवचनका लोप होता है दुसरे साधु मागनेपर न देनेसे उम साधुके दिलमे रज होता है धाम्ने उपयोगवाला साधु किसीका भी नाम खोलके नहीं लाये अगर लाये तो सब साधु समुदायके लीये लाये

(३२) ,, कार्य दानसे कोई भी वस्तु लाना और कोय हो जानेसे यह वस्तु वापिस भी दी जाये उसे शास्त्रकारोंने पद्धि-

हारिय' कहने हैं अथात् उसे सरचीणी भी कहने हैं वस्त्र सीनेक नामसे सुइकी याचना करी उस सुइसे पात्र नीचे इसी माफिय

(३३) घस्र उठनेके नामसे कतरणी लाके पात्र ठेदे

(३४) नख उठनेके नामसे नखउदणी लाके काटा नीकाले

(३५) कानका मेल निकालनेके नामसे कानसोधणी लाके दातोका मेल निकाले

भाषाथ—एक कार्यका नाम खोलने कोई भी वस्तु नहीं लाना चाहिये कारण-अपने तो एक ही कार्य हो परन्तु उसी वस्तुसे दुसरे साधुओंको अन्य कार्य हो, अगर उह साधु दुसरे साधुओंको न देवे तो भी ठीक नहीं और देने तो अपनी प्रतिज्ञा का भंग होता है रास्ते पेस्तर याचना ही ठीकमर करना चाहिये अर्थात् साधु पेसा कहे कि हमको इस वस्तुका खप है अगर गृहस्थ पूछे कि—हे मुनि ! आप इस वस्तुको क्या करोगे ? तब मुनि कहे कि—हमारे जिस कायमे जरूरत होगी, उसमें कामलेंगे

(३६) ,, सुइ धापिम देते प्रवत अविधिमे देवे

(३७) कतरणी अविधिसे देवे

(३८) घस्र नखउदणी अविधिसे देवे

(३९) कानसोधणी अविधिसे देवे

भाषाथ—सुइ आदि देते समय गृहस्थोंको हायोहाय देने तथा इधर उधर फेंकके चला जावे उसे अविधि कहते हैं कारण—गृहस्थोंने हायोहाय देनेमें कभी हायमें लग जावे तो साधुका नाम होता है इधर उधर फेंक देनेसे कोई पक्षी आदि भक्षण करनेसे जीयघात होता है

(४०) ,, तुंयाका पात्र, काष्ठका पात्र मट्टीका पात्र जो अन्य-तीर्थीयों तथा गृहस्थोंसे घसावे, पुछावे, निपमका सम करावे

समझा विपम कराये, नये पात्रा नैयार कराये तथा पात्रों मध्य स्थल भी कार्य गृहस्थासे कराये ३

भाषार्थ—गृहस्थाका योग सावध है अयतनासे करे माते तगी रखना पड़े, उसकी निष्पत्त पैसा दीलना पड़े इत्यादि दोषोंका संभव है

(४१) ,, दाढा (बान परिमाण) लट्टी (शरीर परिमाण), चीपटी लकड़ी तथा घामकी खापटी बड़मादि उतारनेके लीये और घामकी सुह रजोहरणकी दशी पानेके लीये—उसको अय-तीर्थियों तथा गृहस्थाक पास समराये, अच्छी कराये विपमकी सम कराये इत्यादि भाषना पूर्ववत्

(४२) पात्राको एक थैगला (कारी) लगाये ३

भाषार्थ—विगर फूटे शोभाके निमित्त तथा बहुत दिन चलनेके लोमसे थैगलो (कारी) लगाये ३

(४३), पात्राके फूट जानेपर भी तीन थैगलसे अधिक लगाये

(४४) बह भी बिना विधि, अर्थात् अशोभनीय, जो अन्य लोग देख हीलना करे, पेसा लगाये ३

(४५) पात्राको अविधिसे बाधे, अर्थात् इधर उधर शिथिल बन्धन लगाये

(४६) बिना कारण एक भी बन्धनसे बाधे ३

(४७) कारण होनेपर भी तीन बन्धनसे अधिक बन्धन लगाये

(४८) अगर कोई आवश्यकता होनेपर अधिक बन्धनवाला पात्रा भी ग्रहण करनेका अवसर हुआ तो भी उसे दंड माससे अधिक रखे ३

- (४९) ॥ घट्टका एक थैगला (कारी) लगावे, शोभावे लीये.
 (५०) कारन हानेपर तीन थैगलेसे अधिक लगावे ३
 (५१) अविधिसे घट्ट सीये ३
 (५२) घट्टवे कारन बिना एक गाठ देवे
 (५३) जीर्ण घट्टको चलानेके लीये तीन गाठसे अधिक देवे.
 (५४) ममत्त्वभाषसे एक गाठ देवे घट्टको बाध रखे
 (५५) कारन हानेपर तीन गांठसे अधिक देवे
 (५६) घट्टको अविधिसे गाठ देवे
 (५७) मुनि मर्यादासे अधिक घट्टकी याचना करे ३
 (५८) अग्न विस्ती कागणसे अधिक घट्ट ग्रहन कीया है,
 उसे देह मांससे अधिक रत्ने ३

भाषार्थ—घट्ट और पात्र रखते हैं, वह मुनि अपनी सयम-
 यात्राका निर्यादवे लीये ही रखते हैं यहापर पात्र और घट्टके
 सूत्रों बतलाये हैं उनमे ग्वास तात्पर्य प्रमादकी तथा ममत्त्वभा-
 वकी वृद्धि न हो और मुनि हमेशा लघुभूत रहवे स्वहित
 साधन करे

(५९) ,, जिन मकानमें साधु ठेरे हो, उस मकानमें बुया
 जमा हुआ हो, कचरा प्रमा हुआ हो उसे अन्यतीर्थीयों तथा
 उन्हींके गृहस्थोंसे लीराये, साफ करवावे ३

(६०) ॥ पूतिकर्म आधार—पण्णीय, निर्दोष आधारकी
 अन्दर एक सीत मात्र भी आधारकी मिल गई हो,
 अथवा सहस्र घरके अन्दरे भी आधारकी आधारका लेप भी शुद्ध
 आधारमे मिश्रित हो, पन्ना आधार ग्रहन करे ३

उपर लिखे हुये ६० वोलोंसे कोईभी गोल, मुनि स्वयं से-

यम करे, अथ काइने पास मेयन कराय अथ कोइ मेयन करता हो उमे अच्छा समझे, उम मुनिवा गुन मामिय प्राय भित्त होता है गुरुमासिन प्रायभित्त किमका कहते है, वह इसी निशिय सूत्रके बीसवा उद्देशार्थ लिखा जायगा

इति श्री निशियसूत्र-प्रथम उद्देशाका सचित्त सार

(२) श्री निशियसूत्रका दूसरा उद्देशा

(१) ' जो कोइ साधु साध्वी ' काष्ठकी दडीका रजोहरण अर्थात् काष्ठकी दडीके उपर एक सूतका तथा डाका धातु लगाया जाता है, उसे औघारीया (निशितोया) कहते हैं उस औघारीया रहित मात्र काष्ठकी दडीका ही रजोहरण आप स्वयं करे, क राये, अनुमोदे (२) एक काष्ठकी दडीका रजोहरण ग्रहण करे ३ (३) एक धारण करे ३ (४) एक धारण कर ग्रामानुग्राम विहार करे ३ (५) दुमरे साधुवाकी ऐमा रजोहरण रक्खनेकी अनुज्ञा दे ३

(६) आप रक्खे उपभोगन नैय

(७) अगर ऐसाही कारण होनेपर काष्ठकी दडीका रजोहरण रक्खा भी हो तो देद (१॥) मासमे अधिक रक्खा हो

(८) काष्ठकी दडीका रजोहरणको शोभाके निमित्त धोय, धूपादि देय

भाषाथ—रजोहरण साधुवाका मुख्य चिह्न है और शास्त्र-कारोंने रजोहरणको धमध्वज कहा है केवल काष्ठकी दडी होनेसे अथ जीवाकी भयका कारण होता है इधर उधर पडजानेसे

जीयादिको तकलीफ होती है तथा प्रतिमा प्रतिपन्न थायक होता है, यह काष्ठकी दडीका रजोहरण रखता है उसीका अलग पण भी यह बिहीन रजोहरण मुनि रग्वनेसे होता है इसी वास्ते यन्नयुक्त रजोहरण मुनियोंको रखनेका कल्प है वदाच ऐमा कारण हो तो दोढ मास तक यह रहित भी रग्व सकते है

(९) ,, अविस्त प्रतियद्ध सुगधको सुघे ३

(१०) ,, पाणीके मार्गमें तथा कीचड—कंदम के मार्गमें काष्ठ, पत्थर तथा पाटों और उचे चढनेके लीये अथलग्न मुनि स्थय करे ३

(११) यह पाणीकी खाइ, नालों स्थय करे

(१२) यह छोका ढकण करे

(१३) सूत, उन, सणादिकी रसी दोरी करे, तथा चिल-मिली आदिकी दोरी घटे ३

(१४) ,, सुइकी घसे

(१५) कतरणी घसे

(१६) नगछेदणी घसे

(१७) वानसोधणी—मुनि आप स्थय घसे तोक्षण करे ३

भाचार्य—भागे, तूटे तथा हाथमें लगनेसे रक्त निकले तो अस्वाध्याय हो प्रमाद यह गृहस्थोंको शका इत्यादि दोष है

(१८) ,, स्वरूप ही कठोर यचन, अमनोश यचनघोले ३

(१९) ,, स्वरूप ही मृपायाद यचन घोले ३

(२०) ,, स्वरूप ही अदत्ताद्यान ग्रहण करे ३

(२१) ,, स्वरूप ही हाथ, पग, कान, आख, नख, दात, मुद—शीतल पाणीसे तथा गरम पाणीसे पक्ष्यार धोये या पार-पार धोये ३

(२२) ,, अखण्डित चर्म अथात् सपूर्ण चर्म मृगछात
रखे ३

भाषार्थ—विशेष कारण होनेपर साधु चर्मकी याचना
है, वह भी एक खंडे सारखे

(२३) ,, सपूर्ण वस्त्र रखे ३

भाषार्थ—संपूर्ण वस्त्रकी प्रतिलेखन ठीक तौरपर नहीं
है, धोरादिका भय भी रहता है

(२४) ,, अगर सपूर्ण वस्त्र लेनेका काम भी पड़
तो भी उसको काममें आने योग्य दुकड़े कीया बिगर रखे ३

(२५) ,, तुषा, काष्ठ, मट्टीका पात्रको आप स्वयं
समारे, सुन्दर आकारधाला करे ३

भाषार्थ—प्रमादादिकी बुद्धि और क्वाभ्याय ध्यानमें
होता है

(२६) पत्र बड़, लट्ठी, खापड़ी, बस, सुइ स्वयं घसे,
मारे, सुन्दर बनावे ३

(२७) ,, साधुओंके पूर्व समारी न्यातीले थे, उन्हींकी
हायतासे पात्रकी याचना करे ३

(२८) ,, न्यातीक नियाय दुसरे लोगोंकी सहायता
पात्रकी याचना करे

(२९) कोई महान् पुरुष (धनान्ध) तथा राजसत्तावाला
सहायतासे

(३०) कोई बलवानकी सहायतासे

(३१) पात्र दातारको पात्रदानका अधिकाधिक लाभ
लाके पात्र याचे ३

भाषार्थ—साधु दीनतासे उक्त न्यातीलादिकों कहे कि—हमारे पात्रकी जरूरत है आप साथ चलके मुझे पात्र दीला दो आप साथमें न चलोगे, तो हमे पात्र कोई न देगा तथा न्याती-लादि साधुओंके लीये पात्रयाचनाकी कोशीप कर, साधुको पात्र दीलावे अर्थात् मुनियोंको पराधीन न होना चाहिये

(३२) ,, नित्यपिण्ड (आहार) भोगये ३

(३३) ,, अग्रपिण्ड अर्थात् पहलेले उतरी हुई रोटी आदिको गृहस्थ, गाय कुत्तेको देते हैं—ऐसा आहार भोगवे ३

(३४) ,, हमेशा भोजन बनाने उसे आधा भाग दानार्थ नीकलते हो, ऐसा आहार तथा अपनी आमदानीसे आधा हिस्सा पुन्यार्थ निकाले, उससे दानशालादि खोले ऐसा आहार लेवे ३

(३५) ,, नित्य भाग अर्थात् अमुक भागका आहार दीनादिको देना—ऐसा नियम किया हो, ऐसा आहार लेवे—भोगये ३

(३६) ,, पुन्यार्थ नीकाला हुआ आहारसे किंचित् भाग भी भोगवे ३

भाषार्थ—जो गृहस्थ दानार्थ, पुन्यार्थ निकाला भोजन दीन गरीबोंको दीया जाता है उसे साधु ग्रहण करनेसे उस भिक्षाचर लोगोंको अतराय होगा अथवा अन्य भी आधाकर्मी, उद्देशिक आदि दोषका भी संभव होगा

(३७) ,, नित्य एकही स्थानमे निवास करे ३

भाषार्थ—बिगर कारण एक स्थानपर रहनेसे गृहस्थ लोगोंका परिचय बढ़ जानेपर रागद्वेषकी वृद्धि होती है

(३८) ,, पहले अथवा पीछे दानेश्वर दातारकी तारीफ (प्रशंसा) करे ३

भाषार्थ—जैसे चारण भाट, भोजवादि, दातारोंकी तारीफ करते हैं, उसी माफीक साधुओंको न करना चाहिये यस्तुतत्त्व स्वरूप अयसरपर कह भी सके हैं

(३९) , शरीरादि फारणसे स्थिरवास रहे हुए तथा ग्रामानुग्राम विहार करते हुये जिस नगरमें गये हैं वहापर अपने ससारी पूर्व परिचित जैसे मातापितादि पीछे मासु सुसरा उन्हाके घरमे पहिले प्रवेश कर पीछे गौचरी जावे ३

भाषार्थ—पहिले उन लोगोंको खबर होनेसे पूर्व स्नेहक मारे सद्गोप आहारादि उनाये आधाकर्म आहारका भी प्रसंग होता है

(४०) , अभ्य तीर्थीयांक साथ, गृहस्थांक साथ, प्रायश्चि तीर्थ साधुओंके साथ तथा मू७ गुणोंसे पतित येसे पास्तथादिके साथ, गृहस्थांक वहा गौचरी जावे ३

भाषार्थ—अब तीर्थीयादिरे साथ जानेसे लोगोंको शंका होगी कि—यह सब लोग आहार एकत्र ही लात दाने, एकत्र ही करते होंगे अथवा दुसरेकी लज्जासे दगावसे भी आहारादि देना पड़े इत्यादि

(४१) एव स्थण्डिल भूमिका तथा विहारभूमि (जिामन्दिर)

(४२) एव ग्रामानुग्राम विहार करना भावना पूर्वकत

(४३) मुनि समुदाणी भिक्षाकर स्थानपर आने अच्छा सुगन्धि पदार्थका भोजन करे और खराब दुगन्धि भोजनको परठे ३

(४४) एव अच्छा नीतरा हुआ पाणी पीये और खराब गुदला हुआ पाणी परठे ३

(४५) = अच्छा सरस भोजन प्राप्त हो वा आप भोजन

करनेपर आहार बंद जाये और दो कोशकी अन्दर एक मडलेके उस भोजन करनेवाले स्वधर्मी साधु हो, उमको घिगर पूँठे बंद आहार परठे ३

भाषार्थ—जबतक साधुयोको काम आते हो, यदातक पगटना नहीं चाहिये कारण—मरस आहार परठनेसे अनेक जी-घोकी घिराधना होती है

(४६) ,, मकानके दातारको शय्यातर कहते हैं उस शय्यातरका आहार ग्रहण करे

(४७) शय्यातरका आहार जिना उपयोगसे लीया हो, खबर पढ़नेपर शय्यातरका आहार भोगये ३

(४८) ,, शय्यातरका घर पूँठे घिगर गवेषणा कीये घिगर गौचरी जाये ३ कारण—न जाने शय्यातरका घर कौनसा है पहलेके आहारके सामेल शय्यातरका आहार आ जाये, तो मज आहार परठना पड़ता है

(४९) ,, शय्यातरकी निश्चासे अशनादि चार प्रकारका आहार ग्रहण करे ३

भाषार्थ—मकानका दातार चलने घर बतावे दलाली करे, तो भी साधुको आहार लेना नहीं कल्पे अगर लेये तो प्रायश्चि-नका भागी होता है

(५०) ,, ऋतुबद्ध चौमास पर्युषणा तक भोगवनेके लीये पाट, पाटला, कृष्णादि सस्तारक लाया हो, उसे पर्युषणाके बाद भोगये ३

(५१) अगर जन्तु आदि उत्पन्न हुवा हो तो, दश रात्रिके बाद भोगये अर्थात् जन्तुवाके लीये दशरात्रि अधिक भी रख सके

(५२) ,, पाट पाटला वर्षादिमें पाणीसे भीजता हो, उसे उठाके अन्दर न रखे ३

(५३) ,, एक मकानके लीये पाट पाटला लाया हो, फिर किसी कारणसे दुसरे मकानमें जाना हो, उस वखत बिगर आशा दुसरे मकानमें ले जाये ३

(५४) ,, जितने कालके लीये पाट पाटला तृण सस्तारक लाया हो, उसे कालमर्यादासे अधिक बिना आशा भोगये ३

(५५) ,, पाट पाटला के मालिककी आशा बिगर दुसरेको देये ३

(५६) ,, पाट पाटला शय्या सस्तार बिना दीये दुसरे ग्राम बिहार धरे ३

(५७) ,, जीवोत्पत्ति न होनेके कारण पाट पाटले पर कोई भी पदार्थ भगाया हो उसे बिगर उतारे धनीको पीछा देये ३

(५८) ,, जीय सहित पाट पाटला गृहस्थोंका वापिस देये ३

(५९) ,, गृहस्थोंका पाट पाटला आशासे रगया, उने कोई चीर ले गया उसकी गवेपणा नहीं करे ३

भाषार्थ—घेदरकारी रखनेसे दुसरी दफे पाट पाटला मील नेमें मुश्किली होगी ?

(६०) जो कोई साधु साध्वी किंचित मात्र भी उपधि न प्रतिलेखन करी रखे, रखाने रखते हुयेको अच्छा ममझे

उपर लिखे ६० बोलोंसे कोई भी बोल, साधु साध्वी सेवन करे, दुसरोसे सेवन कराये अन्य सेवन करते हुयेको अच्छा समझे, सहायता देये उस साधु साध्वीयोको लघु मामिक प्रायश्चित्त होता है प्रायश्चित्त विधि पुर्ववत्

इति श्री निशियसूत्रके दुसरे उद्देशाका सक्षिप्त सार.

(३) श्री निशियसूत्रका तीसरा उद्देशा

(१) ' जो कोई साधु साध्वी ' मुसाफिर खानेमें, यागव-
नीचेमें, गृहस्थोंके घरमें, परिव्राजकोंके आश्रममें, चाहे वह अन्य
तीर्थी हो चाहे गृहस्थ हो, परन्तु वहापर जोर जोरसे पुकारकर
अशनादि च्यार प्रकारके आहारकी याचना करे, कराये, करतेको
अच्छा जाने यह सूत्र एक वचनापेक्षा है

(२) इसी माफिक बहु वचनापेक्षा

(३-४) जैसे दो अलापक पुरुषाश्रित हैं, इसी माफिक दो
अलापक स्त्री आश्रित भी समझना यह च्यार अलापक सामान्य
पणे कहा, इसी माफिक च्यार अलापक उक्त लोक कुतूहल
(कौतुक) के लीये आये हुयेसे अशनादि च्यार प्रकारके
आहारकी याचना करे ३ ५-६-७-८

एय च्यार अलापक उक्त च्यारों स्थानपर सामने लाने अपे-
क्षाका है गृहस्थादि नामने आहारादि लाये, उस समय मुनि
कहे कि—सामने लाया हुआ हमको नहीं कल्पै, इसपर गृहस्थ
सात आठ कदम वापिस जाये तब साधु कहे कि—तुम हमारे
घास्ते नहीं लाये हो, तो यह अशनादि हम ले लेंगे है ऐसी माया
वृत्ति करनेसे भी प्रायश्चित्तने भागी होते है एय १२ सूत्र हुये

(१३) , गृहस्थोंके घरपर भिक्षा निमित्त जाते है, उस
समय गृहस्थ कहे कि—हे मुनि ! हमारे घरमें मत आइये ऐमा
कहनेपर भी दुमरी दफे उस गृहस्थके वहा भिक्षा निमित्त प्रवेश
करे ३

(१४) ॥ नीमनधार देख वहापर जाये अशनादि च्यार
आहार ग्रहण करे ३

भाषार्थ—इस वृत्तिसे लघुता होती है लोडुपता घटती है

(१५) , गृहस्थोंके घड़ा भिक्षा निमित्त जाते हैं घड़ा तीन घरसे ज्यादा मामने लाके देते हुये अशनादिको ग्रहण करे ३

भाषार्थ—दृष्टिसे बिगर देखी हुई वस्तु तो मुनि ग्रहण कर ही नहीं सकते हैं परन्तु कितनेक लोग चोका रखते हैं, और कोई देशोमे पत्नी भी भाषा है कि—यह भातपाणीका घर, यह बैठनेका घर यह जीमनेका घर—पैसे सहा घाची घरोंसे तीन घरसे उप रात मामने लाके देये, उसे साधु ग्रहण करे ३

(१६) , अपने पायोंको (शोभानिमित्त) प्रमार्ज, अच्छा साफ करे ३

(१७) अपने पायोंको दयाये चपाय

(१८) , तैल, घृत, मक्खन, चरगीसे मालिस करावे ३

(१९) लोम्र कोकणादि सुगन्धि द्रव्यसे लिप्त करे

(२०) पथ शीतल पाणी, गरम पाणीसे परस्पर बारबार धोवे ३

(२१) , अलतादिक रंगसे पायोंको रंगे ३

भाषार्थ—बिगर कारण शोभा निमित्त उस कार्य स्वयं करे, अनेकोंसे करावे, करते हुयेको अच्छा समझे, अथवा सहायता देये वह साधु श्रद्धा भागी होता है

इसी माफिक छे सूत्र (अलापक) काया (शरीर) आश्रित भी समझना, और इसी माफिक छे सूत्र, शरीरमें गडगुम्बड आदि होनेपर भी समझना ३३

(३४) , अपने शरीरमें मेद, फुनसी, गडगुम्बड, जलंधर, हरस मसा आदि होनेपर तीक्ष्ण अस्त्रसे छेदे, तोड़े, काटे ३

(३५) पय ठेद भेद काटकर अन्दरसे रक्त, राद, चरबी, निकाले ३

(३६) ,, पय शीतल पाणी, गरम पाणी कर, विशुद्ध होनेपर भी धोये ३

(३७) पय विशुद्ध होनेपर भी अनेक प्रकार लेपनकी जातिका लेप करे ३ (३८) पय अनेक प्रकारका मान्स मर्दन करे ३ (३९) पय अनेक प्रकारके सुगंधि पदार्थ तथा सुगन्धि धूपादिकी जाती लगाये अपने शरीरको सुपानित उनाये ३

(४०) पय अपने शरीरमे किरमीयादिकी अगुलि कर निकाले ३

यह सोलहसे चालीस तक पचीस सूत्राका भाषार्थ—उक्त कार्य करनेसे प्रमादवृद्धि, अस्वाध्यायवृद्धि शस्त्रादिसे आत्मघात, रोगवृद्धि तथा शुधूपावृद्धि अनेक उपाधिये खड़ी हो जाती है वास्ते प्रायश्चित्तका स्थान कहा है उन्मर्ग मार्गवाले मुनियोंको रोगादिकी सम्यक् प्रकारसे महन करना और अपराध मार्गवाले मुनियोंको लाभालाभका कारण देस गुरु आज्ञाये भाषिक यर्थाथ करना चाहिये यहापर सामान्य सूत्र कहा है

(४१) ,, अपने दीर्घ-ग्म्या नखोंको (शोभा निमित्त) कटाये, समराये ३

(४२) ,, अपने गुह्य स्थानये दीर्घ-गालोंको कटाये, कपाये, समराये ३

(४३) ,, अपनी चक्षुके दीर्घ गालोंको कटाये, समराये ३

(४४) पय जर्घोंका बाल (केश)

(४५) पय कासका बाल

(४६) दादी मुखोत्रा बाल

- (४७) मस्तकके बाल,
- (४८) पय कानोंके बाल
- (४९) कानकी अन्दरके बाल

उक्त लखे बालोंको (शोभा निमित्त) कटाये, समराये, सुन्दरता प्रमाये, यह मुनि प्रायश्चित्तका भागी होता है मस्तक दाढ़ी मुच्छोंके लोच समय लोच करना कष्ट

- (५०) , अपने दातोंको धक्कार भयया बारबार घसे ३
- (५१) शीतल पानी गरम पानीसे धोये ३
- (५२) अलतादिवे रंगसे रगे ३

भाषा—अपनी सुन्दरता-शोभा उदानेके लीये उक्त कार्य करे, कराये करतेको सहायता देवे

- (५३) ,, अपने होठोंको मसले, घसे ३
- (५४) चापे, दबाये
- (५५) तैलादिका मालीस करे
- (५६) लोब्रण आदि सुगंधि द्रव्य लगाये
- (५७) शीतल पानी गरम पानीसे धोये ३

(५८) अलतादि रंगसे रगे, रगाये, रगतेको सहायता देवे भाषना पूर्ववत्

(५९) , अपने उपरके होठोंका लचापणा तथा होठोंपर के दीर्घबालोंकी काटे, समारे सुन्दर बनाये ३

- (६०) पय नेत्रोंके भोपण काटे, समारे ३
- (६१) पय अपने नेत्रों (आखों)को मसले
- (६२) मदन करे
- (६३) तैलादिका मालीस करे

(६४) लोड्यादि सुगन्धी द्रव्यका लेपन करे

(६५) शीतल पाणी, गरम पाणीसे धोवे

(६६) काजलादि रंगसे रंगे, अर्थात् शोभाके लीये सुरमा-
दिका अजन करे ३

(६७) ,, अपने भँवरोंके बालोंको काटे, समारे ३

(६८) पक्ष पछ्याटे तथा छातीके बालोंको काटे, समारे
सुन्दरता बनावे ३

(६९) ,, अपने आखोंका मैल, कानोंका मैल, दास्तोंका
मैल, नखोंका मैल निकाले, विशुद्ध करे ३

भावार्थ—अपनी शुश्रूषा निमित्त उक्त कार्य करनेकी भना है
कारण—इसीसे प्रमादकी वृद्धि होती है और म्वाध्यायादि धर्म
कृत्यमें विघ्न होता है

(७०) ,, अपने शरीरसे परसेवा, मैल, जमा हुआ पसीना
मैलको निकाले, विशुद्ध करे, रूगावे, करतेको अच्छा समझे ३
भावना पूर्वक

(७१) ,, ग्रामानुग्राम विहार करतं समय शीतोष्ण नि-
धारणार्थे शिरपर छत्र धारण करे ३

यद्वातक शुश्रूषा सवन्धी ५६ जोल हुये है

(७२) , सणका दोरा, कपासका दोरा, उनका दोरा,
अर्कसूतका दोरा घोंह धनस्पतिके दोरासे बशीकरण करे ३

(७३) ,, गृहस्थाके घरमें घरके द्वारमें, घरके प्रतिद्वा-
रमें, घरकी अन्दरके द्वारमें, घरको पोलमें, घरके चौकमें, घरके
अन्य स्थानोंमें आप लघुनीत (पैसाव) बड़ीनीत (टटी) परठे,
परठावे, परिठतेको अच्छा समझे

(७४) एवं श्मशानम् मुरदेकी जलाया हो, उसकी राखमे मुरदेकी विश्रामकी जगहा, मुरदेकी स्थूम् बनाइ हो, उस जगहा, मुरदेकी पत्ति (कपरा), मुरदेकी छत्री बनाइ-बहापर जावे टटी, पैसाय करे, कराये, करतेको अच्छा समझे

(७५) कोलसे बनानेकी जगहा साजीखारादिये स्थान गौ प्रह्लादिये रोग कारणसे डाम देते हो उस स्थानमे, तुसोंका डेर करते हो उस स्थानमें, धानये खळे बनाते हो उस स्थानमें, टटी पैसाय करे ३

(७६) सचित्त पाणीका कीचड़ हो, कदम हो, नीलण, फूलण हो ऐसे स्थानमें टटी पैसाय करे ३

(७७) नयी धनी गोशाला, नयी खादी हुई मट्टी मट्टीकी खान, गृहस्थलोगा अपने काममें ली हो, या न भी ली हो ऐसे स्थानमें टटी पैसाय करे ३

(७८) उमरने वृक्षाका फल पडा हो परं वडवृक्ष, पीपल वृक्षोंने नीचे टटी पैसाय करे ३ इस वृक्षोंका बीज सुभ्रम और बहुल होते हैं

(७९) इक्षु (माटा) के क्षेत्रमें, शाट्यादि धान्यके क्षेत्रमें कसुयादि फूलाके वनमें, कपासादिये स्थानमें टटी पैसाय करे ३

(८०) मडक वनस्पति, साक व० मूला व० मालक व० त्वार व० बह्नु बीजा व० जीरा व० दमणय व० मरुग वनस्पतिके स्थानोंमे टटी पैसाय करे ३

(८१) अशोकवन, मीतवन, चम्पक वन, आम्रवन, अन्य भी तथा प्रकारका जहापर बहुतसे पत्र, पुष्प फल बीजादि जी रोंकी विगधना होती हो, ऐसे स्थानमें टटी पैसाय करे ३ तथा उक्त स्थानोंमे टटी पैसाय परठे, परिठावे, परिठनेको अच्छा समझे

भाषार्थ—प्रगट आहार निहार करनेसे मुनि दुर्लभप्रीति पना उपार्जन करता है वास्ते टटी पेशावके लीये दुःख जाना चाहिये

(८२) ,, अपने निश्चाये तथा परनिश्चारे मात्रादिका भाजनमें दिनको, रात्रिको, या त्रिकालमें अतिग्राहसे पीडित, उस मात्रादिके लघुनीत, घडीनीत कर सूर्य अनुदय अर्थात् जहा पर दिनको सूर्यका प्रकाश नहीं पडते हो, ऐसा आच्छादित स्थानपर परठे, परिठावे, परिठतेको अच्छा समझे

भाषार्थ—द्रव्यसे जहा सूर्यका प्रकाश पडते हो, और भावसे परिठनेवाले मुनिके हृदय कमलमें ज्ञान (परिठनेकी विधि) सूर्य प्रकाश कीया हो-ऐसे दोनों प्रकारके सूर्यादय न हुया मुनि परठे तो प्रायश्चित्तका भागी होता है कारण—रात्रिमें मात्रादि कर साधु सूर्यादय हो इतना प्रसन्न रग्न नहीं मरते है क्योंकि उम पेसाध आदिमें असंख्य समूहिन जीवोंकी उत्पत्ति होती है। इस वास्ते उक्त अर्थ संगतिको प्राप्त करता है

उक्त ८२ बोलसे एक भी बोल सेवन करनेवाले साधु माध्वी-योंका लघुमासिक प्रायश्चित्त होता है विधि देवो वीसया उद्देशासे इति श्री निजिथसूत्र-तीसरा उद्देशाका सचित्त सार.

(४) श्री निजिथसूत्र-चौथा उद्देशा

(१) ' जो कोई माधु माध्वीया ' राजाको अपने यश करे, कराये, करतेको अच्छा समझे

(२) एव राजाका अर्चन-पूजन करे ३

(३) एव अच्छा द्रव्यसे यज्ञ, भूपण, भावसे गुणानुयादादि बोलना ३

(४) पर्य राजाका अर्थी होना ३

इसी माफिक च्यार सूत्र राजाके रक्षण करनेवाले दिया-
प्रधान आभित कहना ५-८

इसी माफिक च्यार सूत्र नगर रक्षण करनेवाले कोटवालका
भी कहना ९-१२

इसी माफिक च्यार सूत्र निग्रामरक्षक (ठाकुरादि) आभित
कहना १३-१६

पर्य च्यार सूत्र सब रक्षक फौजदारादिक आभित कहना
पर्य सर्व २० सूत्र हुये

भाषार्थ—मुनि सदैव नि स्पृह होते हैं मुनियके लीये राजा
और रक् सहश ही होते हैं ' जहा पुत्रस्त कथ्यइ, तदा तुच्छस्त
कथ्यइ " अगर राजाको अपना करेगा तो कभी राजाका कहना
ही मानना होगा ऐसा होनेसे अपने नियममें भी स्थलना पहुचैगा
वास्ते मुनियोंको सदैव नि स्पृहतासे ही विचरना चाहिये (यहा
अमत्यभावका निषेध है)

(२१) ,, अखड औपधि (धायादि) भक्षण करे ३

भाषार्थ—अखड धान्य संचित होता है तथा सुठादि अख-
डितमें जीयादि भी कभी कभी मिलते हैं वास्ते अखडित औपधि
खानेकी मना है

(२२) , आचार्योंपाध्यायके विना दीये आहार करे ३

(२३) , आचार्यापाध्यायके विना दीये विगइ भोगये ३

(२४) ,, कोई गृहस्थ ऐसे भी होते हैं कि साधुओंके लीये
आहार पाणी स्थापन कर रखते हैं ऐसे घरोंकी याच पुछ, गवे-
पणा कीये विगर साधु नगरमें गौचरी निमित्त प्रवेश करे ३

(२५) ,, अगर कोई साध्वीयोंके विशेष कारण होनेपर साधुको साध्वीयोंके उपाश्रय जाना पड़े तो अविधि (पहले साध्वीयोंको सावचेत होने योग मकेत करे नहीं) से प्रवेश करे ३

भाषार्थ—एकदम चले जानेसे न जाने साध्वीयों किम अवस्थामें बैठी हैं

(२६) ,, साध्वी आनेके रहस्तेपर साधु दडा, लट्टी, रजोहरण, मुखयन्त्रिकादि कोई भी छोटी बड़ी वस्तु रखे ३

भाषार्थ—अगर साधु ऐसा जाने कि—यह रखे हुये पदार्थको ओळगके साध्वी आयेगी, तो उसको कहेंगे—हे साध्वी ! क्या इसी माफिक ही पूजन प्रतिलेखन करते हाने ? इत्यादि हासी या अपमान करे ६

(२७) क्लेशकारी बातें कर नये क्रोधको उत्पन्न करे ३

(२८) ,, पुराणा क्रोधको खमतखामणा कर उपशान्त कर दीया हो, उसे उदीरणा कर क्रोधको प्रज्वलित बनावे ३

(२९) ,, मुँह फाड़ फाड़के हसे ३

(३०) ,, पास्तये (भ्रष्टाचारी) को अपना साधु दे के उन्हींका मघाढायनावे अर्थात् उमकी साधुदेके सहायता करे ३

(३१) एव उसके साधुको लेवे ३

(३२-३३) एव दो अलापक 'उत्तम' त्रियासे शिथिलका भी समझना

(३४ ३५) एव दो अलापक 'कुशीन्' गराव आचार्यालाका समझना

(३६ ३७) एव दो अलापक 'नितिया' नित्य एक घरके

भोजन करनेवाले तथा गित्य बिना कारण पत्र स्थानपर निवास करनेवालोंका समझना

(३८—३९) पत्र दो अलापक 'ससन्ध्या' भवेगीके पास सवेगी और पासत्याघोंके पास पासत्या बनेनेवालोंका समझना

(४०) ,, कचे पाणीसे 'मसक्त' पाणीसे भीजे हुये पेसे हाथोंसे भाजनमेंसे चाटुडी (कुरची) आदिसे आहार पाणी ग्रहण करे ३ मिग्ध (पूरा सूका न हो) मचित्त रजसे, मचित्त मट्टीसे, ओसके पाणीसे नीमकसे, हरतालसे, मणमील (घोडल) पीली मट्टी, गेरुसे, खड्डीसे, हींगलुसे, अजनसे, (सचित्त मट्टीका) लोद्रेसे, कुक्कस, तत्कालीन आटासे, कन्दसे, मूलसे, अद्रकसे पुष्पसे, कोष्ठकादि—पत्र २१ पदार्थ मचित्त, जीव सहित हो उसे हाथ परहा हो, तथा सघट्टा होते हुये आहार पाणी ग्रहण करे ३ यह मुनि प्रायश्चित्तका भागी होता है इसी माफिक २१ पदार्थोंसे भाजन खरहा हुआ हो उस भाजनसे आहार पाणी ग्रहण करे ३ पत्र ८१

(८२) ,, ग्रामरक्षक पट्टेलादिको अपने वश करे अचन करे, अच्छा करे, अर्थात् उसे पत्र इसी उद्देशाके प्रारम्भमें राजाके च्यार सूत्र कहा था इसी माफिक समझना पत्र देशके रक्षकों का च्यार सूत्र पत्र सीमाके रक्षकोंका च्यार सूत्र पत्र राज्य रक्षकोंका च्यार सूत्र पत्र सर्व रक्षकोंका च्यार सूत्र कुल २० सूत्र भायना पूर्ववत् १०१

(१०२) ,, अयोय आपसमें एक साधु दुसरे साधुका पग दबाये—चापे पत्र यावत् एक दुसरे साधुके ग्रामानुग्राम विहार करते हुये वे शिरपर छत्र धारण करे, करावे जो तीसरा उद्देशामें कहा है इसी माफिक यहा भी कहना परन्तु यहा पर

समान सूत्र साधुओंके लीये हैं और यहापर विशेष सूत्र साधु आपसमे एक दुसरेके पापादि दाने-चापे

भाषार्थ—विशेष कारण बिना स्वाध्याय ध्यान न करते हुये दाने-चपानेवाला साधु प्रायश्चित्तका भागी होता है अगर किसी प्रकारका कारण हो ता एक साधु दूसरे साधुकी पैयायचक्र करनेसे महा निर्जरा होती है ५६ सूत्र मिलानेसे १५७ सूत्र हुये

(१५८) ,, उपधि प्रतिलेखनके अन्तमें लघुनीत, पढी नीत परिठनेकी भूमिकाओं प्रतिलेखन न करे ३

भाषार्थ—रात्रि समय परिठनेका प्रयोजन होनेपर अगर दिनको न देखी भूमिकापर पैसात्र आदि परिठनेसे अनेक प्रस स्थावर प्राणीयोंकी घात होती है

(१५९) भूमिकाके भिन्न भिन्न तीन स्थान प्रतिलेखन न करे ३ पहिले रात्रिमें, मध्य रात्रिमें, अन्त रात्रिमें परिठनेके लीये

(१६०) ,, स्वल्प भूमिकापर टटी पैसात्र परठे ३ स्वल्प भूमिका होनेसे जल्दीसे सुख नहीं सके उसमें जीवोत्पत्ति होती है वास्ते निशाल भूमिपर परठे

(१६१) , अविधिसे परठे ३

(१६२) ,, टटी पैसात्र जाकर साफ न करे, न करावे, न करते हुयेको अच्छा समझे उसे प्रायश्चित्त होता है

(१६३) टटी पैसात्र कर पाणीसे साफ न करवे फाष्ट क-करा, अगुली तथा शीला आदिसे साफ करे, करावे, करनेको अच्छा समझे यह मुनि प्रायश्चित्तका भागी होता है अर्थात् मल की शुद्धि जल हीसे होती है इसी वास्ते ही जैन मुनि पाणीमें चुना

धिर्गैरह डालवे रात्रि समय जल रखते हैं शायद रात्रिमें टटी पैसायका काम पढ जावे तो उस जलसे शुचि कर सवे *

(१६४) ,, टटी पैसाय जाके पाणीसे शुचि न करे, न कराये, न करते हुयेको अच्छा समझे यह मुनि प्रायश्चित्तका भागी होता है

(१६५) जिस जगहपर टटी पैसाय कीया है, उस टटी पैसायके उपर शुचि करे ३

(१६६) जिस जगह टटी पैसाय कीया है, उससे अति दूर जाके शुचि करे ३

(१६७) टटी पैसाय कर शुचिके लीये तीन पलली अर्थात् जलरतसे अधिक पाणी खरब करे ३

भाषार्थ—टटी पैसायके लीये पेस्तर सुकी जगह हो, यह भी विशाल मिर्जिव देखना चाहिये जहापर टटी बैठा हो वहांसे कुछ पाणोंसे सरब शुचि करना चाहिये ताके समूर्णित जीवोंकी उत्पत्ति न हो अशुचिका छाटा भी न लगे और जल्दी सुक भी जावे यह विधि गार्हका कथन है

(१६८) प्रायश्चित्त सयुक्त साधु कभी शुद्धाचारी मुनि को कहे कि—हे आर्य ! अपने दोनों साथियोंमें गौचरी चले साधु टटीमें अशनादि च्यार प्रकारका आहार लावे फिर बादमें यह आहार भेट (विभाग कर) अलग अलग भोजन करेंगे ऐसे घटनोंको शुद्धाचारी मुनि म्भीकार करे करावे, करतेको अच्छा समझे, यह मुनि प्रायश्चित्तका भागी होता है

* दुर्गिये और तरपन्थी लोग रात्रि समय पाणी नहीं रखत है तो इस पाठ पालन कैम कर सकते होंगे ? और रात्रिमें टटी पैसाय होनेपर क्या करते होंगे ?

भाषार्थ—सदाचारी जो दुराचारीकी संगत करेगा तो लोगोंमें अप्रतीतिका कारण होगा इति

उपर लिखे १६८ बोलोंसे कोई भी बोल साधु साध्वी सेवन करेंगे तो लघु भामिक प्रायश्चित्तके भागी होंगे प्रायश्चित्तकी विधि यीसया उद्देशासे देखे

इति श्री निगिथसूत्र—चौथा उद्देशाका सचिप्त सार.



(५) श्री निगिथसूत्र—पांचवां उद्देशा

(१) ' जो कोई साधु साध्वी ' भचित्त वृक्षका मूल-वृक्षका मूल जमीनमें रहता है कन्द (झड़ों) जमीनमें पसरती है स्कन्ध-जमीनके उपर जिसको मूल पेड कहते हैं उस मूल पेडसे चोतरफ च्यार हाथ जमीन सचित्त रहती है कारण—उस जमीनके नीचे कन्द (झड़ो) पसरती हुई है यद्वापर सचित्त वृक्षका मूल कहा है, यह उसी अपेक्षा है कि पमरी हुई झड़ा तथा यह मूल उपरकी सचित्त भूमि उपर कायेत्सर्ग करना, सस्तारक थिछाना और बैठना यह कार्य करे ३

(२) पथ बहा खडा होये एक बार वृक्षको अवलोकन करे तथा बार बार देखे ३

(३) पथ बहापर बैठके अशनादि च्यार आहार करे.

(४) पथ टटी पैसाय करे ३

(५) पथ स्वाध्याय पाठ करे ३

(६) पथ शिष्यादिको ज्ञान पढाये ३

(७) पथ अनुज्ञा देवे ३

(८) पत्र आगमोंकी याचना देवे ३

(९) पत्र आगमोंकी याचना लेवे ३

(१०) पत्र पढ़े हुये ज्ञानकी आवृत्ति करे ३

भाषार्थ—यह स्थान जीव महित है यहाँ बैठके कोई भी पात्र नहीं करना चाहिये अगर ऐसे सचित्त स्थानपर बैठके उक्त पात्र कोई भी साधु करेगा तो प्रायश्चित्तका भागी होगा

(११) ,, अपनी चहर अन्य तीर्थी तथा उम्होंके ग्रहस्थाय पास सीलावे ३

(१२) पत्र अपनी चहर दीघ लयी अर्थात् परिमाणसे अधिक करे ३

(१३) ,, निचक पसे पोटल वृक्षक पसे थिल वृक्षके पसे शीतल पाणीसे गरम पाणीसे धोये प्रक्षालये साफ करके भोजन करे ३ यह सूत्र कोई विशेष अरणीयादिके प्रसंगका है

(१४) , कारणवशात् सरस्वीना रजोहरण लेनेका काम पड़े * मुनि गृहस्थोंको वहे कि—तुमारा रजोहरण हम रात्रिमें व्यापित दे देंगे पसा करार करनेपर रात्रिमें नहीं देये ३

(१५) पत्र दिनका करार कर दिनको नहीं देये ३

भाषार्थ—इसमें भाषाकी स्थलना होती है मृषायाद लगता है वास्ते मुनिको पेंस्तरसे घेना समय करार ही नहीं करना चाहिये

* कोई तस्वर मुनि रजोहरण चुसक उ गया खबर बनन चोर कहता है कि—मे दिनको लज्जाभा मारा द नहीं सचा परन्तु रात्रिक समय व्यापका रजोहरण ट जाना ऐसी हालतमें गृहस्थोंके वरार पर मुनि रजोहरण लाव कि—तुमारा रजोहरण रात्रिमें ददुगा

(१६-१७) पथ दो सूत्र शय्यातर मंथधी रजोहरणका भी समझना जैसा रजाहरणका च्यार सूत्र कहा है, इसी माफिक दाढो, लाठी ग्वापटी, घासकी सूइका भी च्यार सूत्र समझना पथ २१

(२२) ,, सरचीना शय्या, सस्तारक, गृहस्थोंको घापिस सुमत कर दीया, फिर उसपर बैठे आमन लगावे ३ अगर बैठना हो तो दुसरी दपे आझा लेना चाहिये नहीं तो चोरी लगती है

(२३) पथ शय्यातर मंथधी

(२४) ,, सण उन कपासकी लघी दोरी भठे करे ३

(२५) ,, सचित्त (जीव सहित) काष्ठ, घास, बेंतादिका दाढा करे ३

(२६) पत्र धारण करे (रखे)

(२७) पथ उमे काममे लेवे

भाषार्थ—हरा झाडका जीव सहित दडादि करने रखने और काममे लेनेकी मना है इसे जीवधिराधना होती है इसी माफिक चित्रयाला दडा करे, रखे, घापरे २८-३०

इसी माफिक धिचित्र अर्थात् रंग बेरगा दडा करे, रखे, घापरे यह साधु प्रायश्चित्तका भागी होता है ३१ ३३

(३४) ,, ग्राम नगर यायत् सन्निवेशकी नयीन स्थापना हुइ हो, यहापर जावे साधु अशनादि च्यार आहार ग्रहन करे ३

भाषार्थ—अगर कोइ सग्रामादिके कटकके लीये नया ग्रामादिककी स्थापना करते समय अभिपेक भोजन बनाते हैं, यहा मुनि जानेसे शुभाशुभका रयाल तथा लोगोंको शका होती है

वि—यह कोई प्रतिपक्षीयोंवि तर्फसे तो न आया होगा ! इत्यादि शवाके श्यानांको वर्जना चाहिये

(३५) पद लोहाके आगर, मंघाका, तदयक, सीसाके च
दीये, सुवणके, रत्नोंके, वस्त्रके आगरकी नयीन स्थापना होती हो
चहा जाके साधु अशमादि आहार ग्रहण करे ३

(३६) , मुहसे यज्ञानेकी धीणा करे ३

(३७) दातोंसे यज्ञानेकी धीणा करे ३

(३८) होठोंसे यज्ञानेकी धीणा करे ३

(३९) नाकसे यज्ञानेकी धीणा करे ३

(४०) वाग्रसे यज्ञानेकी ”

(४१) हाथोंसे यज्ञानेकी ”

(४२) मल्लसे यज्ञानेकी ”

(४३) पत्र धीणा ”

(४४) पुष्प धीणा ”

(४५) फल धीणा ,

(४६) बीज धीणा ,

(४७) हरी तृष्णादिकी धीणा करे ३

इसी माफिक मुह धीणा यज्ञाये यावत् हरि तृष्णादिकी
धीणा यज्ञाये के पारह सूत्र कहना पय ५९

(६०) ,, इसके सिवाय किसी प्रकारकी धीणा जो अनु
दय शब्द विषयकी उद्दीरणा करनेवाले चार्जित यज्ञायेगा, वह
साधु प्रायश्चित्तका भागी होगा

भाषार्थ—स्थाध्याय ध्यानमें विचनकारक, प्रमादकी वृद्धि
करनेवाला शब्दादि विषय है इसीसे मुनियोंको हमेशा दूर ही
रहना चाहिये

(६१) ,, साधु साध्वीयोके उद्देश (निमित्त) बनाये हुये मकानमें साधु साध्वी प्रवेश करे ३

(६२) पय साधुके निमित्त मकान न्नीपाया हो, छप्परयधी कराइ हो, नया दरवाजा कराया हो—उस मकानमें प्रवेश करे ३

(६३) पय अन्दरसे कोई भी वस्तु साधुवाके लीये बाहार निकाले, काजा, कचरा निकाल साफ करे, उस मकानमें मुनि प्रवेश करे, यहा ठहरे ३

भावार्थ—जहा साधुयोके लीये जीवादिका वाद हो पेसा मकानमें साधु ठहरे, यह प्रायश्चित्तका भागी होता है

(६४) ,, जिस साधुयोके साथ अपना ' सभोग ' आहा रादि लेना देना नहीं है, और क्षात्यादि गुण तथा समाचारी मिलती नहीं है, उसको सभोग करनेका कहे ३

(६५) ,, वस्त्र, पात्र, कम्यल, रजोहरण अच्छा मजबुत बहुतकाल चलने योग्य है उसको फाड़तोड़ टुकड़े कर परठे, परठाये ३

(६६) पय तुंयाका पात्र काष्ठका पात्र, मट्टीका पात्र मजबुत रखने योग्य, बहुत काल चलने योग्यको तोड़फोड़ परठे ३

(६७) पय दहा, लट्टी, खापटी वाससूचि, चलने योग्यको परठे ३

भावार्थ—किसी ग्रामादिमें सामान्य वस्तु मिली हो, और बड़े नगरमें यह ही वस्तु अच्छी मिलती हो, तब पुद्गलानदी विचार करे—इसको तोड़फोड़के परठ दे, और अच्छी दुसरी वस्तु याच ले—इत्यादि परन्तु पेसा करनेवाले साधुयोको निर्देय कहा है यह प्रायश्चित्तका भागी होता है

(६८) , परिमाणसे अधिक 'रजोहरण' अर्थात् चौबीस अगुलकी दही और आठ अगुलकी दहीयां एवं चन्नीश अगुलका रजोहरणसे अधिक रखे, दुसरोंसे रखावे, अन्य रखते हुयेको अच्छा समझे अथवा सहायता देवे *

(६९) , रजोहरणकी दशीयांको अति सुभ्रम (धारीक) करे ३ प्रथम तो घरनेमें प्रमाद बढ़ता है और उसकी अन्दर जीयादि पैसे जानेसे विराधना भी होती है

(७०) रजोहरणकी दशीयोंपर एकभी बन्धन लगावे ३

(७१) एवं ओघारीयामे दही और दशीयां बन्धनके लीये तीन बन्धसे ज्यादा बन्धन लगावे ३

(७२) एवं रजोहरणका अवधिसे बन्धे नीचा उचा, शि-
पिल, सरत इत्यादि ३

(७३) एवं रजोहरणका फागकी भारीके माफिक बिचमें बन्ध करे जिससे पूज तोरपर काजा भीकाल नहीं जावे जी-
याकी यतना भी पूज न हो सके इत्यादि

(७४) , रजोहरणको शिरके नीचे (ओशीकाकी जगह) धरे ३

(७५) ,, बहुत मुख्यवाला तथा बर्णादिकर समुक्त रजोह-
रण रखे ३ चौरादिका भय तथा भ्रमत्व भावकी घृद्धि होती है.

(७६) , रजोहरणको अति दूर रखे तथा रजोहरण
विगर इधर उधर गमनागमन करे ३

(७७) ,, रजोहरण उपर बैठे ३ कारण रजोहरणको
शास्त्रकारोंने धमध्वज कहा है गृहस्थोंको पूजने योग्य है

* दुतीय ताग इस नियमका पालन कैम करा होगा ? कारणकि—दा दो हाथके लव रजोहरण रखते हैं इस बीरवाणीपर कुछ विचार करना चाहिये

(७८) ,, रजोहरण उपर सुवे, अर्थात् रजोहरणको वैअ-
दयीसे रसे, रखावे, रखतेको अच्छा समझे

भावार्थ—मोक्षमार्ग साधनेमें मुनिपद प्रधान माना गया है
मुनिपदकी पहचान, मुनि के चेषसे होती है मुनिचेषमें रजोह-
रण, मुखवस्त्रिका मुख्य है इसका बहुमान करनेसे मुनिपदका
बहुमान होता है इसकी वैअदयी करनेसे मुनिपदकी वैअदयी
होती है, यह जीव दुर्लभबोधी होता है भवान्तरमें उसको रजो-
हरण मुखवस्त्रिका मिलना दुर्लभ होगा चास्ते इसका आदर,
सत्कार, ध्यान, भक्ति करना भव्यात्माओंका मुख्य कर्तव्य है.

उपर लिखे ७८ बोलोंसे कोई भी बोल सेवन करनेवाले
नियोंको लघु मासिक प्रायश्चित्त होता है प्रायश्चित्त विधि देखो,
बीनया उद्देशार्थ

इति श्री निशिथसूत्र-पाचवा उद्देशाका सद्भिः ॥



(६-७) श्री निशिथसूत्र-छठा-मात्रं ॥

शास्त्रकाराने कर्मोंकी विचित्र गति बतलाई है ॥
मोहनीय कर्मका तो रंग दग कुछ अपवृत्ति ॥
बड़े बड़े साधधारी जो आत्मकल्याणकी ॥
मोहनीय कर्म नीचे गिरा देता है ॥
नदिपेण, कठगीकादि ॥

उंचा चढ़ना और नीचा गिरना ॥
है सत्संग करनेसे जीव उच्च श्रेणी ॥
जीव नीचा गिरता है सुमग्न ॥

सम्यक्प्रकारसे जानना यह ज्ञानावरणीय कमका क्षयोपशम है। जाननेके बादमें कुसंगतका त्याग करना और सत्संगका परिचय करना यह मोहनीय कमका क्षयोपशम है इस जगह शास्त्रकारोंने कुसंगतके कारणको जानके परित्याग करनेका ही निर्देश किया है।

अगर दीर्घकालकी वासनासे थासित मुनि अपनी आत्मरमणता करते हुये के परिणाम कमी गिर पड़े तथा अकृत्य कार्य करे उसको भी प्रायश्चित्त ले अपनी आत्माको निर्मल बनानेका प्रयत्न इस छठे और सातवें उद्देश्यमें बतलाया गया है जिसको देखना ही वह गुरुगमता पूर्वक धारण कीये हुये ज्ञानवाले महात्माओंसे सुने इस दोनों उद्देश्योंकी भाषा करणी इस वास्ते ही मुलतबी रख गई है इति ६-७

इस दोनों उद्देश्योंके धोनाके सेवन करनेवाले साधु साध्वी योंको गुरु चानुर्मासिक प्रायश्चित्त होगा

इति श्री लघुनिशिय सूत्रका छठा सातवा उद्देश

(८) श्री निशियसूत्रका आठवा उद्देश

(१) 'जो कोई साधु साध्वी' मुसाफिरवाना, उद्यान, शूद्रहर्षोंका घर यावत् तापसाधि आश्रम इतने स्थानोंमें मुनि अकेली स्त्री के साथ विहार करे, स्वाध्याय करे अज्ञानादि चार प्रकारका आहार करे, टटी पैसाव जाये, और भी कोई निन्दुर विषय विकार सबधी कथा बता करे ३

(२) एव उद्यान, उद्यानके घर (बगला), उद्यानकी शाला निज्जाण, घर—शालामें अकेला साधु अकेली स्त्रीके साथ पूर्वोक्त काय करे ३

(३) ग्रामादिके फोट, अट्टाली, आठ हाथ परिमाण र-
हस्ता, घुरजो, गढ, दरवाजादि स्थानोंमें अकेला माधु अकेली
स्त्री के साथ उक्त कार्यों करे ३

(४) पाणीके स्थान तलाय, कुँये, नदीपर, पाणी लानेके
गहस्तेपर, पाणी आनेकी मेहरमें, पाणीका तीरपर पाणीके उच्च
स्थानके मकानमें अकेली स्त्रीसे उक्त कार्यों करे ३

(५) शून्य घर, शून्य शाला, भग्न घर, भग्नशाला, कुड़ाघर,
कोष्ठगार आदि स्थानमें अकेली स्त्री माथ उक्त कार्यों करे ३

(६) तृणघर, तृणशाला, तुसोंके घर, तुसांकीशाला, धु
साका घर, भुसाकी शालामें अकेली स्त्रीके साथ उक्त कार्यों करे ३

(७) रथशाला, रथघर युगपात (मैना) की शाला, घरा
दिमें अकेली स्त्रीके साथ उक्त कार्यों करे ३

(८) किर्याणाकी शाला, घर बरतनाकी शाला-घरमें
अकेली स्त्री के साथ उक्त कार्यों करे ३

(९) घेलोंकी शाला-घर, तथा महा कुदुयवालाके धिलास
मकानादिमें अकेला स्त्री के साथ उक्त कार्यों करे ३

भाषार्थ—किसी स्थानपर भी अकेली स्त्री के साथ मुनि
कथा यास्ता करेगा, तो लोगोंको अविश्वास होगा, मनोवृत्ति म
लिन होगी, इत्यादि अनेक दोषोंकी उत्पत्तिका सम्भव है यास्ते
शास्त्रकारोंने मना किया है

(१०) रात्रिके समय तथा विकाल संध्या (श्याम) समय
अनेक स्त्रियोंकी अन्दर, स्त्रियोंसे मसक्त, स्त्रियोंके परिवारसे प्रवृत्त
होके अपरिमित कथा कहे ३

भाषार्थ—दिनको भी स्त्रीयाका परिचय करना मना है, तो

रात्रिका कहेना ही क्या ? नातिकाग्नि भी सुशील बहनांकी रात्रि समय अपने घरसे बाहार जाना मना किया है। दुदीये और तेरा-पन्थी साधु रात्रिमें व्याख्यानके लिये सँकड़ो स्त्रीयोंको आमन्त्रण कर दुराचारको क्यों उदाते है ?

(११) ॥ स्वगच्छ तथा परगच्छकी साध्वीके साथ या मानुग्राम विहार करते कभी आप आग कभी माध्वी आग चले जाने पर भाप चितारूप समुद्रमें गिरा हुआ आतध्यान करता विहार करे तथा उत्त कार्या करते रह ३ यह ११ सूत्रोंमें जैसे मुनियोंके लीये स्त्रीयोंके परिचयका निषेध बतलाया है इसी माफिक साध्वीयोंको पुनर्पाका परिचय नहीं करना चाहिये

(१२) , साधु साध्वीयोंके मसार सत्रधी स्पर्जन हो चाहे अस्पर्जन हो, धायक हो चाहे अधायक हो, परन्तु साधुके उपाश्रय आधीरात तथा सपूर्ण रात्रि उस गृहस्थोंको उपाश्रयमें रखे रहने देवे ३

(१३) जब अगर गृहस्थ अपनेही द्विर्से बड़ा रहा हो उसे साधु निषेध न करे, अनेरोंसे निषेध न कराये, निषेध न करते हुये को अच्छा समझे वह मुनि प्रायश्चित्तका भागी होता है

भावार्थ—रात्रिमें गृहस्थोंक रहनेसे परिचय बढ़ता है, सघट्टा होता है, साधुयोंक मत्र मूत्र समय कदाच उन लोगोंको दुर्गंध होवे, स्वाध्याय ध्यानमें विघ्न होवे-इत्यादि दोषोंका सभय है वास्ते गृहस्थोंको अपने पासमें रात्रिभर नहीं रखना अगर वि शाल मकानमें अपनी निधायमें एकाद कमरा किया हो, अपने उपभोगमें आता हो, उस मकानकी यह बात है शेष मकानमें धायक लोग सामायिक, पीषध तथा धर्मजागरणा कर भी सकते हैं

(१४) अगर कोई ऐसा भी अथमर आ जावे, अथवा निषेध

करने पर भी गृहस्थ नहीं जाता हो तो उसकी निश्चायसे मकानसे बाहार निकलना तथा प्रवेश करना नहीं कल्पे अगर ऐसा करे तो मुनि प्रायश्चित्तका भागी होता है

(१२) ,, राजा—(प्रधान पुरोहित, हाकिम, कोटवाल, और नगरशेठ संयुक्त) जाति, कुल, उत्तम ऐसा क्षत्रिय जातिका राजा, जिससे राज्याभिषेकके समय अपने गोश्रजोंको भोजन कराने निमित्त तथा किसी प्रकारके महोत्सव निमित्त अशनादि च्यार प्रकारका आहार निपजाया (तैयार कराया), उस अशनादि च्यार प्रकारका आहारसे साधु मात्सी आहारादि ग्रहण करे, करावे, करतेको अच्छा समझे

भावार्थ—ग्रन्थसे बड़ा जानेसे लज्जता होये, लोलुपता उठे, बहुतसे भिक्षुक पक्क होनेसे पन्न, पात्र, शरीरकी विराधना होये, भाग्यसे अपना आचारमें सलल पहुँचे शुभाशुभ होनेसे नाबुर्खा पर अभावका कारण होवे इत्यादि अनेक दोषोंका सभय है वास्ते मुनि ऐसा आहारादि ग्रहण न करे अगर कोई आज्ञा उल्लंघन करेगा, यह इन प्रायश्चित्तका भागी होगा

(१६) पण राजाकी उत्तरशाला अर्थात् बैठनेकी कचेरी तथा अन्दरका घरकी ओरसे अशनादि च्यार आहार ग्रहण करे ३

(१७) अश्वशाला, हाथीशाला, विचार करनेकी शाला, गुप्त सलाह करनेकी शाला रहस्यकी गार्ता करनेकी शाला, मथुन काम करनेकी शाला, उक्त स्थानोंमें जाते हुयेका अशनादि च्यार आहार ग्रहण करे ३

(१८) ,, संग्रह कीया हुवा, मग्न करतें हुए पक्वानादि, तथा मेवा मिष्ठानादि और दुध, दही, मक्खन, घृत, गुड, ग्राह सक्कर, मिश्री, और भी भोजनकी जाति ग्रहण करे ३

(१९) ,, खातों पीतों बचा हुआ आहार देता भेटता, बचा हुआ आहार, नाखता बचा हुआ आहार, अन्य तीर्थयात्रियों के निमित्त, कृपणों के निमित्त गरीब लोगों के निमित्त—ऐसा आहारादि ग्रहण करे, करावे, करतों को अच्छा समझे भावना पुष्यत् पद्मद्वया सूत्रकी माफिक नमस्सना

उपर लिखे १९ बोलोसे कोई भी बोल, साधु साध्वी सेवन करेगा, उसको शुद्ध चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होगा, प्रायश्चित्त विधि देखो बीसवा उद्देशार्थ

इति श्री निशियसूत्र—आठवा उद्देशार्थ साक्षिप्त सार

(६) श्री निशियसूत्रका नौवा उद्देशार्थ

(१) जो कोई साधु साध्वी ' राजपिंड (अन्ननादि आहार) ग्रहण करे, ग्रहण करावे ग्रहण करते हुयेको अच्छा समझे भावार्थ—सेनापति, प्रधान, पुरोहित नगरशेठ और सार्वथाह—इस पांच अंग सयुक्तको राजा कहा जाता है

(१) उन्हींके राज्याभिषेक समयका आहार लेनेसे शुभाशुभ होनेमें साधुओंका निमित्त कारण रहता है

(२) राजाका वलिष्ठ आहार विकारक होता है और राजाका आहार बने, उममें पडा लोगोंका विभाग होता है यह आहार लेनेसे उन लोगोंको अतरायका कारण होता है पर राजपिंड भोगये ३

(३) ,, राजाके अन्नेउर (जनानागृह ' में प्रवेश करे, करावे, करतोंको अच्छा समझे

भाषार्थ—साधु हमेशा मोहसे विरक्त होता है यहा जानेपर रुप, लावण्य, शृंगार तथा मोहक पदार्थ देखनेसे मोहकी वृद्धि होती है प्रभ, ज्योतिष, मन्त्रादि पूछनेपर साधु न बतानेसे को-पायमान होवे, राजादिको शका होवे-इत्यादि दोषोंका समर्थ है.

(४) ,, साधु, राजा के अन्तेउर-गृहद्वार जाके दरवा-नसे कहे कि—हे आयुष्मन् ! मुझे राजाका अन्तेउरमें जाना नहीं कल्पे तुम हमारा पात्र लेके जाओ, अन्दरसे हमें भिक्षा ला दो. येसा धचन बोले ३

५) इसी भाषिक दरवान बोले कि—हे साधु ! तुमको राजाका अन्तेउरमें जाना नहीं कल्पे आपका पात्र मुझे दो, मैं आपको अन्दरसे भिक्षा लादु येसा धचन साधु सुने, सुनावे, सुनतेको अच्छा समझे

भाषार्थ—बिगर देखे आहार लेना नहीं कल्पे सामने लाया आहार भी मुनिका लेना नहीं कल्पे

(६) ,, राजा जो उत्तम जातिवाला है उनके राज्याभिषेक समय भोजन निष्पन्न हुवा है, जिसमे द्वारपालोंका भाग है, पशु, पक्षीका भाग, गोकरोका भाग, देवताका भाग, दास दासीयोंका भाग, अश्वोंका भाग, दासीयोंका भाग, अटवी निवासीयोंका भाग, दुर्भिक्ष-जिसको भिक्षा न मिलती हो, दुश्कालादिके गरीबोंका भाग, ग्लान—बमारोंका भाग, बादलादि बरसातसे भिक्षाको न जा सके, पाहुणा आया हुवा उन्होंका भाग, इन्होंके सिधाय भी केइ जीयोंका भागवाला आहार है उसे ग्रहण करे, करावे, बरतेको अच्छा समझे

भाषार्थ—उक्त जीयोंको अन्तराय पडे जिससे साधुयासे द्वेष करे, अमीतिका कारण होवे इत्यादि

(७) " राजाका राज्याभिषेक हुये, उसके धान्य-कोटारकी शाला, धन-खजानाकी शाला दुध, दही, घृतादि स्थापन करनेकी शाला, राजाके पीने योग्य पाणीकी शाला, राजाके धारण करने योग्य धर्म, आभूषणकी शाला, इस छे शालाओंकी याचना न करी हो, पूछा न हो, गवेषणा न करी हो, परन्तु च्यार पाच रोज गृहस्थोंके घर गौचरीके लीये प्रवेश करे ३

भावार्थ-उक्त छे शालाओंकी याचना कीये बिना गौचरी जाये ता कदाच अनजानपणे उन्नी शालाओंमें चला जाये तब राजा-दिको अप्रतीतिका कारण होता है उस समय विपादिका प्रयोग हुवा हो तो साधुका अविश्वास होता है इस वास्ते शास्त्रकारोंने प्रथमसे ही मुनिथोंको नाशचेत काया है ताके किसी प्रकारसे दोषका समर्थ ही न रहे

(८) ,, राजा यायत् नगरसे बाहार जाता हुवा तथा नगरमें प्रवेश करते हुयेको देखनेको जानेके लीये एक कदम भरनेका मनसे अभिलाषा करे कराये करते हुयेका अच्छा समझे

(९) पर्य टीर्थों मर्धांग विमूषित, शृंगार कर आती जातीको नेत्रोंसे देखने निमित्त एक कदम भरनेकी अभिलाषा करे ३

(१०) , राजादिक मृगादिका शिकार गया, पहापर अशनादि च्यार प्रकारका आहार बनाया उस आहारसे आप ग्रहण करे

(११) ,, राजाके कोई भेटणा-निजराणा आया है, उस समय राजसभा पक्क हुइ है मसलत कर रहे है यह सभा वि-जैन नहीं हुइ, विभाग नहीं पडा अगर कोई नवी जुनी होनेवाली है उस हालतमें साधु आहार पाणीके लीये गौचरी जाये, अशनादि च्यार आहार ग्रहण करे ३

(१२) जहापर गजा ठहरे हें, उसकी नजदीकर्म, आसपासमे माधु ठहर क्याध्याय करे, अश्वत्थि च्यार आहार करे, ठधु नात यहीनीत पग्ठे, औरमी कोइ अनार्य प्रयोग क्या कदे ३

(१३) , गजा गहार यात्रा निमित्त गया हुवाका अश्व नादि च्यार आहार प्रदन करे ३

(१४) पर यात्रासे आते हुयेका आहार लेये ३

(१५-१६) पय दो सूत्र नदीयात्रा आतों जातोंका

(१७-१८) पर दो सूत्र गिनियात्राका

(१९) पय क्षत्रिय राजाका महा अभिषेक होते समय ग मनागमन करे कराये ३

(२०) पर्य चपानगरी, मथुरा बनारसी धावस्ति सारि-
तपुर कपित्थपुर, कौशायी मिथिला, हस्तिनापुर, और राजगृह-
इस नगरमें अगर राज्याभिषेक चलता हो, उस समय माधु द्योय
थार तीनचार गमनागमन करे, कराये, करतेको अच्छा समझे

भागर्थ—सामान्य माधुओंको येमे समय गमनागमन नहीं
करना चाहिये कारण—शुभाशुभका कारण हो तथा राजादिको
यादी प्रतिष्ठादीये विषय शक उत्पन्न हुये इसलीये मना है

(२१) ,, राज्याभिषेकका समय क्षत्रियोंके लीये बनाया
भोजन, राजाओंके लीये अन्य देशोंके राजायादिके लीये, नौकरोंके
लीये, राजपक्षीयादिके लीये, बनाया हुवा आहार मुनि प्रदन करे
कराये, करतेको अच्छा समझे कारण—यह भी राजपिंड ही है

(२२) ,, राज्याभिषेक समय, जो नट स्वयं नाचनेवाले,
नटवे परकी नचानेवाले, रसीपर नाचनेवाले, झालीपर कूदनेवाले,

यासपर खेल्नेवाले, मह मुष्टियुद्ध करनेवाले भाद-कुवेष्टा करनेवाले, कथा कहनेवाले, पायदे जाद जोड़ गानेवाले वादरेकी माफिक उद्देनेवाले, खेल् तमासा करनेवाले छत्र धरनेवाले—इन्होंने लीये अशनादि आहार बनाया हो उस आहारसे माधु ग्रहन करे ३ कारण—अंतरायका कारण होता है

(२३) ॥ राज्याभिषेक समय, जो अश्व पालनेवाले हस्ती पालनेवाले, महिष पालनेवाले घृषभ पालनेवाले एव सिंह व्याघ्र, छाली मृग श्वान, सूकर, भेड़, कुकडा तीतर, घटेधर लावण, चर्ल, हस्त मयूर, शुकादि पोषण करनेवाले, इन्होंने मदन करनेवाले, तथा इसिको फिराने खीठनेवाले इन्होंने लीये चार प्रकारका आहार निष्पन्न किया हुआ आहार माधु ग्रहन करे क राखे करनेको अच्छा समझे वह मुनिप्रायश्चित्तका भागी होता है

(२४) ॥ राज्याभिषेक समय जो सार्यवाहकने गीय, पग चपी करनेवालोंके लीये, मदन करनेवालोंके लीये तैलादिका मालीस करनेवालोंके लीये स्नान मज्जन करानेवालोंके लीये, शृंगारसज्जानेवालोंके लीये चम्पर, छत्र, वस्त्र भूषण धारण करनेवालोंके लीये, दीपक, तरवार, धनुष्य भालादि धारण करनेवालोंके लीये, अशनादि चार प्रकारका आहार बनाया उस आहारसे मुनि आहार ग्रहन करे भाषना पूर्ववत्

(२५) , राज्याभिषेक समय जो घृष्ट पुरुषादि लीये कृत नपुंसकोंके लीये पचुकी पुरुषाके लीये, द्वारपालाके लीये, दंड धारकोंके लीये बनाया आहार माधु ग्रहन करे ३

(२६) ॥ राज्याभिषेक समय जो कुञ्ज दासीयोंके लीये यावत् पारसदेशकी दासीयोंके लीये बनाया हुआ आहार, मुनि ग्रहन करे ३ भाषना पूर्ववत् अंतराय होता है

(८) एव वर्तमान कालका

(९) एव अनागत कालका निमित्त वहे प्रकाश करे

भाषार्थ—निमित्त प्रकाश करनेसे स्वाध्याय ध्यातमें विघ्न होवे राग द्वेषकी वृद्धि होवे, अप्रतीतिका कारण—इत्यादि दोषों का संभव है

(१०) ,, अथ किसी आचार्यका शिष्यको भ्रममें (भ्रममें) डाल देये, चित्तको व्यग्र कर अपनी तर्प रखनेकी कोशिश करे ३

(११) ,, एव प्रशिष्यको भ्रम (भ्रम) में डाल, दिशामुग्ध बनाके अपने साथ ले जाये तथा पद्म पात्र, ज्ञानसूत्रादिका लोभ दे, भ्रमाके ले जाये ३

(१२) ,, किसी आचार्यके पास कोई गृहस्थ दीक्षा लेता हो, उसको आचार्यजीका अधगुणवाद गोल (यह तो लघु है हीनाधारी है, अज्ञान है—इत्यादि) उस दीक्षा लेनेवालाका चित्त अपनी तर्प आकर्षित करे ३

(१३) एव एक आचार्यसे अरुचि कराके दुसराके साथ भेजवा दे

भाषार्थ—ऐसा अकृत्य कार्य करनेसे तीसरा महाव्रतका भग होता है साधुओंकी प्रतीति नहीं रहती है एक ऐसा कार्य करनेसे दुसरा भी देखादेखी तथा द्वेषके भारे ढरेगा, ता साधुमर्यादा तथा तीर्थकरके मागका भग होगा

(१४) ,, साधु साधुओंके आपसमें क्लेश हो गया हो तो उस क्लेशका कारण प्रगट कीये बिना, आलोचना कीया बिगर, प्रायश्चित्त लीये बिगर खमतखामणा कीया बिगर तीन रात्रिके उपरांत रहे तथा साथमें भोजन करे ३

भाषार्थ—विगर खमतग्वामणा रहेगा तो कारण पावे फिर भी उस श्लेशकी उदीरणा होगा

(१५) , क्लेश करके अन्य आचार्य पाससे आये हुयेको तीन रात्रिसे अधिक अपने पास रखे ३

भाषार्थ—आये हुये साधुको मधुर वचनासे समझावे कि-हे भद्र! तुमको तो जहा जायेंगा, वहा ही मयम पालना है, तो फिर अपने आचार्यको ही क्यों छोड़ते हो, वापिस आये, आचार्य महा राजकी प्रियावच, विनय, भक्ति कर प्रसन्न करो इत्यादि दित शिक्षा दे क्लेशसे उपशान्त जमावे वापिस उसी आचार्यसे पान भोजना ऐसा कारणसे तीन रात्रि रख सकते हैं अयादा रखे तो प्रायश्चित्तका भागी होता है

(१६) , लघु प्रायश्चित्तवालेको गुरु प्रायश्चित्त कहै ३ (द्वैपके कारणसे)

(१७) पथ गुरु प्रायश्चित्तवालेको लघु प्रायश्चित्त कहै ३ (रागके कारणसे)

(१८) पथ लघु प्रायश्चित्तवालेको गुरु प्रायश्चित्त देवे ३

(१९) गुरु प्रायश्चित्तवालेको लघु प्रायश्चित्त देवे ३ भा

वना पूर्ववत्

(२०) ,, लघु प्रायश्चित्त सेवन कीया हुआ साधुके साथ आहार पाणी करे ३

(२१) ,, लघु प्रायश्चित्तका स्थान सेवन कीया है, उसे आचार्य सुना है कि—अमुक साधुने लघु प्रायश्चित्त सेवन कीया है फिर उसके साथ आहार पाणी करे, करावे, करतेको अच्छा समझे

(२२) ,, पय सुनलेने पर तथा स्वयं जानलेनेपर आलोचना करने योग्य प्रायश्चित्तकी आलोचना नहीं करे यह हेतु उसके साथ आहारपाणी करे ३

(२३) अक्षरूप—अमुक दिन आलोचना कर प्रायश्चित्त ले बैगा परन्तु क्षयतक आलोचना कर प्रायश्चित्त नहीं लीया है, वहातक उसे क्षोभित साधुपे साथ आहार पाणी करे, कराये, करतको अच्छा समझे जैसे चार सूत्र लघु प्रायश्चित्त आश्रित कहा है, इमी माफिक चार सूत्र (२४-२५-२६-२७) गुरुप्रायश्चित्त आश्रित कहना इमी माफिक चार सूत्र (२८-२९-३०-३१) लघु और गुरु दोनों नामेलका कहा ×

(३२) ,, लघु प्रायश्चित्त तथा गुरु प्रायश्चित्त, लघु प्रायश्चित्तका हेतु, गुरु प्रायश्चित्तका हेतु, लघु प्रायश्चित्तका स्वरूप, गुरु प्रायश्चित्तका स्वरूप सुनके, हृदयमें धारये फिर भी उम प्रायश्चित्त संयुक्त साधुपे साथ पक्क मंदलपर भाजन करे, कराये कर लेकी अच्छा समझे

भाषार्थ—कोई साधु प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर आलोचना नहीं करते हैं उमके साथ दुमरे साधु आहार पाणी करते हैं ता उसे पक्क कीस्मकी महायता मिलती है दुमरी दये क्षोभ सेवनमें शंका नहीं रहेती है दुमरे साधु भी स्वच्छक्षी हो प्रायश्चित्त सेवन करनेमें शंका नहीं रखेगा तथा क्षोभित साधुयाके साथ भोजन करनेवालीमें एकांश व्याप्त होगा, इत्यादि इसी वास्ते

× एक प्राचीन ग्रन्थमें गुरुप्रायश्चित्त और लघुप्रायश्चित्त में चार सूत्र लिखा हुआ है जिसमें संधर्ष यह भी चार विषय हैं मन्ते हैं तथा लघु प्रायश्चित्त गुरुप्रा० संधर्ष लघुप्रा० स्मरण गुरुप्रा० हेतु लघु गुरु दोनों हेतु तथा दोनों स्वरूप यह भी चार सूत्र हैं

दोषित साधुओंको हितबुद्धिसे आलोचना करवाके ही उन्हींके साथ आलाप संलाप करनेकी ही शास्त्रकारोंकी आज्ञा है

(३३) ,, सूर्यादय होनेके बाद तथा सूर्य अस्त होने के पहला मुनियोंकी भिक्षावृत्ति है साधु निरोगी है, और सूर्यादय होनेमें तथा अस्त न होनेमें कुछ भी शका नहीं है उस समय भिक्षा ग्रहण कर, लायके भोजन करनेको बैठा, तथा भोजन करते यत्नत स्वयं अपनी मतिसे तथा दुसरे गृहस्थोंके वचन श्रवण करनेसे ग्याल हुआ कि—यह भिक्षा सूर्यादय पहला तथा सूर्य अस्त होनेके बाद में ग्रहण की गई है (अति वादल तथा पर्यता दिक्की व्याघातसे) ऐसी शका होनेपर मुंहका भोजन थुकके साफ करे, पात्राका पात्रामें रखे, हाथका हाथमें रखे अर्थात् उस समय आहारका एकान्त निर्जीवि भूमिपर विधिपूर्वक परठे, तो भगवानकी आज्ञाका अतिप्रम न हुये, (परिणाम विशुद्ध है अगर शका होनेपर भी आप भोगये तथा अन्य किसी साधुओंको देये, तो यह मुनि, रात्रिभोजनके दोषका भागी होता है उसे चातुर्मासिक प्रायश्चित्त देना चाहिये

(३४) ,, इसी माफिक साधु निरोगी है, परन्तु सूर्यादय होने में तथा अस्त होनेमें शका है, यह दो सूत्र निरोगीका कहा इसी माफिक दो सूत्र रोगी साधुओंका भी समझना (३५-३६)

भावार्थ—किसी आचायादिकी बैयावच्छमे शीघ्रतासे जाना पड़े, छोटे गामोंमें दिनभर भिक्षाका योग न पना, दिवसके अन्त में किसी नगरमें पहुँचे, उस समय वादल बहुत है, तथा पर्यतकी व्याघात होनेसे ऐसा मालुम होता है कि—अबो दिन होगा तथा पहले दिन भिक्षाया योग नहीं बना दुसरे दिन सूर्यादय होते ही क्षुधा उपशमानेके लीये तथा विशेष पिपासा होनेसे, छास

आदि लेनेका काम पड़े, उस अपेक्षा यह विधि बतलाई है। सा-
मान्यतासे तो साधु दुसरी तीसरी पौरुषीमें ही भिक्षा करते हैं।

(३७) ,, कोई साधु साध्वीयाँका रात्रि समय तथा वैकाल
(प्रतिमग्नका बखत) समय अगर आहार पाणी मयुक्त उगाला
(गुचलको) आवे, उसका निर्भीच भूमिपर परठ देनेस आज्ञाका
भंग नहीं होता है। अगर पीठे भक्षण पड़े, कराव, करलेको अङ्गु-
ल समझे।

(३८) , किसी बीमार साधुका सुनके उसकी गयेपणा
न करे ३

(३९) अमुक गाममें साधु बीमार है, ऐसा सुन आप दुसरे
रहस्तेसे बला जाये जाने कि—मैं उन गाममे जाऊंगा तो बीमार
साधुको मुझे बैयावब करना पड़ेगा।

भाषार्थ—ऐसा करनेसे निन्द्यता होती है। साधुकी बैयावब
करनेमें महान् लाभ है। साधुकी बैयावब साधु न करेगा, तो दुसरा
कौन करेगा ?

(४०) ,, कोई साधु बीमार साधुके लीये दवाइ याचनेको
बृहस्थोके पहा गया, परन्तु वह दवाइ न मिली तो उस साधुने
आचार्यादि बृद्धोको कह देना चाहिये कि—मेरे अंतरायका उ-
दय है कि इस बीमार मुनिके योग्य दवाइ मुझे न मिली। अगर
वापिस आयके ऐसा न कहे। वह मुनि प्रायश्चित्तका भागी होता
है। कारण—आचार्यादि तो उस मुनिके विश्वासपर बैठे हैं।

(४१) ,, दवाइ न मिलनेपर साधु पश्चात्ताप न करे
जैसे—अहो ! मेरे कैसा अंतराय कमका उदय हुआ है कि—
इतनी याचना करनेपर भी इस बीमार साधुके योग्य दवाइ न
मिली इत्यादि।

भाषार्थ—जितनी दवाइ मिले, उतनी लाने बीमारको देना-
न मिलनेपर गवेषणा करना गवेषणा करनेपर भी न मिले तो
पञ्चास्ताप करना कारण बीमार माधुको यह शका न हो कि—
सब साधु प्रमाद करते हैं मेरे लीये दवाइ लानेका उद्यम भी
नहीं करते हैं

(४२) , प्रथम वर्षाश्रतु-धावण कृष्णप्रतिपदामें ग्रामानु-
ग्राम विहार करे ३

(४३) , अपर्युषणको पर्युषण करे ३

(४४) पर्युषणको पर्युषण ७ करे

भाषार्थ—आषाढ चौमासी प्रतिग्रमणमे ५० दिन भाद्रपद
शुक्लपक्षमीको पर्युषण होता है पर्युषण प्रतिग्रमण करनेसे ७०
दिनोंसे कार्तिक चातुर्मासिक प्रतिग्रमण होता है अगर वसन्तमान
चातुर्मासमें अधिक मान भी हो, तो उसे फाल चूटिका मानना
चाहिये ।

(४५) , पर्युषण (नावत्सरिक) प्रतिग्रमण समय गीर्ष
बाला जितने वेश (बाल) शिरपर रखे ३

भाषार्थ—मुनियोंका नावत्सरिक प्रतिग्रमण पहन शिखा
शाय करना चाहिये ।

(४६) , पर्युषण—संवत्सरीये दिन इतर स्वरूप विन्दु
मात्र आहार करे ३

भाषार्थ—संवत्सरीये दिन शनि सहित माधुयोंको चौवि-
हार उपवास करना चाहिये

(४७) , अन्य तीथीयों तथा अन्य तीथीयोंके गृहस्थोंके
साथ पर्युषण करे, कराये, करतेको अच्छा समझे

भाषार्थ—जैसे जैन मुनियोंके पर्युषण होते हैं, इसी माफिक अन्य तीर्थी लोग भी अपनी ऋषि पंचमी आदि दिनको मुकर कीया है यह अन्यतीर्थी कहे कि—हे मुनि ! तुमारा पर्युषण हमको करावे और हमारा पर्युषण तुम करो ऐसा करना साधु साध्वीयोको नहीं कल्पे

(४८) , आषाढी चातुर्मासीके बाद माधु साध्वी वस्त्र, पात्र ग्रहण करे ३

भाषार्थ—जो वस्त्रादि लेना हो, यह आषाढ चातुर्मासी प्रति व्रमण करनेके प्केस्तर ही ग्रहण कर लेना बाद में कार्तिक चातुर्मासी तक वस्त्र नहीं ले सकते हैं +

उपर लिखे ४८ बोलसे कोई भी बोल सेवन करनेवाले साधु माध्वीको गुद चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है प्रायश्चित्त विधि देखो बीसवा उद्देशमें

इति श्री निशिधस्त्र-दशवा उद्देशाका सचिस सार

(११) श्री निशिधस्त्र-उग्यारवा उद्देशा

(१) ' जो कोई माधु साध्वी ' लोहाका पात्र करे, करावे, करतेको अच्छा समझे

(२) पथ लोहाका पात्राको रखे

+ सावधानागसूत्र—“समणे भग्ग महम्मिरे सरीमइ राइ माम वइक्कते सत्तरे एहिं राइदिगिहिं मसं ते वासागम पंओसमइ अथात् आया” चातुर्मासीमे पंचाश दिन और कार्तिक चातुर्मासिके सीतर दिन पहला सावन्सरिक प्रतिक्रमण करना साधुओंको कल्पे

(३) पय लोहाका पात्रमें भोजन करे तथा अन्य काममें लेवे ३

(४) पय ताँबाका पात्र करे

(५) धारे रखे

(६) भोगने ३

(७) पय तरुनेका पात्रा करे

(८) धारे

(९) भोगने ३ पय तीन सूत्र सीसाके पात्रोंका १०-११-१२ पय तीन सूत्र कासीके पात्रोंका १३-१४ १५ पय तीन सूत्र रुपाके पात्रोंका १६-१७-१८ पय तीन सूत्र सुवर्णके पात्रोंका १९-२०-२१ पय जातिरूप पात्र २४ पय मणिपात्रोंके तीन सूत्र २५-२६-२७ पय तीन सूत्र कनकपात्रोंका २८-२९-३० दात पात्रोंके ३३ लिंग पात्रोंके ३६ पय वज्र पात्रोंके ३९ पय चर्म पात्रोंके तीन सूत्र ४० पय पत्थर पात्रोंके तीन सूत्र ४५ पय अकरतनोंके पात्रोंका तीन सूत्र ४८ पय शख पात्रोंके तीन सूत्र ५१ पय घञ्जरतनोंके पात्र करे रखे, उपभोगमें लेवे ३ इति ५४ सूत्र

भाषार्थ—मुनि पात्र रखते हैं वह निर्ममन्त्र भाषसे केवल नैयमवाचा निर्वाह करनेके लिये ही रखते हैं उक्त पात्रों धातुके, ममत्यभाष बढ़ानेवाले हैं चौरादिका भय, मयम तथा आत्मघातके मुख्य कारण हैं वास्ते उक्त पात्रोंकी मना करी है जैसे ५४ सूत्रों उक्त पात्र निषेधके लिये बद्धा है, इसी माफिक ५४ सूत्र पात्रोंके बधन करनेके निषेधका समझना जैसे पात्रोंका लोहवा घन्ध करे, लोहके बधनवाला पात्र रखे, लोहाका घन्धनवाला पात्र उपभोगमें लेवे यावत् घञ्जरतनों तकके सूत्र कहना भाषार्थ पूर्ववत् १०८

(१०९) ,, पात्रा याचने निमित्त दोय कोश उपरात गमन करे गमन करावे गमन करनेको अच्छा समझे ३

(११०) एष दोय वाश उपरातसे मामने दोय कोशकी अंदर लायवे देखे उम पात्रको मुनि ग्रहन करे ३

(१११) ,, श्रीजिनेश्वर देधाने सूत्रधर्म (ब्राह्मशास्त्र) पारिग्रधर्म (पञ्चमहाव्रतरूप), इमधर्मका अवगुणवाद बोले, निंदा करे, अयश करे, अकीर्ति करे ३

(११२) ,, अधम, मिथ्यात्र, यज्ञ, होम, ऋतुदान, पिंडदान इत्यादिकी प्रशंसा-तारीफ करे ३

भाषार्थ—धर्मकी निन्दा और अधर्मकी तारीफ करनेसे जी पाकी छटा बिपरीत हो जाती है वह अपनी आत्मा और अनेक पर आत्मावाको दुहाते हुये और बुद्धिर्म उपजाव करते हैं

(११३) ,, ओ कोइ साधु साध्वी ओ अन्यतीर्थी तापसादि और गृहस्थ लोगोंक पाषोंकी मसले, चपे, पुजे यायत् तीसरा उद्देशार्थ पाषासे लगावे ग्रामानुग्राम बिहार करते हुवेके शिरपर छत्र करनेतक ५६ सूत्र यहापर साधु आभित है यहापर अन्यतीर्थी तथा गृहस्थ आभित है इति १६८ सूत्र हुवे

(१६९) ,, साधु आप अन्धकागदि भयोत्पत्तिवे स्थान जाके भय पामे

(१७०) अन्य साधुओंको भयोत्पत्तिवे स्थान ले जाय वे भयोत्पन्न करावे

(१७१) स्वयं गृहलादि कर विस्मय पामे

(१७२) अन्य साधुओंको विस्मय उपजावे

(१७३) न्धय मयमधर्मसे बिपरीत बने

(१७४) अन्य साधुओंको विपरीत पनावे, अर्थात् अपना स्वभाव समयमें रमणता करनेका है, इन्हसे विपरीत बने, हासी दटा, फिसादादि करे, कगावे, करतेको सहायता देवे

(१७५) ,, मुहसे प्रजानेकी धीणा करे, करावे, करते हुयेका सहायता देवे

भाषार्थ—भय, दुत्तुहल विपरीत होना, सब गालचेष्टा है, समयको बाधाकारी है वास्ते साधुओंको पहलेसे ऐसा निमित्त कारणही नहीं रखना चाहिये यह मोहनीय कमका उदय है इसको बढ़ानेसे प्रदत्ता जाये, और कम करनेसे कमती हो जाये, वास्ते ऐसे अमृत्य कार्य करनेवालोंको प्रायश्चित्त बतलाया है

(१७६) ,, दोय राजाओंका विरुद्ध पक्ष चल रहा है उस समय साधु साध्वीयों पारपार गमनाममन करे ३

भाषार्थ—राजाओंको शका होती है कि—यह कोई परपक्ष वाला साधुधेप धारण कर यहाका समाचार लेनेको आता होगा तथा शुभाशुभका कारण होनेसे धर्मको—शासनको नुकसान होता है

(१७७) ,, दिनका भोजन करनेवालोंका अयगुनबाद धोले जैसे एक सूर्यमें दोय बार भोजन न करना इत्यादि

(१७८) ,, रात्रिभोजनका गुणानुवाद धोले, जैसे रात्रि भोजन करना बहुत अच्छा है इत्यादि

(१७९) ,, पहले दिन भोजन ग्रहण कर दुसरे दिन दिनको भोजन करे तथा पहली पोरमीमें भिक्षा ग्रहण कर चौथी पोरसीमें भोजन करे ३

(१८०) पथ दिनको अशनादि चार आहार ग्रहण कर रात्रिम भोजन करे ३

(१८१) रात्रिमें अशनादि च्यार आहार ग्रहण कर दिनका भोजन करे ३

(१८२) एवं रात्रिमें अशनादि च्यार आहार ग्रहण कर रात्रिमें भोजन करे करावे, करतेको अच्छा समझे

भाषार्थ—रात्रिमें आहार ग्रहण करनेमें तथा रात्रिमें भोजन करनेमें सुख्य जीवाको विराधना होती है तथा प्रथम पोरसीमें लाया आहार, चरम पोरसीमें भोगवनेसे कल्पातिशय दोष जाता है

(१८३) , कोइ गाढागाढी कारण बिगर अशनादि च्यार प्रकारका आहार, रात्रिमें घामी रखे, रखावे, रखतेको अच्छा समझे

(१८४) अति कारणसे अशनादि च्यार आहार, रात्रिमें घामी रखा हुआका दुमरे दिन विगुमात्र स्वयं भागवे अन्य साधुको देवे ३

भाषार्थ—कत्री गोधरीमें आहार अधिग्र आगया तथा गोधरी लातेवे बाद माधुर्याको मुखारादि चेमाराके कारणसे आहार बढ गया, वस्तु कमती हो परठनेका स्थान दूर है, तथा घनघोर वर्षाद वर्ष रही है ऐसे कारणसे यह वधा हुआ आहार रह भी जाय तो उसको दुमरे दिन नहीं भोगवना चाहिये, रात्रि समय रखनेका अवसर हो तो राखते मतलब देना चाहिये ताके उसमें जीवात्पत्ति न हो अगर रात्रिघासी रहा हुआ अशनादि आहारको मुनि खानेकी इच्छा भी करे, उसे यह प्रायश्चित्त यत् लाया है

(१८५) , कोइ अनार्यलोक मान, मदिरादिका भोजन स्वयं अपने लीये तथा आवे हुवे पाहुणे (मदिरामान) के लीये

चनाया हो, इधर उधर लाते, ली जाते हो, जिनका रूप ही अदर्शनीय है तबदापर ऐसा कार्य हो रहा है, उसीकी तर्फ जानेकी अभिलाषा, पिपासा, इच्छा ही साधुओंको न करनी चाहिये अगर करे, कराये, करतेको अच्छा समझे यह मुनि प्रायश्चित्तका भागी होगा कारण—यह जातेमें लोगोंको शकाका स्थान मिलेगा

(१८६) ,, देवोंको नैवेद्य चढ़ानेके लीये, जो अशनादि आहार तैयार कीया है, उसकी अन्दरसे आहार ग्रहण करे ३ यह लोकयिरुद्ध है कदाच देवता कोपे तो नुकसान करे

(१८७) ,, जो कोई माधु सा धी जिनाशा विराधके अपने छंदे चलनेवाले है, उसकी प्रशंसा करे ३

(१८८) ऐसे स्वच्छंदे चलनेवालोंको बन्धे ३ इसीसे स्वच्छंदधारीयोंकी पुष्टि होती है

(१८९) ,, साधुओंके मनारपक्षके न्यातीले हो, अ न्यातीले हो, धायक हो, अन्य गृहस्थ हो, परन्तु दीक्षाके योग्य न हो, जिसमें दीक्षा ग्रहण करनेका भान भो न हो ऐसा अपात्रको दीक्षा देवे ३

भाषा—भविष्यमे बड़ा भारी नुकसानका कारण होता है

(१९०) ,, अगर अज्ञातपनेसे ऐसे अपात्रको दीक्षा दे दी हो, तत्पश्चात् ज्ञात हुया कि—यह दीक्षाके लीये अयोग्य है उनको पंचमहाव्रतरूप बड़ीदीक्षा देवे ३

(१९१) अगर बड़ीदीक्षा देनेके बाद ज्ञात हो कि—यह संयमके लीये योग्य नहीं है ऐसेको ज्ञान, ध्यान देवे सूत्र-निष्ठातकी वाचना देवे, उसकी पैयायब करे, साथमें एक मडले-पर भोजन करे, कराये, करतेको अच्छा समझे भाषना पूर्ववत्

(१९२) , यद्य सहित साधु, यद्य सहित साध्वीयांकी अन्दर नियास करे ३

(१९३) यद्य यद्य सहित, यद्य रहित

(१९४) यद्य रहित, यद्य सहित

(१९५) यद्य रहित, यद्य रहितकी अन्दर निधान करे, करावे, करतेकी अच्छा समझे

भाषा—साधु साध्वीयोंको किसी प्रकारसे मामेल रहना नहीं कल्पै कारण-अधिक परिषय होनेसे अनेक तरहका नुक़्शान है और स्थानागत्यकी चतुर्भंगीने अभिप्राय-अगर कोई विशेष कारण हो जैसे किमी अनार्य ग्रामकी अन्दर अनाय आदमीयोंकी प्रदमासी हो, पेने समय साध्वीयों एकतफ़से आइ हो, दुमरी तफ़से साधु आये हो तो उस साध्वीके ब्रह्मचर्य रक्षण निमित्त, धमपुत्रके मापिक रह भी सकते हैं तथा यन्त्रादि चीज़ हरण कीया हो पसा विशेष कारणसे रह भी सकते हैं

(१९६) , रात्रिमें घासी रग्वे पीपीलिका उसका चूण, सुठी चूण, वल्गालुणादि पदाथ भोगये ३ तथा प्रथम पोरसीमें लाया चरम पोरसीमें भोगये ३

(१९७) ,, जो कोई साधु साध्वी-वालमरण-जैसे पद्यतसे पढ़के मरजाना, मरुस्थली रेतीमें खुचक मरना खाइ-खाइमें पढ़के मरना इस ज्यारोंमें फस कर मरना, जीचडमें फस कर मरना, पाणीमें डूबके मरना, पाणीमें प्रवेश करना झुपादिमे कूदके मरना, अग्निमें प्रवेश कर तथा कूद कर अग्निमे पढ़के मरना विषभक्षण कर मरना, शस्त्रसे घात कर मरना पाच इन्द्रियांके यश हो मरना, मनुष्य मरके मनुष्य होना

पशु मरने पशु होना अतः करणमें भायशल्य रखवे मरना, फासी लेवे मरना, महाकायावाले मृतक पशुके कलेवरमें प्रवेश हो मरना सयमादि शुभ योगोंसे ब्रह्म हों, अर्थात् विराधक भावमें मरना इन्हके सियाय भी जो बालमरण मरनेवालोंकी प्रशंसा तारीफ करे, कराये, करतेको अच्छा समझे

उपर लिखे १९७ बोलोंसे एक भी गोल सेवन करनेवाले साधु-साध्वियोंको शुरुचातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है प्रायश्चित्त विधि देखो धीसबा उद्देशामे

इति श्री निशित्सूत्र-इग्यारवा उद्देशाका सन्निप्त सार.

(१२) श्री निशित्सूत्र-चारहवा उद्देशा

(१) ' जो कोई साधु साध्वी ' 'कलूण' दीनपणाको धारण करता हुआ व्रम-जीव गौ, भैंसादिको तृणकी रसी (दोरी)से बांधे पत्र मुज रसीसे बांधे काष्ठकी बाण्डही तथा खोडासे बन्धन करे, चर्मकी रसीसे, रज्जुकी रसीसे, सूतकी रसीसे, अन्य भी किसी प्रकारकी रसीसे, व्रम जीवोंको बांधे, बंधावे, अन्य कोई साधु बांधते हो, उसको अच्छा समझे

(२) पत्र उक्त बन्धनोंसे बन्धा हुआ व्रम जीवोंको खोले, खोलाये, खोलतोंको अच्छा समझे

भाषार्थ—कोई साधु, गृहस्थोंके भकानमें ठेरे हुये हैं वह गृहस्थ जैन मुनियोंके आचारसे अज्ञात हैं गृहस्थ कहें कि—हे मुनि ! मे अमुक कायके लीये जाता हु मेरे गौ, भैंसादि पशु,

(१६) ,, गृहस्थोंके पलग पथरणे आदिपर सुये—शयन करे ३

(१७) , गृहस्थाको औषधि उतावे, गृहस्थाके लीये औषधि करे

(१८) साधु भिक्षाको आनेके पेंस्तर साधु निमित्त हाथ, चादुडी कडछी, भाजन कचे पाणीसे धोकर साधुको अक्षनादि क्यार आहार देवे ऐसे साधु ग्रहन करे

(१९) = अन्यतीर्थी तथा गृहस्थ, भिक्षा देते समय हाथ, चादुडी, भाजनादि कचे पाणीसे धा देवे और साधु उसे ग्रहन करे ३

भाषार्थ—जीवोंकी विराधना होती है

(२०) , वायक बनाये हुये पुतलोंमें अम्ब, गजादि पक्ष पक्षके बनाये चीटेके बनाये लेप, लीटादिसे दातके बनाये खीलुने, मणि चंद्रकातादिसे बनाये हुये भूषणादि, पत्थरके बनाये मकानादि, ग्रथित पुष्पमालादि वेष्टित—धीठसे धीठ मिलाके पुष्पदंडादि सुषणादि धातु भरतसे बनाये पदार्थ, बहुत पदार्थ एकत्र कर विचित्र विचित्र पदार्थ, पत्र छेदन कर अनेक मोदक (मादक) पदार्थ, जिसको देखनेसे मोहनीय कर्मकी उदीरणा हो ऐसा पदार्थ देखनेकी अभिलाषा करे, करावे, करतेकी अच्छा समझे

भाषार्थ—ऐसे पदार्थको देखनेकी अभिलाषा करनेसे म्या ध्याय ध्यानमें व्याघात, प्रमादकी वृद्धि मोहनीय कर्मकी उदीरणा, यावत् सयमसे पतित होता है

(२१) ,, काकड़ीयां उत्पन्न होनेके स्थान, ' काच्छा ' येसे आदि फलोत्पत्तिके स्थान, उत्पलादि कमलस्थान, पर्यंतका

निर्जरणा, उज्जरणा, घापी, पुष्करिणी दीर्घ घापी, गुजागर घापी, सर (तलाय), सरपत्ति-आदि स्थानांको नेत्रोंसे देखनेकी अभिलाषा करे ३ भावना पूर्वयत्

(२२) ॥ पर्यंतके नदीके पासके काच्छा केलीघर, गुप्तघर, घन एक जातिका वृक्ष महान् अटवीका घन, पर्यंत-विषम पर्यंत

(२३) ग्राम, नगर खेड, कपिठ मडप, प्रोणीमुख, पट्टण, मोना—चादोका आगर, तापसोंका आग्रम, घोपी निधान कर-नेका स्थान, याघत् सन्निवेश

(२४) ग्रामादिमें किसी प्रकारका महोत्सव हो रहा हो

(२५) ग्रामादिका घात (घात) हो रहा हो

(२६) ग्रामादिमें सुन्दर मार्ग बन रहा है, उसे देखनेको जानेका मन भी करे ३

(२७) ग्रामादिमें द्वाह (अग्नि) लगी हो उसे देखनेकी अभिलाषा मनसे भी करे ३

(२८) जहा अश्वनीडा, गजक्रीडा यायत् सुयगक्रीडा होती हो

(२९) जहापर चौरादिकी घात होती हो

(३०) अश्वका युद्ध, गजयुद्ध, यायत् शूकर युद्ध होता हो

(३१) जहापर बहुत गौ, अश्व, गजादि रहेते हो, ऐसी गौशालादि

(३२) जहापर राज्याभिषेकका स्थान है, महोत्सव होता हो, कथा समाप्तका महोत्सव होता हो, मानानुमान-तोला, माप, लय, चोड जाननेका स्थान, वार्जीत्र, नाटक, नृत्य, बीना बजानेका स्थान, ताल, ढोल, मृदंग आदि गाना बजाना होता हो

(३३) चौर, धील, पारधीयोका उपद्रवस्थान, वैर, खार
क्रोधादिसे हुआ उपद्रव युद्ध, महासंग्राम, क्लेशादिवे स्थानोंको

(३४) नाना प्रकारके महोत्सवकी अन्दर बहुतसी स्त्रियों,
पुरुषों युवक वृद्ध, मध्यम वयवाले, अनेक प्रकारके पक्ष, भूषण,
चदनादिसे शरीर अलंकृत बनाके केह नृत्य, केह गान केह
हास्य त्रिनोद, रसत, खेल, तमासा करते हुये विविध प्रकारका
अशनादि भोगयते हुयेको देखने जानेका मनसे अभिलाष करे,
कराये करतेको अच्छा समझे

(३५) ,, हम लोक सत्रधी रुप (मनुष्य-स्त्रीका), परलोक
सत्रधी रुप, (देव-देवी, पशु आदि) देखे हुये न देखे हुये, सुने
हुये, न सुने हुये, ऐसे रूपांकी अन्दर रजित मूर्च्छित, गूढ़ हो
देखनेकी मनसे भी अभिलाषा करे ३

भाषार्थ—उपर गिते सब किसमके रुप, मोहनीय कर्मकी
उदीरणा करानेवाले हैं जैसे एक दफे देखनेसे हृन्ममय यह ही
हृदयमें निवास कर ज्ञान ध्यानमें विग्र करनेवाले उन जाते हैं
घास्ते मुनियोंका किसी प्रकारका पदार्थ देखनेकी अभिलाषा
तक भी नहीं करना चाहिये

(३६) ,, प्रथम पोरसीमें अशनादि चार प्रकारका आ
हार लावे उसे चरम पोरसी तक रखे ३

(३७) ,, जिन ग्राम नगरमें आहार प्रदन कीया है, उ
सको दो षोडशसे अधिक ले जावे ३

(३८) ,, किसी शरीरके कारणसे गोबर लाना पड़ता हो
पहले दिन लावे दुम्मे दिन शरीरपर बाधे

(३९) दिनको लाने रात्रिमें याने

(४०) रात्रिमें लाके दिनको बाधे

(४१) रात्रिमें लाके रात्रिमें बाधे

भाषार्थ—ज्यादा धसत रखनेसे जीवाधिकी उत्पत्ति होती है, तथा कल्पदोष भी लगता है इसी माफिक च्यार भागा लेप-णकी जातिकाभी समझना भाषार्थ—गड गुबड होनेपर पोटीस धिगेरे तथा शरीरके लेपन करनेमें आवे, तो उपर मुजय च्यार भागाका दोषको छोडके निरवध औपध करना साधुका कल्प है ८२

(४६) ,, अपनी उपधि (वस्त्र, पात्र, पुस्तकादि) अन्य तीर्थीयोंको तथा गृहस्थोंको देवे, वह अपने शिर उठावे स्थाना तर पहुचा देवे

(४७) उमे उपधि उठानेके बदलेमें उसको अशनादि च्यार प्रकारका आहार देवे, दीलारे, देतेको अच्छा समझे

भाषार्थ—अपनी उपधि गृहस्थ तथा अन्यतीर्थीयोंको देनेमें समयका बाधात गृहस्थोंकी सुशामत करना पड़े, उपकरण फूटे तूटे, नचिस पाणी आदिका नघटा होनेसे जीर्णोंकी हिंसा होये, उमरे पगार तथा आहारपाणीका प्रदोषस्त करना पड़े इत्यादि दोष है

(४८) ,, गंगा नदी, यमुना नदी, सीता नदी, पेरावती नदी और महि नदी—यह पाचों महानदीयों, जिनका पाणी कितना है (समुद्र समान) ऐसी महा नदीयां एक मासमें दोय बार, तीन बार उतरे, उतरावे, अन्य उतरते हुयेको अच्छा समझे

भाषार्थ—बारबार उतरनेसे जीर्णोंकी धिराधना होये तथा किसी समय अनजानते ही विशेष पाणीका पूर आजानेसे आपघात, समयघात हो, इत्यादि दोष लगते हैं

उपर लेखे ४८ धारोंसे एक भी बोल सेवन करनेवाले साधु, साध्वीयाँको लघु चानुर्मानिक प्रायश्चित्त होता है प्रायश्चित्त विधि देखो धीसथा उद्देशाँ

इति श्री निशियसूत्रके चारहवा उद्देशाका सचित्त सार

(१३) श्री निशियसूत्र—तेरहवा उद्देशा

(१) ' जो कोई साधु साध्वी ' अन्तरा रहित सचित्त पृथ्वी-
वायपर बैठ-सुने खड़ा रहै, स्वाध्याय ध्यान करे ३

(२) सचित्त पृथ्वीकी रज उड़ी हुई पर बैठ, यावत्
स्वाध्याय करे ३

(३) यद्य सचित्त पाणीसे स्निग्ध पृथ्वीपर बैठ, यावत्
स्वाध्याय करे ३

(४) यद्य सचित्त-तत्काल खानसे निकली हुई शिला तथा
शिलाका तोड़े हुये छोटे छोटे पत्थरपर बैठे, तथा कीचड़से, कच
रासे जीवादिकी उत्पत्ति हुई हो, काष्ठके पाट-पाटलादिमें जीवो
त्पत्ति हुई हो, इडा प्राणी (वेद्द्रियादि) बीज, हरिकाय ओसका
पाणी, मक्खड़ीजाला, निलण-फूलण, पाणी, कच्ची मट्टी, माकड़,
जीवोंका झाला सयुक्त हो, उसपर बैठे, उठे, सुवे, यावत् स्वा
ध्याय करे कराये, करतेको अच्छा समझे

(५) ,, घरकी देहलीपर, घरके उबरे (दरवाजाका मध्य
भाग) उखलपर, स्नान करनेके पाटेपर, बैठे, सुवे, शय्या करे,
यावत् बहा बैठके स्वाध्याय-ध्यान करे ३

(६) यद्य ताटी, भोंत, शिला, छाटे छोटे पत्थरे विंगरेसे
आच्छादित मूमिपर शयन करे, यावत् स्वाध्याय ध्यान करे ३

(७) ,, एक तर्फ आदि भीतपर दोनों तक आदि आदि भीतपर पाट-पाटला रगड़े बैठे, मोटी इटोंकी राशिपर तथा और भी जिम जगा चलाचल (अस्थिर) हो, उस स्थानपर बैठ याघत् स्थाभ्याय करे ३

भाषार्थ—जीयोंकी विराधना होये, आप स्वयं गिर पड़े, आत्मघात, सयमघात होये, उपकरणादि पड़ोसे तूटे फूटे—इत्यादि दोष लगता है

(८) ,, अन्यतीर्थी तथा गृहस्थ लागाको ससारिक शिल्प-कला, चित्रकला, यस्त्रकला, गणितकलादि (१२) आघाकरणरूप जोड़कला, श्लोकबंधकी कला, घोषह, श्रेयज, कावरी रमनेकी कला, ज्योतिषकला, वैद्यककला, सलाह देना, गृहस्थके कार्यमें पटु बनाना, क्लेश, युद्ध मग्रामादिकी कला उतलाना, शिक्षाना, स्वयं करे, अन्यसे कराये, करतेको अच्छा समझे

भाषार्थ—मुनि आप ससारमें अनेक कलायोंका अभ्यास कीया हुआ है, फिर दीक्षा लेनेपर गृहस्थोंपर स्नेह करते हुये, उक्त कलायां गृहस्थोंको शीखाये, अर्थात् उस कलायोंसे गृहस्थ-लोग सायब बेपार कर अनेक क्लेशके हेतु उत्पन्न करेंगे वास्ते मुनिकी तो गृहस्थोंको एक धर्मकग, कि जिमसे इसलोक पर-लोकमें सुखपूर्वक आत्मकल्याण करे, ऐमा ही बतलानी चाहिये

(९) ,, अन्यतीर्थीयोंको तथा गृहस्थोंको कठिन शब्द बोले ३

(१०) पथ स्नेह रहित कर्कश वचन बोले ३

(११) कठोर और कर्कश वचन बोले ३

(१२) ,, आशातना करे

(१३) कौतुक कर्म (दोरा राखडो)

(१४) भूतिकर्म, रक्षादिकी पोटली कर देना

(१५) " प्रश्न, हानि लाभका प्रश्न पूछे

(१६) अन्यतीर्थी गृहस्थ पूछनेपर ऐसे प्रश्नोंका उत्तर,
अर्थात् हानि लाभ बताये

(१७) पक्ष प्रश्न विद्या मंत्र, भूत, प्रेतादि निकालनेका
प्रश्न पूछे

(१८) उक्त प्रश्न पूछनेपर आप बतलाये तथा शीखाये

(१९) भूतकाल संयन्धी

(२०) भविष्यकाल संयन्धी

(२१) वसन्तमानकाल संयन्धी निमित्त भाषण करे ३

(२२) लक्षण—हस्तरेखा पगरेखा, तिल, मन्ना लक्षण
आदिका शुभाशुभ बताये

(२३) स्वप्नके फल प्रकृषे

(२४) अष्टापद—एक जातकी रमत, जैसे शेरजी आदिका
खेलना शीखाये

(२५) रोहणी देवीको साधन करनेकी विद्या शिखाये

(२६) हरिणगमैषी देवको साधन करनेका मंत्र शिखाये

(२७) अनेक प्रकारकी रससिद्धि जड़ीबुट्टी, रन्मायन बताये

(२८) लेपजाति—जिससे वशीकरण होता हो

(२९) दिग्मूढ हुआ अन्धतीर्थी गृहस्थोंको रहस्ता बतलाये,
अर्थात् कलेशादि कर कितनेक आदमी आगे चले गये हो, और

कितनेक आदमी उन्हींको मारनेके लीये जा रहे हो, उस समय मुनिको रहस्ता पूछे, तथा

(३०) कोइ शिकारी दिग्मूढ हुवे रहस्ता पूछे, उसे मुनि रहस्ता बताये, तथा दुसरे भी अन्यतीर्थी गृहस्थोंको रहस्ता बताये कारण—यह आगे जाता हुआ दिग्मूढतासे रहस्ता भूल जाये, दूसरे रहस्ते चला जाये, कष्ट पढ़नेपर मुनिपर कोप करे इत्यादि

(३१) धातु निधान, अन्यतीर्थी—गृहस्थाको उतलाये आप गृहस्थपणमें निधान जमीनमें रखा, वह दीक्षा लेते समय किसीको पहना भूल गया था, फिर दीक्षा लेनेके बाद स्मृति होनेपर अपने रागीयोंको उतलाये तथा दीक्षा लेनेके बादमें कहापर ही निधान देखा हुआ बताये कारण—यह निधान अनयका ही हेतु होता है, मोक्षमार्गमें विघ्नभूत है

भावार्थ—यह सब सूत्र अन्यतीर्थीयों, गृहस्थोंके लीये कहा है मुनि, गृहस्थाधाम अनयका हेतु, सत्सारभ्रमणका कारण जान त्याग कीया था, फिर उक्त क्रिया गृहस्थलोगोंको उतलानेसे अपना नियमका भंग, गृहस्थ परिचय, ध्यानमें व्याधात इत्यादि अनेक नुकसान होता है वास्ते इस अलाय उलायसे अलग ही रहना अच्छा है

(३२) ,, अपना शरीर (मुह) पात्रमें देखे

(३३) काचमें देखे

(३४) तलघारमें देखे

(३५) भणिमें देखे

(३६) पाणीमें देखे

(३७) तैलमें देखे

(३८) ढीलाशुल्में देखे

(३९) चरबीमें देखे

भावार्थ—उक्त पदार्थोंमें मुनि अपना शरीर मुह) की देखे, देखाये देखताकी अच्छा समझे देखनेसे शुश्रूषा बढ़ती है सुन्दरता देख हृष, मलिनता देख शोकसे रागद्वेष उत्पन्न होते हैं मुनि इस शरीरको नाशयत्न ही समझे इसकी सहायतासे भोक्ष माग साधनेका ही ध्यान रखे

(४०) , शरीरका आरोग्यताके लीये यमन (उलटी) करे ३

(४१) पच विरेचन (जुलाब) लेये ३

(४२) यमन, विरेचन दानों करे ३

(४३) आरोग्य शरीर होनेपर भी दवाइयों ले कर शरीरका बल-वीर्यकी वृद्धि करे ३

भावार्थ—शरीर है, तो मयमका साधन है उसका निर्वाह ले लीये तथा बेमारी आनेपर विशेष कारण हो तो उक्त काय कर सके परन्तु आरोग्य शरीर होनेपर भी प्रमादकी वृद्धि कर अपने ज्ञान—ध्यानमें व्याघात करे, करावे करतेकी अच्छा समझे वह मुनि प्रायश्चित्तका भागी होता है

(४४) ,, पामत्या साधु, साध्वीयों (शिथिलाचारों) मंयमकी एक पास रखके केवल रजोहरण मुख्यव्रिषा धारण कर रखी हो ऐसे साधुओंको वन्दन-नमस्कार करे ३

(४५) एक पासत्यायाकी प्रशंसा-तारीफ आधा करे ३

(४६) एक उत्तम-मूलगुण पचमहाव्रत, उत्तरगुण पिंडवि शुद्धि आदिके दोषित साधुओंको वन्दन करे ३

(४७) एउ प्रशमा करे ३ एउ दो सूत्र कुशीलीया-
प्रष्टाचारी साधुयोका

(४८-४९) एउ दो सूत्र नित्य एक घरका पिंड (आधार)
तथा शक्तियान होनेपर भी एक स्थान निवास करनेवालोंका

(५०-५१) एउ दो सूत्र संसत्ता-पास्तत्या मिलनेसे आप
पास्तत्य हो, संयोगी मिलनेसे आप सयोगी हो, ऐसे साधुयोका

(५२-५३) एउ दो सूत्र कथगा-स्थाध्याय ध्यान छोडके
दिनभर स्त्रीकथा, राजकथा, देशकथा तथा भक्तकथा करनेवालोंका

(५४-५५) एउ दो सूत्र पास्तणिया-ग्राम, नगर, बाग, बगीचे,
घर, बाजार इत्यादि पदार्थ देगते फिरे, ऐसे साधुयोका

(५६-५७) एउ दो सूत्र ममत्त्रोपाधि धारण करनेवालोंका
जैसे यह मेरा-यह मेरा करे ऐसे साधुयोका

(५८-५९) एउ दो सूत्र सप्रसांगिक जहा जावे वहा मम-
त्वभावसे प्रसारा करते रहे, गृहस्थोने कार्यमें अनुमति देता रहे

(६०-६१) ऐसे साधुयोको धंदन करे, प्रशस्ता करे ३

भावार्थ—यह सब कार्य जिनासा विरुद्ध है मोक्षमार्गमें
विघ्न करनेवाला है, असमयवर्धन है इस अकृत्य कार्योको धारण
करनेवाले बालजीव, मुनिवेषको लज्जित करनेवाला है ऐसेका
वन्दन-नमस्कार तथा तारीफ करनेसे शिथिलाचारकी पुष्टि
होती है उम प्रष्टाचारी साधुयोको एक विसमकी सहायता
मिलती है वास्तव में उक्त साधुयोको वन्दन नमस्कार करनेवाला
भी प्रायश्चित्तका भागी होता है

(६२) , , गृहस्थोको एक आधार—गृहस्थोके बाल्यवर्षोको खेलावे
आधार प्रदन करे ३

(६३) ,, दूसीकम आहार—उधर इधरका समाचार कहे के आहार ग्रहण करे ३

(६४) ,, निमित्त आहार—ज्योतिष प्रकाश करके आहार ३

(६५) ,, अपने जाति, कुल्का अभिमान करके आहार ३

(६६) ,, रक्ष भिखारीकी माफिक दीनता करके ,, ३

(६७) ,, तैलक-औषधिप्रमुख यतलायके आहार लेवे ३

(६८-७१) ,, क्रोध, मान, माया, लोभ करके आहार लेवे ३

(७२) ,, पहला पीछे दातारका गुण कीर्त्तन कर आहार लेवे ३

(७३) ,, विद्यादेवी साधन करनेकी विद्या बताके ,, ३

(७४) ,, मन्त्रदेव साधन करनेका प्रयोग बताके ,, ३

(७५) ,, न्यून—अनेक औषधि सामेल कर रसायन बताके ,, ३

(७६) योग—यज्ञीकरणादि प्रयोग बतायके , ३

भावार्थ—उक्त १५ प्रकारके कार्य कर, गृहस्थोंकी खुशामत कर आहार लेना नि स्पृही मुनिको नहीं कल्पे

उपर लिखे, ७६ बोलोंसे एक भी बोल सेवन करनेवालाको लघु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है प्रायश्चित्त विधि देखो धी मया उद्देशमे

इति श्री निशियसूत्र—वेदवा उद्देशाका संचित्त सार.



(१४) श्री निशित्सूत्र—चौदवां उद्देशा ,

(१) ' जो कोई साधु साध्वी ' को गृहस्थलोगपात्र-मूल्य-लाके देवे , तथा अन्य किसीसे मूल्य दिलावे देतेको सहायता कर मूल्यका पात्र साधु साध्वीयोको देवे, उस अकल्पनीय पात्रको साधु साध्वी ग्रहण करे, शिष्यादिसे ग्रहण करावे, अन्य कोई ग्रहण करते हुये साधुको अच्छा समझे

(२) एष साधु साध्वीके निमित्त पात्र उधारा लाके देवे, उसे ग्रहण करे ३

(३) एष सल्टा पलटा करदेवे ३

(४) एष निधलसे सगल ज़रूरजस्तीसे दिलावे, दो भागीदारोंका पात्रमें एकका दिल नहीं होनेपर भी दुसरा देवे तथा सामने लायके देवे, उसे ग्रहण करे ३

(५) ,, किसी देशमें पात्रोंकी प्राप्ति नहीं होती हो, और दुसरे देशोंमें निग्यय पात्र मिलते हो, वहाँमें साधु, गणि (आचार्य) का उद्देश, अर्थात् आचार्यके नामसे, अपने प्रमाणसे अधिक पात्र ग्रहण कीया हो, वह पात्र आचार्यको आमंत्रण न करे, आचार्यको पूछे पिगर अपनी इच्छानुसार दुसरे साधुको देवे, दिलावे ३

भाषार्थ—सत्य भाषाका भग, अविश्वासका कारण, सायमे फलेशका कारण भी होता है

(६) ,, लघु शिष्य शिष्यणी, स्वयिर-वयोवृद्ध साधु साध्वी जिसका दाख, पग, फान, नाक दोठ आदि अवयव उद्दा हुआ नहीं है, बेमार नहीं है, अर्थात् वह शक्तिमान् है, उसको परिमाणसे अधिक पात्र देवे, दिलावे, देतोंको अच्छा समझे

(७) कथंचित् हाथ, पग, कान, नाक, होठ छेदाया हुआ है किसी प्रकारकी अति बेमारी हो उसको परिमाणसे अधिक पात्र नहीं देवे नहीं दिलावे, नहीं देते हुयेको अच्छा समझे

भाषार्थ—आरोग्य अवस्थामें अधिक पात्र देनेसे लोलूपता बढ़े, उपाधि बढ़े, 'उपाधिकी पोठ समाधिसे न्यारी,' अगर रोगादि कारण हो, तो उसे अधिक पात्र देनाही चाहिये बेमार रोगवालाको सहायता देना, मुनियोंका अवश्य कर्त्तव्य है

(८) ,, अयोग्य अस्थिर, रखने योग्य न हो, स्थल स-मय चलने काशील न हो, जिसे यतना पूवक गौचरी नहीं लासके, ऐसा पात्रको धारण करे ३

(९) अच्छा मजबूत हो, स्थिर हो, गौचरी लाने योग्य हो, मुनिको धारण करने योग्य हो ऐसा पात्रको धारण न करे ३

भाषार्थ—अयोग्य अस्थिर पात्र सुन्दर है तथा मजबूत पात्र देखनेमें अच्छा नहीं दीसता है परन्तु मुनियोंको अच्छा खरा बका रयाल नहीं रखना चाहिये

(१०) , अच्छा वर्णवाला सुन्दर पात्र मिलने पर वैराग्यका ढोंग देखानेके लीये उसे विचर्ण करे ३

(११) विचर्णपात्र मिलनेपर मोहनीय प्रकृतिको खुश करनेको सुवर्णवाला करे ३

भाषार्थ—जैसा मिले, वैसेसे ही गुजरान कर लेना चाहिये

(१२) ,, नया पात्रा ग्रहण करके तैल, घृत, मधुखन, चरबी कर मसले लेप करे ३

(१३) ,, नया पात्रा ग्रहण कर उसके श्लोघ्रय द्रव्य, कोकण

द्रव्य और भी सुगन्धी सुवर्णवाला द्रव्य एकवार बारवार लगाये, लेप करे ३

(१४) , नया पात्राको ग्रहन कर शीतल पाणी, गरम पाणीमे एकवार बारवार धोवे ३

एष तीन सूत्र, बहुत दिन पात्रा चलेगा, उस लीये तैलादि लोह्रयादि पाणीसे धोयेका समझना १५-१६-१७

(१८) , सुगन्धि पात्र प्राप्त कर, उसे दुर्गन्धि करे ३

(१९) दुर्गन्धि पात्र प्राप्त कर उसे सुगन्धि करे ३

(२०) सुगन्धि पात्र ग्रहन कर तैल, घृत, मक्खन, चरनीसे लेप करे

(२१) एष लोह्रयादि द्रव्यसे

(२२) शीतल पाणी उष्ण पाणीसे धोवे

एष तीन सूत्र दुर्गन्धि पात्र सयधि समझना २३-२४-२५

एष छे सूत्र सुगन्धि, दुर्गन्धि पात्र बहुत दिन चलनेके लीये भी समझना २६-२७-२८-२९-३०-३१ भायना पूर्ययत्

(३२) ,, पात्रोको आतापमे रखना हो, तो अतरा रहित पृथ्वीपर आतापमें रखे ३

(३३) पृथ्वी (रज) पर आतापमें रखे ३

(३४) ससक्त पृथ्वीपर आतापमें रखे

(३५) जहापर कीडी, मकोडा, मट्टी, पाणी, नीलण, फूठण, जीर्वाया झाला हो, पेसी पृथ्वीपर पात्रा आतापमें रखे ३ कारण-पेसे स्थानोमें जीर्वाकी विराधना होती है

(३६) , घरके उधरापर दरवाजेके मध्यभागपर, उमल, सुटा आदिपर पात्राको आताप लगानेको रखे ३

(३७) कुट्टीपर, भीतिपर, शिलापर खुले अथवा शर्म पात्रोंको आताप लगानेको रखे ३

(३८) आदि भीतके खंदपर, छत्रीके शिखरपर, भाचापर, मालापर, प्रामादपर, हथेलीपर और भी किसी प्रकारकी उंची जगाहपर, विषमस्थानपर, मुश्कीलसे रखा जाये, मुश्कीलसे उठाया जाये, लेते रगते पड़जानेका संभव हो, पसे स्थानोंमें पात्रोंको आताप लगानेको रखे ३

भाषा—पात्रा रखते उतारते आप स्वयं पीसलके पड़े, तो आरम्भघात, समयघात तथा पात्रा तुटे फूटे तो आरम्भ घटे, उसको अच्छे करनेमें यत्नत खरच करना पड़े इत्यादि दोषका साध है

(३९) ,, गृहस्थके वह पात्रामें पृथ्वीकाय (लूणादि) भरा हुआ है उसको निकालके मुनिको पात्र देवे, उस पात्रको मुनि ग्रहण करे ३

(४०) पय अर्क्याय

(४१) पय तेउकाय (राम उपर अगर रख ताप करते हैं)

(४२) यमस्पति

(४३) पय कन्द, मूल पत्र, पुष्प फल, बीज निकाल पात्रा देवे, उस पात्रको मुनि ग्रहण करे ३ जीव विराधता दाती है

(४४) ,, पात्रामें औषधि (गहु, जय जवारादि) पड़ी हो, उसे निकालके पात्र देवे, वह पात्र मुनि ग्रहण करे ३

(४५) पय त्रस पाणी जीव निकाले ३

(४६) , पात्रको अनेक प्रकारकी माधुके निमित्त कोरणी कर देवे उसे मुनि ग्रहण करे ३

(४७) ,, भुनिके गृहस्थावासक न्यातीले अन्यातीले, आपक

अथाथक मुनिके लीये ग्राममें तथा ग्रामांतरमें मुनिके नामसे पात्राकी याचना करे वह पात्र मुनि ग्रहण करे, ३

(४८) एत परिषदकी अन्दर उठके कहेकि—हे भद्रधो-
ताथी ! मुनिको पात्राकी जरूरत है, किसीके हो तो देना इत्यादि
याचना कीया हुआ पात्र ग्रहण करे ३

(४९) मुनि पात्र याचना करनेपर गृहस्थ वहे—हे
मुनि ! आप भ्रतुवद् (मास कल्प) यहापर ठेरे हम आपको
पात्रा देखेंगे ऐसा कहने पर वहापर मुनि मासकल्प रहे ३

(५०) एत चातुर्मासका कहनेपर, मुनि पात्रोंके निमित्त
चातुर्मास करे ३

भाषार्थ—गृहस्थलोग मूल्य भगावे, तथा काष्ठादि कटवाके
नया पात्र बनावे इत्यादि

इस उद्देशार्थ पात्रोंका विषय है मुनिको समययात्रा निर्याह
करनेके लीये दृढ (मज्जबूत) महननवाले मुनियोंको एक पात्र र-
खनेका हुकम है मध्यम सहननवाले तीन^१ पात्र रखके मोक्षमा-
गैका माधन कर शके परन्तु उनके रगनेमें सुघर्ण, सुगन्धि कर-
नेमें अपना अमूल्य समय खर्च करना न चाहिये लाभालाभका
कारण तथा स्निग्ध रहनेके भयसे रगना पड़ता हो, वह भी
यतनासे करसके है

इपर लिखे ५० बोलोंसे एक भी बोल सेवन करनेवाले मु-
नियोंको लघु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है प्रायश्चित्त विधि
देखो धीमया उद्देशार्थ

इति श्री निशियसूत्र-चौदवा उद्देशाका सक्षिप्त सार.

(१५) श्री निजिथसूत्र—पदरहवा उद्देशा

(१) ' जो कोइ साधु भान्धी ' अन्य साधु साध्वी प्रत्ये निष्ठुर वचन बोले

(२) एव स्नेह रहित कर्कश वचन बोले

(३) कठोर, कर्कश वचन बोले, बोलाने, बोलनेको अरुछा समझे

(४) एव आशातना करे ३

भाषाथ—ऐसा बोलनेसे धर्म स्नेहका नाश और कलेशकी वृद्धि होती है मुनियोंका वचन प्रियकारी, मधुर होना चाहिये.

(५) , सचित्त आम्रफल भक्षण करे ३

(६) एव सचित्त आम्रफलको चूसे ३

(७) एव आम्रफलकी गुटली, आम्रफलके डुकटे (कातळी) आम्रफलकी एक शाखा (डाली) छतु आदिका चूसे ३

(८) आम्रफलकी ऐसी मध्यभागको चूसे ३

(९) सचित्त आम्रप्रतियद्द अर्थात् आम्रफलकी फाकों काटी हुई, परन्तु अभीतक सचित्त प्रतियद्द है उसको खावे ३

(१०) एव उक्त जीव सहितका चूसे ३

(११) सचित्त जीव प्रतियद्द आम्रफल डाला, शाखादि भक्षण करे ३

(१२) एव उसे चूसे ३

भाषाथ—जीव सहित आम्रफलादि भक्षण करनेसे जीव विराधना होती है हृदय निदय हो जाता है अपने ग्रहन किया हुआ नियमका भंग होते है

(१३) , अपने पाच, अयतीर्थी, अन्यतीर्थी गृहस्थोंसे

मसलाये, दयाये, चपाये ३ पय यायत तीमरा उद्देशां ५६
 सूत्र म्यअपेक्षाका कहा है, इसी माफिक यहा माधु, अय तीर्या,
 अन्यतीर्या गृहम्यांसे कराये करानेका आदेश देये, कराते हुयेको
 अच्छा समझे यायत् ग्रामानुग्राम विहार करते समय अपने
 शिरपर छत्र धारण करवाये ३

भाषाथ—अन्यतीर्या लोगोंसे कुछ भी काम नहीं कराना
 चाहिये यह कार्य पश्चात् शीतल पाणी विंगरेका आरम्भ करे,
 कराये इत्यादि ६८

(६९) ,, आराम, मुमाफिग्याना, उद्यान स्त्रीपुरुषको
 आराम करनेका स्थान गृहम्यांका गृह तथा तापमोंके आश्रमकी
 अन्दर लघुनीत (पैमाय) बढीनीत (टटी) परिते

(७०) ,, पय उद्यानके जगला (गृह) उद्यानकी शाला,
 निज्जान, गृहशाला इस स्थानोंमे टटी पैसाय परटे ३

(७१) कौट, कौटके फिरणी गृहस्ता, दरयाजा, नुरजोंपर
 टटी पैमाय परटे ३

(७२) नदी, तलाव, कुयाका पाणी आनेका मार्ग, पाणी
 नीक करनेका पन्थ, पाणीका तीर पाणीका स्थान (आगार) पर
 टटी, पैमाय परटे, परठाये ३

(७३) शुन्य गृह, शुन्य शाला, भग्नगृह, भग्नशाला, कुडगर,
 भूमिमे गृह भूमिकी शाला, कोठारका गृह शाला इस स्थानोंमे
 टटी, पैसाय परटे ३

(७४) तृण गृह, तृण शाला, नुस गृह-शाला, मूसाका
 गृह-शाला इस स्थानोंमे टटी, पैमाय करे ३, परटे ३

(७५) ,, रय रखनेका गृह-शाला, युगपान-सेविका, मैना
 रखनेका गृह-शाला मे टटी, पैमाय परटे ३

(७६) करियाणागृह—शाला, दुकान, धातुके घरतन रखनेका गृह—शाला

(७७) घृषम बाधनेका गृह, शाला तथा बहुतसे लोक निवास करते हो पैसा गृह, शालाम टटी, पैसापर परटे, अर्थात् उपर लिखे स्थानोमें टटी पैसा करे, कराये, करतेको अच्छा समझे

भाषार्थ—गृहस्थोंको दुगुछा धमकी होकर यायत् बुद्धिमान बोधीपणा उपार्जन करता है मुनियोंको टटी, पैसा करनेको जंगलमें खुब दूर जाना चाहिये जहापर कोई गृहस्थ लोगोंका गमनागमन न हो, इसीसे शरीर भी निरोगी रहता है

(७८) , अपने लाइ हुई भिक्षासे अशनादि चार आहार, अन्यतीर्थी और गृहस्थाको देये दिलाये, देतेको अच्छा समझे

(७९) घष घष, पात्र, कंवल, रजोहरण देये ३ भावनापूययत्

(८०) , पासत्ये साधुओंको अशनादि चार आहार

(८१) घष, पात्र, कंवल रजोहरण देये ३

(८२-८३) पासत्यासे अशनादि चार आहार और घष, पात्रा, कंवल, रजोहरण ग्रहण करे ३

घष उसन्नाका चार सूत्र ८४ ८५-८६-८७

घष कुशीलीयोंका चार सूत्र ८८-८९-९०-९१

घष नितीयोंका चार सूत्र ९२-९३-९४-९५

घष संसत्तोका चार सूत्र ९६ ९७-९८-९९

घष कयगोंका चार सूत्र १००-१०१-१०२-१०३

घष ममत्ववालोंका चार सूत्र १०४-१०५-१०६-१०७

एष पास्तनियोंका च्यार सूत्र १०८-१०९-११०-१११ भाषना
पूर्वधत्त समझना

उक्त शिथिलाचागीयोसे परिचय करनेमे देवादेव अपनी
प्रवृत्ति शिथिल होगी लोकशका, शामनहीलना, पास्तनियोंका
पोषण इत्यादि दोषोंका नभय है

(११०) ,, जानकार गृहस्थ साधुघोषे पूर्य सज्जनादि,
यक्षकी आमंत्रणा करे, उक्त समय मुनि उक्त यक्षकी जाच पूछ,
गवेषणा न करे ३

(११३) जो यक्ष, गृहस्थ लोक नित्य पहेरते हो, स्नान,
मञ्जनके समय पहेरते हो, रात्रि समय स्त्री परिचय समय पहेरते
हो तथा उत्सव समय, राजद्वार जाते समय (गृहमूल्य) पहेरने
हो, ऐसे यक्ष ग्रहन करे

भाषार्थ—सज्जनादि पूर्व स्नेह कारण यह मूल्य दोषित यक्ष
देता हो, तो मुनिको पंस्तर जाच पूछ करना चाहिये तथा नि-
त्यादि यक्ष लेनेसे, यह यक्ष अशुचि तथा विषय वर्धक होता है

(११४) , साधु, साध्वी अपने शरीरकी विमूषा कर-
नेके लीये अपने पात्रोंको एकबार ममले, दाये, चपे, चारचार म-
मले, दाये, चपे, पत्र विमूषा निमित्त उक्त काय अन्य साधुघोषे
करायें, अन्य साधु उक्त कार्य करतेको अच्छा समझे, तागीफ
करे, सहायता करे, कराय, करतेको अच्छा समझे एष यावत्
तीसरे उद्देशमे ५६ सूत्रा कहा है, यह विमूषा निमित्त यावत्
प्रामानुग्राम विहार करते अपने शिरछत्र धराये ३ एष १६९

(१७०) ,, अपने शरीरकी विमूषा निमित्त यक्ष पात्र
कयल, रजोहरण और भी किसी प्रकारका उपकरण धारण करे,
धारण कराये, करतेको अच्छा समझे

(७६) करियाणागृह—शाला, दुकान धातुके बरतन रखनेका गृह—शाला

(७७) घृषभ बाधनेका गृह, शाला तथा बहुतसे लोक निवास करते हो ऐसा गृह, शालामें टटो, पैसाव परठे, अर्थात् उपर लिखे स्थानोंमें टटो पैसाव करे, कराये, धरतेको अच्छा समझे

भावार्थ—गृहस्थोंको बुगछा धर्मकी दीलना, यावत् बुलभ बोधीपणा उपार्जन करता है मुनियोंको टटो पैसाव करनेको जंगलमें खुब दूर जाना चाहिये जहापर कोई गृहस्थ लोगोंका गमनागमन न हो, इसीमें शरीर भी निरोगी रहता है

(७८) , अपने लाइ हुइ भिक्षासे अशनादि च्यार आहार, अथतोर्यी और गृहस्थाको देये, दिलावे, देतेको अच्छा समझे

(७९) पय वस्त्र, पात्र, कंबल, रजोहरण देवे ३ भावनापूर्वकत्-

(८०) ,, पास्तथे साधुओंको अशनादि च्यार आहार

(८१) वस्त्र, पात्र, कंबल, रजोहरण देवे ३

(८२-८३) पास्तथासे अशनादि च्यार आहार और वस्त्र, पात्रा, कंबल, रजोहरण ग्रहण करे ३

पय उत्तमोंका च्यार सूत्र ८४ ८५-८६-८७

पय कुशीलीयोंका च्यार सूत्र ८८-८९-९०-९१

पय नितीयाँका च्यार सूत्र ९२-९३-९४-९५

पय संसत्ताँका च्यार सूत्र ९६ ९७-९८-९९

पय कथगोंका च्यार सूत्र १००-१०१-१०२-१०३

पय ममत्ववालाँका च्यार सूत्र १०४-१०५-१०६-१०७

एष पास्तणियोंका च्यार सूत्र १०८-१०९-११०-१११ भायना
पूर्ययत् समध्वना

उक्त शिथिलाचारीयोंसे परिचय करनेसे देग्गादेग्ग अपनी
प्रवृत्ति शिथिल होगी लोकशक्ता, शामनहोल्ना, पास्त्यायोका
पोषण इत्यादि दोषोंका ममय है

(११०) , जानकार गृहस्थ साधुओंके पूर्व सज्जनादि,
बख्खी आमंत्रणा करे, उक्त समय मुनि उक्त बख्खी जाच पूछ,
गयेपणा न करे ३

(११३) जो बख्ख, गृहस्थ लोक नित्य पहेरते हो, स्नान,
मज्जनये समय पहेरते हो, रात्रि समय स्त्री परिचय समय पहेरते
हो तथा उत्तमय समय, राजद्वार जाते समय (बहुमूल्य) पहेरने
हो, ऐसे बख्ख ग्रहन करे

भायार्थ—मज्जनादि पूथ स्नेह कारण बहु मूल्य दोषित बख्ख
देता हो, तो मुनिको पैम्नर जाच पूछ करना चाहिये तथा नि-
त्यादि बख्ख लैनेसे, यह बख्ख अशुचि तथा विषय वर्धक होता है

(११४) , साधु साध्वी अपने शरीरकी विमूषा कर-
नेके लीये अपने पायाको एकथार मसले, दाये, चपे, धारयार म-
सले दाये, चपे, एष विमूषा निमित्त उक्त कार्य अन्य साधुओंसे
करायें, अन्य साधु उक्त कार्य करतेको अच्छा समझे, तारीफ
करे, महायता करे, करायें, करतेको अच्छा समझे एष यायत्
तीसरे उद्देशामे ५६ सूत्रा कहा है, यह विमूषा निमित्त यायन
प्रामानुषाम विहार करते अपने शिरछत्र धरायें ३ एष १६९

(१७०) ॥ अपने शरीरकी विमूषा निमित्त बख्ख, पाय,
चंयल, रजोहरण और भी विभी प्रकारका उपरक्षण धारण करे,
धारण करायें, करतेको अच्छा समझे

(१७१) पथ बछादि धोये, साफ करे, उज्जड़ करे घटा मटा उस्तरी दे गढीबन्ध साफ करे, कराव, करतेको अच्छा समझे

(१७२) पथ बछादिको सुगन्धि पदार्थ लगाये रूप देखर सुगन्धि बनाये ३

भावार्थ—विभूषा कर्मबन्धका हेतु है विषय उत्पन्न कर नेका मूल कारण है सयमसे भ्रष्ट करनेमें अग्रसर है इत्यादि दोषोंका संभव है

उपर लिखे १७२ बोलामे एक भी बोल सेवन करनेवाले मुनियोंका लघु चानुर्मानिक प्रायश्चित्त होता है प्रायश्चित्त विधि देखो बीमया उद्देशासे

इति श्री निशियसूत्र—पदरवा उद्देशाका सचिप्त सार

—६(०)३—

(१६) श्री निशियसूत्र—सोलवा उद्देशा

(१) जो कोई साधु साध्वी ' गृहस्थ शय्या—जहापर दपती ग्रीडाकर्म करते हो, ऐसे स्थानमें प्रवेश करे कराये, करतेको अच्छा समझे

भावार्थ—यहां जानेसे अनेक विषय चिन्ताकी लेहरी उत्पन्न होती है पृथक् कीये हुये त्रिलास स्मृतिमें आते है इत्यादि दोषका संभव है

(२) ' गृहस्थाय कचापाणी पडा हो, ऐसे स्थानमें प्रवेश करे ३

(३) पत्र अग्निवे स्थानमें प्रवेश करे

भाषार्थ—जहाँ जैसा पदार्थ, वहाँ ऐसी भावना रहेती है
चास्ते पसे स्थानोंमें नही ठेरे अगर गौचरी आदिसे जाना हो
तो कार्य होनेसे शीघ्रतासे छोट जावे

(८) ,, इष्टु (सेलडीके साठा) को चूने या पत्त पदरहवे
उद्देशमें आम्रफलके आठ सूत्र कहा है, इसी माफिक यहा भी
समझना भावना पूर्वकत् ११

(१२) ,, अट्टी, अरण्य, विषमस्थान जानेवालोंका तथा अट्ट
धीमें प्रवेश करते हुवेका अशनादि च्यार प्रकारका आहार लेवे ३

भाषार्थ—कोई काष्ठवृत्ति करनेवाला अपना निर्वाह हो,
इतना आहार लाया है, उसे दीनतासे मुनि याचनेपर अगर
आहार मुनिको दे देवेगा, तो फिर उसे अपने लीये दुसरा
आरम्भ करना होगा, फटादि सचित्त भक्षण करना पड़ेगा या बड़े
कष्टसे अट्टी उद्ध्वन करेगा इत्यादि दोषोंका सम्भव है

(१३) ,, उत्तम गुणोंके धारक, पचमहाव्रत पालक, जितें-
द्रिय गीताथ, जैन प्रभावक क्षान्द्यादि गुण सयुक्त मुनियोंको
पास्तन्धे, भ्रष्टाचारी आदि कहे, निंदा करे ३

(१४) शिथिलाचारी पास्तन्यायोंको उत्तम साधु कहे ३

(१५) गीतार्थ सवेगी, महापुरुषोंसे विभूषित गच्छको
पास्त्योंका गच्छ कहे ३

(१६) पास्त्योंके गच्छको गीतार्थोंका गच्छ कहै ३

भाषार्थ—द्वेषके वश हो अच्छाको बुरा, गमके वश हो
बुराको अच्छा कहे यह दृष्टि विपर्यास है इससे मिथ्यात्वकी
पुष्टि शिथिलाचारीयांकी पुष्टि, उत्तम गीतार्थोंको अपमान, शा-
सनकी दीलना—इत्यादि अनेक दोषोंका सम्भव होता है

(१७) , कोई साधु एक गच्छसे क्लेश कर बहासे बिगार खमतसामना कर, निकल दुसरे गच्छमें आवे, दुसरे गच्छवाले उस क्लेशी साधुको अपनेपास अपने गच्छमें रखे उसे अशनादि च्यार आहार देवे, दिलावे, देतेको अच्छा समझे

भाषार्थ—क्लेशवृत्तिवाले साधुकोके लीये कुछ भी रोकावट न होगा तो एक गच्छमें क्लेशकर तीसरे गच्छमें आवेगा, एक गच्छका क्लेशी साधुको दुसरे गच्छवाले रखलेंगे तो उस गच्छका साधुको भी दुसरे गच्छवाले रखलेंगे इससे क्लेशकी उत्तरोत्तर वृद्धि होगी, शासनकी होलना आत्मकल्याणका नाश, क्षात्यादि गुणोंका उच्छेद आदि अनेक हानि होगी

(१८) एक क्लेशी साधुकोका आहार ग्रहण करे

(१९-२०) ब्रह्मादि देवे लेवे

(२१ २२) शिक्षा देवे, लेवे

(२३ २४) मूत्र मिद्धातकी वाचना देव, लेवे

भाषार्थ—ऐसे क्लेशी साधुकोका परिचयतक करनेसे, चेपी रोग लगता है वास्ते दूरही रहना चाहिये एक साधुने दूर रहना, तो दूसरों भी क्षोभ रहेंगा

(२५) , साधुकोके विहार करने योग्य जनपद देश मोक्षद होते हुवे भी बहुत दिन उलंघने योग्य अरण्यको उल्लंघनार्थ देश (लाट देशादि) में विहार करे ३

भाषार्थ—अपना शारीरिक सामर्थ्य देखा बिगार करनेसे रहस्तेमें आदाकर्मी आदि दोष तथा मयमसे पतित होनेका संभव है

(२६) जिस रहस्तेमें चौर, धाढायती, अनार्य धूर्तादि हो, ऐसे रहस्ते जाये ३

भाषार्थ—बख, पोत्र, छीन लेवे, मार पीट करे द्वेष बढे, यावत् पतित करे अगर स्वयं शक्तिमान्, विद्यादि चमत्कार, स्थिर सहननवाला, उपकार लाभालाभका कारण जानता हो, यह जा भी सके हैं

(२७) ,, दुगुच्छणिक कुल

(१) स्वल्प काल सुधा सुतकवाला घर

(२) दीर्घ काल शुद्रादि इन्होंके घरसे अशनादि ख्यार प्रकारका आहार ग्रहण करे ३

(२८) पक्ष बन्ध, पात्र, कम्बल, रजोहरण ग्रहण करे ३

(२९) पक्ष शय्या (मकान) सन्तारक ग्रहण करे ३

भाषार्थ—उत्तम जातिके मनुष्य जिस कुलसे परेज रखते हो, जिसके हाथका पाणी तक भी नहीं पीते हो, ऐसे कुलका आहार पाणी लेना, साधुक वास्ते मना है

(३०) ,, दुगुच्छणिक कुलमें जाके स्वाध्याय करे ३

(३१) पक्ष शिष्यकी वाचना देवे

(३२) सदुपदेश देवे

(३३) स्वाध्याय करनेकी आज्ञा देवे

(३४) दुगुच्छणिक कुल (घर) में सूत्रकी वाचना लेवे

(३५) स्वाध्याय (अर्थ) लेवे

(३६) स्वाध्यायकी आवृत्ति करे

भाषार्थ—चाढालादि तथा सुधासुतकवालोंके घरमें सदैव अस्वाध्यायही रहेती है वहापर सूत्र सिद्धांतका पठन पाठन करना मना है तथा दुगुच्छ अथात् लोकव्यवहारमें निन्दनीय कार्य करनेवाला, जिसकी लोक दुगुच्छा करते हैं, पास न बैठे, न बै-

ठाये पेमा पामत्या, हीणाचारी, आचार दशनम ग्रष्ट तथा अ-
प्रतीतिथालाको ज्ञान ध्यान देना तथा उत्तसे ग्रहन करना मना
है यहा प्रथम लोक व्यवहार शुद्ध रखना बतलाया है साथमें
योगायोग, और लाभालाभ, द्रव्य, क्षेत्रका भी विचार करनेका है

(३७) ,, अशनादि च्यार आहार लाके पृथ्वी उपर रखे ३

(३८) एव सस्तारक पर रखे ३

(३९) अधर खुटोपर रखे, छीकापर रखे, छातपर रखे ३

भाषार्थ—ऐसे स्थानपर रखनेसे पीपीलिका आदि जीवोंकी
विराधना होय वीहोयों आवे, काग, कृता अपहरण करे, स्नि-
ग्धता चीकट लगनेसे जीवोत्पत्ति होवे—इत्यादि दोषका भय है

(४०) ,, अमनादि च्यार आहार, अचतीर्थी तथा
गृहस्थोंके साथमें बैठके भोगवे ३

(४१) चोतरफ अच तीर्थी गृहस्थ, चक्रकी मायिक और
आप स्वय उत्तसे मध्य भागमे बैठके आहार करे ३

भाषार्थ—साधुको गुप्तपणे आहार करना चाहिये, जीनसे
कोइकि अभिलाषही नहावे

(४२) ,, वाचार्यापाध्यायत्रीके शय्या, सस्तारकके पा-
धोंसे सघट्टा कर ङ्गिर समायों जावे ३

(४३) ,, शास्त्र परिमाणसे तथा आचार्यापाध्यायकी
आज्ञामे अधिक उपकरण रखे ३

(४४) ,, आन्तरा रहित पृथ्वीकायपर टटी पैसाय परठे

(४५) जहापर पृथ्वीरज हो वहापर

(४६) पाणीसे स्निग्ध जगाहपर

(४७) सचित्त शिला, छोटे छोटे पत्थरेपर, तथा त्रस जीय, स्थायर जीय, नीलण, फूलण, कची पृथ्वी, झालादिपर टटी, पैसाय परठे, परठावे

(४८) घरका उबरा स्थूभ, उखले, ओटले

(४९) बन्धा, भीत, शैल, लेलू, उर्ध्वस्यानादि

(५०) इटो, स्तंभ, काष्ठवे ढगपर, गोत्रपर

(५१) खाड, खाइ, स्युभ, माचा, माला, प्रासाद हथेली आदि जो उर्ध्व हो, उसपर जाके टटी, पैसाय परठे, परिठावे, परिठावतेको अच्छा समझे भावना पूर्वक जीवोत्पत्ति लोका पवाद तथा शासनहीलना इत्यादि दोषोंका समर्थ है

उपर लिखे ५१ बोलोंसे एक भी बोलको सेवन करनेवाले मुनियोंको लघु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है प्रायश्चित्त विधि देखो बीसवा उद्देशमें

इति श्री निशिथसूत्रके सोलवा उद्देशाका सचित्त सार.

(१७) श्री निशिथसूत्र-सत्तरवा उद्देशा

(१) ' जो कोई माधु साधवी ' कुतूहल निमित्त त्रस प्राणी-योंको-जीवोंको तृणपाश (बन्धन) मुजकी रसी, धेतकी रमी, सूतकी रसी, चमकी रसीसे बाधे, बधावे, बाधतेको अच्छा जाने

(२) पद्य उत्त बधनसे बन्धे हुवेको छोडे ३ भावना पूर्वक यमी कुतूहल करनेसे परजीवोंको तकलीफ अपने प्रमाद ज्ञान, ध्यानमें विघ्न होता है

(३) ,, कुतूहल निमित्त तृणमात्र, पुष्पमाला, पत्रमाला, फलमाला, हरिकायमाला, धीजमाला करे ३

(४) धारे, धरावे, धरतेको अच्छा समझे

(५) भागवे

(६) पेहरे

(७) कुतूहल निमित्त लोहा, तावा, तरवा, सीसा, चादी, सुवर्णके खीलुने बिज्र करे ३

(८) धारण करे ३

(९) उपभोगमें लेवे ३

(१०) पर्ये द्वार (अठारसरी) अद्वार (नौसरी) तीनसरी सुवर्ण तारसे द्वार करे ३

(११) धारण करे ३

(१२) भोगवे ३

(१३) चमके आभरण यावत् विचित्र प्रकारके आभरण करे ३

(१४) धारण करे ३

(१५) उपभोगमें लेवे ३

भाषार्थ—कुतूहल निमित्त कोई भी कार्य करना कर्मबन्धका हतु है प्रमादकी वृद्धि, ज्ञान, ध्यान, स्वाध्यायमें व्याघात होता है

(१६) ,, एक साधु दुसरा साधुका पाव अन्यतीर्थी तथा गृहस्थोंसे चपावे, दवावे, यावत् तीसरे उद्देशके ५६ धोल यद्वा पर कहना पर एक साधु साध्वीयाँके पाव, अन्यतीर्थी तथा गृहस्थोंसे दवावे, चपावे, मसलावे एव ५६ सूत्र एव एक साध्वी साधुके पाव अन्यतीर्थी गृहस्थोंसे दवावे, चपावे, मसलावे एवं

५६ सूत्र पञ्च माध्वी साध्वीयोंके पाव अन्यतीर्थी गृहस्थोंसे द्वाये, चपाये, ममलावे यात्रत् तीसरे उद्देशा माफिक ५६-५६ चोल कहेना, च्यार अलापने २२४ सूत्र कहना कुल २३९

भाषार्थ—साधु या साध्वी, कोई भी कोशीश कर अन्यतीर्थी तथा उन्होंके गृहस्थोंसे साधु साध्वीयोंका कोई भी कार्य नहीं कराना चाहिये कारण—उन्होंका सर्व योगसाधन है अयत्नसे करनेसे जीवविराधना हो, शासनकी छुता अधिक परिचय, उन्होंके प्रत्ये पीछा भी कार्य करना पड़े इसमें भी राग, द्वेषकी प्रवृत्ति पड़े इत्यादि अनेक दोषोंका ममय है वास्ते साधु-योंको निस्पृहतासे मोक्षमार्गका साधन करना चाहिये

(२४०) ,, अपने सदृश समाचारी, आचार व्यवहार अपने मरीखा है, ऐसा कोई ग्रामान्तरसे साधु आये हो, अपने ठेरे है, उस मकानमें साधु उतरने योग्यस्थान होनेपरभी उस पाहुणे साधुको स्थान न देवे ३

(२४१) पण्य साध्वीयों, ग्रामान्तरसे आइ हुई साध्वीयोंको स्थान न देवे, ३

भाषार्थ—इसमें घन्मलनाकी हानि होती है, लाकाकी धर्मसे श्रद्धा शिथिल पड़ती है, द्वेषभावकी वृद्धि होती है धर्मस्नेहका लोप होता है

(२४२) , उचे स्थानपर पड़ी हुई वस्तु तकटोफसे उतारके देने, ऐसा अशनादि वस्तु साधु लेवे ३

(२४३) भूमिगृह, कोठारादि नीचे स्थानमें पड़ी हुई वस्तु देय उसे मुनि ग्रहण करे ३

(२४४) कोठी कोठारादि अन्य स्थानमें वस्तु रख लेनादि कीया हो, उसको गोलफ वस्तु देवे, उसे मुनि लेवे ३

(३) ,, कुतूहल निमित्त तृणमात्र, पुष्पमाला, पत्रमाला
फलमाला, हरिकायमाला, बीजमाला करे ३

(४) धारे, धरावे, धरतेको अच्छा समझे

(५) भोगये

(६) पेहरे

(७) कुतूहल निमित्त लोहा, तावा, तरवा, सीमा, चाही,
सुवर्णके खीलुने चित्र करे ३

(८) धारण करे ३

(९) उपभोगमें लेवे ३

(१०) पर्य द्वार (अठारनरी, अद्वार (नौसरी) तीनसरी
सुवर्ण नारसे द्वार करे ३

(११) धारण करे ३

(१२) भोगये ३

(१३) चमड़े आभरण यावत् विविध प्रकारके आभरण
करे ३

(१४) धारण करे ३

(१५) उपभोगमें लेवे ३

भाषार्थ—कुतूहल निमित्त कोई भी काय करना कमबन्धका
हेतु है प्रमादकी वृद्धि, ज्ञान, ध्यान, स्वाध्यायमें व्याघात
होता है

(१६) ,, एक साधु दूसरा साधुका पाव अत्यतीर्थी तथा
गृहस्थोंसे चपावे, दवावे, यावत् तीसरे उद्देशके ५६ योल यद्वा
पर कहना एक एक साधु साध्वीयाँके पाव, अन्यतीर्थी तथा
गृहस्थोंसे दवावे, चपावे, मसलावे एक ५६ सूत्र एक एक साध्वी
साधुके पाव अत्यतीर्थी गृहस्थोंसे दवावे, चपावे, मसलावे पर

५६ सूत्र एव साध्वी साध्वीयोक्ते पाव अन्यतीर्थी गृहस्थांसे दयाये, चपाये, मसलाये यावत् तीसरे उद्देशा माफिक ५६-५६ बोल कहेंना, च्यार अलापकये २२४ सूत्र कहना कुल २३९

भाषार्थ—साधु या साध्वी, कोई भी कोशीश कर अन्यतीर्थी तथा उन्होंके गृहस्थांसे साधु साध्वीयोका कोई भी काय नहीं कराना चाहिये कारण—उन्होंका मर्त्य योग सावध है अयतनासे करनेसे जीवपिराधना हो, शान्तकी छुता, अधिक परिचय, उन्होंके प्रत्ये पीछा भी कार्य करना पड़े, इसमें भी राग, द्वेषकी प्रवृत्ति बढ़े इत्यादि अनेक दोषोंका समय है वास्ते साधु-योको निस्पृहतासे मोक्षमार्गका साधन करना चाहिये

(२४०) ,, अपने मद्दश समाचारी, आचार व्यवहार अपने मगीया है, पेमा कोई ग्रामान्तरसे साधु आये हो, अपने ठेरे है, उम मफानमें साधु उतरने योग्यस्थान होनेपरभी उस पाहुणे साधुको स्थान न दें ३

(२४१) एव साध्वीयो, ग्रामान्तरसे आइ हुई साध्वीयोको स्थान न दें, ३

भाषार्थ—इससे घरस्तल्लाकी हानि होती है, लाकाकी धर्मसे बड़ा गिरियल पड़ती है, द्वेषभावकी वृद्धि होती है धर्मस्नेह का लोप होता है

(२४२) ,, उचे स्थानपर पढी हुई वस्तु तकड़ीकसे उतारये देये, पेमा अशनादि वस्तु साधु लेये ३

(२४३) भूमिगृह, काठारादि तीचे स्थानमें पढी हुई वस्तु देय उसे मुनि ग्रहण करे ३

(२४४) छोटी बोटारादि अन्य स्थानमें वस्तु रख लेनादि कीया हो उमको योग्य वस्तु देये उसे मुनि लेये ३

भाषार्थ—करी वस्तु लेते, रगते पीमक पट्टजानेसे आत्म-
घात, मयमघात जीवादिका उपमर्दन होता है पीछा लेप कर
नेमे आरम्भ होता है

(२४५) पृथ्वीकायपर रखा हुआ अशनाहि च्यार आ-
हार उठाये मुनिको देवे यह आहार मुनिग्रहण करे, ३

(२४६) एव अप्कायपर

(२४७) एव तेउकायपर

(२४८) यनस्पतिकाय पर रखा हुआ आहार देवे, उसे
मुनि ग्रहण करे ३

भाषार्थ—ऐसा आहार लेनेसे जीवाकी विराधना होती है-
आज्ञाका भंग व्यवहार अशुद्ध है

(२४९) , अति उष्ण गरमागरम आहार पाणी देते स
मय गुहस्थ हाथसे मुहसे सुपडेसे ताडक पखेसे, पत्रसे शा-
खाके शाखाके खड्गमे हवा लगाव जिससे धायुकायकी विरा
धना होती है ऐसा आहार मुनि ग्रहण करे ६

(२५०) अति उष्ण—गरमागरम आहार पाणी मुनि
ग्रहण करे

भाषार्थ—उसमे अग्निकायक जीव प्रदेश होते हैं जीमसे
जीव हिंसा का पाप लगता है

(२५१) उसामणका पाणी यरतन धोया हुआ पाणी
चायल धोया हुआ पाणी बार धोया हुआ पाणी तिल० तुस०
जय० भूसा० लोहादि गरम कर बुजाया हुआ पाणी फाजीका
पाणी आम्र धोया हुआ पाणी शुद्धोदक जो उक्त पदार्थों धोयाको
अयादा यरत नही हुआ है जिसका रस नही बदला है जिस

जीयोंकी अतीतक शस्त्र नहीं प्रणम्या है, जीय प्रदेशोंकी सत्ता नष्ट नहीं हुई है अतान् यह पाणी अचित्त नहीं हुआ है, ऐसा पाणी साधु ग्रहन करे ३ *

(२५२) ,, कोड साधु अपने शरीरको देख, दुनियाको बहेकि—मेरेमें आचार्यका सव लक्षण है अर्थात् मुझे आचार्यपद दो—ऐसा बहे ३

भाषार्थ—आत्मश्लाघा करनेसे अपनी कीमत् कराना है

(२५३) ,, गगदृष्टि कर गावे, घाजिन्न बजाये, नटोंकी माफिक नाचे कूदे, अश्वकी माफिक हणहणाट करे हस्तीकी माफिक गुलगुलाट करे सिंहकी माफिक सिंहनाद करे, कराये ३

भाषार्थ—मुनियोंको ऐसा उन्माद कार्य न करना, किन्तु शातधृतिसे मोक्षमार्गका आराधन करना चाहिये

(२५४) ,, भेरीका शब्द, पट्टका शब्द, मुद्दका शब्द, मादलका शब्द, नदीघोषका शब्द झलरीका शब्द, बल्लरीका शब्द, डमरु, मट्टया, शंख, पेटा, गोत्ररी, और भी श्रोत्रद्रियको आकर्षित करनेकी अभिलाषा मात्र भी करे ३

(२५५) ,, घीणाका शब्द, त्रिपंघीका शब्द, कूणाका, पापघी घीणा, तारकी घीणा, तुंघीकी घीणा, सतारका शब्द, ट-काका शब्द, और भी घीणा-तार आदिका शब्द श्रोत्रद्रियको उन्मत्त बनानेवाले शब्द सुननेकी अभिगमा मात्र करे ३

(२५६) ,, तात्र शब्द, फासीतालके शब्द, हस्ततालादि,

* एक जानिक घोरण में दुसरी जानीका घोरण मात्र देनाम अगर विरुद्ध हानों प्रसनीता कि उन्मत्ती हो जानी है टुटक भाद्योंको इगपर ब्याल करना चाहिये

और भी किसी प्रकारके ताल को यावत् ध्वज करनेकी अभिलाषा मात्र भी करे

(२५७) „ शख शब्द घास वेणु, खरमुखी आदिके शब्द सुननेकी अभिलाषा करे ३

(२५८) „ केरा गाहुर्वाका खाइ यावत् तलाव आदिका घहापर औरसे निकलाता हुवा शब्द

(२५९) ‘ काच्छा गहन, अटवी, पर्वतादि विषय स्थानसे अनेक प्रकारके होते हुये शब्द ”

(२६०) “ ग्राम, नगर, यावत् सन्निवेशके कोलाहल शब्द ”

(२६१) ग्राममें अग्नि यावत् सन्निवेशमें अग्नि आदिसे म हान् शब्द

(२६२) ग्रामका उद-नाश, यावत् सन्निवेशका धक्का शब्द

(२६३) अश्व आदिका लीहा स्थानमें होता हुआ शब्द

(२६४) चौरादिकी घातके स्थानमें होता हुआ शब्द

(२६५) अश्व गजादिक युद्धस्थानमें ”

(२६६) राज्याभिषेकके स्थानमें, कथगोके स्थान पटहा दिके स्थान, होते हुये शब्द

(२६७) ‘ बालकोंके विनोद विलासक शब्द ’

उपर लिखे मय स्थानांमें श्रोत्रेन्द्रियसे ध्वज कर, राग द्वेष उत्पन्न करनेवाले शब्द, मुनि सुने, अन्यको सुनाये, अन्य कोई सुनताहो उसे अच्छा समझे

भाषार्थ—यसे शब्द ध्वज करनेसे राग द्वेषकी वृद्धि, प्रमा

बैठे ३ एवं हो मनुष्योंके विभागमें है, पक्कादिल न होनेवाले नौकापर चढ़े ३ साधुके निमित्त सामने लाइ हुई नौकापर चढ़े

(७) जलमें रही हुई नौकाको बेंचके साधुके लीये स्थल लावे, उस नौकापर चढ़े ३

(८) वय स्थलमें रही नौकाको जलकी अंदर साधुके निमित्त लावे, उस नौकापर चढ़े ३

(९) जिस नौकाकी अन्दर पाणी भरागया हो, उस पाणीको साधु उलचे (बाहार फेंके) ३

(१०) कादयमें खुची हुई नौकाको बदमसे निकाले ३

(११) किसी स्थानपर पड़ी हुई नौकाको अपने लीये मगवाये उसपर चढ़े ३

(१२) उधोगामिनी नौका पाणाके सामने जानेवाली, अधोगामिनी नौका, पाणीके पूरमें जानेवाली नौकापर चढ़े ३

(१३) नौकाकी एक योजनकी गतिके टाइममें आधा योजन जानेवाली नौकापर बैठे

(१४) रसी पकड़ नौकाको आप स्थय चलाय

(१५) न चलती हुई नौकाको दडाकर, घेतकर, रसीकर आप स्थय चलाय ३

(१६) नौकामें आते हुवे पाणीको पात्रासे कमडलसे उलचे बाहार फेंके ३

(१७) नौकाने छिद्रसे आते हुवे पाणीको हाथ पग और कोई भी प्रकारका उपकरण करके रोके ३

भाषाय—प्रथम तो जहातक रहस्ता हो, वहातक नौकामें

साधुयाँको बैठनाही नहीं चाहिये अगर बैठना हो ता जल्दीसे पार हो, पेसी नौकामे बैठे नदीका दुसरा तट दृष्टीमाघर होना हो, पेसी नौकामे बैठे बैठती उग्रत मुनि सागारी अनशन कर नौकामे बैठे जैसे नौकामे बैठनेके पहला भी गृहस्थोंकी दाक्षिण्य-तासे गृहस्थोंका काम न करे, इसी माफिक ही नौकामे बैठनेके बाद भी गृहस्थका कार्य न करे जैसी मुनिकी दृष्टि नौकायामी जीनोंपर है, वैसीही पाणीके जीवोंपर है मुनि सबजीवोंका हित चाहते हैं वहापर गृहस्थका कार्य, साधु दाक्षिण्यतासे न करे यह अपेक्षा है धागण मुनि उभ समय अनशन किया हुआ अपना जीनाभी नहीं इच्छता है

(१८) , साधु नौकामे, दातार नौकामे

(१९) साधु नौकामे दातार पाणीमें

(२०) साधु पाणीमें, दातार नौकामे

(२१) साधु पाणीमें, दातार पाणीमें

(२२) साधु तथा दातार दोनों नौकामे

(२३) साधु नौकामे दातार कदममें

(२४) साधु कदममें, दातार नौकामे

(२५) साधु तथा दातार दोनों कदममें नौका और जलके साथ चतुर्भंगी—२६ २७-२८

(२९) नौका और स्थलके साथ चतुर्भंगी समस्तता ३० ३१ ३२ ३३ जल और कदमसे चतुर्भंगी ३४ ३५ ३६ ३७ जल और स्थलके साथ चतुर्भंगी ३८ ३९ ४० ४१ कदम और स्थलके साथ चतुर्भंगी ४२ ४३ ४४ ४५ उक्त १८ वा सूत्रसे ४५ वा सूत्र तक दातार आधार पाणी देवे तो साधुओंको लेना नहीं कल्पै

यद्यपि स्थलमें साधु और स्थलमें दातार हाती कटपै, परंतु नी-
कामें बैठते समय साधु स्थलमें आहार पाणी चुकावे वस्त्र, पा-
त्रकी एकही घेट (गाठ) कर लेते हैं वास्ते उस समय आहार
पाणी लेना नहीं कल्पै भायना पूर्ववत् यहा पन्थीलोग कीतनीक
कुयुक्तियों लगाते हैं यह भव मिथ्या है साधु परम दयावन्त
होते हैं मत्र जीवोंपर अनुकंपा है

(४६) , मूल्य लाया हुआ वस्त्र ग्रहण करे ३

(४७) पक्ष उधारा लाया हुआ वस्त्र

(४८) मलट पलट कीया हुआ वस्त्र

(४९) निर्बलसे सयल जबरदस्तीसे दिलाव, दो विभागमें
एकका दिल न होनेपर भी दुसरा देवे और मामने लावे देवे
पेना वस्त्र ग्रहण करे ३

भाषाथ—मूल्यादिका वस्त्र लेना मुनिको नहीं कल्पै

(५०) आचार्यादिने लीये अधिक वस्त्र ग्रहण कीया हो
वह आचार्यको बिगर आमत्रण करके अपने मनमाने साधुको
देवे ३

(५१) ,, लघु साधु साध्वी, स्वविर (बूझ) साधु साध्वी
जिसका हाथ, पग, कान नाक आदि शरीरका अवयव छेदा हुआ
नहीं, घेमार भी नहीं है अर्थात् सामर्थ्य होनेपर भी उसको प्र-
माणसे अधिक वस्त्र देवे, दिलाव, देतेको अच्छा समझे

(५२) पक्ष जिसका हाथ, पाव नाक कानादि छेदा हुआ
हो, उसे अधिक वस्त्र न देवे, न दिलावे, न देतेको अच्छा समझे

१ तीन वस्त्रका परिमाण है एक वस्त्र २४ हाथका होता है साध्याव न्यार

(४) वस्त्रका परिमाण है

भायार्ज—वैमारमुनिवे रसादिमे वस्त्र अशुचि हो, यास्ते अधिक देना उतलाया है

(५३) वस्त्र ज्ञाण है, धारण करने योग्य नहीं है, स्व रूपकाल चलने योग्य है, ऐसा वस्त्र ग्रहण करे ३

(५४) नया वस्त्र, धारण करने योग्य, दीर्घकाल चलने योग्य है, ऐसा वस्त्र न धारे ३ भावना पात्र उद्देशाकी भाषिक

(५५) = वर्णवन्त वस्त्र ग्रहण कर विवर्ण करे ३

(५६) विवर्णका सुवर्ण करे ३

(५७) नया वस्त्र ग्रहण कर उसे तैल, घृत, मक्खन, घरघी लगाये ३

(५८) मक्ख लोष्ठय कोकण अवीरादि द्रव्य लगाये ३

(५९) शीतल पाणी, गरम पाणीसे एकवार, बारबार धोये ३

(६० ६१-६२) नया वस्त्र ग्रहण कर उहुत दिन चलेगा इस अभिप्रायसे तैलादि, लोष्ठयादि, द्रव्य लगाये, शीतल पाणी गरम पाणीसे धोये ३

(६३) नया सुगन्धि वस्त्र प्राप्त कर उसे दुर्गन्धी करे

(६४) दुर्गन्धि वस्त्र प्राप्त कर उमे सुगन्धि करे

(६५) सुगन्धि वस्त्र ग्रहण कर उसे तैलादि

(६६) लाष्ठयादि लगाये

(६७) शीतल पाणी, गरम पाणीसे धोये एवं तीन सूत्र दुर्गन्धि वस्त्र प्राप्त कर

(६८-६९-७०) एवं छे सूत्र बहुत दिनापेक्षा भी कहना

(७६) सूत्र हुये

(७७) ,, अन्तरारहित पृथ्वी (सचित्त) ऐसे स्थानमें
 वस्त्रको आताप देवे ३

(७८) एव सचित्त रजपर वस्त्रको आताप देवे

(७९) वस्त्रे पाणीसे स्निग्ध पृथ्वीपर वस्त्रको आताप देवे ३

(८०) सचित्त शिला धाकरा, कान्ठहोये जीर्णकाशाला,
 काष्ठमृद्दोत जीव, शृङ्गा बीजादि जीव क्यात भूमिपर वस्त्रको
 आताप देवे ३

(८१) घरके उबरेपर, देहलीपर

(८२) भितपर छोट नदोयापर यावत् आच्छादित भूमि
 पर वस्त्रको आताप देवे ३

(८३) माघा, माला प्रामाद, शिखर, हवली, निसरणी
 आदि उर्ध्वस्थानपर वस्त्रको आताप देव

भाषा—ऐसे स्थानोंपर वस्त्रको आताप देनेमें देते लेते
 स्वयं आप गिर पड़े, वस्त्र वायुके मारा गिर पड़े, उसे आत्मघात,
 संयमघात, परजीवघात—इत्यादि दोषोंका संभव है

(८४) ,, वस्त्रकीअन्दर पूर्ण पृथ्वीकाय रन्धी हुई,
 उसको निकाल कर देवे ३ उस वस्त्रको ग्रहन करे ३

(८५) एव अप्पाय कच्चा जलसे भीजा हुआ तथा पाणीके
 सघटेसे

(८६) एव तेउकाय सघटेसे

(८७) एव वनस्पतिकायसे

(८८) एव औषधि, धान्य, बीजादि

(८९) एव प्रस प्राणी—जीर्णसहित तथा गमनागमन कर
 वायके

भाषार्थ—साधुको कपड़े निमित्त पृथग् यदि किसी जीवाको तकलीफ होती हो, ऐसा वस्त्र लेना साधुवोंको नहीं कल्पे

(९०) , साधुवोंने पूर्व गृहस्थायामसग्रीही न्यातीले हो, अन्यन्यातीले हो, आनक हो, अथावक हो, वह लोग ग्राममें तथा ग्रामान्तरमें साधुके नामसे याचना—जैसे महाराजकी वस्त्र चाहिये, महाराजका वस्त्र चाहिये, आपके वहा हो तो दीजीये—इत्यादि याचना कर देरे, ऐसा वस्त्र साधु लेवे ३

भाषार्थ—साधुको वस्त्रकी जरूरत हो तो आप स्वयं याचना करे, परन्तु गृहस्थाका याचा हुआ नहीं लेवे

(९१) , न्यातीलादि परिपदकी अन्दरसे उठके साधुके निमित्त वस्त्रकी याचना करे, वह वस्त्र साधु ग्रहण करे ३

भाषार्थ—किसी कपड़ेंवालाका देनेका भाव नहीं हो, परन्तु एक अच्छा आदमीकी याचनासे उसे शर्मादा होके भी देना पड़ता है वास्ते साधुका स्वयंही याचना करनी चाहिये

(९२) , साधु वस्त्रकी निश्राय श्रुतवद् (मासकल्प) ठेरे ३

(९३) एव वस्त्रके लीये चातुर्मास करे ३

भाषार्थ—मुनि, वस्त्रकी याचना करनेपर गृहस्थ कहे कि—हे मुनि ! तुम अभी यहापर मामकल्प ठेरे, तथा चातुर्मास करे, हम आपको वस्त्र देंगे, और वस्त्र देशान्तरसे भगवा दग, ऐसा वचन सुन, मुनि मामकल्प तथा चातुर्मास ठेरे अगर ठेरना होतो अपने कल्प तथा परउपकारके लीये ठेरना चाहिये परन्तु कपड़ेंकी लुशमदीके मातेत होके नहीं ठेरे, ऐसा निस्पृही धीतरागका धर्म है

उपर लिखे ९३ बोलोंसे कोई साध साधवी एव बोल भी से-
धन करे, करावे करतेको अच्छा समझना, उसको लघु चातुर्मा-
सिक प्रायश्चित्त होगा प्रायश्चित्त विधि देखा बोलया उद्देशार्थ-

इति श्री निशियसूत्र—अठारवा उद्देशाका सविप्त सार



(१६) श्री निशियसूत्र उन्नीसवा उद्देशा

(१) 'जो कोई साधु साधवी' बहुत मूल्य वस्तु धन, पात्र, कम्बल, रजोहरण तथा औषधि आदि, का श्रुतस्य बहुत मूल्यवाला वस्तुका मूल्य स्वयं लावे, अथवा पास मूल्य भगवाय तथा अन्य साधुके निमित्त मूल्य लाते हुयेको अच्छा समझे यह वस्तु बहुत मूल्यवाली मुनि ग्रहण करे, करावे, करतेको अच्छा समझे

भाषार्थ—बहु मूल्यवाली वस्तु ग्रहण करनेसे ममत्वभाव बढ़े चौरादिका भय रहे इत्यादि

(२) एव बहुत मूल्यवाली वस्तु उधारी लाके देव, उसे मुनि ग्रहण करे ३

(३) सलटा पलटावे देव, उसे मुनि ग्रहण करे ३

(४) निगलसे ज़रूरदस्ती सबल दिलावे उसे ग्रहण करे ३

(५) दो भागीदारोंकी वस्तु धक्का दिल् देनका न होने पर भी दुसरा देवे उसे मुनि ग्रहण करे

(६) बहुत मूल्य वस्तु सामने लाके देवे, उसे ग्रहण करे ३
भाषना पूर्ववत्

(७) , अगर कोई बेमार साधुके लीये बहुत मूल्य औष

धिकी स्वाम आवश्यकता होनेपर तीस दात मात्रा) से अधिक ग्रहण करे ३

(८) ॥ यह मुख्य वस्तु कोई विशेष कारनसे (औषधादि) ग्रहण कर ग्रामानुग्राम विहार करे ३

भावार्थ—चौरादिका भय, ममत्वभाव बढे तत्करादि मार पीट करे, गम जानेसे आर्त्तध्यान खडा होता है इत्यादि

(९) ॥ यह मुख्य वस्तुका रूप परायत्तन कर गृहस्थ देवे, जैसे कस्तूरी अत्रादिकी गोलीयों बना दे गाल दे, ऐसेको ग्रहण करे ३

भावार्थ—जहातक बने वहातक मुनियोंको स्थल्प मूल्यका वस्त्र, पात्र, कम्बल रजोहरण, औषधिते काम लेना चाहिये उपलक्षणसे पुस्तक, पाना आदि स्थल्प मूल्यवालेसे ही काम चलाना चाहिये

(१०) ॥ स्वाम, प्रात काल, मध्यान्ह, और आदिरात्रि, यह चारों टाइममें एक मुहूर्त्त (४८ मिनीट) अस्वाध्यायका काल है इस चारों कालमें स्वाध्याय (सूत्रोंका पठन, पाठन) करे कराये, करतेको अच्छा समझे

भावार्थ—इस चारों टाइममें तिर्यग्लोक निवासी देव फिरते हैं देवताओंकी भाषा मागधी है अगर उस भाषामें तुटी हो तो देव कोपायमान हो, कभी नुकसान करे

(११) ॥ दिनकी प्रथम पोरसी, चरम पोरसी, रात्रिकी प्रथम पोरमी, चरम पोरसी, इसमें अस्वाध्यायका काल निकालके शेष चारों पोरमीमें साधु साध्वीयों स्वाध्याय न करे, न कराये, न करतेको अच्छा समझे

(१२) ,, अस्याध्यायके समय किनो विशेषकारणसे तीन पृच्छना (प्रश्न) से अधिक पूछे ३

भाषार्थ—अधिक पूछना हो तो स्वाध्यायके कालमें पूछना चाहिये

(१३) एष दृष्टिवाद अगकी मात पृच्छना (प्रश्न) से अधिक पूछे ३

(१४) ,, चार महान् महात्मवकी अन्दर स्वाध्याय करे ३ यथा—इन्द्र महोत्सव, चैत शुक्ल १५ का, स्कान्ध महोत्सव, आषाढ शुक्ल १५ का यक्ष महोत्सव, भाद्रपद शुक्ल १५ का, भूत महोत्सव कार्तिक शुक्ल १५ का इन्म चार दिनमें मूल सूत्रोंका पठन पाठन करना साधुओंको नहीं कल्पे *

(१५) ,, चार महा प्रतिपदा—वैशाख कृष्ण १, भाषण कृष्ण १ आश्विन कृष्ण १ मागशर कृष्ण १ इन्म चार दिनमें मूल सूत्रोंका पठन पाठन करना नहीं कल्पे

(१६) ,, स्वाध्याय पोरमीमें स्वाध्याय न करे ३

(१७) स्वाध्यायका चार काल है उसमें स्वाध्याय न करे ३

भाषार्थ—स्वाध्याय— सत्य दुःखविमुक्खाण ' मुनिको स्वाध्याय ध्यानम ही मग्न रहना चाहिये चित्तवृत्ति निर्मल रहै प्रमादका नाश कर्मोंका क्षय और सद्गतिकि प्राप्तिका मुख्य कारण स्वाध्यायही है

* श्री स्वानामना सूत्र—चतुर्थ रघान—आश्विन शुक्ल १५ को यथ म ज्ञानव कदा है उय अथवा कार्तिककृष्ण प्रतिपदा मग पडिका होनी है इम वास्तु तालों भागमेंको वनुमान दत्त हुन दानों पूजिमा, दानों प्रतिपदा अस्याध्याय र-
चना चाहिय तन्त्र कबलीगम्य

(१८) ,, जहापर अस्याध्याययोग्य पदार्थ दृष्टी, पैमात्र, हाड, माम, रौद्र, पंचत्रयका क्लेशगदि ३४ अस्याध्यायमे कोइ भी अस्याध्याय हो, यहापर स्वाध्याय करे, कराये, भावना पूर्यत

(१९) ,, अपने अस्याध्याय दृष्टी, पैमात्र रौद्रादि शरीर-अशुचि हो माध्यो श्रुतधर्ममें हो, गड गुम्यद्वे रमी धी-कनी हो-इत्यादि अपने अस्याध्याय होते स्वाध्याय करे, कराये, करतेको अच्छा समझे

(२०) , हठेरे समोसरणकी याचना न दी हो, और उपरके समोसरणकी याचना देवे, अर्थात् जिसको आचारागसूत्र न पढाया हो, उसे मयगढागसूत्रकी याचना देवे ३ मयगढागजी सूत्रकी याचना दी, उसे स्यानागसूत्रकी याचना देवे १ पय याचन प्रमसर सूत्रकी याचना देना कहा है, उसको उत्क्रमश याचना देवे, देनेकी दुमरेको आज्ञा देवे, कन्य कोइ उत्क्रमश आगम याचना देते हुयेको अच्छा समझे यह आचार्योपाध्याय खुद प्रायश्चित्तके भागी होते हैं

भाषार्थ—जैन सिद्धांतको संकन्ना शैली इमी माफिक है कि-यह आगम क्रमश याचनाने ही सम्यक् प्रकारसे ज्ञानकी प्राप्ति होती है

(२१) ,, नौ ब्रह्मचर्यका अध्ययन (आचारागसूत्र प्रथम श्रुतस्कन्ध) की याचना न दे के उपरके सूत्राकी याचना देवे, दिगावे, देतेको अच्छा समझे

भाषार्थ—जीवादि पदार्थ तथा मुनिमार्ग, उच्च कोटिका वेगव्यमे संपूरण भरा हुआ ब्रह्मचर्यका नौ अध्ययन है, यास्ते मोक्षमागमें स्थिर स्वोभ करानेके लिये मुनियोंको प्रथम आचा

रागसूत्र ही पढ़ना चाहिये, अगर पढ़ता न पढ़ावे उन्हाके लीये यह प्रायश्चित्त बतलाया हुआ है

(२२) , 'अप्राप्त' वाचना लेनेको योग्य नहीं हुआ है प्रव्यसे बालभावसे मुक्त न हुआ हो, अर्थात् कामर्मे रोम (घाल) न आया हो भावसे आगम रहस्य समझनेकी योग्यता न हा, धैर्य, गाभीर्य न हो, विचारशक्ति न हो, ऐसे अप्राप्तको आगमाकी वाचना देवे दिलाये, देतेको अच्छा समझे

(२३) ,, 'प्राप्त' को आगमाकी वाचना न देवे, न दिलावे, न देतेको अच्छा समझे प्रव्यसे बालभावसे मुक्त हुआ हो, काम रोम आगये हो, भावसे सूत्रार्थ लेनेकी, ग्रहन करनेकी, तत्त्व विचार करनेकी, रहस्य समझनेकी योग्यता हो धैर्य गाभीर्य, दीपदर्शिता हो, ऐसे प्राप्तको आगमाकी वाचना न देवे ३

भाषा—अयोग्यको आगमज्ञान देना वह बड़ा भारी नुकसानका कारण होता है वास्ते ज्ञानदाता आचार्यापाध्यायजी महाराजकी प्रथमसे पात्र कुपात्रकी परीक्षा करके ही जिनवाणी रूप अमृत देना चाहिये ता के भविष्यमें स्वपरात्माका कल्याण करे

(२४) अति बाल्यावस्थावाला मुनिको आगम वाचना देवे ३

(२५) बाल्यावस्थासे मुक्त हुआको आगम वाचना न देवे ३ भाषना २२-२३ सूत्रसे देखो

(२६) , एक आचार्यके पास विनयधर्मसयुक्त दाय शिष्या पढ़ते हैं उसमें एकको अच्छा चित्त लगाके ज्ञान-ध्यान सिखाये, सूत्रार्थकी वाचना देवे [रागके कारणसे], दुसरेको न शि-

खावे, न सूत्रार्थकी वाचना देवे [छेपके कारणसे] तो यह आचार्य प्रायश्चित्तका भागी होता है भावना पूर्ववत्

(२७) , आचार्यापाध्यायके वाचना दीये बिगर अपनेही मनसे सूत्रार्थ, वाचे, बचावे, वाचतेको अच्छा समझे

भावार्थ—जैन निष्ठात अति गभीर शैलीवाले अनेक रहस्यसे भरे हुए, कितनेक शब्द तो ग्राम गुरु गमताकी अपेक्षा रखनेवाले हैं, वास्ते गुरुगमतासे ही सूत्र वाचनेकी आज्ञा है गुरुगमता बिगर सूत्र वाचनेसे अनेक प्रकारकी शकाभा उत्पन्न होती है यायत् धर्मभद्रासे पतित हो जाते हैं

(२८) , अन्यतीर्थी, और अन्य तीर्थीयाके गृहस्थोंको सूत्रार्थकी वाचना देवे, दिलावे, देतेको अच्छा समझे

भावार्थ—उन्हें लोगोंकी प्रथमसेही मिथ्यात्वकी वासना हृदयमें जमी हुई है उनको सम्यक् ज्ञानही मिथ्या हो परिणमता है कारण—वाचना देनेवाले पर तो उसका विश्वासही नहीं बिनय, भक्तिहीनकी वाचना न देवे कारण नन्दीसूत्रमें कहा है कि सम्यक्सूत्र भी मिथ्यात्वियोंको मिथ्यारूपमें परिणमते हैं

(२९) , अन्यतीर्था अन्यतीर्थीयोंके गृहस्थासे सूत्रार्थकी वाचना ग्रहण करे, करावे, करतेको अच्छा समझे

भावार्थ—अन्यतीर्थी ब्राह्मणादि जैनसिद्धान्तोंके रहस्यका ज्ञानकार न होनेसे वह यथायत् नहीं समझा सके, न यथार्थ अर्थ भी कर सके वास्ते ऐसे अज्ञातोंसे वाचना लेना मना है इतनाही नहीं किन्तु उन्होंनेका परिचय करनाही ब्रीककुल मना है आजकाल कीर्तवीर निर्नायक तरूण साध्वीयों स्वच्छन्दतासे अज्ञ ब्राह्मणों पासे पढ़ति है जोस्का नतीजा प्रत्यक्षमें अनुभव कर रही है

ना करी उसे बहुतवार मासिक कहते हैं अगर मायारहित निष्कपट भावमे आलोचना करी हो, तो उमे मासिक प्रायश्चित देवे

(१२) मायासयुक्त आलोचना करनेसे दोमासिक प्रायश्चित होता है भावना पूर्वकत्

(१३) एव गृह्यसे दोमासिक प्रायश्चित स्थान सेवन करनेसे मायारहितयात्रीको दोमासिक आलोचना

(१४) मायासहितको तीन मासिक आलोचना यावत् बहु तसे पाच मासिक मायारहित आलोचनासे पाच मास, मायासहित आलोचना करनेसे छे मासका प्रायश्चित होता है सूत्र २० हुये भावना प्रथम सूत्रकी मासिक समझना

(२१) ,, मासिक, दो मासिक, तीन मासिक, चार मासिक, पाच मासिक और भी किसी प्रकारके प्रायश्चित स्थानोंको सेवन कर मायारहित आलोचना करनेसे मूल सेवा हो उतनाही प्रायश्चित होता है जैसे एक मासिक यावत् पाच मासिक

(२२) अगर माया-कपटसे सयुक्त आलोचना करे, उसे मूल प्रायश्चितसे एक मास अधिक प्रायश्चित होता है यावत् मायारहित हो, चाहे मायासहित हो, परन्तु छे माससे अधिक प्रायश्चित नहीं है अधिक प्रायश्चित हो तो पहलेकी दीक्षा छेदके नवी दीक्षाका प्रायश्चित होता है एव दो सूत्र बहुवचनापेक्षा भी समझना २३-२४ सूत्र हुये

(२५) ,, चार मासिक साधिक चातुर्मासिक, पंच मासिक, साधिक एव मासिक प्रायश्चित स्थान सेवन कर मायारहित आलोचना करे उसे मूल प्रायश्चित देवे

(२६) मायामयुक्त आलोचना करनेसे पाच मास साधिक

पाच मास, छे मास, उँ मास, इससे उपर मायामहित, चाहे मा-
यारहित हो, प्रायश्चित्त नहीं है भावना पूर्णवत्, एवं दो सूत्र बहु-
वचनापेक्षा २७-२८ सूत्र हुये

(२९) ,, चतुर्मासिक साधिक चतुर्मासिक, पच मासिक,
साधिक पचमासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर आलोचना करे,
मायारहित तथा मायासहित उस साधुको उपरवत् प्रायश्चित्त
देके किसी घेमार तथा वृद्ध मुनियोंकी धैयायध करने निमित्त
स्थापन करे अगर प्रायश्चित्त सेवन कीया, उसे संघ जानता हो
तो संघके सन्मुख प्रायश्चित्त देना चाहिये, जिससे संघको प्रतीत
रहे, साधुओंको क्षाम रहे, दुसरी दफे कोई भी साधु, ऐसा अकृत्य
कार्य न करे, इत्यादि अगर दोष सेवनको कोई भी न जाने, तो
उसे अन्दर ही आलोचना देना उसका दोष जो प्रगट करते जि-
तना प्रायश्चित्त, दोष सेवन करनेवालोंको आता है, उतना ही
गुप्त दोषको प्रगट करनेवालोंको होता है कारण ऐसा करनेसे
शासनहीलना मुनियोंपर अभाव दोष सेवनमें नि शकता आदि
दोषका संभव है आलोचना करनेवालोंका ब्यार भागा —

(१) आचार्यमहाराजका शिष्य, एकसे अधिक दोष सेवन
कर आलोचना करते समय क्रमसर पहले दोषकी पहले आलो-
चना करे

(२) एवं पहले सेवन कीया दोषकी विस्मृति होनेसे पीछे
आलोचना करे

(३) पीछे सेवन कीया दोषकी पहले आलोचना करे

(४) पीछे सेवन कीया दोषकी पीछे आलोचना करे,
आलोचनाके परिणामापेक्षा और भी चौभंगी कहते हैं—

(१) आलोचना करनेके पहला शिष्यका परिणाम था कि

—अपने कल्याणके लीये विशुद्ध भावसे आलोचना करना और आचार्य पास आये विशुद्ध भावसे ही आलोचना करी

२) आलोचना विशुद्ध भावसे करनेका विचार कीयाथा, फिर अधिक प्रायश्चित्त आनेसे, मान, पूजाकी दानिरे रपालसे मायासंयुक्त आलोचना करे

(३) पहले मायासंयुक्त आलोचना करनेका विचार कीया था, परंतु मायाका फल ससारवृद्धिका हेतु जान निष्कपट भावसे आलोचना करे

(४) भयाभिनन्दी पहला विचार भी अशुद्ध और पीछेसे आलोचना भी कपटसंयुक्त करे कारण कर्मोंकी विविध गती है. यह आठ भागा सर्व स्थान समझना भव्यात्मा मुनि, अपने कीये हुये कर्म (पापस्थान)की सम्यक् प्रकारसे समझके निमल चित्तसे आलोचना कर आचार्यादि शास्त्रापेक्षा प्रायश्चित्त देये, उसे अपने आत्माकी शास्त्रसे तपश्चर्या कर प्रायश्चित्तको पूर्ण करे

(३०) यत्र बहुवचनापेक्षा भी समझना

(३१), चतुर्मासिक साधिक चतुर्मासिक, पंच मासिक साधिक पंचमासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर पूर्वोक्त आठ भागोसे आलोचना करे, उस मुनिको यथायत् प्रायश्चित्त तपमें स्थापन करे, उस तपमें वर्तते हुवेको अथ दोष लग जाय, तो उसकी आलोचना दे उसी धर्तु तपमें वृद्धि कर देना अगर तप करते समय वह माधु असमर्थ हो तो अन्य माधु, उ-होके धैर्यायस में सहायता निमित्त रखे, उसे तप पूर्ण कराना आचार्यका कर्तव्य है

(३२) यत्र बहुवचनापेक्षा भी समझना

भावार्थ—चतुर्षु तपमे दोषांकी आलोचना कर तप लेवे ता स्यल्प तपश्चर्या करनेसे प्रायश्चित्त उतर जाये, और पारणा करके तप करनेसे बहुत तप करना पड़े इस हेतुसे साथ हीमें लगेतार तप करवाय देना अच्छा है तपकी विधि अनेक सूत्रमें है

(३३) जो मुनि, मायारहित तथा मायामहित आलोचना करी, उसको आचार्यने छ मासिक तप प्रायश्चित्त दीया है, उन्ही तपका अन्तर वर्तते मुनि, और दोय मासिक प्रायश्चित्त आवे, ऐसा दोषस्यामको सेवन कीया, और उम स्यामकी आलोचना अगर मायारहितकी हो, तो उस तपके साथ बीश रात्रिका तप सामेल कर देना कारण—पहला तप करते उम मुनि का शरीर क्षीण हो गया है अगर मायामयुक्त आलोचना करी हो तो दो मास और बीश रात्रि पहलेके (छेमासीक तप) तपक साथ मिला देना चाहिये परन्तु उम तपसी सायुका पीछेकी आलोचनाका हेतु कारण, अर्थ ठीक सतोषकारी ध्यनोसे समझा देना चाहिये हे मुनि ! जो इस तपके साथ तप करेगे, तो दो मासकी जगाह बीश रात्रिमें प्रायश्चित्त उतर जायेगा, अगर यहा न करेंगे तो तपस्याका पारणा करके भी तरेको छे मासका (मायासयुक्त तो तीन मासका) तप करना होगा इस ध्यत तप अधिक करेगे तो यह हमारा माधु, तुमारी धैर्यायुच्य विगेरहसे सहायता करेगा, इत्यादि यह मायु इस धातको स्वीकार कर उम तपको चाहे आदिमें, चाहे मध्यमें, चाहे अन्तमें कर देये जितना उपादा परिधम हो, उसे मुनि कर्मनिर्जराका हेतु समझे

(३४) पच पच मासिक प्रायश्चित्त विशुद्ध करते बीचमें दो मासिक प्रायश्चित्त स्याम नेयन कर आलोचना करे, उसकी विधि ३३ वां सूत्र माफिक समझना

(३५) एक चातुर्मासिक

(३६) एक तीन मासिक

(३७) एक दोय मासिक

(३८) एक मासिक भावना पूर्ववत् समझना

(३९) जो मुनि छे मासी यावत एक मासी तप करते हुय अन्तरामें दो मासी प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर मायासयुक्त आलोचना करी, जिससे दोय मास, वीश अहोरात्रिका प्रायश्चित्त आचार्यने दीया उस तपका पहिलेके तपके अन्तमें प्रारम्भ कीया है उस तपमें धर्तते हुये मुनिको और भी दोय मासिक प्रायश्चित्त स्थानका दोष लगजाय उसे आचार्य पास आलोचना मायारहित करना चाहिये तब आचार्य उसे वीश दिनका तप उसे पूष तप श्रयाके साथ घटा देवे और उसका कारण हेतु अथ आदि पूर्वांक मासिक समझावे मूठ तपके सिधाय तीन मास दश दिन का तप हुया

(४०) , तीन मास दश रात्रिका तप करते अतरे और भी दो मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर आलोचना करनेसे वीश रात्रिका तप प्रायश्चित्त देनेसे च्यार मासका तप करे भावना पूर्ववत्

(४१) ,, च्यार मासका तप करते अन्तरेमें दोमासी प्रायश्चित्त स्थान सेवन करनेसे पूर्ववत् वीश रात्रिका प्रायश्चित्त पूष तपमें मिला देवे, तब च्यार मास वीश रात्रि होती है

(४२) ,, च्यार मास वीश रात्रिका तप करते अंतरे दो मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन करनेसे और वीश रात्रि तप उसके साथ मिला देनेसे पाच मास दश रात्रि होती है

(४३) ,, पाच मास दश रात्रिका तप करते अतरे दो मासिक प्रायश्चित्त सेवन करनेसे बीश रात्रिका तप उसके साथ मिला देनेसे पूर्ण छे मास होता है, इसके आगे तप प्रायश्चित्त नहीं है फिर छेद या नयी दीक्षा ही दी जाती है भाषना पूर्ववत्

(४४) ,, छे मासी प्रायश्चित्त तप करते हुये मुनि, अन्तरे एक मासिक प्रायश्चित्त स्थानकी सेवे, उसकी आलोचना करने पर आचार्य उसे पूर्वतपके साथ पन्द्र दिनोका तप अधिक करावे

(४५) एव पाच मासिक तप करते

(४६) एव च्यार मासिक तप करते

(४७) तीन मासिक तप करते

(४८) दो मासिक तप करते,

(४९) एव एक मासिक तप करते अन्तरे एक मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कीया हो तो आदा मास सधके साथ मिला देना, भाषना पूर्ववत्

(५०) ,, छे मासिक यावत् एक मासिक तप करते अन्तरे एक मासिक और प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर माया सयुक्त आलोचना करे, उसे साधुको आचार्यने दोड (१॥) मासिक तप दीया है, यह साधु पूर्ण तपको पूर्ण कर, उसके अन्तमें दोड (१॥) मासिक तप कर रहा है उसमे और मासिक प्रायश्चित्त स्थानसे भी माया रहित आलोचना करे उसे पन्द्र दिनकी आलोचना दे के पूर्ण दोड मासके साथ मिला देना एव दो मासका तप करे

(५१) ,, दो मासिक तप करते और मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर आलोचना करनेसे पन्द्रादिनकी आलोचना दे पूर्ण दो मासके साथ मिलावे अट्ठा मासका तप करे

(५२) ,, अढ़ाई मासवालाको मासिक प्रा० स्थान सेवन करनेसे पन्द्रा दिनका तप देके पूर्वके साथ मिलाय तीन मास कर दे

(५३) , एवं तीन मासवालाके साढ़ा तीन मास

(५४) साढ़ा तीन मासवालाके च्यार मास

(५५) च्यार मासवालाके साढ़ा च्यार मास

(५६) साढ़े च्यार मासवालाके पाच मास

(५७) पाच मास वालाके साढ़ा पाच मास

(५८) साढ़ा पाच मास वालाके छे मास भाधना पूर्णवत् समझना

(५९) , दो मासिक प्रायश्चित्त तप करते अन्तरे एक मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन करनेसे पन्द्रादिनकी आलोचना दे के पूर्व दो मासके साथ मिला देनेसे अढ़ाई मास

(६०) अढ़ाई मासका तप करते अन्तरे दो मास प्रायश्चित्त स्थान सेवन करनेसे बीस रात्रिका तप दे के पूर्व अढ़ाई मास साथ मिलानेसे तीन मास और पाच दिन होता है

(६१) तीन मास पाच दिनका तप करते अन्तरे एक मासिक प्रा० स्थान सेवन करनेसे पन्द्रा दिनोंका तप, उस तीन मास पाच रात्रिके साथ मिलानेसे तीन मास बीस अहोरात्रि होती है

(६२) तीन मास बीस अहोरात्रिका तप करते अन्तरेमें दो मासिक प्रा० स्थान सेवन करने वालेको बीस अहोरात्रिकी आलोचना देके पूर्वका तपके साथ मिला देनेसे ३-२०-२० च्यार मास दश दिन होते हैं

(६३) च्यार मास दश दिनका तप करते अन्तरेमें एक मासिक प्रा० स्थान सेवन करनेवालेको पन्द्रा दिनकी आलोचना पूर्ण तपके साथ मिला देनेसे ४-१०-१५ च्यार मास पचवीश अहोरात्री होती है

(६४) च्यार मास पचवीश अहोरात्रिका तप करते अन्तरमें दो मासिक प्रा० स्थान सेवन करनेवालेको बीस रात्रिकी आलोचना, पूर्यतपके साथ मिला देनेसे पच मास और पदरा अहोरात्रि होती है

(६५) पाच मास पदरा रात्रिका तप करते अन्तरमें एक मासिक प्रा० स्थान सेवन करनेवालेको पन्द्रा अहोरात्रिकी आलोचना, पूर्यतपके साथ नामेल कर देनेसे छे मासिक तप होता है इसके आगे किसी प्रकारका प्रायश्चित्त नहीं है अगर तप करते प्रायश्चित्तका स्थान सेवन करते हैं, उसकी आलोचना देनेवाले आचार्यादि, उस दुर्गल शरीरवाला तपस्वी मुनिको मधुरतासे उस आलोचनाका कारण, हेतु, अर्थ बतलाये कि तुमारा प्रायश्चित्त स्थान तो एक मासिक, दो मासिकका है, परन्तु पेस्त रसे तुमारी तपस्या चल रही है जिससे जरिये तुमारा शरीरकी स्थिति निर्बल है लगेतार तप करनेमें जोर भी ज्यादा पड़ता है इस वास्ते इस हेतु-कारणसे यह आलोचना दी जाती है वृत्त पापका तप करना महा निर्जगका हेतु है अगर तुमारा उत्थानादि मद हो तो मेरा साधु तुमारी वैयावध करेगा तु शान्तिसे तप कर अपना प्रायश्चित्त पूर्ण करो इत्यादि २०

आलोचना सुननेकी तथा प्रायश्चित्त देनेकी विधि अन्य स्थानोंसे यथापर लिखी जाती है

आलोचना सुननेवाले

(१) अतिशय ज्ञानी (वेधली आदि) जो भूत, भविष्य, वर्तमान—त्रिकालदर्शी हो उन्होंनेके पास निष्कपट भावसे आलोचना करते समय अगर कोई प्रायश्चित्त स्थान यिस्मृतिसे आलोचना करना रह गया हो उसे वह ज्ञानी कह देरे कि—हे भद्र ! अमुक दोषकी तुमने आलोचना नहीं करी है अगर कोई माया—कपट कर किसी स्थानकी आलोचना नहीं करी हो तो उसे वह ज्ञानी आलोचना न देखे और किसी छद्मस्थ आचार्यके पास आलोचना करनेका कह देखे

(२) छद्मस्थ आचार्य आलोचना सुननेवाले कितने गुणोंके धारक होते हैं ? यथा—

(१) पचाचाणको असह पालनेवाला हो सत्तरा प्रकारसे सयम, पाच समिति तीन गुति, दश प्रकारका यतिधर्मके धारक, गीताय, बहुधृत दीपदर्शी—इत्यादि कारण—आप निर्दोष हो वहही दूसरोंकी निर्दोष बना सके उसकाही प्रभाव दूसरे पर पड़ सके

(२) धारणावत—द्रव्य क्षेत्र, काल भावके जानकार, गुरुकुल यासको सेवन कर अनेक प्रकारसे धारणा करी हो, स्याद्वादका रहस्य गुरुगमतासे धारण कीया हो

(३) पाच व्यवहारका जानकार हो—आगमव्यवहार, सूत्र व्यवहार आज्ञा व्यवहार, धारणा व्यवहार, जीत व्यवहार (देखी व्यवहार सूत्र उद्देशा १= वा) किस समय किस व्यवहारसे काम लीया जाये, या प्रवृत्ति की जावे उसका जानकार अवश्य होना चाहिये

(४) कितनेक ऐसे जीव भी हाते हैं कि—लज्जाके मारे शुद्ध आलोचना नहीं कर सके, पर तु आलोचना सुनने वालोंमें

यह भी गुण अवश्य होना चाहिये कि—मधुरता पूर्वक आलोचक माधुकी लज्जा दूर करनेको स्थानाग-आदि मूत्रोंका पाठ सुनाके हृदय निर्मल बना देने जैसे—हे भद्र ! इस लोककी लज्जा पर भवमें विराधक कर देती है रुपा और लक्ष्मणा माधुकीका दृष्टान्त सुनाये

(५) शुद्ध करने योग्य होवे, आप स्वयं भद्रक भाव—अपक्ष पातसे शुद्ध आलोचना करवाये अर्थात् आलोचना करनेवालोंका गुण बताये, आठ कारणोंसे जीय शुद्ध आलोचना करे—इत्यादि

(६) मर्म प्रकाश नहीं करे धैर्य, गाभीर्य, हृदयमें हो किसी प्रकारकी आलोचना कोईभी करी हो, परन्तु कारण होने परभी किसीका मर्म नहीं प्रकाशे

(७) निर्वाह करने योग्य हो आलोचना अधिक आती है, और शरीरका सामर्थ्य, इतना तप करनेका न हो उसके ली ये भी निर्वाह करनेको स्वाध्याय, ध्यान, चन्दन, पैयायक-आदि अनेक प्रकारसे प्रायश्चित्तका बड़ खड़ कर उसको शुद्ध कर सके

(८) आलोचना न करनेका दोष, अनर्थ, भविष्यमें विराधकपणा, सत्सारवृद्धिका हेतु, तथा आठ कारणोंसे जीय आलोचना न करनेसे उत्पन्न होता दुःख यायत् सत्सार भ्रमण करे ऐसा बतलावे

(९ १०) प्रिय धर्मी और दृढ धर्मी हो, धर्म शासनपर पुण राग, हाड हाड किमीजी, रग रग नशों और रोमरोममें शासन व्याप्त हो, अर्थात् यह दोषित साधु आलोचना न करेगा, तो दुसरा भी दोष लगनेसे पीछा न हटेगा ऐसी खराब प्रवृत्ति होनेसे भविष्यमें शासनको बड़ा भारी धोका पहुचेगा इत्यादि हिताहितका विचारवाला हो

(श्री स्थानागजी सूत्र—दशवें स्थाने)

उपर लिखे दश गुणोंको धारण करनेवाले आलोचना सुनने योग्य होते हैं वह प्रथम आलोचना सुने, दुसरी बखत और कहे—हे घत्स ! मैं पहला ठीक तरहसे नहीं सुनी, अब दुसरी दफे सुनावे तब दुसरी दफे सुने जब कुछ संशय हो तो, कहेपि—हे भद्र ! मुझ कुछ प्रमाद आ रहाथा, धास्ते तीसरी दफे और सुनाये तीन दफे सुननेसे एक सदृश हो, तो उसे निग्यपट शुद्ध आलोचना समझे अगर तीन दफेमें कुछ फारफेर हो तो उसे माया संयुक्त आलोचना समझना (व्यवहारसूत्र)

मुनि अपने चारित्र्यमें दोष किन्धवास्ते लगाते हैं ? चारित्र्य मोहनीयकर्मका प्रबल उद्दय होनेसे जीव अपने व्रतमें दोष लगाते हैं यथा—

(१) 'कम्पदपेसे'—माहनीय कर्मके उद्दयसे उन्माददशा प्राप्त हो, हास्यविमोद, विषय विकार—आदि अनेक कारणोंसे दोष लगाते हैं

(२) 'प्रमाद' भद्र, विषय, कषाय निद्रा और विकषा—इस पाच कारणोंसे प्रेरित मुनि दोष लगाने हैं जैसे पूजन, प्रति लेखन, पिंड विशुद्धिमें प्रमाद करे

(३) 'अज्ञात' अज्ञानतासे तथा अनुपयोगसे हलन, धरणादि अयतना करनेसे—

(४) 'आतुरता' हरेक कार्य आतुरतासे करनेमें समयत्र तांका बाधा पहुचती है

(५) 'आपत्तदशा' शरीरव्याधि, तथा अरण्यादिमें आपदा आनेसे दोष लगावे

(६) 'शुका' यह पूजा प्रतिलेखन करी होगा या नहीं करी होगा इत्यादि कार्यमें शुका होना

(७) 'सहमात्माने' थलात्कारमें, किसी कार्य करनेकी इच्छा न होनेपर भी वह कार्य करनाही पड़े

(८) 'भय' सात प्रकारका भयके बारे अधीरपनासे—

(९) 'द्वेषदशा' मोक्ष मोहनीय उदय, अमनोहा कार्यमें द्वेषभाव उत्पन्न होनेसे दोष लगता है

(१०) शिष्यादिकी परीक्षा (आलोचना) ग्रहण करनेके निमित्त दुमरी तीसरी बार कहना पड़ता है, कि मैंने पूर्ण नहीं सुनाया, और सुनायें (स्थानागसूत्र)

दोष लग जानेपर भी मुनियोंको शुद्ध भावसे आलोचना करना पड़ाही पठिन है आलोचना करते करते भी दोष लगा देते हैं यथा—

(१) कम्पता कम्पता आलोचना करे अर्थात् आचार्यादिका भय लायेकि—मुझे लोग क्या कहेंगे ? अर्थात् अस्थिर चित्तसे आलोचना करे

(२) आलोचना करनेके पहला गुरुसे पूछे कि—हे स्वा मित्र ! अगर कोई साधु अमुक दोष सेवे, उमका क्या प्रायश्चित्त होता है ? शिष्यका अभिप्राय यह कि—अगर स्वल्प प्रायश्चित्त होगा, तो आलोचना कर लेंगे, नहीं तो नहीं करेंगे ।

(३) किसीने देखा हो, ऐसे दोषकी आलोचना करे, और न देखा हो उसकी आलोचना नहीं करे (कौन देखा है ?)

(४) बड़े बड़े दोषोंकी आलोचना करे, परन्तु सूक्ष्म दोषोंकी आलोचना न करे

(५) सूक्ष्म दोषोंकी आलोचना करे, परन्तु स्थूल दोषोंको आलोचना न करे

(६) बड़े जोर जोरसे शब्द करते आलोचना करे जिससे बहुत लोक सुने, एकत्र हो जावे

(७) बिल्कुल धीमे स्वरसे बोले जिसमें आलोचना सुननेवालोंकी भी पुरा शब्द सुनाया जाय नहीं

(८) एक प्रायश्चित्त स्थान बहुतसे गीतार्थोंके पास आलोचना करे इरादा यहकि—कोनसा गीताथ कितना कितना प्रायश्चित्त देता है

(९) प्रायश्चित्त देनेमें अज्ञात (आचाराग, निशियका अज्ञात) के समीप आलोचना करे कारण यह क्या प्रायश्चित्त दे सके ?

(१०) स्वयं आलोचना करनेवाला खुद ही उस प्रायश्चित्त को सेवन करेगा हो उसको पास आलोचना करे कारण—खुद प्रायश्चित्त कर दोषित है, वह दूसरोंको क्या शुद्ध कर सकेगा ? उन्हसे सच बात कही कही न जायगी

(स्थानांगसूत्र)

आलोचना कोन करता है ? जिसके चारित्र्य मोहनीय कर्मका क्षयोपशम हुवा हो भवान्तरमें आराधक पदकी अभिलाषा रखता हो, वह भव्यात्मा आलोचना कर अपनी आत्माको पवित्र बना सके यथा—

(१) जातिधान्

(२) कुर्यान् इस वास्ते शास्त्रकारोंने दीक्षा देते समय ही प्रथम जाति, कुल, उत्तम होनेकी आवश्यकता मतलाई है-

जाति-कुल उत्तम होगा, वह मुनि आत्मकल्याणके लीये आलोचना करता कभी पीछा न हटेंगा

(३) विनयवान्—आलोचना करनेमें विनयकी खास आवश्यकता है क्योंकि-आत्मकल्याणमें विनय मुख्य साधन है

(४) ज्ञानवान्—आलोचना करनेसे शायद् इस लोकमें मान-पूजा, प्रतिष्ठामे कभी हानि भी हो, तो ज्ञानवन्त, उसे अपना सुहृदयमें कभी स्थान न देगा कारण-ऐसी मिथ्या मान-पूजा, इन जीवने अनन्तवार कराई है तदपि आराधकपद नहीं मिला है आराधकपद, निर्मल चित्तसे आलोचना करनेसे ही मिल सके, इत्यादि

(५) दर्शनवान्—जिसकी अट्ट भ्रष्टा, वीतरागके धर्मपर है, वह ही शुद्ध भावसे आलोचना करेगा उसकी ही आलोचना प्रमाण गिनी जाती है, कि-जिसका दर्शन निर्मल है

(६) चारित्रवान्—जिसको पूर्णताने चारित्र पालनेकी अभिरुचि है, वह ही लगे हुये दोषोंकी आलोचना करेगा

(७) अमायी—जिसका हृदय निष्कपटी, मरल, स्वभाव होगा, वह ही मायारहित आलोचना करेगा

(८) जितेंद्रिय—जो इन्द्रियविषयको अपने आधीन बना लीया हो, वह ही कर्मके सम्मुख मोरचा लगाने तत्पर अस्त्र लेके खड़ा होगा, अथात् आलोचना ले, तप वह ही कर सकेगा, कि जिन्होंने इन्द्रियोंको जीती हो

(९) उपशमभायी—जिन्होंका कषाय उपशान्त हो रहा है न उसे क्रोध मताता है, न मानहानिमें मान मताता है, न माया न लोभ सताता है, वह ही शुद्ध भावसे आलोचना करेगा

(१) प्रायश्चित्त ग्रहण कर पश्चात्ताप न करे यह आलोचना करनेके योग्य होते हैं

(स्थानागतसूत्र)

प्रायश्चित्त कितने प्रकारके हैं ? प्रायश्चित्त दश प्रकारके हैं कारण—एक ही दोषकी सेवन करनेवालोंको अभिप्राय अलग अलग होते हैं, तदनुसार उसे प्रायश्चित्त भी भिन्न भिन्न होना चाहिये यथा—

(१) आलोचना—एक ऐसा अशक्त परिवार दोष होता है कि—जिम्हो गुरु सन्मुख आलोचना करनेसे ही पापसे निवृत्ति हो जाती है

(२) प्रतिक्षमण—आलोचना श्रवण कर गुरु महाराज कहे कि—आज तो तुमने यह कार्य किया है, किंतु आइदासे ऐसा कार्य नहीं करना चाहिये इसपर शिष्य कहे—तदस्त—अब मैं ऐसा कार्यसे निवृत्त होता हूँ अकृत्य कार्यसे पीछा दृढता हूँ

(३) उभया—आलोचना और प्रतिक्षमण दोनों करे भावना पूष्यत्

(४) वियोग—आलोचना श्रवण कर ऐसा प्रायश्चित्त दीया जाय कि—दुसरी दफे ऐसा कार्य न करे कुछ वस्तुका त्याग करना तथा परिठन कार्य कराना

(५) कायोत्सर्ग—दश, बीस, लोगस्सका काउसंग तथा खमासणादि दिलाना

(६) तप—मासिक तप यावत् छे मासिक तप, जो निशि शसूत्रके २० उद्देशार्थ बतलाया गया है

(७) छेद—जो मूल दीक्षा लीथी, उसमें एक मास, यावत्

उ मास तकका उद्द दीया जाये, अर्थात् इतना मासपर्यायमें कम कर दीया जाय जैसे एक मुनि, दीक्षा ग्रहणके बादमें दुसरा मुनिने तीन मास पीछे दीक्षा गयी, उस समयन पीछेमें दीक्षा देने-वाला मुनि, पहले दीक्षितको बन्दना करे अब वह पट्टा दीक्षित मुनि, किसी प्रकारका दोष संयन करनेमें उसे धानुर्मासिक छेद प्रायश्चित्त आया है जिसमें उसका दीक्षापर्याय चार मास कम कर दीया फिर वह तीन मास पीछेमें दीक्षा गयी, उसको वह वृषदीक्षित मुनि बन्दना करे।

(८) सूत्र—चाहे कितना ही वर्षोंकी दीक्षा क्यों न हो, परन्तु आठवा प्रायश्चित्त ध्यान संयन करनेमें उस मुनिकी मृग दीक्षाको उद्दरे उस दिन फिरसे दीक्षा दी जाती है वह मुनि, सर्व मुनियोंमें दीक्षापर्यायमें लघु माना जावेगा

(९) अनुवृषा—

(१०) पाट्टयिया—यह दोष प्रायश्चित्त संयन करनेवालोंको पुन गृहम्यलिंग धारण करवायके दीक्षा दी जाती है इसकी विधि शास्त्रोंमें विस्तारसे उतग्राह है, परन्तु यह इस कालमें वि-
च्छेद माना जाता है

(न्यानागसूत्र)

साधुओंको अगर कोई दोष लग जाये तो उन्ही यन्त्रत आलोचन करलेना चाहिये विगर् आलोचना किया गृहम्योंरे यहा गौचरी न जाना, विहारमूभि न जाना, ग्रामानुग्राम विहार नहीं करना कारण आयुष्यका विग्राम नहीं है अगर विराधिकर्णोंमें आयुष्य उन्ध जाये, तो भविष्यमें बड़ा भारी नुकसान होता है अगर किसी साधुओंके आपसमें कपायादि हुआ हो, उस समय लघु साधु समाये नहीं तो वृद्ध साधुओंको बड़ा जाके खमाना लघु साधु

चाहे उठे, न उठे, आदर-सत्कार दे, न भी दे घन्दन करे, न भी करे, खमावे, न भी खमावे, तो भी आराधिक पदवे अभिलाषी मुनिको घटा जावे भी खमतखामणा करना (बृहत्कल्पसूत्र)

आलोचना किसके पास करना ? अपना आचार्यापाध्याय, गीतार्थ, बहुधृत, उक्त दश (१०) गुणोंके धारकके पास आलोचना करना अगर उन्हींका योग न हो तो उक्त १० गुणोंके धारक स भागी साधुओंके पास आलोचना करे उन्हींका योग न हो तो अन्य संभोगी साधुओंके पास आलोचना करे उन्हींका योग न हो तो रूप साधु (रजोहरण मुखवस्त्रिकाका ही धारक है) गीतार्थ होनेसे उसके पास भी आलोचना करना उन्हींके अभायमें पच्छ काढा भायक (दीक्षासे गिरा हुआ परन्तु है गीताय), उन्हींके अभावमें सुविहित आचार्यसे प्रतिष्ठा करी हुई जिनप्रतिमाके पास जाके शुद्ध हृदयसे आलोचना करे, उन्हींके अभावमें ग्राम यावत् राजधानीके बाह्यार अर्थात् एकान्त जंगलमें जाके सिद्ध भगवानकी साक्षीसे आलोचना करे (व्यवहारसूत्र)

मुनि, गौधरी आदि गये हुयेको कोई दोष लग जावे, वह साधु निशियसूत्रका जानकार होनेसे वहापर ही प्रायश्चित्त प्रदत्त कर लेवे, और आचार्यपर आधार रखे कि - मैं इतना प्रायश्चित्त लीया है, फिर आचार्य महाराज इसमें न्यूनाधिक करेंगा, यह मुझे प्रमाण है ऐसा कर उपास्य आते वखत रहस्तेमें काल कर जाये तो वह मुनि आराधिक है, जिसका २४ भाग है भागार्थ— कोई योग न हो तो स्वयं शास्त्राधारसे आलोचना कर प्रायश्चित्त ले लेनेसे भी आराधिक हो सने है (भगवतीसूत्र)

निशियसूत्रके १९ उद्देशाश्रमि च्याग प्रकारके प्रायश्चित्त ब तलाये है

(१) लघुमासिक

(२) गुरु मासिक

(३) लघु चातुर्मासिक

(४) गुरु चातुर्मासिक तथा इसी सूत्रके धीसया उद्देशार्थे—
मासिक दो मासिक तीन मासिक, चार मासिक, पाच मा-
सिक और छे मासिक इस प्रायश्चित्तोमे प्रत्येक प्रायश्चित्तके तीन
तीन भेद होते हैं—

(१) प्रत्याख्यान प्रायश्चित्त

(२) तपप्रायश्चित्त

(३) छेद प्रायश्चित्त इन तीनों प्रकारके प्रायश्चित्तोंका भी
पुन तीन तीन भेद होते हैं (१) जघन्य, (२) मध्यम, (३) उत्कृष्ट

जैसे (१) प्रत्याख्यान प्रायश्चित्त, जघन्यमे एकामना, म
ध्यमे धिगद् (भीषी), उत्कृष्टमे आयिलकं प्रत्याख्यानका प्रायश्चित्त
दीया जाता है पर्य तप और छेद

किसी मुनिने मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर उस
दोषकी आलोचना किसी गीतार्थ, बहुश्रुत आचार्य आदिके म-
भीष करी है अथ उस साधुकी आलोचना भ्रमण करती बखत
विचार करे कि—इसने यह प्रायश्चित्त स्थान किस अभिप्रायसे
सधन किया है ? क्या राग, द्वेष विषय, कषाय, स्वार्थ इन्द्रिय
पश, कुतूहल प्रकृति-स्वभावसे ? धर्मरक्षण निमित्त ? शान्तनसेवा
निमित्त ? गुरुभक्ति निमित्त ? शिष्यको पठन पाठनके वास्ते ?
अपने ज्ञानाभ्यास वास्ते ? आपदा आनेसे ? रोगादि विशेष का-
रणसे ? अरण्य उल्लघन करनेसे ? किसी देशमें अज्ञातको उप-

देश निमित्त ? इत्यादि कारणासे दोष सेवन कर आलोचना क्या माया समुक्त है ? माया रहित है ? जोक देखावु है ? अन्त करणसे है ? इत्यादि सबका विचार, आलोचना अध्ययन करते वखत करके पथा प्रायश्चित्तके योग्य हो उसे इतनाही प्रायश्चित्त देना चाहिये प्रायश्चित्त देते समय उसका कारण हेतु अर्थ भी समझा देना जैसे वहेकि—हे शिष्य ! इस कारणसे, इस हेतुसे इस आगमके प्रमाणसे तुमको यह प्रायश्चित्त दीया जाता है

(व्यवहारसूत्र)

अगर प्रायश्चित्त देनेवाला आचार्य आदि राग द्वेषके वश हो, मूनाधिक प्रायश्चित्त देव तो, देनेवाला भी प्रायश्चित्तका भागी होता है और शिष्यको स्वीकार भी न करना चाहिये तथा शास्त्राधारसे जो प्रायश्चित्त देनेपर भी वह प्रायश्चित्तीया साधु उसे स्वीकार न करे तो, उसे गच्छमें नहीं रखना चाहिये कारण—एक अधिनय करनेवालेको देख और भी अधिनीत धनके गच्छमर्यादाका लोप करता जावेगा (व्यवहारसूत्र)

शरीरबल सहनन, मनकी मजबुती—आदि अच्छा होनेसे पहले जमानेमें मासिक तपके ३० उपवास चातुर्मासिकके १२० उपवास, छ मासीके १८० उपवास दीये जाते थे, आज बल सहनन, मजबुती इतनी नहीं है वास्ते उसके बदल प्रायश्चित्त दाता होने ' जीतकल्प ' सूत्रका अभ्यास करना चाहिये गुरुगमतामे प्रव्य, क्षेत्र, काल भाषका ज्ञानकार होना चाहिये ताके सब साधु साध्वीयोका निर्वाह करते हुये, शासनका धोरी बनके शासन चलावे (जीतकल्पसूत्र)

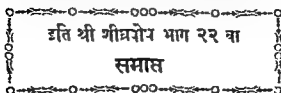
निशियसूत्रके लेखक—धर्मधुरधर पुरुष प्रधान प्रबल प्रत

पी, परम सवेग रगमें रगे हुये, अग्निलाचारी, ज्ञान, दर्शन, धारित्र संयुक्त पाच समिति समिता, तीन गुप्ति गुप्ता, सत्तरा प्रकारका संयम, धारद भेद सप, दश प्रकारके यतिधर्मका धारक, चरण, वरण प्रतिपालक, जिन्हों महा पुरुषोंकी कीर्तिकि ध्वनि, गगन मङ्गलमें गर्जना कर रही थी, जिन्होंके स्याद्वादके सिद्धान्तसे वादी रूप गज—हस्ती पलायमान होते थे, जिन्होंका सम्यक् ज्ञानरूप सूर्य, भूमंडलके अज्ञानरूप अन्धकारका नाश कर भव्य नीबोंके हृदय—कमलमे उद्योत कर रहा था, जिन्होंकी अमृत-मय देशनारूप सुधारससे आकर्षित हुये चतुर्विध सघरूप भ्रम रोंके सुत्यरसे नीकलते हुये उज्ज्वल यशरूप गुजार शब्दका ध्वनि, तीन लोकमें व्याप्त हो रहा थी, ऐसे श्री वैशाखागणि आचार्य महाराजने स्व-पर आत्माओंके कल्याण निमित्त इस महा प्रभाषक लघु निशिथसूत्रको लिखके अपने शिष्यों, परशिष्योंपर बहुत उपकार किया है इतनाही नहि बल्के धर्मान और भविष्यमें होनेवाले साधु साध्वियों पर भी बड़ा भारी उपकार किया है

इति श्री निशिथसूत्र—वीशवा उद्देशाका सत्तिप्त सार



इति श्री लघु निशिथसूत्र—समाप्त



देश निमित्त ? इत्यादि कारणोंसे दोष सेवन कर आलोचना
माया संयुक्त है ? माया रहित है ? लोक देखावु है ? अतः कर
है ? इत्यादि सबका विचार, आलोचना अवगण करते यद्यत
रक् यथा प्रायश्चित्तके योग्य हो उसे इतनाही प्रायश्चित्त दे
चाहिये प्रायश्चित्त देते समय उसका कारण हेतु अर्थ भी सम
देना जैसे कहें कि—हे शिष्य ! इस कारणसे इस हेतुसे इ
आगमके प्रमाणसे तुमको यह प्रायश्चित्त दीया जाता है

(व्यवहारसूत्र)

अगर प्रायश्चित्त देनेवाला आचार्य आदि राग द्वेषक वा
हो, न्यूनधिक प्रायश्चित्त देव तो, देनेवाला भी प्रायश्चित्त
भागी होता है और शिष्यको स्वीकार भी न करना चाहिये तब
शास्त्राधारसे जो प्रायश्चित्त देनेपर भी यह प्रायश्चित्तीया साधु
उसे स्वीकार न करे तो, उसे गच्छमें नहीं रखना चाहिये वा
रण—एक अविनय करनेवालेको देख और भी अभिनीत बनव
गच्छमयादाका लोप करता जावेगा (व्यवहारसूत्र)

शरीरबल महानन, मनकी मजबुती—आदि अच्छा होनेसे
पहले जमानेमें मासिक तपके ३० उपवास चानुमासिकके १२०
उपवास, छे मासीके १८० उपवास दीये जाते थे, आज बल सह
नन, मजबुती इतनी नहीं है वास्ते उमकबदल प्रायश्चित्त दाता
धोने ' जीतकल्प ' सूत्रका अभ्यास करना चाहिये शुरुगमतासे
प्रथम, क्षेत्र, काल भाषका जानकार होना चाहिये ताके सब
साधु साध्वीयोंका निर्वाह करते हुये, शासनका धोरी बनक
शासन चलावे (जीतकल्पसूत्र)

निश्चित्यसूत्रके लेखक—धर्मधुरधर पुरुष प्रधान प्रबल प्रत

मुनिश्री ज्ञानसुन्दरजी महाराज साहचके सदुपदेशसे
 श्री रत्नप्रभाकरज्ञान पुष्पमाला ऑफीस फलोधीसे
 आजतक निम्नलिखित पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं.

संख्या	पुस्तकोंका नाम.	आवृत्ति	कुल संख्या.
(१)	श्री प्रतिमा छत्तीसी	४	२००००
(२)	„ गणवर यिलास	२	२०००
(३)	„ दान छत्तीसी	३	४०००
(४)	„ अनुकम्पा छत्तीसी	३	४०००
(५)	„ प्रभ्रमाल	३	३०००
(६)	„ स्तवन संग्रह भाग १	५	५०००
(७)	„ पैतीस थोलोको थोकडो	१	१०००
(८)	„ दादामाहबकी पूजा	१	२०००
(९)	„ चर्चाका पब्लिक नोटीस	१	१०००
(१०)	„ देवगुरु वन्दनमाला	२	६०००
(११)	„ स्तवन संग्रह भाग २	३	३०००
(१२)	„ लिम निर्णय बहुत्तरी	३	३०००
(१३)	„ स्तवन संग्रह भाग ३	३	४०००
(१४)	सिद्धप्रतिमा मुक्तावली	१	१०००
(१५)	„ वत्तीससूत्र दर्पण	१	५००
(१६)	„ जैन नियमावली	२	२०००
(१७)	„ घौरासी आशातना	२	२०००
(१८)	„ डवेपर चोट	१	५००
(१९)	„ आगम निर्णय	१	१०००
(२०)	„ चैत्यवन्दनादि	२	२०००

(२१)	” जिन स्तुति	२	२०००
(२२)	” सुबोध नियमावली	२	६०००
(२३)	” प्रभुपूजा	३	३०००
(२४)	” जैन दीक्षा	२	२०००
(२५)	” व्याख्या विलास	१	१०००
(२६)	” शीघ्रबोध भाग १	२	२०००
(२७)	” ” ” २	१	१०००
(२८)	” ” ” ३	१	१०००
(२९)	” ” ” ४	१	१०००
(३०)	” ” ” ५	१	१०००
(३१)	” सुख त्रिपाक सूत्र मूल	१	५००
(३२)	” शीघ्रबोध भाग ६	१	१०००
(३३)	” दशवैकालिकसूत्र मूल	१	१०००
(३४)	” शीघ्रबोध भाग ७	१	१०००
(३५)	” मेहरनामो	२	४५००
(३६)	” तीन निर्णामा ले० उत्तर	२	२०००
(३७)	” ओसीया तीर्थका लीट	१	१०००
(३८)	” शीघ्रबोध भाग ८	१	१०००
(३९)	” ” ” ९	१	१०००
(४०)	” नदीसूत्र मूलपाठ	१	१०००
(४१)	” तीर्थयात्रा स्तवन	२	३०००
(४२)	” शीघ्रबोध भाग १०	१	१०००
(४३)	” अमे माधु शामाटे थया ?	१	१०००
(४४)	” धीनती शतक	२	२०००
(४५)	” द्रव्यानुयोग प्रथम प्रवे०	१	६०००
(४६)	” शीघ्रबोध भाग ११	१	१०००
(४७)	” ” ” १२	१	१०००

(४८)	" " "	१३	१	१०००
(४९)	" " "	१४	१	१०००
(५०)	" आनन्दघन धीवीशी		१	१०००
(५१)	" शीघ्रबोध भाग १५		१	१०००
(५२)	" " "	१६	१	१०००
(५३)	" " "	१७	१	१०००
(५४)	" कफायत्तीसी सार्य		१	१०००
(५५)	" व्याख्या विलास भाग २		१	१०००
(५६)	" " " "	३	१	१०००
(५७)	" " " "	४	१	१०००
(५८)	" स्थाभ्याय गहुली समग्र		१	१०००
(५९)	" राह देवसि प्रतिममणसूत्र		१	१०००
(६०)	" उपवेश गच्छ लघु पट्टावली		१	१०००
(६१)	" शीघ्रबोध भाग १८		१	१०००
(६२)	" " "	१९	१	१०००
(६३)	" " "	२०	१	१०००
(६४)	" " "	२१	१	१०००
(६५)	" वर्णमाला		१	१०००
(६६)	" शीघ्रबोध भाग २२		१	१०००
(६७)	" " "	२३	१	१०००
(६८)	" " "	२४	१	१०००
(६९)	" " "	२५	१	१०००
(७०)	" तीन चतुसामोका दिग्दशन		१	१०००
(७१)	" हितोपदेश		१	१०००
७१				१४००००



